भारतीय राजनीति
और
हेमवती नन्दन बहुगुणा
—एक आलोचनात्मक अध्ययन

इलाहाबाद विश्वविद्यालय की डॉक्टर आफ फिलास्फी
उपाधि हेतु प्रस्तुत शोध प्रबन्ध सार

निर्देशिका
डा० (श्रीमती) रीता जोशी
रीडर
मध्यकालीन एवं आधुनिक इतिहास विभाग
इलाहाबाद विश्वविद्यालय

प्रस्तुतकर्ता
मणि शंकर द्विवेदी

मध्यकालीन एवं आधुनिक इतिहास विभाग
इलाहाबाद विश्वविद्यालय
इलाहाबाद
1999

राष्ट्रीय आन्दोलन में 1885 से 1947 तक के संघर्ष का नेतृत्व भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस दल ने किया। इस दौरान वह मात्र एक दल ही नहीं बल्कि अपने आप में पूरा आन्दोलन थी। दक्षिणपंथी से लेकर वामपन्थी तक, यानि सभी तरह के राजनीतिक रुझानो के लोग इसमे शामिल थे। इसके बावजूद समय-समय पर स्वतंत्रता संघर्ष के मुद्दे और सवालो को लेकर नेताओं में सैद्धान्तिक द्वन्द तथा वैचारिक मतभेद पनपते रहे। जिसके कारण राष्ट्रीय कांग्रेस गुटबाजी का शिकार होती रही। फलस्वरूप गरमदल व नरमदल, स्वराज पार्टी, उदारवादी व अनुदारवादी तथा समाजवादी आदि जैसी विभिन्न शाखाएँ इसमे बनती रहीं। किन्तु सभी की राजनैतिक परिकल्पना लोकतान्त्रिक, नागरिक स्वतंत्रता वाले धर्म निरपेक्ष की थी, जिसका आधार आत्म निर्भरता, समतावादी समाज व्यवस्था और स्वतन्त्र विदेश नीति की ही रही। वस्तुतः भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस की स्थापना का आधार ही लोकतान्त्रिक था और इसका रूप एक ससद की तरह था। यानि पार्टी और आन्दोलन के भीतर के विचारों को स्वतंत्रता पूर्वक व्यक्त करने की न सिर्फ अनुमति थी बल्कि इसको प्रोत्साहित भी किया जाता था।

सत्ता मे आने की अपनी संक्षिप्त अवधि, 1937 से 1939 के दौरान काग्रेस मन्त्रिमडलों ने नागरिक स्वतंत्रता के दायरे को काफी व्यापक बनाया था। नागरिक स्वतंत्रता की रक्षा की परिकल्पना किसी संकीर्ण आधार पर नही की गयी थी, जो एक राजनीतिक दल अथवा एक संगठन तक सीमित हो, बल्कि इसका दृष्टिकोण समग्र था। प्रान्तीय सरकारों के अधिकार सीमित होने के कारण कांग्रेस मंत्रिमंडल प्रशासन के मूल चरित्र में परिवर्तन लाने में असफल रही किन्तु जनता की हालत सुधारने के लिए अपनाए गये उसके तरीके विशेष प्रशंसनीय रहे। सरकार ने जहाँ एक तरफ शासन प्रबन्ध के नये दृष्टिकोणों का सूत्रपात किया और सेवा तथा इमानदारी के प्रशंसनीय मानक स्थापित किये वहीं दूसरी ओर प्रारम्भिक तकनीकी तथा उच्चतर शिक्षा और जन स्वास्थ्य सेवाओं में सुधार लाने की ओर पहले की अपेक्षा अधिक ध्यान दिया गया। लेकिन द्वितीय विश्वयुद्ध के शुरू होते ही भारत की भागीदारी को लेकर कांग्रेस ने कुछ सवाल खड़े किये, जिसमें साम्राज्यवाद का निष्कासन और स्वतंत्र राष्ट्र के समान व्यवहार की बात प्रमुख थी। इसे ब्रिटिश हुकूमत ने मानने से इन्कार कर दिया। परिणामतः कांग्रेस मन्त्रिमंडलों को त्यागपत्र देना पड़ा। तदुपरान्त जापान द्वारा ब्रिटेन के विरुद्ध युद्ध की घोषणा के बाद बौखलाई ब्रिटिश सरकार ने कांग्रेस से सहयोग एवं समझौते का ध्येय लेकर मार्च 1942 में सर स्टैफोर्ड क्रिप्स को एक प्रस्ताव के साथ भारत भेजा। किन्तु यह प्रस्ताव भी काग्रेस को मंजूर नहीं हुआ। पूर्ण स्वतंत्रता के स्थान पर स्वतंत्र उपनिवेश के दर्जे, संविधान सभा में रियासतों के लोगों के बजाय शासकों द्वारा नामांकित व्यक्तियों की मौजूदगी तथा भारत के सम्भावित विभाजन की व्यवस्थाओं पर कांग्रेस को कड़ी आपत्ति थी।

क्रिप्स मिशन की विफलता के बाद अगस्त 1942 मे बम्बई मे काग्रेस का अधिवेशन हुआ, जिसमे गाधी जी ने `अंग्रेजो भारत छोडो' व `करो या मरो' का नारा दिया। इसके उपरान्त लगभग सभी देश के वरिष्ठ नेता गिरफ्तार हो गये। इलाहाबाद शहर के भी अधिकतर काग्रेसी नेता इलाहाबाद पहुँचने के पूर्व ही गिरफ्तार कर लिये गये। इलाहाबाद विश्वविद्यालय के तत्कालीन छात्र सघ अध्यक्ष कमलेश्वर भी सरकारी वारण्ट के कारण भूमिगत हो गये। ऐसी परिस्थिति मे नेतृत्व-विहीन शहर इलाहाबाद मे भारत छोडो आन्दोलन का भार युवा छात्र नेताओं के कन्धे पर आ पडा, जिनमे हेमवती नन्दन बहुगुणा, यशवीर सिंह, विश्वनाथ तिवारी, केशवदेव मालवीय आदि प्रमुख थे। गौरतलब है कि अगस्त के पूरे महीने तक इलाहाबाद में आन्दोलन अनवरत चलता रहा। बहुगुणा और उनके साथियो ने जुलूसों, प्रदर्शनो, सभाओं, कार्यालयों में तोड-फोड़ तथा आगजनी के माध्यम से आन्दोलन मे एक नई चेतना व स्फूर्ति जागृति की। प्रत्यक्षदर्शियों का ऐसा मानना है कि लगभग चार दिनों तक पूरा शहर अस्त-व्यस्त रहा। ब्रिटिश सरकार ने उन्हें राजद्रोही करार दिया और किसी भी हालत में गिरफ्तारी का वारण्ट जारी कर दिया। तदुपरान्त जिन्दा या मरे हुए बहुगुणा को गिरफ्तार करने वाले को पाँच हजार रुपया (5000/=) पुरस्कार देने की घोषणा भी की गई। ऐसे समय मे स्वाभिमानी, ओजस्वी बहुगुणा आन्दोलन स्थिर न करके अपने को भूमिगत करना उचित समझे। ज्ञात होता है कि बहुगुणा को यह शहर छोड़कर कानपुर व दिल्ली के केन्द्रो मे शरण लेनी पड़ी, लेकिन विश्वसनीय कार्यकर्ताओं के अभाव मे थोड़े दिन बाद ही वे गिरफ्तार कर लिये गये।

ब्रिटिश सरकार ने बहुगुणा को तीन वर्ष तक नैनी सेट्रल जेल इलाहाबाद तथा अमहट जेल सुल्तानपुर में रखा। कारागार प्रवास के दौरान बहुगुणा जवाहरलाल नेहरू, फिरोजगांधी, लाल बहादुर शास्त्री, सम्पूर्णानन्द, कमलापति त्रिपाठी आदि राष्ट्रीय नेताओं के सम्पर्क में आये। इन राष्ट्रीय नेताओं के आदर्शों व सिद्धांतों का उन पर बहुत प्रभाव पड़ा। फलस्वरूप जेल से छूटते ही बहुगुणा छात्र नेता ही नहीं बल्कि जन नेता हो गये। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात बहुगुणा ने व्यापार यूनियनों में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। इलाहाबाद के तमाम विभागों व फैक्ट्रियो में उन्होंने श्रमिक सघ बनाया। समाज के इस वर्ग के विकास के प्रति बहुगुणा की चिन्तनशीलता तथा उन सब की मांगों व आवश्यकताओं को गहरी दृष्टि से परखने का उनका गुण सराहनीय रहा है। विशेष बात यह कि उस समय श्रमिक आन्दोलन पूर्णतया कम्युनिस्टो के हाथ में था लेकिन चन्द दिनों में ही उसका नेतृत्व बहुगुणा के हाथ में आ गया। इस दृष्टि से वे प्रदेश के प्रथम कांग्रेसी थे।

स्वतत्र भारत में प्रथम आम चुनाव 1952 में हुआ। चुनाव के दौरान प्रत्याशियों के टिकट बँटवारे को

लेकर परम्परानुसार कांग्रेस मे पुनः मतभेद शुरू हुआ। राष्ट्रीय आन्दोलन का गढ़ समझा जाने वाला उत्तर प्रदेश भी इससे मुक्त नही रहा। यहाँ पर रफी अहमद किदवई का गुट पडित गोविन्द वल्लभ पन्त का विरोध कर रहा था। अन्तत जवाहर लाल नेहरू, लाल बहादुर शास्त्री और अबुल कलाम आजाद के गहरे हस्तक्षेप के चलते उत्तर प्रदेश कांग्रेस पार्लियामेन्टरी सूची को मजूरी दी जा सकी। बहुगुणा जो पडित पन्त की सूची मे शामिल थे, को इलाहाबाद के करछना विधानसभा क्षेत्र मे टिकट मिला, जहाँ उनका मुकाबला प्रसिद्ध सोसलिस्ट नेता प० शीतलादीन द्विवेदी से था। फिर भी बहुगुणा अपनी राजनीतिक कुशलता और निस्वार्थ सेवा के बल पर विजयी हुए और विधानसभा सदस्य बनकर लखनऊ पहुँचे। विधानसभा की कार्यवाहियों के दौरान उन्होंने गहरी समझ तथा तर्कशक्तियुक्त व्यक्तित्व का परिचय दिया। उनके विधानसभा के भाषणों से विदित होता है कि वे तत्कालीन समय में समाज के सभी वर्गो के प्रति चिन्तशील रहे तथा गरीब व पिछड़ोंके विकास व समृद्धि हेतु जुटे रहे। 1957 के आम चुनाव में वह पुनः चुने गये। उनकी तीक्ष्णता तथा सक्रियता से प्रभावित होकर तत्कालीन मुख्यमंत्री गोविन्द बल्लभ पन्त ने उन्हे सभा सचिव के पद पर नियुक्त किया तथा श्रम एवं उद्योग मंत्रालय का भार भी सौंप दिया। तदुपरान्त 1960 मे वे उत्तर प्रदेश सरकार के उपमत्री बनाये गये।

1967 के चुनाव में भी कांग्रेस की विजय हुई। उत्तर प्रदेश में चन्द्रभानु गुप्त के नेतृत्व में सरकार बनी, जिसमें बहुगुणा वित्तमत्री हुए। इसकाल तक बहुगुणा की तीक्ष्ण प्रशासनिक क्षमता तथा प्रतिभाशाली व्यक्तित्व धीरे-धीरे स्पष्ट हो चुका था। विधानसभा कार्यवाही के दौरान समाज की विभिन्न समस्याओं व विषयों पर उनकी बेबाक टिप्पणी सैकडो पृष्ठो मे प्रकाशित मिलती है। तत्कालीन समय में ही प्रदेश की राजनीति में अचानक परिवर्तन तब आया जब उत्तर प्रदेश के शीर्षस्थ कांग्रेसी नेता चौ० चरण सिह ने दल में बगावत किया और अपने गुट को लेकर कांग्रेस से अलग हो गये। ज्ञातव्य है कि चरण सिंह ने अपने ही कांग्रेस पार्टी की सरकार के विरुद्ध विपक्ष से मिलकर राज्यपाल के अभिभाषण पर धन्यवाद प्रस्ताव पास नहीं होने दिया और 18 दिन में ही चन्द्रभानु गुप्त की कांग्रेसी सरकार गिरा दी थी और स्वयं संयुक्त विधायक दल बनाकर मुख्यमंत्री की कुर्सी हथिया ली थी। परिणाम क्या रहा? साल के ही अन्दर ही संयुक्त विधायक दल छिन्न-भिन्न हो गया और प्रदेश में राष्ट्रपति शासन लागू हो गया। प्रदेश की जनता को मिला पुनः चुनावी संघर्ष का सामना। आम तौर पर प्रदेश में मध्यावधि का चुनाव यहीं से माना जाता है।

1969 का वर्ष, भारतीय राजनीति में राष्ट्रीय कांग्रेस और हेमवती नन्दन बहुगुणा दोनों के लिए विशेष महत्वपूर्ण था। जहाँ एक तरफ अखिल भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के इतिहास में नवीन मोड़ आया अर्थात् इसके

विभाजन का वर्ष सिद्ध हुआ, वहीं दूसरी तरफ इसी साल बहुगुणा का राष्ट्रीय राजनीति में पदार्पण भी हुआ। वे राष्ट्रीय कांग्रेस के महामंत्री नियुक्त हुए। ज्ञातव्य है कि मई 1969 में राष्ट्रपति जाकिर हुसैन की मृत्यु के पश्चात् यह बात अचानक महत्वपूर्ण हो उठी कि अगला राष्ट्रपति कौन हो? इसी सवाल को लेकर कांग्रेस पुनः गुटबाजी की शिकार बन गई। यद्यपि उत्तर प्रदेश के कांग्रेसी सदस्यो के समर्थन और बहुगुणा की राजनीतिक तीक्ष्णता के बल पर इंदिरा गांधी अपनी पसन्द के मुताबिक वी० वी० गिरि को राष्ट्रपति बनाने मे सफल रही परन्तु कांग्रेस के विभाजन को वह न रोक सकी। कांग्रेस दो धड़ों में बँट गई—कांग्रेस (आर) और कांग्रेस (स)। राष्ट्रीय कांग्रेस का महामंत्री बनते ही बहुगुणा ने संगठनात्मक कार्यक्रमो की बागडोर अपने हाथ मे ले ली थी। विशेषता यह रही कि संगठनात्मक कार्यक्रम मे वे मात्र इंदिरा गांधी की इच्छानुसार चलने वाले नही थे, सभी बातो और मंचो मे किसी के प्रिय-अप्रिय का विचार किये बिना वे अपनी राय प्रकट करते थे। किन्तु सैद्धान्तिक और वैचारिक आधार पर बहुगुणा ने इंदिरा गांधी का साथ जिम्मेदारी से निभाया और आगामी चुनावों में कांग्रेस को विजय की ओर ले गये। 1971 के चुनाव मे इंदिरा कांग्रेस को अभूतपूर्व सफलता मिली।335 सीटों पर विजय प्राप्त करके इंदिरा गांधी ने अपनी सरकार बनायी। इलाहाबाद संसदीय क्षेत्र से चुनकर संसद में पहुँचे बहुगुणा को इंदिरा गांधी ने अपने मंत्रालय मे राज्य संचार मंत्री बनाया। अपने कार्यकाल में बहुगुणा ने इस विभाग के आधुनिकीकरण तथा तकनीकीकरण में महत्वपूर्ण योगदान दिया। समता को बढ़ावा देने के लिए उन्होंने एक हरिजन सेल बनाया जो केन्द्र या किसी भी प्रदेश सरकार में अभी तक नही था। इसके माध्यम से अनुसूचित जाति-जनजाति के लोगों को उनके कोटे के अनुसार नियुक्ति, प्रोन्नति व उनके साथ हुए अन्याय आदि का लेखा-जोखा रखा जाता था। गौरतलब बात तो यह है कि इसके पहले यह विभाग महत्वहीन समझा जाता था, लेकिन ज्यों ही बहुगुणा को इसका मुखिया बनाया गया देश के चर्चित विभागों मे से एक बन गया।

1973 के उत्तरार्द्ध में उत्तर प्रदेश के इतिहास में एक क्रांतिकारी परिवर्तन हुआ, जब पहली बार स्वाधीन भारत में उत्तर प्रदेश सरकार को अपनी सेना के विद्रोह का सामना करना पड़ा। प्रदेश में उहापोह की स्थिति मच गई, चारो तरफ हड़ताल, प्रदर्शन, धरना, तोड़-फोड़ व आगजनी का माहौल बन चुका था। इतना ही नहीं बल्कि प्रदेश में एक तरफ कांग्रेस की स्थिति बद से बदतर हो चुकी थी तो दूसरी ओर छः माह के भीतर सम्भावित चुनावी शंखनाद गूँज रही थी। ऐसी परिस्थिति में शर्मिन्दित तत्कालीन मुख्यमंत्री पंडित कमलापति त्रिपाठी ने अपने पद से इस्तीफा दे दिया। इन्हीं विषम परिस्थितियों में बहुगुणा को इस बड़े प्रान्त का मुख्यमंत्री बनाकर लाया गया जबकि इसके पूर्व उन्हें केन्द्रीय कैबिनेट के योग्य नहीं समझा गया था। जमीन से उठे बहुगुणा जहाँ एक ओर

राजनीतिक दॉव पेच मे अपना कोई सानी नही रखते थे वहीं दूसरी ओर भारत की पूरी राजनीतिक तस्वीर उनके सामने स्पष्ट थी। बहुगुणा मे एक अजूबी प्रतिभा थी, संघर्ष का मजा हुआ अनुभव था। प्रदेश के हजारों गॉव, लोगो के नाम व उनकी समस्याये उनके ॅंगलियो पर थी। ऐसा प्रतीत होता है कि कांग्रेस का गढ़ उत्तर प्रदेश हाथ से निकलने न पाये, इसीलिए बहुगुणा जैसे राजनीतिक योद्धा को उत्तर प्रदेश का नेतृत्व सौपा गया।

बहुगुणा अपने ढाई वर्ष के छोटे से काल मे एक सफल मुख्यमंत्री सिद्ध हुए। वस्तुत: बहुगुणा का काल स्वतत्र भारत मे उत्तर प्रदेश के प्रथम मुख्यमंत्री पंडित गोविन्द बल्लभ पन्त के बाद सर्वाधिक चर्चित काल रहा है। किसान हो या मजदूर, अध्यापक हो या विद्यार्थी, अफ्सर हो या बाबू, व्यापारी हो या पूँजीपति सभी को सन्तुष्ट करने मे वे सफल हुए। उनके शासनकाल में न तो श्रमिकों, कर्मचारियो, अध्यापकों, विद्यार्थियों आदि का आन्दोलन हुआ, न हिन्दू-मुस्लिम दगे और न कोई अन्य आन्दोलन अपना प्रभाव दिखा सका। यही नहीं बल्कि अपने सयम, धैर्य, प्रशासनिक क्षमता एव राजनीतिक सूझ-बूझ द्वारा बहुगुणा ने 1974 में होने वाले उत्तर प्रदेश विधान सभा चुनाव मे कांग्रेस को भारी विजय दिलायी, जबकि लोगो का अन्दाज इसके पूर्णतया विपरीत था। बहुधर्मी, बहुभाषी, विभिन्न परम्पराओं एव संस्कृतियों से अप्लावित भारत मे कैसी राजनीति सफल होगी, बहुगुणा इससे पूरी तरह भिग्य थे। वे कहते थे कि भारत के बहुसख्यक समाज को अत्यधिक सहिष्णु होना चाहिए और साथ ही समाज के विकसित एवं उच्च वर्ग का यह दायित्व है कि वह पददलितों, हरिजनों एवं गरीबों के उत्थान के लिए प्रयत्नशील रहे, जिससे कि समाज के विद्वेष एवं संघर्ष पर अकुश लगाया जा सके। उत्तर प्रदेश के दलितो के उत्थान मे बहुगुणा ने अग्रणी भूमिका निभाई थी। जो कालान्तर में राजनेताओं के लिए अनुकरणीय रही। उन्हे जमीनो पर कब्जा दिलाना, पठन-पाठन के प्रशिक्षण केन्द्र खुलवाना, सरकारी नौकरियों मे उनके आरक्षण की व्यवस्था, छात्रवृत्ति में नया संसोधन आदि योजनाएं पिछड़े व दलितों के सामाजिक, आर्थिक विकास हेतु बहुगुणा के कार्यकाल में कार्यान्वित हुई।

भारतीय राजनीति में संक्रमणकालीन दौर तब आया जब 25 जून, 1975 को भारत में आपात काल लागू हुआ। पूरे देश में एक विचित्र दहशत का माहौल कायम रहा। व्यक्तिगत स्वतंत्रता समाप्त हो गयी थी। विरोधी दल के प्रमुख नेता नजर बन्द किये गये। न कोई अभियोग, न कोई सुनवाई और न कोई सबूत, जो व्यक्ति सरकार की नजर में खतरनाक था, वह बन्द कर दिया जाता। स्वतंत्र भारत की जेल में ऐसे लोग बन्द हुए, जिन्होने आजादी हासिल करने के लिए कभी अपना सब कुछ त्याग दिया था। जय प्रकाश नारायण की आवाज पर हजारो ऐसे लोग कैदखाने में पड़े थे जिन्होंने जीवन का एक भी दिन जेल में नहीं बिताया था।

आपातकाल से इदिरा गाधी को आशिक लाभ जरुर हुआ लेकिन उससे कहीं अधिक नुकसान भी हुआ। राजनीतिक समीक्षको ने यह सिद्ध कर दिया कि जनता ने आपातकाल योजना को नापसद किया और उसका परिणाम आगामी चुनावो मे काग्रेस को भुगतना पड़ा। बहुगुणा देश के पहले कांग्रेसी मुख्यमंत्री थे जिन्होंने प्रधानमत्री को पत्र लिखकर आपातकाल का विरोध किया था। बहुगुणा राजनेताओं की गिरफ्तारी के विरुद्ध थे। यही कारण था कि उन्होने उत्तर प्रदेश में एक भी विरोधी नेता को गिरफ्तार नहीं कराया बल्कि जय प्रकाश नारायण जैसे महान नेता को राज्य अतिथि घोषित किया। जबकि इंदिरा गांधी और संजय के आदेश थे कि उन्हे गिरफ्तार किया जाय। उन्होने इसकी परवाह नही की, परिणामस्वरूप इसी साल के अन्त तक उन्हे मुख्यमंत्री पद से हाथ धोना पड़ा।

1977 में इंदिरा कांग्रेस की हालत दयनीय हो गयी। परिणामस्वरूप उसे ऐतिहासिक पराजय हाथ लगी। सयुक्त विपक्ष जो जनता पार्टी के नाम से चुनाव लड़ा था, बहुमत में रहा और अपनी सरकार बनायी। बहुगुणा ने सत्ता मे शामिल होकर पेट्रोलियम, रसायन एवं उर्वरक मंत्री का पद सम्हाला। पिछले मंत्रालयों की तरह ही उन्होंने इस बार भी इस मंत्रालय पर अपनी अलग छाप छोड़ी। नतीजतन देश में न पेट्रोल की कीमत बढ़ी न मिट्टी के तेल की और न ही उनके कार्यकाल मे इनकी आपूर्ति में कहीं कोई रुकावट आयी। जनता पार्टी चूँकि कई राजनैतिक पार्टियों से मिलकर बनी थी इसलिए विचारों की भिन्नता शुरूआत में ही दीखने लगी। दल के नेतृत्व, नीहित स्वार्थो की पूर्ति तथा बदले की भावना जैसे व्यक्तिगत मुद्दे दल के आन्तरिक कलह के कारण बन गये। अन्तत जनता पार्टी टूट गई। कांग्रेस (आई) के समर्थन से चरण सिंह ने अपनी सरकार बनायी। बहुगुणा उनके मंत्रिमडल में राजनैतिक बाध्यता को महसूस करते हुए शरीक होकर वित्तमंत्री का पद तो ग्रहण कर लिए लेकिन आगे चलकर अपने अस्तित्व के लिए पुनः उठ खड़े हुए। वे अपने 31 सूत्रीय कार्यक्रम को स्वीकार किये बगैर चरण सिंह की लोकदल पार्टी में लोकतांत्रिक कांग्रेस के विलय के पक्षधर नहीं थे जबकि चरण सिंह इसके लिए आरुड़ थे। अन्ततः बहुगुणा को चरण सिंह की सरकार से इस्तीफा देना पड़ा। इंदिरा गांधी भी नये चुनाव की इच्छुक थी। सरकार मे चल रही द्वन्दमय स्थिति का लाभ लेकर उन्होंने अपना समर्थन वापस ले लिया। तदुपरान्त चरण सिह की सरकार गिर गयी।

1980 में इंदिरा काग्रेस में बहुगुणा की पुनः वापसी को लेकर तत्कालीन राजनीतिक समीक्षकों में एक द्वन्द की स्थिति कामय रही है। शायद इसीलिए बहुगुणा को सर्वाधिक विवादास्पद राजनेता की संज्ञा भी दी जाती है। एक ओर जहॉ उन पर घोर अवसरवादी होने का आरोप लगता है वही दूसरी ओर उन्हें `सिद्धान्तो का पुजारी

और अधिकारवाद की लडाई का धुरन्धर, भी स्वीकार किया जाता है। वस्तुतः समाजवादी आदर्शो से ओत-प्रोत उनका 31 सूत्रीय कार्यक्रम जिसे किसी भी राजनैतिक दल ने पूर्णतया स्वीकृति नही दी थी परन्तु इदिरा गाधी द्वारा महज ढग मे अपना लेने की बात ही उनके इदिरा काग्रेस मे पुन जाने का मूल कारण था। अवसरवाद के सम्बन्ध मे उनका स्पष्ट कहना था कि नीहित स्वार्थ होता तो आपातकाल के दौरान मे भी सजयगांधी की हॉ मे हॉ मिलाता और मुख्यमत्री की कुर्सी सजोये रखता।' इंदिरा कांग्रेस में बहुगुणा को प्रधान महासचिव बनाया गया था। 1980 के चुनाव मे कांग्रेस भारी मतो से विजयी हुई और अपनी सरकार भी बनायी किन्तु मंत्रालय की सूची मे बहुगुणा का नाम काट दिया गया। इतना ही नहीं बल्कि संगठनात्मक बैठकों में उनकी उपस्थिति भी नजरअन्दाज की गई। बहुगुणा ने अपनी प्रतिष्ठा के विपरीत घोर उपेक्षा महसूस की। तदुपरान्त वे कांग्रेस पार्टी से अलग हो गये, साथ-साथ संसद सदस्यता से भी उन्होने इस्तीफा दे दिया। लोकतांत्रिक समाजवादी पार्टी का गठन हुआ। पुनः लड़े गढ़वाल का ऐतिहासिक उपचुनाव और विजयी होकर 1982 में बहुगुणा विरोधी नेता के रूप मे ससद पहुँचे। विपक्षी एकता का तेजी से प्रयास शुरू हुआ लेकिन कोई सही स्वरूप न आ सका।

अक्टूबर 1984 में प्रधानमंत्री इंदिरागाधी की अमानुषिक हत्या के बाद चुनावों में ऐसी सहानुभूतिक लहर फैली कि विपक्षी दलो के पैर पूरी तरह उखड़ गये। दो महीने पहले खड़ी हुई दमकिपा पार्टी भी केवल तीन सीटो पर जीत हासिल कर सकी। उत्तर प्रदेश, हरियाणा, राजस्थान और विहार से उसका पूरी तरह सफाया हो गया। दल के शीर्षस्थ नेता हेमवती नन्दन बहुगुणा भी यह चुनाव हार गये। ज्ञातव्य है कि इलाहाबाद निर्वाचन क्षेत्र से बहुगुणा के मुकाबले में इस बार किसी राजनेता को नही बल्कि भारतीय सिनेमा जगत के सशक्त हस्ताक्षर अमिताभ बच्चन को उतारा गया था। इसी प्रकार चुनाव के तीन महीने पहले अपने-आपको इंदिरा कांग्रेस का एकमात्र विकल्प बताने वाली भारतीय जनता पार्टी के भी सिर्फ दो उम्मीदवार चुने जा सके। अटल बिहारी बाजपेयी सहित दल के कई चोटी के नेता यह चुनाव हार गये। 56321

दलित मजदूर किसान पार्टी जो अप्रैल 1986 में पुनः लोकदल का रूप ले चुकी थी, चौ० चरण सिंह की अस्वस्थता के चलते उपजे परिवारवाद और स्वार्थ लिप्सा के कारण गृह युद्ध की शिकार बन गई। मई 1987 में चरण सिह की मृत्यु होते ही उनके सुपुत्र अजीत सिह ने अपने को दल का वारिश घोषित कर दिया। तदुपरान्त अजीत समर्थकों ने दिल्ली के एक सम्मेलन में उन्हें लोकदल के राष्ट्रीय अध्यक्ष का ताज पहना दिया। किन्तु कार्यकारिणी को यह मंजूर नहीं था। कार्यकारिणी चौ० चरण सिंह द्वारा पूर्व सुनिश्चित अपने कार्यवाहक अध्यक्ष बहुगुणा को ही यह ताज पहनाना चाहती थी। अन्ततः लोकदल दो धड़ो में विभाजित हो गया—लोकदल

(अजीत) तथा लोकदल (बहुगुणा) परन्तु दोनो मे बहुगुणा का नेतृत्व सर्वोपरि रहा।

तदुपरान्त भारतीय राजनीति मे अचानक परिवर्तन तब आया जब फेयर फेक्स और पनडुब्बी खरीद मे तथाकथित दलाली प्रकरण मे उपजे विवाद के चलते विश्वनाथ प्रताप सिह को सत्ता दल से इस्तीफा देना पड़ा। वी० पी० सिह को व्यापक जन समर्थन मिला और जनमोर्चा का गठन हुआ। इसी परिप्रेक्ष्य में विपक्षी एकता की गति मे पुन तेजी आयी। अक्टूबर 1988 मे विपक्षी नेताओं ने जनता दल की नींव रखी और उसका नेतृत्व वी० पी० सिह को सौपा। गौरतलब है कि बहुगुणा गुट इसमें शामिल नही हुआ। बहुगुणा ने इसे 'अवसरवादी प्रयोग' की सज्ञा दी थी और इसकी उम्र मात्र एक साल आकी थी। वस्तुत बहुगुणा तत्कालीन समय मे विपक्षी एकता के खिलाफ नही थे बल्कि निर्मित इस नये दल के स्वरूप, कार्य पद्धति और नेतृत्व मे चिन्तित थे। उनका मानना था कि इस नये दल पर ऐसे चेहरो का वर्चस्व होने वाला है जिनका गाधी जी के राष्ट्रीय आन्दोलन के मूल्यो मे कोई लेना-देना नही है। ये राजनीतिक स्वार्थ और सत्ता के लिए कोई भी गैर जिम्मेदाराना निर्णय ले सकते है।

नवम्बर 1989 के लोकसभा चुनावो मे किसी को स्पष्ट बहुमत नहीं मिला। भाजपा और वामपन्थी दलो के समर्थन मे जनता दल नेता वी० पी० सिह ने राष्ट्रीय मोर्चा की सरकार बनायी। भारतीय राजनीति में यह अनोखा प्रयोग था। जनतादल जैसी मध्यममार्गी पार्टी दक्षिणपथी भाजपा और वामपंथियो दोनों के सहयोग से सरकार चला रही थी। राजनीतिक पर्यवेक्षको को शुरू से ही यह आशंका थी कि यह प्रयोग सफल नही हो सकेगा। अन्तत मात्र 11 महीने के भीतर ही राष्ट्रीय मोर्चा की सरकार का पतन हो गया। इन 11 महीनों के शासनकाल में जनता दल के नेताओं ने कभी भी एकता का परिचय नहीं दिया। देवीलाल, चन्द्रशेखर, वी० पी० सिह जैसे वरिष्ठ नेता एक दूसरे का कद कम करने मे ही लिप्त रहे। इस प्रकार भारतीय राजनीति पर गहरी परख रखने वाले शीर्षस्थ नेता हेमवती नन्दन बहुगुणा की एक वर्ष पूर्व की गई भविष्यवाणी सही साबित हुई। यद्यपि कांग्रेस के समर्थन से चन्द्रशेखर के नेतृत्व मे समाजवादी जनता दल की सरकार बनी किन्तु अप्रैल 1991 में यह सरकार भी गिर गई। नतीजतन जनता दल दिनो-दिन जर्जर होता चला गया।

भारतीय राजनीति
और
हेमवती नन्दन बहुगुणा
—एक आलोचनात्मक अध्ययन

इलाहाबाद विश्वविद्यालय की डॉक्टर आफ फिलास्फी
उपाधि हेतु प्रस्तुत शोध प्रबन्ध

निर्देशिका
डा० (श्रीमती) रीता जोशी
रीडर
मध्यकालीन एवं आधुनिक इतिहास विभाग
इलाहाबाद विश्वविद्यालय

प्रस्तुतकर्ता
मणि शंकर द्विवेदी

मध्यकालीन एवं आधुनिक इतिहास विभाग
इलाहाबाद विश्वविद्यालय
इलाहाबाद
1999

प्राक्कथन

इतिहास मानव ममाज की प्रगति का प्रमाण एवं मानव ममाज को समझने का ही नही उसे वदलने का अनिवार्य उपकरण है। इतिहास की प्रयोगशाला मे ही नवीन पथ का सृजन संभव है। इतिहास एक विषय ही नहीं अपितु अस्तित्वबोध है। इतिहास की दृष्टि मे स्वतंत्रोपगन्त भारतीय राजनीति का आकलन करना विशद विवेचन का विषय है और मौलिक भी। प्रस्तुत शोध प्रवन्ध मे आजादी के वाद भारतीय राजनीति के विभिन्न आयामों पर एक सकारात्मक समीक्षा देने का प्रयास किया गया है। इस शोधकार्य का प्रमुख उद्देश्य उन राजनैतिक व सामाजिक प्रवाहों का अध्ययन भी है जिन्होंने स्वतंत्र भारत को गहराई से प्रभावित किया है। इसमें स्वतंत्रता से पूर्व कांग्रेस की स्थापना और उसके कार्यो, राष्ट्रीय आन्दोलन के मूल्यों तथा उससे उद्‌भूत राजनीतिज्ञों के योगदानों का भूमिका स्वरूप संक्षिप्त विवेचन, तत्पश्चात् स्वतत्रोपरान्त भारतीय राजनीति के लगभग पॉच दशकों मे उपजी विभिन्न परिस्थितियों तथा विवादों पर प्रकाश डाला गया है। जिसमें विशेष रूप से 1967 में उत्तर प्रदेश की राजनीति में हुए अचानक परिवर्तन (संविद सरकार की स्थापना), 1969 में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस का ऐतिहासिक विभाजन, आपातकाल की त्रासदी, कांग्रेस फार डेमोक्रेसी क्यों? 1977 की जनता सरकार और उसका विघटन, इंदिरागांधी की हत्या और उपजी सहानुभूतिक लहर, तदुपरान्त बोफोर्स मुद्‌दा और विपक्षी एकता का पुर्नप्रयास आदि जैसे विभिन्न विषयों पर तर्क संगत टिप्पणी प्रस्तुत की गई है। इसके साथ-साथ राष्ट्रीय आन्दोलन के प्रभावो व मूल्यों से ही विनिर्मित हेमवती नन्दन बहुगुणा जैसे असाधारण व्यक्तित्व पर एक आलोचनात्मक एवं विशद अध्ययन प्रस्तुत किया गया है।

अपने दीर्घकालीन राजनीतिक जीवन में बहुगुणा ने उत्तर प्रदेश की राजनीति के साथ-साथ राष्ट्रीय राजनीति में करीब दो दशकों तक शीर्षस्थ भूमिका निभाई। सामाजिक न्याय की भावना से प्रेरित बहुगुणा तत्कालीन दौर में सहिष्णुता, समन्वयता, असाम्प्रदायिकता और जातिवाद का विरोध जैसी तमाम समाज सुधारक प्रवृत्तियों के सदैव पोषक रहे तथा समाज में व्याप्त आर्थिक विषमता पर निरन्तर प्रहार करते रहे। स्वतंत्रता संग्राम सेनानी, राष्ट्र भक्त एवं शीर्षस्थ नेता के रूप में बहुगुणा एक कर्मठ, प्रतिभाशाली एवं अत्यधिक विवादास्पद राजनीतिज्ञ थे। स्वतंत्रता आन्दोलन की अग्रिम पंक्ति में रहकर 1942 की अगस्त क्रान्ति में उन्होंने उल्लेखनीय भूमिका निभायी थी। बहुगुणा ने अपने राजनीतिक जीवन में कभी भी सिद्धान्तों से समझौता नहीं किया, भलेही उन्हें इसके लिए हानि ही उठानी पड़ी हो। वस्तुतः वह समाजवादी विचारधारा के नेता थे और पूँजीवाद तथा साम्राज्यवाद के नापाक मंसूबों को नाकाम करने के लिए सतत् सचेष्ट रहे।

अध्ययन विषय पर प्रकाशित प्रमाणित ग्रन्थों की कमी का अनुभव करते हुए प्रस्तुत शोध प्रबन्ध में समसामयिक दैनिक व साप्ताहिक समाचारपत्रों, पाक्षिक व मासिक पत्रिकाओं, उत्तर प्रदेश विधान सभा कार्यवाही

और लोक सभा कार्यवाही के प्रकाशित पृष्ठों आदि का विपुल मात्रा मे प्रयोग किया गया है। इसके साथ-साथ अप्रकाशित सामग्री भी प्रयुक्त हुई है, जिनमे प्रमुख रूप मे राजनेताओं द्वारा लिखे गये व्यक्तिगत पत्रो, विभिन्न मंत्रालयो की फाइले व राजनैतिक दलों की फाइलो मे पडे दस्तावेज और साक्षात्कार आदि हैं। कुछ लोगो के साक्षात्कार शोधार्थी ने स्वतः लिये है और कुछ दिल्ली दूरदर्शन के प्रसारण और शोध निर्देशिका डा० (श्रीमती) रीता जोशी से प्राप्त हुए है। किन्तु इन स्रोतों से प्राप्त बिखरे हुए सम्पूर्ण तथ्यों को संकलित करने एवं उनके विश्लेषण मे प्रमाणिकता और मौलिकता पर कडी नजर रखी गयी है।

प्रस्तुत शोध ग्रन्ध मे जिन साधनों का उपयोग किया गया, उनका विवरण निम्नवत है—इलाहाबाद विश्वविद्यालय का पुस्तकालय, राजकीय पब्लिक लाइब्रेरी इलाहाबाद, इलाहाबाद स्टेट आर्काइब्स, इलाहाबाद सग्रहालय, हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, भारती भवन पुस्तकालय इलाहाबाद, गोविन्द बल्लभ पन्त सामाजिक शोध संस्थान, इलाहाबाद का पुस्तकालय, उत्तर प्रदेश कांग्रेस कमेटी कार्यालय लखनऊ, सचिवालय अभिलेखागार लखनऊ, तीनमूर्ति भवन लाइब्रेरी नई दिल्ली, एवं हेमवती नन्दन बहुगुणा के आवासीय दस्तावेज, इलाहाबाद।

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध मेरी शोध निर्देशिका पूज्यनीया डा० (श्रीमती) रीता जोशी के बहुमूल्य निर्देशन का प्रतिफल है। उन्होंने बहुत सहृदयता एवं वत्सलता पूर्वक विषय चयन से लेकर प्रस्तुति तक सभी सोपानों पर अपने मूल्यवान निर्देश दिये। इलाहाबाद की नगर महापौर जैसे जिम्मेदार और प्रतिष्ठित पद का कुशल निर्वहन करते हुए अपनी व्यवस्ता के बावजूद भी उन्होंने मुझे इस कार्य को पूरा करने में पूर्ण सहयोग दिया। शोधकार्य के बीच उठने वाली सभी समस्याओं का उन्होने विद्वतापूर्ण समाधान करते हुए मेरा मार्गदर्शन किया। इस पूरी अवधि मे मुझे जो उनका स्नेह पूर्ण निर्देशन एवं सहयोग मिला, उसके लिए मै आजीवन उनका आभारी रहूँगा।

आदरणीया प्रो० (श्रीमती) रेखा जोशी (अध्यक्ष, मध्यकालीन एवं आधुनिक इतिहास विभाग) के प्रति हृदय से कृतज्ञ हूँ जिन्होंने अपनी कृपा व स्नेह का पात्र मुझे सर्वदा समझा। मूलतः शोधकार्यकाल में उनकी स्नेहमयी भावना ही मेरे लिए अवलम्बन रही। मैं आभारी हूँ श्रद्धेय गुरूवर प्रो० सी० पी० झा का जिन्होंने सदैव मेरी गम्भीर भूलों एव त्रुटियो को असीम धैर्य से समझाया और सुधारा है। समय-समय पर उनका प्रोत्साहन एवं मार्गदर्शन मेरे लिए प्रेरणास्रोत रहा। इस उपकार के लिए मैं सदैव उनका ऋणी रहूँगा। हार्दिक कृतज्ञता प्रकट कर रहा हूँ आदरणीय प्रो० एन० आर० फारूकी, श्री वी० सी० पाण्डे और डा० पी० एल० विश्वकर्मा के प्रति जिनका सहयोग एवं सुझाव मुझे अनवरत मिलता रहा।

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध की उत्तमता एवं व्यक्तिगत उपलब्धियों का श्रेय आदरणीय डा० हेरम्ब चतुर्वेदी को है। मुझे सदैव उनसे आत्मीयतापूर्ण सहयोग, उपयोगी परामर्श और प्रोत्साहन मिलता रहा है, उन्होंने मेरे कार्य में सदा रूचि ली है। मै उनके प्रति हृदय से आभार व्यक्त करता हूँ। हार्दिक श्रद्धावनत हूँ विभाग के समस्त

गुरूजनो श्री योगेश्वर तिवारी, डा० ललित जोशी, श्रीमती रंजना कक्कड़, डा० (श्रीमती) कल्पना द्विवेदी, डा० (श्रीमती) वन्दिता वर्मा एव डा० संजय श्रीवास्तव के प्रति जिनका मुझे निरन्तर आशीर्वाद और सहयोग मिलता रहा। इसके साथ-साथ मैं आभारी हूँ अपने कार्यालय सचालक श्री जे० पी० मिश्र का तथा हार्दिक धन्यवाद देता हूँ उन समस्त शोधार्थियो, मित्रो व शुभ चिन्तको को जिनका स्नेह और प्रोत्साहन मुझे सदैव आत्मिक बल प्रदान करता रहा है।

अन्त मे मै अपने अग्रज श्री पी० एन० द्विवेदी (वरिष्ठ पत्रकार, इलाहाबाद) के प्रति कृतज्ञता व्यक्त करना चाहता हूँ जिनका मेरे जीवन निर्माण में सर्वाधिक योगदान रहा है तथा यह शोध ग्रन्थ भी उनके निरन्तर सहयोग व प्रोत्साहन का ही प्रतिफल है।

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध के विभिन्न अध्यायों में प्रकट किये गये विचार एवं उनकी समीक्षा गहन अध्ययन का परिणाम है। फिर भी मानवीय स्वभाववस भूलें एवं कमियॉ रह सकती हैं। भविष्य में मैं अपने अधिक व्यापक अध्ययन के आधार पर उनके मार्जन का पूरा प्रयत्न करूँगा।

दिनांक 6/8/99

मणि शंकर द्विवेदी

मणि शंकर द्विवेदी

मध्यकालीन एवं आधुनिक इतिहास विभाग

इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद।

विषय सूची

पृष्ठ भूमि

राष्ट्रीय कांग्रेस और स्वतंत्रता आन्दोलन

———भारतीय राजनीति की एक झलक

भारत के राजनैतिक इतिहास में कांग्रेस का जन्म एक अभूतपूर्व घटना थी। यह उस नये समाज की प्रवक्ता थी जो प्लासी के बाद सौ साल के दौरान हुए आर्थिक, सामाजिक और राजनैतिक परिवर्तनों के परिणामस्वरूप विकसित हुआ। 1885 में कांग्रेस के प्रथम अधिवेशन के साथ ही सारे भारत में नई जिन्दगी के स्पन्दन अनुभूत हुए थे। पहली बार देशी या विदेशी सरकार के द्वारा नहीं बल्कि कुछ दृढ़चित्त मातृभूमि के अग्रगामी सेवकों के द्वारा, जो भारत के विभिन्न भागों से आये थे, राजनैतिक एकता को उभार कर सामने रखा गया[1]। कांग्रेस ने भारतीय स्वतंत्रता के संघर्ष में सदैव ही केन्द्र का कार्य किया। यह वह धुरी थी जिसके चारो ओर स्वतंत्रता की महान घटनाएं घटित हुई[2]।

लम्बे समय से यह विवाद का विषय रहा है कि कांग्रेस की स्थापना क्यों हुई और किसने की? जैसा कि रजनी पाम दत्त ने अपनी शोध पुस्तक 'आज का भारत' में स्पष्ट किया है कि कांग्रेस की स्थापना का श्रेय एक अवकाश प्राप्त अंग्रेज अधिकारी ए० ओ० ह्यूम को है और आसन्न खतरे से बचाव के लिए सुरक्षा नली के रूप में इसकी स्थापना की गई। 1879 मे जब लार्ड लिटन की वायसराय की अवधि समाप्त होने वाली थी, ह्यूम इस बात से सहमत हो गये कि बढ़ते हुए असंतोष का मुकाबला करने के लिए कोई निश्चित कदम उठाना जरूरी है[3]। फलतः देश में बड़े गम्भीर विद्रोह की सम्भावना के कारण ह्यूम ने भारत के तत्कालीन वायसराय से भेंट करने की आवश्यकता महसूस की और इसके तुरन्त बाद कुछ उदारवादी भारतीयो के सहयोग से 'इंडियन नेशनल कांग्रेस' की स्थापना की[4]।

लेकिन वास्तविकता कुछ ऐसी प्रतीत होती है कि भारतीयों मे एक राष्ट्रीय संगठन बनाये जाने की बात काफी समय से चल रही थी। यह कोई कार्य-कारण हीन आकस्मिक घटना नहीं थी। इसके पीछे वर्षो की साधना, संघर्ष, संग्राम, रक्त पात और साधारण जन के स्वाधीन होने की आकुल छटपटाहट थी[5]। अखिल भारतीय कांग्रेस की स्थापना में सर्वाधिक महत्वपूर्ण योगदान इन संगठनों का भी था जिनमें पूना सार्वजनिक सभा (1870), इंडियन एसोसियेशन (1876), मद्रास महाजन सभा (1884)। 1880 के दशक के

---

1. डा० तारा चन्द्र : भारतीय स्वतत्रता आन्दोलन का इतिहास, नई दिल्ली, 1982 (खण्ड-दो) पृष्ठ संख्या- 484।
2. डा० आर० सी० मजूमदार : हिस्ट्री आफ दि फ्रीडम मूवमेंट इन इण्डिया, कलकत्ता, 1962 (खण्ड-एक) पृष्ठ संख्या- 11।
3. रजनीपाम दत्त : आज का भारत, मद्रास, 1977 (पुनर्मुद्रमण-1991) पृष्ठ संख्या- 322-23।
4. प्रो० राम लखन शुक्ल द्वारा सम्पादित 'आधुनिक भारत का इतिहास, नई दिल्ली (हिन्दी कार्यान्वयन निदेशालय) 1987, पृष्ठ सख्या- 392।
5. मन्मथ नाथ गुप्त : कांग्रेस के सौ वर्ष (संघर्ष और सफलता का इतिहास), दिल्ली, 1985 पृष्ठ संख्या- 11।

आरम्भ मे ही इन संस्थाओं को अखिल भारतीय स्तर पर साथ लाने के चर्चे और प्रयास होने लगे थे।' 1882 मे एक राष्ट्रीय सम्मेलन का सुझाव देते हुए यह स्पष्ट किया गया कि 'हम एक राष्ट्रीय और कम से कम प्रान्तीय कांग्रेस क्यो न संगठित करे और देश के विभिन्न भागो मे आये हुए और विभिन्न सार्वजनिक संस्थाओ मे भेजे हुए प्रतिनिधियो की एक आम सभा क्यो न करे'[7] अनन्तर 1883 के 28 दिसम्बर से 30 दिसम्बर तक पहला राष्ट्रीय सम्मेलन कलकत्ता मे हुआ। इसमे जिन महत्वपूर्ण मुद्दो पर विचार हुआ, वे थे— प्रतिनिधि परिषद, साधारण तथा तकनीकी शिक्षा, न्याय से प्रशासन का अलगाव, फौजदारी न्याय की व्यवस्था और सरकारी सेवाओं मे भारतीयो की अधिक नियुक्ति। ब्लन्ट के शब्दो मे 'यह राष्ट्रीय संसद की स्थापना का प्रथम सोपान था'[8]।

28 दिसम्बर,1885 को बम्बई मे दिन के 12 बजे गोकुलदास तेजपाल संस्कृत कालेज के भवन मे कांग्रेस का पहला अधिवेशन हुआ। प्रारम्भ मे ही कांग्रेस का स्वरूप राष्ट्रीय था यह किसी वर्ग विशेष किसी जाति धर्म सम्प्रदाय आदि की प्रतिनिधि संस्था मात्र नही थी, वरन् इसकी सदस्यता अंग्रेज, हिन्दू, मुसलमान, फारसी आदि सभी वर्ग के व्यक्तियो ने ग्रहण की जो भारत के विभिन्न क्षेत्रों के रहने वाले तथा भारतीय सामाजिक जीवन के सार्वजनिक सुमान्य नेता थे। इनमे किसी का भी उद्देश्य मात्र ब्रिटिश साम्राज्यवाद की रक्षा करके अपने निजी स्वार्थो की पूर्ति करना नही था। एलेन आक्टेवियन ह्यूम, वेडरबर्न, फिरोजशाह मेहता, दादा भाई नौरोजी, सुरेन्द्र नाथ बनर्जी, बदरूद्दीन तैयबजी, उमेश चन्द्र बनर्जी आदि किसी भी आरम्भिक नेता को किसी वर्ग विशेष या साम्राज्यवाद का प्रतिनिधि नही माना जा सकता[9]। कांग्रेस का उद्देश्य जाति, धर्म या वर्ण के किसी भेदभाव के बिना समग्र भारतवासियो का प्रतिनिधित्व करना था। कांग्रेस का राष्ट्रीय स्वरूप इसी से स्पष्ट हो जाता है कि इसके प्रथम अध्यक्ष वोमेश चन्द्र बनर्जी भारतीय इसाई थे, दूसरे दादा भाई नौरोजी पारसी थे, तृतीय बदरुद्दीन तैयबजी मुसलमान थे, चतुर्थ एव पंचम अध्यक्ष जार्ज यूल और सर विलियम वेडरबर्न अंग्रेज थे[10]।

कांग्रेस के प्रथम अधिवेशन मे केवल 72 प्रतिनिधियों ने भाग लिया। इस दौरान इस बात की आशा नही की जाती थी कि भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस देश की सबसे बड़ी राजनैतिक संस्था का रूप ग्रहण कर लेगी और कालान्तर में ब्रिटिश शासन का स्थान ग्रहण कर लेगी। शुरू मे कांग्रेस ने अपने आपको एक पार्टी के रूप मे नही बल्कि एक आन्दोलन[11] के रूप मे लिया। प्रारंभिक दौर क कांग्रेसी नेता नरमपंथी थे ये ब्रिटिश

---

6 सुमित सरकार : आधुनिक भारत (1885-1947) नई दिल्ली, 1992 (पुर्नमुद्रण-1995) पृष्ठ संख्या- 112।

7 डा० ताराचन्द्र भारतीय स्वतंत्रता आन्दोलन का इतिहास, वही, पृष्ठ संख्या- 478।

8 डा० ताराचन्द्र : वही।

9 डा० बी० पट्टाभि सीता रमैया : संक्षिप्त कांग्रेस का इतिहास नई दिल्ली, 1958, पृष्ठ संख्या-18-19।

10 डा० पी० आर० जैन : नेशनल मूवमेंट आफ इण्डिया एण्ड इण्डियन कांस्टीट्यूशन, पृष्ठ संख्या-21।

11 बिपिन चन्द्र भारत का स्वतत्रता संघर्ष, नई दिल्ली (हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय)1990, पृष्ठ संख्या- 50।

की कुछ एक नीतियो की आलोचना तो करते थे किन्तु सामान्यत अंग्रेजो के प्रशंसक थे तथा ब्रिटिश शासन की दैवी प्रकृति मे आस्था भी रखते थे[12]। लेकिन उनके आर्थिक आन्दोलनो ने ब्रिटिश शासन की राजनैतिक जड़े काट दी तथा भारतीय जनमानस मे उनके प्रति अविश्वास और बेगानगी, बल्कि विद्रोह तक के बीज बो दिये जो 1905 तक आते–आते स्वशासन की मॉग मे परिणित हो गई[13]।

कांग्रेस के आठवे अधिवेशन 1892 मे इण्डियन कौसिल एक्ट पारित हुआ। यह पुराने कानूनो मे कुछ अच्छा था। क्योकि ब्रिटिश राजनीतिज्ञ यह समझ चुके थे कि भारतीय जनमत को संतुष्ट करने के लिए कुछ न कुछ दिखावा आवश्यक है। इस प्रस्ताव मे भारतीय लेजिस्लेटिव कौसिल के सदस्यों की सख्या 12 से 16 कर दी गई। चुनाव का सिद्धान्त लागू नही हुआ, पर यह कहा गया कि नामजदगी करते समय नगरपालिकाओं और जिलाबोर्डो की राय ली जाएगी। प्रान्तीय कौंसिलो के भी सदस्यों की संख्या बढ़ा दी गई। लेजिस्लेटिव कौंसिल के अधिकार भी बढ़ाये गये और सदस्यो को यह अधिकार मिला कि वे प्रश्न पूछ सकते है[14]। लेकिन राष्ट्रवादी इस अधिनियम से पूर्णत: असन्तुष्ट थे, इसे वे अपनी मांगो के साथ मजाक मानते थे। परिषदे नपुसक थी और सरकार की सत्ता पूर्णत निरकुश। वे सवाल तो पूछ सकते थे लेकिन उनका जवाब आने पर पूरक सवाल नही कर सकते थे[15]।

19वी शताब्दी के उत्तरार्द्ध मे कांग्रेस की लोकप्रियता से तंग आकर अंग्रेजो ने `फूट डालो और राज करो' की नीति का अनुसरण करना शुरू कर दिया। उन्होंने मुसलमानो को कांग्रेस विरोधी आन्दोलन शुरू करने[16] का प्रोत्साहन दिया और सर सैय्यद अहमदखॉ के नेतृत्व मे कांग्रेस के विरूद्ध इण्डियन पेट्रोयाटिक एसोसियेशन[17] नामक एक प्रतियोगी सस्था कायम कर दी। लेकिन उनके इस विरोधी चाल के बावजूद भी कांग्रेस अधिवेशन सफल रहे।

बीस वर्षो तक राष्ट्रीय कांग्रेस अपने संस्थापको द्वारा तैयार किये गये रास्तों पर ही चलती रही अर्थात् उसके प्रस्तावो मे किसी भी रूप मे स्वराज की बुनियादी मांग नहीं की गई। इसकी मांग केवल वही तक सीमित रही कि शासन की ब्रिटिश प्रणाली में ही भारतीयों का अधिक से अधिक प्रतिनिधित्व हो[18] परन्तु इस बात को नजर अन्दाज नही किया जा सकता है कि कांग्रेस ने 1885 से 1905 के अपने शुरूआतिक दिनों मे राष्ट्रीय आन्दोलन की जमीन तैयार करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। जिसके फलस्वरूप 1906 तक

---

12 सुमित सरकार : आधुनिक भारत, वही, पृष्ठ संख्या- 115।
13 बिपिन चन्द्र . भारत का स्वतंत्रता संघर्ष, वही, पृष्ठ संख्या- 66।
14 मन्मथ नाथ गुप्त . कांग्रेस के सौ वर्ष, वही, पृष्ठ संख्या- 55।
15 बिपिन चन्द्र . भारत का स्वतंत्रता सघर्ष, वही, पृष्ठ संख्या- 89।
16 प्रो० राम लखन शुक्ल द्वारा सम्पादित 'आधुनिक भारत का इतिहास' वही, पृष्ठ संख्या- 401।
17 डा० तारा चन्द्र . भारतीय स्वतत्रता आन्दोलन का इतिहास, वही, पृष्ठ सख्या- 508।
18 रजनीपाम दत्त : आज का भारत, वही, पृष्ठ संख्या- 331।

आते-आते राष्ट्रवादियो मे 'स्वशासन' शब्द मुखरित होने लगे, जैसा कि दादा भाई नौरोजी ने ही कहा कि काग्रेस का उद्देश्य इग्लैण्ड तथा अन्य उपनिवेशो की तरह स्वायत्त शासन अथवा सवराज्य पाना है[19]।

आगे चलकर सरकारी विरोध तथा घृणा मे अविचलित रहकर राजनैतिक आन्दोलन जोर पकड़ता और बढ़ता चला गया। कुछ भारतीय राष्ट्रवादियो मे उग्रस्वर झलकने लगे। वास्तव में उग्रवाद के मार्ग की शुरूआत, राष्ट्रवाद के प्रमुख प्रहरी के रूप मे महाराष्ट्र के बाल गगाधर तिलक से आरम्भ होता है।1893 मे गोरक्षा आन्दोलन और 1895 मे शिवाजी उत्सव[20] के आयोजन के माध्यम से राष्ट्रीय चेतना जाग्रत करते हुए 1896 मे सूती कपड़े पर जबाबी आवकारी लागू होने पर बहिष्कार आन्दोलन[21] तिलक की शुरूआतिक आजमाइश थी। सन् 1885 मे तिलक ने एक अवसर पर कहा था, 'भाट की तरह गुणगान करने मे स्वतत्रता नही मिल जाएगी, स्वतत्रता के लिए शिवाजी और बाजीराव की भाँति साहसिक कार्य करने पडेंगे[22]'। वे काग्रेस की आवेदन-निवेदन वाली नीति के विरोधी थे। उन्होने इस नीति को 'भिक्षा मांगने' की नीति[23] कही।

परिणामस्वरूप 1906 मे बाइसवे अधिवेशन के साथ ही कांग्रेस के भीतर मनमुटाव शुरू हो गया। उग्रदल लोकमान्य तिलक को सभापति के रूप में देखना चाहता था पर नमर दल इससे सहमत नहीं था। अन्तत नरमदलीय नेताओं की पहल पर 82 साल के वृद्ध नेता दादा भाई नौरोजी को सभापति चुनने पर किसी तरह मामला तो टल गया[24] लेकिन सूरत के तेइसवे अधिवेशन तक दोनों खेमे एक दूसरे को अपना सबसे बडा राजनैतिक शत्रु मानने लगे। फलतः आन्तरिक संघर्ष अवश्यम्भावी हो गया। पूरा अधिवेशन उत्तेजना और क्रोध के वातावरण से भर गया। लोग मारपीट पर उतारु हो गये, कुर्सियां तथा जूते, चप्पल फेके गये[25]। इसमे जीत केवल अंग्रेजी हुकूमत की हुई। ब्रिटिश सरकार को दमनात्मक कार्यवाही करने का अच्छा अवसर मिला। मिटों ने तत्काल मारले को लिखा कि 'सूरत में कांग्रेस का पतन हमारी बहुतबड़ी जीत है।'[26]

राष्ट्रीय आन्दोलन में स्वदेशी आन्दोलन का स्वरूप बंगाल विभाजन के विरोध में स्पष्ट हो जाता है। बंगाल का यह विभाजन बिल्कुल मनमाना था, इसमें कोई आधार नहीं था, इस अवसर पर केवल हिन्दू-

---

19 सुमित सरकार : आधुनिक भारत, वही, पृष्ठ सख्या- 114।
20 डा० तारा चन्द्र : भारतीय स्वतंत्रता आन्दोलन का इतिहास, वही, पृष्ठ संख्या- 509।
21 सुमित सरकार : आधुनिक भारत, वही, पृष्ठ संख्या- 124।
22 राम गोपाल : इण्डियन पोलिटिक्स, पृष्ठ संख्या- 109।
23 प्रो० राम लखन शुक्ल द्वारा सम्पादित 'आधुनिक भारत का इतिहास', वही, पृष्ठ संख्या- 404।
24 एम० सी० सरकार एवं के० के० दत्त : आधुनिक भारत वर्ष का इतिहास, पटना, 1951, पृष्ठ संख्या- 460।
25 बिपिन चन्द्र : भारत का स्वतंत्रता संघर्ष, वही, पृष्ठ संख्या- 113।
26 बिपिन चन्द्र, वही।

मुसलमान को लडाने की चेष्टा की गई[27]। सम्पूर्ण भारत ने बंगाल के सवाल को अपना सवाल बना लिया। वग-भग की घोषणा के उपरान्त जनता मे एक व्यापक और जबरदस्त आन्दोलन हुआ। सरकार ने भी उग्रता से दमन शुरू कर दिया। बगाल के साथ-साथ देश के विभिन्न भागो मे भी जुलूस, सभा, प्रदर्शन व हड़ताले चलती रही और ब्रिटानी सरकार द्वारा विद्यार्थी तथा नागरिक एक ही सजा के भागीदार बनते रहे[28]।

1907 के अन्त मे भारतीय राजनीति मे एक नया मोड आया अर्थात क्रातिकारी आतंकवाद का उदय हुआ। बदनाम अंग्रेजी अफसरो की हत्या की योजना बनी। 30 अप्रैल, 1908 को मुजफ्फरपुर मे श्रीमती कैनेडी तथा कुमारी केनेडी मारी गई। जिसमे खुदी राम बोस को फॉसी दी गई[29]। खुदीराम बोस के चित्र बंगाल के घर-घर मे लगाये गये और युवको ने अपनी धोतियो और पोशाक के बार्डर पर खुदीराम बोस का नाम छपवाया[30]। लोकमान्य तिलक ने खुदीराम के विषय को लेकर केसरी मे कई लेख लिखे। इसी अपराध मे वह गिरफ्तार कर लिए गये और उन्हे छः साल की सख्त सजा और 100 रुपया जुर्माना सुना दिया गया[31]। यही स्थिति अर्थात् एक तरफ बढ़ता हुआ उग्रवाद और नृसंश दमनात्मक कार्यवाही पूरे भारतीय समाज को झकझोर रही थी, उधर रास बिहारी बोस और सचिन सान्याल के नेतृत्व मे क्रांतिकारियों द्वारा लार्ड हर्डिंग की हत्या का प्रयास जारी था। लन्दन मे मदन लाल धीगरा ने कर्जन वाइली को मार गिराया। जिसके आरोप मे उन्हे फासी दी गई।[32]

1909 मे सरकार द्वारा मार्ले-मिंटो सुधार दिया गया। इसम सन्देह नही कि यह पहला शासन सुधार था जिसमे चुनाव का सिद्धान्त किसी हद तक माना गया था। इस अधिनियम की विशेषता वर्गो, जातियों तथा हितो के आधार पर प्रतिनिधित्व था, क्षेत्रीय आधार पर नही।[33] लेकिन यह भी प्रतीत होता है कि मारले-मिटो सुधारों का मूल मकसद राष्ट्रवादी खेमे मे फूट डालना और मुस्लिम साम्प्रदायिकता को भड़काकर भारतीयो के बीच दिन ब दिन बढ़ती एकता को रोकना था[34]। सन् 1911 में लार्ड हर्डिंग ने बंगाल विभाजन समाप्त करने की घोषणा की, जिसका सम्पूर्ण भारत ने स्वागत किया। बंग-भंग का संशोधन किया जाना राष्ट्रीय आन्दोलन की आशिक सफलता की अभिव्यक्ति मानी गई। 1914 के पहले के वर्षो में अपनी तमाम सीमाओं के बावजूद उग्रपथी नेताओं ने एक महान और स्थाई काम कर डाला था, इतिहास मे पहली बार

---

27 मन्मथ नाथ गुप्त : कांग्रेस के सौ वर्ष, वही, पृष्ठ संख्या- 66-67।
28. डा० बी० पट्टाभि सीतारमैया · संक्षिप्त कांग्रेस का इतिहास, वही, पृष्ठ संख्या- 80।
29 मन्मथ नाथ गुप्त . कांग्रेस के सौ वर्ष, वही, पृष्ठ संख्या- 80।
30 सुभाष चन्द्र बोस : दि इण्डियन स्ट्रगल, कलकत्ता, 1964, पृष्ठ संख्या- 147, गुरुमुख निहाल सिह द्वारा उद्धृत भारत का वैधानिक एव राष्ट्रीय विकास, दिल्ली, 1952 पृष्ठ सख्या- 315।
31 मन्मथ नाथ गुप्त . कांग्रेस के सौ वर्ष, वही, पृष्ठ संख्या- 81।
32 बिपिन चन्द्र : भारत का स्वतत्रता सघर्ष, वही, पृष्ठ सख्या- 118।
33 प्रो० राम लखन शुक्ल द्वारा सम्पादित 'आधुनिक भारत का इतिहास, वही, पृष्ठ संख्या- 540।
34 एम० सी० सरकार एवं के० के० दत्त : आधुनिक भारत वर्ष का इतिहास, पटना, 1951, पृष्ठ सख्या- 422-23।

भारतीयों की आजादी की माग विश्व राजनीति के मच पर एक प्रमुख प्रश्न का रूप ले चुकी थी।[35]

1914 मे प्रथम महायुद्ध आरम्भ हो गया था। ब्रिटिश सरकार ने जर्मनी के निरकुश शासको के विरुद्ध लोकतत्र की रक्षा के लिए भारतीय जनता का आह्वान किया। अंग्रेजो के इस समय बहुत अधिक सहानुभूत रवैया से आकृष्ट होकर भारतीय नवयुवको एव नेताओं ने विभिन्न क्षेत्रों में और लड़ाई में अपूर्व शौर्य का परिचय दिया[36]। इस समय तक भारत की राजनीतिक स्थिति दयनीय हो चुकी थी। कांग्रेस पूर्णतया नेतृत्वहीन थी। गोखले और सर फिरोजशाह मेहता स्वर्गवासी हो चुके थे। देश का नेतृत्व प्रायः राष्ट्र के हाथों से निकलकर नौकरशाही के हाथो मे जा रहा था[37]। युद्ध के दौरान ही भारतीय नेताओं ने मांग की कि सरकार यह घोषणा करे कि युद्ध की समाप्ति के बाद भारत में वैसी ही सरकार स्थापित की जायेगी जैसे कि अन्य उपनिवेशो में है, लेकिन अंग्रेजी सरकार उनकी भावनाओं को नजरअन्दाज करती रही। अन्तत विवश होकर भारतीय नेताओं को होमरूल आन्दोलन चलाना पड़ा[38]।

1916 मे लखनऊ में हुआ कांग्रेस अधिवेशन अपने में अद्वितीय था। जहॉ एक ओर जेल से छूटे लोकमान्य तिलक के साथ गरमदल कांग्रेस में शामिल हुआ वहीं दूसरी ओर हिन्दू-मुस्लिम एकता को भी बढ़ावा मिला और 'कांग्रेस लीग योजना'[39] पास हुई। कांग्रेस में वापसी के बाद तिलक और एनी बेसेंट ने अपनी पूर्व योजना के फलस्वरूप 'होमरूल-लीग' की स्थापना कर दी जिसके तहत काग्रेस में 9 वर्षो से चला आ रहा पृथकता का दौर समाप्त हो गया[40]। होमरूल आन्दोलन के बढ़ते प्रभाव और लोकप्रियता से चिन्तित होकर सरकार ने एनीबेसेंट को गिरफ्तार कर लिया। लेकिन व्यापक असंतोष और आन्दोलन को छिड़ते देखकर सरकार ने समझौतावादी रुख अपना लिया और गृहसचिव मांटेग्यू ने घोषणा की कि भारतीय प्रशासन मे भारतीय जनता को भागीदार बनाया जाय तथा स्वशासन के लिए ब्रिटिश सरकार से जुड़ी कोई उत्तरदायी सरकार स्थापित की जाय[41]। इसी घोषणा के चलते दिसम्बर 1917 में एनी बेसेंट को रिहा कर दिया गया।

1917 के बाद के वर्षों से भारत में राजनीतिक आन्दोलनों का रूपान्तर शुरू हुआ। जो आन्दोलन पहले समाज के इने-गिने लोगों तक ही सीमित था वह अब जनता तक पहुँच गया और एक महान जनांदोलन के रूप में अंग्रेजी राज की नींव हिला दी[42]। 1919 ई० के शुरू के दिनों में रोलट एक्ट पेश

---

35 रजनी पाम दत्त : आज का भारत, मद्रास, 1977, (पुर्नमुद्रण 1991) पृष्ठ सख्या- 342।
36. पुखराज जैन : नेशनल मूवमेंट एण्ड इण्डियन कांस्टीट्यूशन, पृष्ठ संख्या- 126।
37 डा० बी० पट्टाभि सीता रमैया : कांग्रेस का इतिहास, वही, पृष्ठ संख्या- 126।
38 पुखराज जैन : नेशनल मूवमेंट एण्ड इण्डियन कांस्टीट्यूशन, वही, पृष्ठ संख्या- 71।
39 बी० पट्टाभि सीता रमैया : कांग्रेस का इतिहास, वही, पृष्ठ संख्या- 135।
40 डा० ईश्वरी प्रसाद : अर्वाचीन भारत का इतिहास, इलाहाबाद, 1986, पृष्ठ संख्या- 399।
41 जे० एन० बाजपेयी : दि इक्सटर्मिस्ट मूवमेंट इन इण्डिया, इलाहाबाद, 1974, पृष्ठ संख्या- 149-50।
42 रजनी पाम दत्त : आज का भारत, वही, पृष्ठ संख्या- 342।

किया गया। अंग्रेज हुकूमत के इस कानून को भारतीय जनता अपने लिए अपमान समझी क्योंकि यह कानून ऐसे समय पर आया (विश्व युद्ध की समाप्ति पर), जब भारतीय जनता संवैधानिक सुधारों का इंतजार[43] कर रही थी। फलत गाधीजी ने अग्रेजी हुकूमत के रोलट कानूनों के खिलाफ सत्याग्रह लीग नामक संगठन की स्थापना कर दी। जिसके फलस्वरूप देश भर मे बड़े-बड़े जुलूस निकाले गये, हड़तालें हुई, कहीं-कहीं जनता और पुलिस के बीच सघर्ष भी हुआ। दिल्ली, अमृतसर तथा अहमदाबाद मे आन्दोलन का स्वरूप बड़ा विचित्र रहा। सरकार ने भी दमन के असाधारण तरीके इस्तेमाल किये। अमृतसर में जलियॉवाला बाग की घटना इसी समय मे हुई जहॉ जनरल डायर ने चारों तरफ दीवारों से घिरी जनता पर गोलियाँ बरसायी[44]। सरकारी आंकड़ों के अनुसार 379 व्यक्ति मारे गये लेकिन वास्तव में मरने वालों की संख्या बहुत ज्यादा थी[45]। पंजाब में हुई इस नृशसता एवं देश व्यापी हिसा से गांधी बहुत चिंतित हुए और अपनी बहुत बड़ी भूल स्वीकार करते हुए शीघ्रता से सत्याग्रह वापस ले लिया।[46]

किन्तु 1919 में जनता में असंतोष की जो क्रांतिकारी लहर उठी थी वह 1920 और 1921 में भी बराबर आगे बढ़ती रही। यद्यपि कांग्रेस स्वभाव और परम्परा से क्रांति के खिलाफ थी लेकिन युद्ध के बाद की परिस्थितियो मे उभरते आन्दोलन और जनअसंतोष, नेतृत्व को चुनौती दे रहे थे। तत्पश्चात् गांधी और अन्य कांग्रेसी नेताओं ने 'अहिसात्मक असहयोग आन्दोलन' का नारा दिया[47]। इस समय भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस का ध्येय समस्त न्यायपूर्ण और शान्तिमय मार्गों से भारतवासियों द्वारा स्वराज्य प्राप्त करना बन चुका था। पहली अगस्त 1920 को आन्दोलन छिड़ गया। इस आन्दोलन के कार्यक्रमों में उपाधियों और प्रशस्तियों को लौटाना, सरकारी स्कूलो, कालेजों, अदालतों, विदेशी कपड़ों का बहिष्कार, राष्ट्रीय विद्यालयों की स्थापना, पचायतो का गठन तथा कताई-बुनाई आदि शामिल था[48]। नवम्बर में नई विधानसभाओं के चुनाव का बहिष्कार किया गया और इसमें काफी सफलता मिली। भारी संख्या में छात्रों ने जोश के साथ असहयोग आन्दोलन मे हिस्सा लिया। मोतीलाल नेहरू और सी० आर० दास जैसे कुछ प्रमुख वकीलों ने अदालतों के बहिष्कार मे भाग लिया[49]। बहिष्कार आन्दोलन सबसे अधिक सफल था—विदेशी कपड़ों के बहिष्कार के कार्यक्रम में। कार्यकर्ता घर-घर जाकर विदेशी कपड़े इकट्ठे करते, स्थानीय लोग एक जगह इकट्ठे होते और इन कपड़ों की होली जलायी जाती थी[50]।

---

43 बिपिन चन्द्र . भारत का स्वतत्रता संघर्ष, वही, पृष्ठ सख्या- 151।

44 जवाहर लाल नेहरू : ऐन आटो बायोग्राफी, लन्दन, 1936, (पुर्नमुद्रण-न्यू दिल्ली, 1996) पृष्ठ संख्या- 42-43।

45 बिपिन चन्द्र : भारत का स्वतंत्रता संघर्ष, वही, पृष्ठ सख्या- 152।

46 सुमित सरकार . आधुनिक भारत, वही, पृष्ठ संख्या- 228।

47 रजनी पाम दत्त . आज का भारत, वही, पृष्ठ संख्या- 349-50।

48 डा० ईश्वरी प्रसाद अर्वाचीन भारत का इतिहास, इलाहाबाद, 1986, पृष्ठ संख्या- 415।

49 वेद मेहता : महात्मा गाधी एण्ड हिज एपोस्टलेस, न्यू देलही, 1976, पृष्ठ सख्या- 142।

50 बिपिन चन्द्र : भारत का स्वतंत्रता संघर्ष, वही, पृष्ठ संख्या- 157।

गाधी जी पूर्णतया हिसा के खिलाफ थे। 17 नवम्बर को एक अत्यन्त सफल देश व्यापी हड़ताल ने प्रिंस आफ वेल्स का स्वागत किया। बम्बई मे कुछ हिसक झड़पे हुई, जिसके कारण गांधीजी ने कहा कि ''स्वराज की गन्ध से मेरे नथुने फटने लगे है[51]" फलत: बारदौली के एकमात्र चुनिंदा ताल्लुके में किये जाने वाले सविनय अवज्ञा आन्दोलन की योजना को पुन: स्थगित कर दिया गया।

1921 मे आन्दोलन की प्रगति का पता केवल इसी तथ्य से नही चलता है कि लोग जोश के साथ असहयोग आन्दोलन का साथ दे रहे थे बल्कि देश के सभी भागों में दिनो दिन बढ़ रहे जनसघर्ष से भी आन्दोलन के विकास की जानकारी मिलती है। असम बगाल में रेल कर्मचारियो ने हड़ताल की, मेदनीपुर में लोगो ने कर न देने का अभियान चलाया, दक्षिण में मालाबार में मोपला विद्रोह हुआ और पंजाब में जुझारु अकालियो ने उन महन्तों के खिलाफ आन्दोलन चलाया जिन्हें सरकार का सरक्षण प्राप्त था[52]। आन्दोलन के इसी सिलसिले मे 5 फरवरी को चौरा-चौरी (उत्तर प्रदेश) में गॉव वालों के जा रहे निहत्थे जुलूस पर पुलिस वालों ने गोलियॉ चलायी जिससे जनता क्रुद्ध होकर थाने में आग लगा दी। इसमें 22 पुलिस वाले जलकर मर गये। मानवता को दहला देने वाली उपरोक्त नृशंस घटनाओं ने गांधीजी को विचलित कर दिया। उन्होंने सोचा कि आन्दोलन अहिसात्मक के बजाय हिसात्मक हो गया है। अतः उन्होंने इस आन्दोलनों को विना किसी शर्त के रोक दिया[53]।

महात्मा गांधी के इस निर्णय से अनेक कांग्रेसी नेता राजगोपालाचारी, मोतीलाल नेहरू, शौकत अली, मुहम्मद अली तथा लालालाजपत राय बहुत असंतुष्ट हुए। इस आन्दोलन को एकदम इस तरह समाप्त करने से महात्मागॉधी की लोकप्रियता बहुत कम हो गई[54]। सुभाषाचन्द्र बोस ने अपनी पुस्तक इण्डियन स्ट्रगल में लिखा है कि 'जिस समय जनता में उत्साह और जोश उबल पड़ रहा था ठीक उसी वक्त पीछे हटने का आदेश देना सम्पूर्ण राष्ट्र केलिए महान दुर्घटना थी'[55]। लेकिन तत्कालीन परिस्थिति कुछ और बनी हुई दीखती है, जैसा कि असहयोग आन्दोलन में चौरा-चौरी कांड के प्रभाव के बारे में जवाहर लाल नेहरू ने लिखा है कि आन्दोलन केवल चौरा चौरी के कारण स्थगित नही किया गया वरन् वास्तविकता यह थी कि यद्यपि बाहर मे हमारा आन्दोलन बड़ा शक्तिशाली दिखाई देता था, वह बड़ी प्रगति कर रहा था किन्तु आन्दोलन छिन्न-भिन्न हो रहा था। यह आन्दोलन स्थगित नहीं किया जाता तो शासन के द्वारा खूनी पद्धति से इसका अन्त कर दिया जाता। आतंक का एक ऐसा राज स्थापित हो जाता जो जनता के उत्साह को ही समाप्त कर देता[56]।

---

51 सुमित सरकार आधुनिक भारत, वही, पृष्ठ सख्या- 240।

52 डा० ईश्वरी प्रसाद . अर्वाचीन भारत का इतिहास, इलाहाबाद, 1986, पृष्ठ सख्या- 427।

53 डा० ईश्वरी प्रसाद वही।

54 डा० ईश्वरी प्रसाद · वही।

55 सुभाष चन्द्र बोस · दि इण्डियन स्ट्रगल, वही, पृष्ठ संख्या- 90।

56 जवाहर लाल नेहरू ऐन आटो बायोग्राफी, लन्दन, 1936, (पुर्नमुद्रण, न्यू देलही, 1996) पृष्ठ संख्या- 85।

आन्दोलन समाप्त करने के पश्चात् गांधीजी ने रचनात्मकर्ता के प्रति अपनी धारणा बना ली जिसे काग्रेस ने भी बढ़ावा दिया। गांधी जी केवल राजनैतिक स्वतंत्रता ही नहीं चाहते थे अपितु जनता की आर्थिक, सामाजिक और आत्मिक उन्नति भी चाहते थे। इस भावना से उन्होंने 'ग्राम उद्योग संघ', तालीमी सघ, गोरक्षा बनाये। खादी उनके आर्थिक कार्यक्रम की प्रतीक बनी। उन्होंने जनता के सामाजिक सुधार के लिए सभी प्रकार की असमानताओं (जन्म, जाति, धर्म और धन की) को समाप्त करने का प्रयत्न किया[57]। लेकिन असहयोग आन्दोलन वापस ले लेने से देश मे अचानक निद्रा सी छाने लगी थी। सरकार ने अब कोई खतरा न समझकर 10 मार्च, 1922 को गांधी जी को गिरफ्तार भी कर लिया और पारसी न्यायाधीश मि० डॉवर ने उनको छः साल की साधारण कारावास की सजा सुनायी[58]।

गांधी जी की गिरफ्तारी के पश्चात राष्ट्रवादी खेमे में बिखराव आने लगा। कांग्रेस वैचारिक मतभेदों का शिकार बन गयी और पुनः दो धड़ो मे विभाजित हो गयी। सी० आर० दास और मोतीलाल नेहरू ने 1923 मे स्वराज पार्टी का गठन किया[59]। स्वराजवादी औपनिवेशिक सत्ता को उखाड़ फेंकने के लिए विधान परिषदो को बतौर हथियार इस्तेमाल करना चाहते थे लेकिन दूसरे खेमे के राष्ट्रवादी राजेन्द्र प्रसाद और सी० राजगोपालाचारी आदि नेताओं का तर्क था कि संसदीय कार्यों में संलग्न होने से रचनात्मक कार्यों की उपेक्षा होगी। आपसी विरोध के बावजूद भी 1923 के चुनावो में स्वराज दल को मध्य प्रान्त तथा बंगाल में पूर्ण बहुमत मिल गया और उन्होने अपने विरोध से मंत्रियों के कार्य में बाधा डालकर उन्हें कार्य नहीं करने दिया[60]। गांधी जी स्वराजी नेताओं की नीतियों के विरोधी जरूर थे, पर इनकी निष्ठा और इमानदारी पर उन्हें कोई शक नही था। 5 फरवरी, 1924 को स्वास्थ्य की खराबी के कारण रिहा हो जाने पर गांधी जी ने अपनी स्थिति को स्पष्ट करते हुए कहा 'मैं स्वराजवादियों के मार्ग में अवरोध अथवा उनके विरुद्ध प्रचार में भाग नही ले सकता। यद्यपि मैं ऐसी योजना को सक्रिय सहायता नहीं कर सकता, जिसमें मुझे स्वयं विश्वास नही है[61] किन्तु सन् 1926 के अन्त तक स्वाराज्य दल की शक्ति बिल्कुल समाप्त हो गई, इस दल के पतन के कारणो मे मुख्य रूप से चितरन्जन दास की मृत्यु होना, कांग्रेस में एक अन्य दल की स्थापना होना, 1926 के चुनाव मे कम सफलता प्राप्त होना, हिन्दू-मुस्लिम दंगे, स्वराज्य दल में फूट पड़ना आदि को लिया जा सकता है[62]।

1919 के भारत सरकार अधिनियम के कार्य की समीक्षा करने के लिए ब्रिटिश सरकार 1927 मे एक

---

57 बी० एल० ग्रोवर एवं यशपाल : आधुनिक भारत का इतिहास, नई दिल्ली, 1981, पृष्ठ संख्या- 458।
58 डा० ईश्वरी प्रसाद · अर्वाचीन भारत का इतिहास, वही, पृष्ठ संख्या- 427।
59 एम० सी० सरकार एवं के० के० दत्त : आधुनिक भारत वर्ष का इतिहास, पटना, 1951, पृष्ठ संख्या- 446।
60 बी० एल० ग्रोवर एव यशपाल : आधुनिक भारत का इतिहास, नई दिल्ली, 1981, पृष्ठ संख्या- 206-7-8।
61 राम गोपाल : इण्डियन पोलिटिक्स, वही, पृष्ठ संख्या- 305।
62 पी० आर० जैन : नेशनल मूवमेंट आफ इण्डिया, पृष्ठ संख्या- 96।

आयोग जिसे प्राय साइमन कमीशन कहा जाता है, नियुक्त किया। ब्रिटिश सरकार ने साइमन कमीशन की नियुक्ति करने का निर्णय निर्धारित समय से 2 वर्ष पूर्व ही कर लिया। इस कमीशन मे अध्यक्ष को लेकर कुल 7 सदस्य थे जो कि सभी अंग्रेज थे। इसीकारण भारतीय जनता के प्रत्येक वर्ग ने इसकी नियुक्ति को देश का सबसे महान अपमान समझा और विविध स्थानो पर इसके प्रति विरोध प्रकट किया जाने लगा[63]। दिल्ली मे कमीशन के पैर जैसे ही पडे उसका विरोधी प्रदर्शनो द्वारा विराट स्वागत किया गया और "गो वैक साइमन" साइमन वापस लौट आओ" के झण्डे तथा तख्ते दिखाये गये[64] लाहौर मे कमीशन का बायकाट करते समय लालालाजपत राय को पुलिस ने इस प्रकार बुरी तरह पीटा कि वे वीर गति को प्राप्त हो गये। क्रातिकारी दल ने इस नृशसता का बदला, भगत सिह, चन्द्रशेखर आजाद तथा राजगुरु को भेजकर पुलिस सुपरिन्टेन्डेन्ट मिस्टर सैडर्स को गोलियो से भुनवाकर चुकाया[65]। उस दरम्यान लखनऊ शहर पैदल व घुड़सवार पुलिस के कारण एक विशाल फौजी पडाव सा बन गया। चार दिन तक पुलिस के बर्बरता पूर्ण हमले होते रहे[66]। सम्पूर्ण भारत में इसी प्रकार साइमन कमीशन का जवरदस्त विरोध हुआ। मिस विलिकन्स ने तो यहॉ तक कह डाला कि अमृतसर कांड के पश्चात ब्रिटिश सरकार के किसी भी कार्य की भारत मे इतनी अधिक तीव्र निन्दा नहीं हुई, जितना कि साइमन कमीशन की नियुक्ति[67] की। यानि जनता की विद्रोही चेतना को पुलिस की लोहे की मूठ वाली लाठियाँ रोक न पायी। हर क्षण विरोध करने के नये-नये तरीके इजाद किये जाते रहे।

राष्ट्रीय आन्दोलन के इन दशकों में राजनैतिक दृष्टिकोण के साथ-साथ क्रांतिकारी आतंकवाद की कुछ सूक्ष्म चर्चा भी आवश्यक है। महात्मा गांधी के असहयोग आन्दोलन के पूर्णतया असफल होने के बाद आतकवाद मे पुनः उग्रता आयी। अक्टूबर 1924 मे समस्त क्रांतिकारी दलों का कानपुर में एक सम्मेलन बुलाया गया जिसमे सचिन्द्र नाथ सन्याल, जगदीश चन्द्र चटर्जी जैसे पुराने क्रांतिकारी नेताओं तथा भगत सिह, शिव वर्मा, सुखदेव, भगवती चरण बोहरा तथा चन्द्रशेखर आजाद जैसे तरुण नेताओं ने भाग लिया। इसके परिणामस्वरूप 1928 मे 'हिन्दुस्तान रिपब्लिकन' एसोसिएशन की स्थापना हुई जो बाद में 'हिन्दुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन एसोसिएशन' के नाम से जानी गई। बगाल, बिहार, यू० पी०, दिल्ली, पजाब तथा मद्रास जैसे प्रान्तो मे इसकी शाखाएँ स्थापित की गई। इन आतंकवादियो ने अपने कार्य की पूर्ति के लिए निजी व्यक्तियों को न लूटकर, सरकारी कोषों को अपना निशाना बनाने का निश्चय किया[68]।

---

63 डी० सी० चतुर्वेदी · इण्डियन नेशनल मूवमेट एण्ड कास्टीट्यूशनल डिवेलपमेंट, पृष्ठ संख्या- 113।

64 डा० वी० पट्टाभि सीता रमैया काग्रेस का इतिहास, वही, पृष्ठ सख्या- 330।

65 मन्मथनाथ गुप्त . कांग्रेस के सौ वर्ष, वही, पृष्ठ संख्या- 112।

66 वी० पट्टाभि सीता रमैया . काग्रेस का इतिहास, वही, पृष्ठ संख्या- 330।

67 पट्टाभि सीता रमैया वही, पृष्ठ संख्या- 309।

68 बिपिन चन्द्र भारत का स्वतत्रता संघर्ष, वही, पृष्ठ संख्या- 218।

इसी उद्देश्य से क्रातिकारियो ने 9 अगस्त, 1925 को पहली बडी कार्यवाई की काकोरी मे, जहाँ रेल विभाग का खजाना लूटा गया। यह घटना `काकोरी काड' क नाम स मशहूर है। बड़ी सख्या मे युवक गिरफ्तार हुए और उन पर मुकदमा चलाया गया और अशफाकउल्ला खॉ, राम प्रसाद बिस्मिल, रोशन सिह और राजेन्द्र लोहिडी को फॉसी दे दी गई। चन्द्रशेखर आजाद फरार हो गये[69]। इसी प्रकार 1928 में लाहौर मे साइमन कमीशन का विरोध कर रहे लालालाजपत राय की मौत के बाद भगत सिंह, चन्द्रशेखर आजाद और राजगुरु ने पुलिस अधिकारी सैंडर्स की हत्या कर दी। यही नही बल्कि भगत सिह और बी० के० दत्त ने सेन्ट्रेल लेजिस्लेटिव असेम्बली मे बम फेक कर `पब्लिक सेफ्टी बिल' और `ट्रेड डिस्टयूट्स बिल' के खिलाफ विरोध जताया। बम फेकने का उद्देश्य किसी की हत्या करना नही, बल्कि सत्ता के बहरे कानो मे विरोध की आवाज पहुँचाना था[70]। इस घटना पर टिप्पणी करते हुए जवाहर लाल नेहरू ने लिखा था कि `यह बम देशवासियो का ध्यान आकर्षित करने के लिए एक बहुत बड़ा धमाका था'[71]।

क्रातिकारी, आतकवाद को आन्दोलन का मुख्य पहलू मानते थे। उनका यह मानना था कि आतकवाद पूर्ण क्रांति नही है और क्राति आतंकवाद के बिना पूर्ण नही होती[72]। आतंकवाद शोषणकर्ताओं के दिल मे डर बैठा देता है, यह शोपित जनता के मन मे बदला लेने और मुक्ति की आशाए जगा देता है, और यह डॉवाडोल मन. स्थिति वालों मे साहस और आत्म विश्वास भर देता है[73]। क्रांतिकारियों को यह पूर्ण विश्वास था कि यदि साइबेरिया की खाने रूसी क्राति की ज्वाला को नही बुझा सकीं तो अध्यादेश और सुरक्षा अधिनियम भारत वर्प मे स्वतत्रता की भड़की हुई आग को नही दबा सकते। अन्तत. भगतसिह और बटुकेश्वर दत्त पकड़े गये और आजीवन कारावास की सजा दी गई। किन्तु बाद में सांडर्स हत्याकाड के आरोप मे उन्हे मौत की सजा सुनाई गई और 23 मार्च, 1931 को फांसी दे दी गयी। इस घटना पर पूरा देश स्तब्ध रह गया[74]।

नेहरू रिपोर्ट मे यह वादा किया गया था कि 31 दिसम्बर, 1929 तक सरकार ने इस रिपोर्ट को मजूर नही किया तो कांग्रेस अपना अहिसक असहयोग आन्दोलन फिर छेड़ देगी और इस बार इस आन्दोलन की शुरूआत कर न देने के अभियान से होगी[75]। 1929 के अन्तिम दिनों में लाहौर मे कांग्रेस का अधिवेशन हुआ जिसमे आन्दोलन छेड़ने का फैसला किया गया। नेहरू रिपोर्ट मे डोमिनियन कायम करने के लक्ष्य को

---

69 बिपीन चन्द्र : वही, पृष्ठ संख्या- 219।

70 बिपिन चन्द्र वही।

71 जवाहर लाल नेहरू : ग्लिम्पस ऑफ वर्ल्ड हिस्ट्री बाम्बे, 1965, पृष्ठ संख्या- 65, प्रो० रामलखन शुक्ल द्वारा सम्पादित `आधुनिक भारत का इतिहास', वही, मे उद्धृत, पृष्ठ सख्या- 456

72 रामलखन शुक्ल द्वारा सम्पादित `आधुनिक भारत का इतिहास', वही, पृष्ठ संख्या- 456।

73 अजय कुमार घोष : आर्टिकल्स एण्ड स्पीचेज, मास्को, 1962, पृष्ठ संख्या- 16।

74 खुशवन्त सिह : अ हिस्ट्री ऑफ दि सिख्स, (भाग-2) देलही, 1991, पृष्ठ संख्या- 266।

75 पट्टाभि सीता रमैया . कांग्रेस का इतिहास, वही, पृष्ठ संख्या- 560।

पुगना घोषित कर दिया गया और एलान किया गया कि कांग्रेस का लक्ष्य 'पूर्ण स्वराज्य'[76] रहेगा। अधिवेशन ने अखिल-भारतीय कांग्रेस कमेटी को यह अधिकार भी दिया कि वह जब भी उचित समझे, नागरिक अवज्ञा आन्दोलन छेड़ दे जिसमे कर न देना शामिल हो[77]। अस्तु 31 दिसम्बर, 1929 की आधी रात को यानि 1930 का वर्ष शुरू होते ही भारतीय स्वाधीनता का तिरंगा झंडा फहराया गया तथा 26 जनवरी, 1930 को देश भर मे पहला स्वाधीनता दिवस मनाया गया[78]।

लाहौर कांग्रेस अधिवेशन के प्रस्तावों पर ब्रिटिश सरकार ने कोई ध्यान नहीं दिया। फलतः महात्मा गांधी ने पश्चिम भारत में अपनी प्रसिद्ध दांडी यात्रा के माध्यम से 6 अप्रैल, 1930 को सविनय अवज्ञा द्वारा आन्दोलन प्रारम्भ कर दिया। वे नमक कानून के नियमों की अवहेलना कर समुद्र तट पर नमक बनाने के लिए चल पड़े[79]। यह बड़े पैमाने पर होने वाले जनान्दोलन का संकेत था। इसके अन्तर्गत जनता ने हड़ताले की, ब्रिटिश मालो का बायकाट हुआ, चटगाँव अस्त्रागार धावा—जैसे आतंकवाद के गम्भीर कांड हुए, तथा अनेक स्थानों पर समनान्तर सरकारो की स्थापना भी हुई[80]। इस आन्दोलन में महत्वपूर्ण बात यह थी कि इसमे बहुत बड़ी संख्या में स्त्रियो ने भी भाग लिया। इस दौरान सरकार का दमन चक्र भी तेजी से चल रहा था। 6 मई की रात को गांधी जी गिरफ्तार कर लिए गये। उनकी गिरफ्तारी से देश में बिजली की तरह प्रतिक्रिया हुई। बम्बई, कलकत्ता तथा अन्य महत्वपूर्ण स्थानों पर हड़तालों का स्वर और उग्र हो गया। सरकार ने आन्दोलन को कुचलने के लिए हर तरीके अपनाए। सरकारी ऑकड़ों के अनुसार 29 बार गोलियॉ चलायी गयी, जिनके फलस्वरूप 103 लोग मरे और 420 घायल हुए तथा एक वर्ष से कम ही समय में 60,000 व्यक्ति जेल गये[81]। किन्तु इस कठोर दमनकारी नीति के बावजूद सविनय अवज्ञा आन्दोलन शिथिल नही पड़ा, बल्कि अनवरत चलता रहा।

आन्दोलन की प्रखरता से तिलमिलाकर नवम्बर के महीने में सरकार ने लन्दन में पहला गोलमेज सम्मेलन बुलाया। इस सम्मेलन मे कांग्रेस के प्रतिनिधियों ने भाग नहीं लिया। जिसके कारण कांग्रेस ने इसके निर्णय को अस्वीकार कर दिया। अन्ततः गोलमेज परिषद को कोई सफलता न प्राप्त हो सकी। ब्रिटिश सरकार ने अनुभव किया कि कांग्रेस की उपेक्षा कर भारतीय समस्या का समाधान ढूँढ़ना निरर्थक है। तदुपरान्त 5 मार्च, 1931 को गांधी-इरविन समझौते के रूप में 15 दिन के लम्बे विचार-विमर्श के बाद एक

---

76 एम० सी० सरकार एवं के० के० दत्त : आधुनिक भारत वर्ष का इतिहास, वही, पृ०सं० 469।

77 एम० सी० सरकार एवं के० के० दत्त : वही।

78 रजनी पाम दत्त : आज का भारत, वही, पृष्ठ संख्या- 370।

79 वेद मेहता : महात्मा गांधी एण्ड हिज एपास्टलेस, न्यू देलही, 1976, पृष्ठ सख्या- 147।

80 मजुमदार, राय चौधरी, दत्त : भारत का बृहत् इतिहास (आधुनिक भारत) न्यू देलही, 1954, (पुर्नमुद्रण 1996) पृष्ठ सं० 351-52।

81 मजुमदार, राय चौधरी, दत्त : वही, पृष्ठ संख्या- 352।

दस्तावेज सामने आया और आन्दोलन बन्द कर दिया गया[82]।

गांधी-इरविन समझौते को लेकर कुछ लोगों ने बड़े पैमाने पर विरोध किया। विद्वानों ने भी इसकी अलग-अलग रूप में व्याख्या की है। कुछ ने इसे ''ब्रिटिश राजनय की महान विजय" और ''एक महान राष्ट्रीय भूल" कही तो कुछ ने इसे भारतीय पूँजीपतियो के ढुलमुल स्वभाव का और गांधी जी का उनके दवाव मे आकर काम करने का प्रमाण माना है[83]। रजनी पाम दत्त लिखते है कि इरविन-गाधी समझौते के जरिए आन्दोलन को बड़े रहस्यमय ढंग से अचानक ठीक उस समय रोक दिया गया जब वह अपने शिखर पर पहुँच रहा था, यह कहना सरासर झूठ है कि हमारा आन्दोलन ध्वस्त होने वाला था[84]। लेकिन आन्दोलन के तत्कालीन स्वरूप से बात स्पष्ट हो जाती है कि इसे ज्यादा दिनों तक नहीं चलाया जा सकता था, क्योंकि आन्दोलन मे थकान के लक्षण नजर आने लगे थे। यद्यपि कस्बों मे नौजवानों और छात्रो मे ऊर्जा अभी भी बरकरार थी लेकिन सौदागरो और दुकानदारों के लिए लम्बे समय तक नुकसान उठाना अब मुश्किल होता जा रहा था। इतना ही नही बल्कि गावो के उन क्षेत्रो में, जहॉ साल के शुरू मे ही आन्दोलन प्रारम्भ किया जा चुका था, वर्ष के उत्तरार्द्ध मे आकर उनमे भी शिथिलता आने लगी थी[85]।

कांग्रेस का तरुण वर्ग भी इस समझौते से बहुत क्षुब्ध हुआ, क्योंकि गांधी इरविन समझौते से कांग्रेस की कोई मांग पूरी नहीं हुई थी, यहॉ तक कि नमक कर भी नहीं हटाया गया था[86]। परन्तु असन्तुष्ट रहते हुए भी कांग्रेस ने महात्मागांधी के अपूर्व व्यक्तित्व का सम्मान करते हुए अपने कराची अधिवेशन में इस समझौते को स्वीकृति दे दी[87] और गांधी जी को द्वितीय गोलमोज सम्मेलन में सम्मिलित होने के लिए अपना प्रतिनिधि नियुक्त किया। अस्तु, 7 सितम्बर, 1931 को महात्मा गांधी कांग्रेस के एकमात्र प्रतिनिधि के रूप में द्वितीय गोलमेज सम्मेलन में शामिल हुए किन्तु यह सम्मेलन भी मात्र दिखावा ही साबित हुआ। इसमें भारत के लिए कोई महत्वपूर्ण कार्य नहीं हो सका। महात्मागांधी ने भारत के लिए पूर्ण स्वतंत्रता की मांग की जो ब्रिटिश सरकार देने को तैयार नहीं थी, यहाँ तक कि स्वतंत्रता की मूल मांग पर विचार करने से ही इन्कार कर दिया गया। किन्तु भारत की साम्प्रदायिक समस्या पर गहराई से विचार किया गया तथा 'कम्युनल अवार्ड' की घोषणा[88] करके उसे और भी जटिल बना दिया गया। ऐसा पता चलता है कि गोलमेज सम्मेलन मे भाग लेने वाले भारतीय प्रतिनिधि मंडल में कुछेक को छोड़कर ज्यादातर प्रतिनिधि अंग्रेजी हुकूमत के चमचे, साम्दायिकता वादी, जातिवादी, सुविधाभोगी, अवसरवादी, बड़े जमींदार और राजाओं-महाराजाओं के

---

82 बिपिन चन्द्र : भारत का स्वतत्रता संघर्ष, नई दिल्ली, 1990 (पुर्नमुद्रण 1997) पृष्ठ संख्या- 220।

83 प्रो० राम लखन शुक्ल द्वारा सम्पादित 'आधुनिक भारत का इतिहास', वही, पृष्ठ संख्या- 435 व 439।

84 रजनी पाम दत्त आज का भारत, वही, पृष्ठ संख्या- 38।

85 बिपिन चन्द्र · भारत का स्वतत्रता संघर्ष, नई दिल्ली, 1990 (पुर्नमुद्रण 1997) पृष्ठ संख्या- 220-221।

86 रजनी पाम दत्त : आज का भारत, वही, पृष्ठ संख्या- 380।

87 बी० पट्टाभि सीता रमैया : दि हिस्ट्री ऑफ दि कांग्रेस, मद्रास, 1935, पृष्ठ संख्या- 738-39।

88 प्रो० राम लखन शुक्ल द्वारा सम्पादित 'आधुनिक भारत का इतिहास', वही, पृष्ठ संख्या- 487।

प्रतिनिधि थे। इन्हे सरकार ने ही चुना था। मकसद था कि हर मौके पर इन चमचों के माध्यम से गांधी जी को पगस्त किया जाय। इनके चयन के पीछे अंग्रेजी हुकूमत का तर्क था कि कांग्रेस हिन्दुस्तान के सभी वर्गो का प्रतिनिधित्व नही करती[89]।

अस्तु, 28 दिसम्बर को गाधी जी भारत लौट आये। इस सम्मेलन मे उनके साथ छल हुआ था और भारत आकर उन्होंने देखा कि नेहरू और गफ्फार खान जेल में हैं और बंगाल, संयुक्त प्रान्त तथा पश्चिमोत्तर सीमा प्रान्त पर बडे स्तर पर दमन की कार्यवाही चालू है। गांधी जी ने विलिंगडन से मुलाकात की प्रार्थना कि, जिसे उसने रुखाई से ठुकरा दिया। अब कार्यकारिणी कमेटी के पास कोई चारा नहीं रह गया था कि वह पुन· सविनय अवज्ञा आन्दोलन आरम्भ करे[90]। आन्दोलन की सूचना फैले इसके पहले से ही प्रतिक्षारत अंग्रेजी सरकार ने 4 जनवरी, 1932 को हमला बोल दिया और गांधी जी को गिरफ्तार कर लिया। इतना ही नही बल्कि एक सप्ताह के भीतर ही देश के लगभग सभी वरिष्ठ कांग्रेसी नेताओं को जेल में डाल दिया गया। जनता मे आक्रोश की लहर फैल गयी जिसका प्रतिफल था कांग्रेस के लिए अप्रत्याशित जन समर्थन। हजारो की संख्या में सत्याग्राही जेल गये। लाखों लोग घरों से निकलकर धरना, अवैध सभाएँ अहिसक प्रदर्शन तथा अनेक राष्ट्रीय दिवसों पर कार्यक्रमों का आयोजन करना शुरू कर दिये[91]।

अग्रेजो की दमनकारी प्रवृत्तियाँ दिनों-दिन बढ़ती गयी किन्तु जनता का मनोबल कम नहीं हुआ। फलत· उन्होने आन्दोलन की शक्ति को तोड़ने का कूटनीतिक तरीका निकाला। उन्होंने बार-बार कहना शुरू किया कि भारत में विभिन्न हितवाले कई गुट हैं और सभी को प्रतिनिधित्व मिलना चाहिए। इस विचार से रैम्जे मैकडोनल्ड ने अगस्त 1932 मे साम्प्रदायिक पंच निर्णय की घोषणा की, जिसके अनुसार मुसलमानों, सिखो, आग्ल भारतीयो तथा हरिजनो को अलग-अलग प्रतिनिधित्व दिया गया। गांधी जी को इस निर्णय से हार्दिक दु·ख हुआ, विशेष कर हरिजनों को अलग करने के मामले को लेकर वे चिन्तित हो गये। अतः उन्होने जेल मे ही आमरण अनशन की घोषणा कर दी[92]। अन्त में पूना में भारत के सभी दलों ने मिलकर एक निर्णय लिया जिसे ब्रिटिश सरकार ने भी स्वीकार किया और जो पूना पैक्ट के नाम से प्रसिद्ध हैं। इसके अनुसार प्रांतीय व्यवस्थापिका सभाओं में हरिजनों का प्रतिनिधित्व महत्वपूर्ण बना दिया गया[93]। तत्पश्चात् महात्मागांधी का अनशन स्वाभाविक तौर पर टूट गया।

नवम्बर, 1932 में ब्रिटिश सरकार ने लन्दन में तीसरे गोलमेज सम्मेलन का आयोजन किया। इसमें भारत के शासन विधान में परिवर्तन के सम्बन्ध में विचार-विमर्श हुआ। किन्तु इस सम्मेलन में कांग्रेस का कोई

---

89 बिपिन चन्द्र भारत का स्वतत्रता संघर्ष, वही, पृष्ठ संख्या- 224।

90 सुमित सरकार . आधुनिक भारत, वही, पृष्ठ सख्या- 363।

91 बिपिन चन्द्र, अमलेश त्रिपाठी एवं बरुण दे : स्वतंत्रता सग्राम, नई दिल्ली, 1972, (पुर्नमुद्रण1996) पृष्ठ संख्या- 140-41।

92 बिपिन चन्द्र, अमलेश त्रिपाठी एवं बरुण दे : वही, पृष्ठ संख्या- 141।

93 प्रो० रामलखन शुक्ल द्वारा सम्पादित `आधुनिक भारत का इतिहास' वही, पृष्ठ संख्या- 568।

प्रतिनिधि नही जा सका। काग्रेस ने इस तर्क पर आमत्रण अस्वीकार कर दिया था कि सरकार के दृष्टिकोण को मद्दे नजर रखते हुए सम्मेलन मे शामिल होने से किसी सार्थक उद्देश्य के पूर्ति की सम्भावना नही है। बहरहाल, सम्मेलन में जो विचार-विमर्श हुआ उसके परिणामस्वरूप कुछ अतिरिक्त सुधारों के साथ-साथ सरकार सन् 1935 का भारतीय विधेयक पास करने का फैसला किया। इस नये विधेयक में केन्द्र में संघीय शासन और प्रान्तो को पहले से अधिक स्वायत्तता देने का प्रस्ताव था[94]।

1935 के भारतीय विधेयक पास होने से ऐसा लगा कि भारत को एक देश और यहॉ के लोगो को एक राष्ट्र मानने के सिद्धान्त की पुष्टि हो गयी है। लेकिन ऐसा प्रतीत होता है कि अग्रेजो का वास्तविक इरादा राष्ट्रवादी नेताओं के साम्राज्यवाद विरोधी सिद्धान्त और कार्यक्रम के पड़ले को राजाओं का इस्तेमाल करके संतुलित करना था। इसीलिए शायद रियासतों को केन्द्र के द्विसदनी संघीय विधान परिषद् में उनके अनुपात से ज्यादा प्रतिनिधित्व दिया गया[95]। वैसे भी इस विधेयक से बहुत कम लोग संतुष्ट हुए थे। काग्रेस के लिए वह 'पूर्णतया निराशा जनक' और दिखावा मात्र था। दूसरों ने भी उसे विभिन्न मात्रा में 'अपर्याप्त पाया। जैसे मुस्लिम नेताओं ने इसे पूर्णरूप से एकात्मक कहा और हिन्दू बहुमत के प्रभुत्व की सम्भावना व्यक्त की[96]। दूसरी ओर यह भी स्पष्ट होता है कि ब्रिटिश सरकार ने भारत की जनता पर शासन करने वाले राजनैतिक और आर्थिक अधिकार नहीं छोड़े थे बल्कि सरकारी ढॉचे में हल्का सा परिवर्तन किया था[97]। जनमत से निर्वाचित मंत्रियो को ब्रिटिश प्रशासन में शामिल कर लिया जाना था लेकिन विदेशी हुकूमत को यथावत बरकरार रखना था।

विधेयक प्राविधानो से पूरी तरह असहमत होने पर भी कांग्रेस ने चुनाव लड़ने का निर्णय इसलिए लिया कि वह देश के बड़े जनसमर्थन को सरकार के समक्ष साबित करना चाहती थी। इस उद्देश्य में उसे पूरी सफलता भी मिली। चुनाव में भारतीय जनता का विशाल बहुमत उसे प्राप्त हुआ। कई प्रान्तों में वह भारी मतो से विजयी हुई[98]। नेहरू तथा अन्य वामपन्थी तत्व पद स्वीकार करने के विरुद्ध थे। उनका कहना था कि ऐसा करने से स्वतंत्रता संघर्ष मे उलझन पैदा होगी। लेकिन बहुमत पद स्वीकार करने के पक्ष मे था, अस्तु कांग्रेस ने जुलाई 1937 मे 11 प्रान्तों में से 7 मे अपने मंत्रिमंडल बनाये। बाद में उसने दो और प्रान्तों में भी (अन्य दलों के सहयोग से) संयुक्त मत्रिमंडल गठित किया। गैर कांग्रेसी मंत्रिमंडल केवल पंजाब और बंगाल मे बने[99]।

---

94 बिपिन चन्द्र, अमलेश त्रिपाठी एवं बरुण दे : वही, पृष्ठ संख्या- 143।

95 सी० एस० श्रीनिवास चारी एवं एम० एस० रामास्वामी : अ हिस्ट्री ऑफ इण्डिया (भाग—तीन, ब्रिटिश इडिया) मद्रास, 1947, पृष्ठ सख्या- 407।

96 बिपिन चन्द्र, अमलेश त्रिपाठी एवं बरुण दे : वही, पृष्ठ संख्या- 143।

97 जवाहर लाल नेहरू : दि डिस्कवरी ऑफ इंडिया, कलकत्ता 1946, (पुर्नमुद्रण 1996) न्यू देलही पृष्ठ संख्या- 365।

98 जवाहर लाल नेहरू : वही, पृष्ठ संख्या- 367।

99 बिपिन चन्द्र, अमलेश त्रिपाठी एवं बरुण दे : वही, पृष्ठ संख्या- 144।

ऐसा माना जाता है कि प्रान्तीय सरकारों के अधिकार सीमित होने के कारण कांग्रेस मंत्रिमंडल प्रशासन के मूल चरित्र मे परिवर्तन लाने मे असफल रहे। इसका कारण शायद यह भी था कि कांग्रेस के सामाजिक ढॉचे मे मजदूरो—किसानो से लेकर पूँजीपतियों और जमींदारो आदि सभी की बराबर की भागीदारी थी। इसके अतिरिक्त प्रभावशाली नेताओं का रूढ़िवादी चरित्र भी इस सन्दर्भ में विशेष जिम्मेदार माना जा सकता है। लेकिन, इसके बावजूद जनता की हालत सुधारने के लिए अपनाए गये कुछ तरीके विशेष प्रशसनीय रहे। सरकार ने जहॉ एक तरफ शासन प्रबन्ध के नये दृष्टिकोण का सूत्रपात किया और सेवा तथा इमानदारी के प्रशंसनीय मानक स्थापित किये वहीं दूसरी ओर प्रारम्भिक तकनीकी तथा उच्चतर शिक्षा और जनस्वास्थ्य सेवाओं में सुधार लाने की ओर पहले की अपेक्षा अधिक ध्यान दिया। किसानों की मद्द के लिए काश्तकारी और कर्ज से राहत देने वाले नये कानून पास किये गये[100]। नागरिक स्वतंत्रता पर लगे नियंत्रण मे भी ढील दी गई लेकिन सबसे महत्वपूर्ण लाभ मनोवैज्ञानिक था जिससे जनता का अहसास बदल गया। प्रशासन के पदों पर जेल के परिचित व्यक्तियों को देखना जीत के स्वाद की तरह था[101]।

सितम्बर, 1939 मे द्वितीय विश्व युद्ध छिड़ जाने पर कांग्रेस कठिन स्थिति में पड़ गयी क्योंकि उससे मंत्रणा किये बिना ही भारत को महायुद्ध में शामिल कर लिया गया था। कांग्रेस की कार्यकारिणी समिति ने एक जबरदस्त घोषणा निकाली जिसमे उसने 'साम्राज्यवादी ढंगों'पर चलाए जाने वाले युद्ध में सहयोग देने से इन्कार कर दिया[102]। समिति ने ब्रिटिश सरकार से यह भी पूछा कि वह बताये कि उसके युद्धोद्देश्यो मे साम्राज्यवाद का निष्कासन एवं भारत के प्रति स्वतंत्र राष्ट्र के समान व्यवहार सम्मिलित है या नहीं[103]। सरकार यदि इसका स्पष्टीकरण और आश्वासन नहीं देती है तो यह समझा जायेगा कि युद्ध साम्राज्यवाद के लिए किया जा रहा है न कि लोकतत्र और स्वतंत्रता के लिए। कांग्रेस ब्रिटिश सरकार से स्पष्ट घोषणा चाहती थी इसका अर्थ शायद यह नही था कि काग्रेस भारत की आजादी का सौदा कर रही थी और न ही भारत का ध्येय ब्रिटेन की कठिनाइयो से लाभ उठाना था। परन्तु इस सन्दर्भ में वायसराय द्वारा दिया गया उत्तर कांग्रेस को संतुष्ट न कर सका। नतीजतन अक्टूबर-नवम्बर, 1939 में सभी कांग्रेस मंत्रिमंडलों ने त्याग पत्र दे दिया[104]।

त्याग पत्र देने के बाद भी कांग्रेस की मांग 'युद्धोपरान्त कम से कम एक अस्थाई राष्ट्रीय सरकार की स्थापना' की ही चलती रही, लेकिन 8 अगस्त, 1940 को सरकारी वायसराय का वक्तव्य एकदम इसके

---

100 जवाहरलाल नेहरू : दि डिस्कवरी ऑफ इण्डिया, वही, पृष्ठ संख्या- 369।

101 जवाहर लाल नेहरू : वही, पृष्ठ संख्या- 369-70।

102. डॉ० ईश्वरी प्रसाद : अर्वाचीन भारत का इतिहास, इलाहाबाद, 1986, पृष्ठ संख्या- 459-60।

103 मजुमदार, राय चौधरी, दत्त : भारत का बृहत् इतिहास (आधुनिक भारत) न्यू देलही, 1954 (पुर्नमुद्रण 1996) पृष्ठ सख्या- 354।

104 मजुमदार, राय चौधरी, दत्त : वही।

विपरीत आया। परिणामस्वरूप अक्टूबर 1940 मे महात्मागाधी के निर्देशन में एक बार फिर व्यक्तिगत सत्याग्रह प्रारम्भ हो गया[105]। इस सत्याग्रह मे सबसे प्रमुख भूमिका विनोवा भावे ने निभाई, उन्होंने अपना आन्दोलन गाधी आश्रम वर्धा के नजदीक एक गांव से शुरू की। किन्तु 21 अक्टूबर को ही उन्हे गिरफ्तार कर लिया गया और तीन महीने की कारावासीय सजा दी गयी[106]। तदुपरान्त सरकारी दमन चक्र पूरे जोर-शोर सेचला और हजारो की सख्या मे सत्याग्रही जेल भेजे गये। इधर एक तरफ भारत के विशाल भू-भाग पर व्यक्तिगत सत्याग्रह आन्दोलन और भीषण धर-पकड़ की त्रासदी चल रही थी, उधर जिन्ना के निर्देशन में मुस्लिम लीग मुस्लिम बहुल प्रान्तों को भारत से अलग करके एक स्वतंत्र राष्ट्र पाकिस्तान की स्थापना की मांग तेज हो गयी थी, तीसरी ओर विश्व युद्ध का भी रूप भयंकर होता जा रहा था।

दिसम्बर, 1941 में जापान ने ब्रिटेन और अमेरिका के विरुद्ध युद्ध की घोषणा कर दी और जापानी सेना बर्मा तक पहुँच गयी। इस प्रकार ब्रिटिश सरकार के सामने एक विकट समस्या उपस्थित हुई। ऐसी स्थिति में उसके लिए भारतीयों का सहयोग अनिवार्य हो गया। अतः ब्रिटिश मंत्रिमंडल का प्रस्ताव लेकर सर स्टैफोर्ड क्रिप्स, जो स्वय ब्रिटिश मंत्रिमंडल के सदस्य थे, लीग और कांग्रेस में समझौता कराने के लिए और युद्ध के प्रति काग्रेस का सहयोग प्राप्त करने के लिए मार्च, 1942 में भारत आये[107]। भारत आते ही उन्होंने घोषणा की कि भारत मे ब्रिटिश नीति का उद्देश्य है—'जितनी जल्द सम्भव हो सके, भारत में स्वशासन की स्थापना'[108]। लेकिन अपने साथ जिस घोषणा पत्र का मसविदा वे लाये थे वह निराशा जनक था। उसमे युद्ध समाप्त होने पर भारत को स्वतंत्र उपनिवेश का दर्जा देने और एक ऐसी संविधान निर्मात्री परिषद बनाने का वादा था, जिसके कुछ सदस्य प्रान्तीय विधायिकाओं द्वारा निर्वाचित होगे और कुछ शासकों द्वारा नामाकित होंगे। पाकिस्तान की माग के लिए इस व्यवस्था के तहत गुंजाइश बनाई गई कि यदि किसी प्रान्त को नया संविधान स्वीकार्य नहीं होता है, तो वह अपने भविष्य के लिए ब्रिटेन से अलग समझौता कर सकेगा[109]। लेकिन यह सब युद्ध के बाद होना था, फिलहाल तो भारत की प्रतिरक्षा पर पूरा का पूरा नियंत्रण ब्रिटेन का ही रहना था।

अन्तत कांग्रेस को यह प्रस्ताव मजूर नहीं हुआ। पूर्ण स्वतंत्रता के स्थान पर स्वतंत्र उपनिवेश के दर्जे, संविधान सभा मे रियासतो के लोगों के बजाय शासकों द्वारा नामांकित व्यक्तियों की मौजूदगी तथा भारत के सम्भावित विभाजन की व्यवस्थाओं पर कांग्रेस को कड़ी आपत्ति थी। इस प्रकार स्टैफोर्ड क्रिप्स को

---

105 वाई० बी० माथुर : क्विक इंडिया मूवमेट, देलही, 1979, पृष्ठ संख्या- 06-07।

106 वाई० बी० माथुर : वही, पृष्ठ संख्या- 07।

107 विपिन चन्द्र, अमलेश त्रिपाठी एवं वरूणदे : वही, पृष्ठ संख्या- 160।

108 बिपिन चन्द्र : भारत का स्वतंत्रता सघर्ष, नई दिल्ली, 1990 (पुर्नमुद्रण 1997) पृष्ठ सख्या- 364।

109 बिपिन चन्द्र : वही।

विफलता ही हाथ लगी,[110] वे मध्य अप्रैल मे ब्रिटेन लौट गये। क्रिप्स मिशन की असफलता ने देश को विषाद और आक्रोश का शिकार बना दिया। लगभग सभी क्षेत्रों मे निराशा थी। अपवाद केवल मुस्लिम लीग और वे व्यक्ति थे जिन्होने रोजगार के बढ़े हुए अवसरों का लाभ उठाया था[111]। अतः कांग्रेस ने ब्रिटिश सरकार से भारत छोड देने और सत्ता को भारतीयो के हाथ सौप देने की माग के साथ एक जबरदस्त आन्दोलन शुरू करने का फैसला किया। इसी सन्दर्भ मे अगस्त, 1942 का बम्बई मे हुआ अधिवेशन ऐतिहासिक महत्व रखता है जिसमे प्रसिद्ध प्रस्ताव 'अग्रेजो भारत छोड़ो' पारित हुआ। जिसने ब्रिटिश साम्राज्यवाद की नीव हिलाकर रख दी और यह सिद्ध कर दिया कि स्वाधीनता के चमकीले प्रकाश के लिए भारतवासी मर मिटने को तैयार है।

---

110 बिपिन चन्द्र : वही, पृष्ठ संख्या- 365।

111 बिपिन चन्द्र, अमलेश त्रिपाठी एवं बरुणदे . स्वतंत्रता सग्राम, वही, पृष्ठ सख्या- 162।

स्वतंत्रता संघर्ष का अन्तिम सफर और युवा बहुगुणा

1942 मे शुरू हुआ 'भारत छोड़ो आन्दोलन' स्वतंत्रता की लडाई का अन्तिम और निर्णायक कड़ी माना जाता है। इस दौर मे सम्पूर्ण भारत के सभी प्रमुख स्थानो व नगरो म विद्रोह की आग भड़क उठी थी। इनमे इलाहाबाद भी प्रमुख था जहॉ के राष्ट्रीय व शीर्षस्थ नेताओं की तत्काल गिरफ्तारी हो जाने के कारण आन्दोलन की बागडोर हेमवती नन्दन बहुगुणा जैसे युवा नेताओं के कन्धे पर आ पड़ी थी। इलाहाबाद के विशेष सन्दर्भ में स्वतंत्रता सघर्ष के इस दौर की चर्चा की जाय, इसके पूर्व बहुगुणा के प्रारम्भिक जीवन का एक संक्षिप्त वर्णन उल्लेखनीय है।

———प्रारम्भिक जीवन

हेमवती नन्दन बहुगुणा का जन्म 25 अप्रैल, 1919 को उत्तर प्रदेश में पौड़ी गढ़वाल जिले के बुधाणी नामक एक छोटे से गॉव में एक साधारण ब्राह्मण परिवार में हुआ था। बुधाणी गांव श्रीनगर गढ़वाल से16 किलोमीटर दूर है। इस छोटे से गॉव की आज भी जनसंख्या लगभग तीन सौ (300) है। यहाँ से नन्दा देवी दिखाई देती हैं। गांव में उतरते ही एक पक्का चबूतरा है, जिसे कभी हेमवती नन्दन ने बनवाया था। चबूतरे पर ही एक अन्नपूर्णा देवी का मंदिर है, जिसमे माथा टेके बिना कोई भी ग्रामवासी यहां से आता-जाता नहीं है[1]। इनके पिता रेवती नन्दन बहुगुणा एक पटवारी थे। रेवती नन्दन का विवाह ग्यारह वर्ष की अवस्था में धुंगसारी, पौड़ी के तारादत्त उनियाल की तीसरी पुत्री दीपा से हुआ था। तारादत्त एक उच्च वर्गीय ब्राह्मण परिवार के साथ-साथ एक स्थानीय स्कूल में संस्कृत के अध्यापक भी थे। इस प्रकार बहुगुणा के परिवार मे दो धाराएँ थीं। एक तरफ संस्कृत विद्वान और ज्योतिषी थे तो दूसरी ओर सरकारी सेवा का भाव था। क्योंकि उनके पितामह देवकी नन्दन बहुगुणा भी एक पटवारी ही थे[2]।

रेवती नन्दन बहुगुणा को एक के बाद एक पाँच पुत्रियाँ हुई। सबसे बड़ी पुत्री का नाम कीर्ति था, दीपा, दुर्गा तथा जयन्ती क्रमशः छोटी थी और पाँचवी जन्म के कुछ ही दिनों में दिवंगत हो गई। परन्तु अभी तक कोई पुत्र न हुआ था[3]। गांव वालों, सम्बन्धियों तथा पत्नी के स्वयं आग्रह पर वंश की रक्षा हेतु उन्होंने दूसरा विवाह किया। दूसरे विवाह के शीघ्र पश्चात् विभिन्न प्रकार के दान-पुण्य और मंदिरों में मान्यताएं मानी गई। तदुपरान्त एक मंदिर के समक्ष आकाशवाणी हुई कि "मंदिर का यह प्रसाद पटवारी का

---

1 दिल्ली दूरदर्शन से प्रसारित हेमवती नन्दन बहुगुणा पर वृत्त चित्र के आलेख से, 25 अप्रैल, 1998।

2 आटोबायोग्राफी ऑफ एच. एन. बहुगुणा, बहुगुणा पर छपी स्मारिका मे प्रकाशित, इलाहाबाद,, 1990 पृष्ठ संख्या- 04 व 05।

3 आटोबायोग्राफी ऑफ एच. एन. बहुगुणा, वही, पृष्ठ संख्या- 05।

है।" ऐसा माना जाता है कि उसी प्रताप से रेवतीनन्दन की प्रथम पत्नी ने एक बालक को जन्म दिया जिसका नाम हेमवती नन्दन रखा गया। पूरे गॉव मे खुशी की लहर दौड पडी, दान-पुण्य किया गया। प्रत्येक जन्म दिन पर ऐसा ही तुलादान सोना, चादी, तेल, अनाज इत्यादि दान किया जाने लगा। पुत्र के जन्म के पश्चात् छोटी मॉ की इज्जत और भी बढ़ गई। सब उन्हे शुभ मानने लगे। हेमवती को कई नाम से पुकारा जाता था—मोहन, नत्थू, मातानू, हेम, शिव प्रसाद, भगवती प्रसाद, नटखऊ आदि। सभी इन्हे ईश्वर का प्रसाद मानते थे। हेमवती के पालन-पोषण मे विशेष ध्यान दिया जाता था। स्वास्थ्य की सुरक्षा हेतु तीन वैद्य नियुक्त थे जिनका नाम क्रमश कमला दत्त, गिरिजा दत्त तथा भोला दत्त था[4]।

पॉच वर्ष की अवस्था मे हेमवती को पढ़ाई के लिए देवलगढ़ भेजा गया। इस स्कूल में पाँचवी कक्षा तक पढ़ाई होती थी। पॉचवी कक्षा उत्तीर्ण करने के बाद वे खेसू स्कूल में पढ़ने गये। यह स्कूल केवल आठवी कक्षा तक का ही था। इस स्कूल की पढ़ाई भी नहीं हुई थी कि उनकी मॉ का देहावसान हो गया। हेमवती मातृशोक से पीडित जरूर थे लेकिन विचलित नही हुए। 12 वर्ष की आयु में उन्हें पढ़ने के लिए पौढ़ी भेजा गया। वहॉ उनका दाखिला डी० ए० वी० स्कूल मे कराया गया ताकिवे भारतीय संस्कृति के वातावरण मे शिक्षा प्राप्त कर सके। डी० ए० वी० स्कूल में ही बहुगुणा मे नेतृत्व और समाज सेवा के लक्षण दिखाई देने लगे थे। वे गरीब बच्चो की हर तरह से मद्द करने लगे[5]। गॉव में जाकर फेरी लगाते और भाषण भी देते थे। कही-कही लोग उनका वक्तव्य सुनकर आवाक् रह जाते थे[6]। अक्सर लड़को के साथ बैठकर रास्ता, पानी तथा अन्य समस्याओं को लेकर नई-नई योजनाएँ बनाते थे। गाँव में सभी के घर से गागरे मँगवाकर उन पर नाम की पर्ची लगाकर सभी लड़कों से भरवाते ताकि गॉव की लड़कियों को पानी की तलाश मे दूर न जाना पडे। सबको एकत्र कर गॉव में झाडू लगवाते, सबके गंदे कपड़े मँगवाकर स्वयं साबुन लेकर सबके साथ झरने पर जाते, जहॉ अच्छे ढग से कपड़े की धुलाई होती थी। हरिजनों को अपने घर के आंगन मे एकत्र कर भोजन करवाने में उन्हें विशेष अभिरूचि थी[7]। इस छोटी सी उम्र में ही समाज सेवा और गरीब तबकों के प्रति उनकी हमदर्दी से जाहिर था कि इस बालक में महान व्यक्तित्व पल रहा है।

बाल्यकाल में ही बहुगुणा मे स्वाभिमान के लक्षण दिखने लगे थे। आटोबायोग्राफी में इस बात का स्पष्ट उल्लेख मिलता है कि वे शैशवाकाल में ही अपनी ओजस्वी और निर्भीक प्रवृत्ति के कारण ब्रिटिश नौकरशाहो के प्रति विरोधी रवैया अख्तियार कर लेते थे। नीचे एक अंश उदाहरण स्वरूप दिया जा सकता है—एक बार ग्यारह वर्षीय बालक बहुगुणा अपने पिता रेवती नन्दन बहुगुणा के साथ सरकारी काम से जा रहे थे। अचानक मार्ग मे ब्रिटिश अफसरान डिप्टी कमिश्नर से भेंट हो गई। पिता जी ने हेमवती को तुरन्त

---

4 दुर्गा खण्डूरी (हिमवती नन्दन बहुगुणा की बड़ी बहन) से लिया गया साक्षात्कार।

5 दुर्गा खण्डूरी से लिया गया साक्षात्कार।

6 चित्रा उनियाल का साक्षात्कार, दिल्ली दूरदर्शन द्वारा प्रसारित, 25 अप्रैल, 1998।

7 दुर्गा खण्डूरी से लिया गया साक्षात्कार।

घोडे मे उतर जाने को कहा लेकिन बहुगुणा ने इन्कार कर दिया। कुछ क्षण ही बाद पुनः उन्होंने कहा कि मेरे साहब आ रहे है नीचे उतरो' किन्तु बहुगुणा ज्यो के त्यों बैठे रहे। पिताजी ने नाराजगी का रूप बनाते हुए ऊँचे स्वर मे पुन वही शब्द दुहराए, बहुगुणा ने उत्तर दिया, `वह आपके साहब हो सकते है मेरे नही, मैं नीचे क्यो उतरूँ . । तब तक डिप्टी कमिश्नर आ पहुँचा। वह बहुगुणा की ओर देखते हुए कहा—

'तुम्हारा क्या नाम है'?

निर्भीक स्वर मे बहुगुणा बोले—

'हेमवती नन्दन बहुगुणा'

'तुम्हारे पिता का क्या नाम है'?

'रेवती नन्दन बहुगुणा'

'तुम्हारे गाँव का क्या नाम है'?

'बुधाणी'[8]

आयोबायोग्राफी में उल्लिखित यह तथ्य निश्चित तौर पर एक ओर जहाँ उनके बचपन को निर्भीक हिम्मती और प्रतिभाशाली होने का संकेत देता है वही दूसरी ओर इसमें उनके राष्ट्रवादी प्रवृत्ति के भी लक्षण परिलक्षित होते है। यह एक आकस्मिक घटना थी जिसने बालक बहुगुणा के मस्तिष्क को प्रशासनिक पदों की ओर उन्मुख होने में मद्द की। फलतः वे कठिन शैक्षिक परिश्रम में जुट गये और अपने नाम के आगे `हेमवती नन्दन बहुगुणा आई० सी० एस' लिखने लगे[9]। लेकिन अध्ययन के दौरान ही जब वे इतिहास और साहित्य की गहनता में गये तो अंग्रेजी शासन और सरकारी नौकरी के प्रति उनका अनुराग समाप्त होने लगा। चूँकि बहुगुणा समकालीन नीरस, नृशंस हत्यारी सरकार के प्रति कोई आस्था नहीं रखते थे अतः नौकरशाही की लालषा को त्यागकर सरकार की बेढंगी, दोषपूर्ण और गलत नीतियों के कट्‌टर आलोचक बन गये। ब्रिटिश राज के शोषण के खिलाफ उनकी भावना दिनो दिन बृहत्तर होती चली गई[10]।

आठवी कक्षा पास कर लेने के बाद हेमवती तेरह वर्ष की अवस्था में देहरादून पहुँचे। देहरादून पर्वतांचल का केन्द्र बिन्दु है। यहाँ वे अपनी बड़ी बहन दुर्गा के पास रहकर हाईस्कूल की पढ़ाई करने लगे। बहुगुणा मे बचपन से ही जिज्ञासा और निर्भीकता के गुण विद्यमान थे। शनैः-शनैः कुछ करने, सीखने तथा समझने की प्रवृत्ति भी उनमे काफी तेजी से बढ़ने लगी थी। देहरादून में ही बहुगुणा में आजादी का अंकुर

---

8 आटोबायोग्राफी ऑफ एच. एन. बहुगुणा, वही, पृ० सख्या 07।

9 आटोबायोग्राफी ऑफ एच. एन. बहुगुणा, वही, पृष्ठ संख्या- 08।

10 योगेश्वर तिवारी (रीडर, मध्य/आधु० इतिहास विभाग, इलाहाबाद, विश्वविद्यालय) का बहुगुणा पर प्रकाशित स्मारिका मे छपा लेख, इलाहाबाद, 1990, पृष्ठ सख्या- 01।

पनपा[11]। वहुगुणा प्राय अपने मित्रो के यहॉसे गाधी और भगत सिह की किताब लाकर पढ़ते थे और चिन्तन करते थे। एक दिन वहन दुर्गा ने आकर पूछा कि तूँ क्या पढ़ रहा है? वहुगुणा ने कहा कि मै गाधी और भगतसिह को पढ़ रहा हूँ और मैने निर्णय कर लिया है कि मै भारत की स्वतंत्रता के लिए लडूँगा[12]। जव वे हाईस्कूल परीक्षा की तैयारी कर रहे थे सुबह अखबारो मे ब्रिटिश जुल्म के खिलाफ छपी खवर को देखकर वहन दुर्गा द्वारा कहे गये शब्द `अरे ये तो बहुत बुरा हुआ'। ये अग्रज तो बहुत जुल्म कर रहे है, इन्हे तो अव जाना चाहिए, बालक वहुगुणा के मस्तिष्क को झकझोरने मे कोई कसर नहीं छोड़ा। फलतः इस शोषण के खिलाफ उन्हे सघर्ष का संकल्प नाबालिक समय मे ही लेना पड़ा। देहरादून मे हाईस्कूल की परीक्षा प्रथम श्रेणी मे उत्तीर्ण कर वहुगुणा ने समाजसेवी और क्रांतिकारी कार्यकर्ता के साथ-साथ एक अद्‌भुत प्रतिभाशाली छात्र का भी परिचय दिया[13]।

1938 मे अग्रिम अध्ययन हेतु बहुगुणा का पदार्पण इलाहाबाद मे हुआ जहॉ वे राजकीय इण्टर मीडिएट कालेज के विद्यार्थी हुए। उनके राजनीतिक जीवन की असली शुरूआत भी वही से हुई। इलाहावाद 1857 मे आजादी की पहली क्राति से लेकर तव तक देश के राजनीतिक जीवन में अपनी महत्वपूर्ण उपस्थित दर्ज करा दी थी। आजादी के आन्दोलन के अन्तिम चरण मे माहौल काफी गरम था। गाधी और जवाहर लाल की आवाज सुनकर हजारो नौजवान संघर्ष मे कूद पड़े थे[14]। ऐसे ही माहौल में पहाड़ के एक साधारण गॉव से चला बहुगुणा स्वतत्रता आन्दोलन के इस मुख्य केन्द्र इलाहाबाद मे आ पहुँचा। मानसिक स्तर पर तो वह राष्ट्रवादी बन चुका था परन्तु आवश्यकता थी उसे ऐसे माध्यम की जिसमें वह अपनी भावनाओं की अभिव्यक्त करता और वह उसे नेहरू के नगर इलाहाबद मे मिला। कालेज में प्रवेश पाते ही उन्होंने छात्र ससद का गठन कर दिया और छात्रो ने उन्हें अपना प्रधानमंत्री भी चुन लिया[15]। अध्ययन के साथ-साथ बहुगुणा अब तक राष्ट्रीय आन्दोलन मे शरीक हो चुके थे। नेता बनने का जो अंकुर उनके दिलो-दिमाग मे देहरादून से निकला था। धीरे-धीरे एक वृक्ष का रूप लेने लगा। फलत· समय की मॉग पर देश के प्रति समर्पित नौजवानो की टोली मे ऐसे घुले-मिले कि उससे निकलना ही मुश्किल हो गया।

राजकीय इण्टर कालेज में इण्टरमीडिएट की परीक्षा प्रथम श्रेणी मे उत्तीर्ण करने के बाद उच्च शिक्षा के लिए वे इलाहाबाद विश्वविद्यालय मे बी० एस० सी० की पढ़ाई हेतु प्रविष्ट हुए। उस समय इलाहावाद विश्वविद्यालय पूर्व का आक्सफोर्ड ही नही बल्कि स्वतंत्रता आन्दोलन का केन्द्र भी बन चुका था[16]।

---

11 दिल्ली दूर्दर्शन से प्रसारित बहुगुणा पर वृत्त चित्र के आलेख से, वही।

12 दुर्गा खण्डूरी से लिया गया साक्षात्कार।

13 योगेश्वर तिवारी का बहुगुणा पर प्रकाशित स्मारिका मे छपा लेख, वही।

14 दिल्ली दूरदर्शन से प्रसारित बहुगुणा पर वृत्त चित्र, वही।

15 योगेश्वर तिवारी का स्मारिका मे छपा लेख, वही।

16 योगेश्वर तिवारी का स्मारिका मे छपा लेख, वही।

विश्वविद्यालय का माहौल काफी गरम था। विद्यार्थी जमकर आन्दोलनात्मक गतिविधियो मे हिस्सा लिया करते थे। यहाँ तक कि क्रांतिकारियो के लिए वे अस्त्र-शस्त्र की भी व्यवस्था करते थे। छात्राए भी खुलकर इन गतिविधियों मे हिस्सा लेने लगी थीं। 1940 मे महात्मा गाधी ने असहयोग आन्दोलन मे भाग लेने के लिए नवयुवको का आहवान किया। इसी क्रम मे तत्कालीन छात्रसघ अध्यक्ष कमलेश ने 1942 मे भूमिगत होने की घोषणा की[17]। हेमवती नन्दन बहुगुणा मे नेतृत्व का प्राकृतिक गुण था और उनमें देश प्रेम की भावना बड़ी विकट थी। विश्वविद्यालय विद्यार्थी सघ परिषद मे उनकी सक्रियता ने इस बात को और साबित कर दी तथा प्रमुख छात्र नेता के रूप मे वे उभरकर सामने आ गये[18]।

17 दिल्ली दूरदर्शन से प्रसारित बहुगुणा पर वृत्त चित्र, वही।

18 प्रो० दामोदर दास खन्ना का साक्षात्कार, दिल्ली दूरदर्शन से प्रसारित, 25 अप्रैल, 1998।

1942 का भारत छोड़ो आन्दोलन इलाहाबाद में

क्रिप्स मिशन की विफलता के बाद सारा भारत, ब्रिटिश साम्राज्य और विश्व के सभी राष्ट्र अत्यन्त तीव्र उत्कठा के साथ 8 अगस्त के काग्रेस के निर्णय की प्रतीक्षा कर रह थ। 8 अगस्त सन् 1942 आ ही गया। बम्बई के इस अधिवेशन मे गाधीजी ने अपनी संतुलित और व्यवस्थित आवाज मे 'अग्रेजो भारत छोड़ो' प्रस्ताव पर जो भाषण दिया, वह भारत के ही इतिहास में नहीं अपितु विश्व के इतिहास में अमिट बज्रलेखा बन गयी। ब्रिटिश साम्राज्य के विरुद्ध भारत में धीरे-धीरे जो असंतोष की ज्वाला धधक रही थी, उसका यह भयकर विस्फोट भारत छोड़ों प्रस्ताव के रूप में सर्वसम्मति से स्वीकृत हो गया। लेकिन कांग्रेस आन्दोलन चला सके इसके पहले ही सरकार ने कड़ा प्रहार किया। 9 अगस्त को कांग्रेस के सभी मूर्धन्य नेता महात्मा गांधी, जवाहर लाल नेहरू, सरदार पटेल, अबुल कलाम आजाद, डॉ० राजेन्द्र प्रसाद आदि गिरफ्तार कर लिये गये। इस गिरफ्तारी ने देश भर में आक्रोश उत्पन्न कर दिया, फलस्वरूप सब जगह विद्रोह की आग भड़क उठी। बम्बई, अहमदाबाद, पूना, दिल्ली, कानपुर, इलाहाबाद, वाराणसी आदि सभी स्थानों में विद्रोह हुए तथा हड़तालें की गयी।

इलाहाबाद जो 1857 में आजादी की पहली क्राति से लेकर तब तक देश के राजनीतिक जीवन में अपनी महत्वपूर्ण उपस्थिति दर्ज कराकर स्वतंत्रता आन्दोलन का केन्द्र बन चुका था, महात्मा गांधी के आह्वान पर भला कैसे शात रह सकता था? वैसे भी क्रांतिकारियो के शहादत की अटूट परम्परा रही है इस शहर मे। अमर शहीद चन्द्रशेखर आजाद और रोशन सिह जैसे क्रांतिकारियों ने इस नगरी को इतिहास का स्वर्णिम पंक्तियो से पहले ही दर्ज करा दिया था। मोती लाल नेहरू, जवाहर लाल और लाल बहादुर शास्त्री जैसे अनेक महानायको का सगम की इस नगरी से गहरा सम्बन्ध था। अपने इन राष्ट्रीय नेताओं की गिरफ्तारी की खबर पाते ही पूरा शहर आन्दोलनमय हो गया। चूँकि शहर के बड़े नेता इलाहाबाद पहुँचने के पहले ही गिरफ्तार कर लिए गये थे अतः उनके सहकर्मी युवा नेताओं ने आन्दोलन की बागडोर अपने हाथ में ले ली। अगस्त के पूरे महीने तक आन्दोलन अनवरत चलता रहा[1]। डाकखानों में आग लगायी गई और लूटे गये। सरकारी भवनों तथा वाहनों को फूंक दिया गया, टेलीफोन के खम्भे उखाड़ दिये गये तथा रेलवे लाइन भी उखाड़ी गई[2]। सरकारी इमारतो पर जबरन झण्डे फहराये गये, विश्वविद्यालय, कालेज तथा स्कूलों मे हड़ताल हुई। सरकार के दमन चक्र के चलते जब प्रत्यक्ष गतिविधियों की गुंजाइश नहीं रही तो भूमिगत अड्डों से

---

1 प्रो० डी० डी० खन्ना (पूर्व अध्यक्ष, रक्षा अध्ययन विभाग, इ० वि० वि०) का प्रकाशित लेख स्मारिका मे (हेमवती नन्दन बहुगुणा, स्वतन्त्रता सग्राम सेनानी, भूतपूर्व मुख्यमंत्री उत्तर प्रदेश एव भूतपूर्व मत्री भारत सरकार पर आधारित) 1990, इलाहाबाद, पृष्ठ संख्या- 78।

2 हरेन्द्र प्रताप सिहा भारत को प्रयाग की देन, 1953, इलाहावाद, पृष्ठ संख्या- 112।

विरोध प्रक्रिया शुरू हुई[3]।

9 अगस्त की शाम को बम्बई की खबर पहुँचते ही सारे शहर मे सनसनी फैल गई। सब डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट को यह आदेश मिल चुका था कि सब खद्दर पहिनने वाले पकड लिये जाएं, जुलूस निकालने पर गोली चला दी जाय। एक तरफ से तलाशी, गिरफ्तारी, हवालात, जायदाद की कुर्की, सामूहिक जुर्माना की व्यवस्था थी और खतरे की आशका होते ही थानेदार को गोली मारने का अधिकार भी दे दिया गया था अर्थात् कमोवेश 'मार्शल लॉ' लागूकर दिया गया[4]। बावजूद इसके कि लोग इस तरह ब्रिटिश नीति से डरकर घरो मे छिपते, शहर के युवा कार्यकर्ता तथा विश्वविद्यालय के छात्र सडको पर आ गये और हेमवती नन्दन बहुगुणा, यशवीर सिह, विश्वनाथ तिवारी, केशवदेव मालवीय आदि युवा नेताओं के नेतृत्व मे ब्रिटिश हुकूमत के खिलाफ बगावत का झण्डा खडा कर दिये।[5]

सयोगवश उसी दिन ब्रिटिश ससद मे भारत सचिव लार्ड एमरी ने वक्तव्य दिया कि भारत के नेता चाहते है कि भारत मे ब्रिटिश साम्राज्य को नष्ट करने के लिए प्रशासनिक व्यवस्था, यातायात तथा ब्रिटिश संस्थान को छिन्न-भिन्न कर दिया जाए। मार्दर्शनहीन होने के कारण छात्रों ने लार्ड एमरी के वक्तव्य को ही काग्रेस का आगामी कार्यक्रम मान लिया और शहर इलाहाबाद को अगस्त क्रांति से विधिवत जोड़ दिया[6]। जनता मे उत्साह भरने तथा वड़ी तादात मे उनकी भागीदारी के लिए छात्रावासो तथा विभिन्न मुहल्लों से निकली हुई भीड को जुलूस का शक्ल दे दिया गया। 'इन्कलाब जिन्दाबाद', 'अंग्रेजों भारत छोड़ों' आदि गगन भेदी नारे लगाता हुआ जुलूस पी० डी० टण्डन पार्क में पहुँच कर एक सभा के रूप में बदल गया[7]। 10 अगस्त को पुनः एक जुलूस विश्वविद्यालय चौहाहे से निकलकर कानपुर रोड से अलवर्ट रोड (सिविल लाइन्स) से होते हुए पी० डी० टण्डन पार्क में पहुँचा तो छात्रों ने सर सप्रू के खिलाफ नारे लगाए—'सप्रू साहब गद्दार हैं—देशद्रोही है'[8]। छात्रों को सप्रू साहब से नाराजगी शायद इसलिए थी कि उन्होंने कांग्रेस को युद्ध के समय ब्रिटिश राज को न छेड़ने की सलाह दी थी और भारत छोड़ों प्रस्ताव का समर्थन नहीं किया था। छात्रों का जुलूस शहर में दो दिन तक स्वच्छन्द घूमता रहा।[9]

लाल बहादुर शास्त्री और अलगूराय शास्त्री जो कांग्रेस के अधिवेशन में भाग लेने बम्बई गये थे,

---

3 सीताराम निषाद : स्वतंत्रता सग्राम सेनानी, दारागंज, इलाहाबाद से लिया गया साक्षात्कार।

4 हरेन्द्र प्रताप सिहा : भारत को प्रयाग की देन, वही, पृष्ठ संख्या- 110।

5 विश्वम्भर नाथ पाण्डेय, स्वतंत्रता सग्राम सेनानी एवं भूतपूर्व राज्यपाल, उड़ीसा से लिया गया साक्षात्कार।

6 प्रकाश चन्द्र यादव : सघर्ष के सस्मरण (सन् बयालिस के तूफानी दिन) अखिल भारतीय स्वतंत्रता संग्राम समिति, नई दिल्ली, 1993, पृष्ठ सख्या- 1।

7 कमला बहुगुणा, स्वतंत्रता संग्राम सेनानी एवं भूतपूर्व सांसद द्वारा लिया गया साक्षात्कार।

8 प्रकाश चन्द्र यादव : सघर्ष के संस्मरण, वही, पृष्ठ सख्या- 3।

9 हरेन्द्र प्रताप सिहा : वही, पृष्ठ सख्या- 111।

पुलिस को चकमा देकर रेल मे बैठ गये और 11 अगस्त को इलाहाबाद पहुँच रहे थे।[10] नैनी रेलवे स्टेशन पर भारी सख्या मे पुलिस तैनात थी। पुलिस को बम्बई अधिवेशन से लौटकर आने वाले काग्रेसी नेताओं को गिरफ्तार करना था। नैनी के काग्रेसी कार्यकर्ता मुन्नीलाल गुप्ता, सगम लाल, राम लखन आजाद आदि ने एक स्टेशन पूर्व छिवकी पर ही लाल बहादुर शास्त्री को रेल से उतार लिया और इक्के पर बैठाकर इलाहाबाद शहर पहुँचा दिया। पुलिस नैनी स्टेशन पर कडी चौकसी लगाए शास्त्रीजी को तलाशती रही।[11] इलाहाबाद पहुँचने पर शास्त्री भूमिगत हो गये। कुछ दिनो तक वे स्वराज भवन की दूसरी मंजिल में छिपे रहे। वहीं पर वे काग्रेस कार्यकर्ताओं से सम्पर्क बनाये हुए थे। उसके बाद वे स्वराज भवन से केशव देव मालवीय के यहाँ चले गये। अफवाहो का खण्डन करने तथा जनता मे उत्साह बनाये रखने के उद्देश्य से उन्होने देहात का भी दौरा किया। कुछ दिनो बाद घण्टाघर चौक में सार्वजनिक सभा को सम्बोधित करते समय उन्हे बन्दी बना लिया गया[12]।

लाल बहादुर शास्त्री जो साहित्य अपने साथ लाये थे उसके प्रकाशन और उत्तर प्रदेश के जिले-जिले मे उसे पहुँचाने के लिए जब आर्थिक सकट आया तो उन्होंने विश्वविद्यालय के तरूण साथी हेमवती नन्दन बहुगुणा से कहा ``क्या पन्द्रह हजार रुपये का कोई प्रबन्ध हो सकता है?" बहुगुणा का उत्तर था, 'हॉ रुपया अवश्य मिलेगा।' यह उस छात्र नेता का उत्तर था जो स्वय बेघर था अर्थात् पुलिस से बचने के लिए रात मे किसी और के घर सोता था या जिसे विश्वविद्यालय का चपरासी रोटी खिला देता था तो उसकी भूख भर जाती थी। उसे कौन देगा पन्द्रह हजार रुपये? लेकिन बहुगुणा के व्यक्तित्व की आधारशिला ही उसके आत्मविश्वास पर निर्भर थी। अन्तत. शाम होते ही पुलिस की निगाहो से वचता हुआ फरार बहुगुणा पहुँच गया अपने बंगाली मित्र के यहाँ, जिसने कई बार घर आने का आग्रह किया था और फरियाद सुनाई। बगाली मित्र के पिता (व्हीलर कम्पनी के मालिक) ने पूछा, ``तूमि बहुगुणा?" बहुगुणा ने सिर हिलाकर स्वीकृति दी। ``तुम रूपी लेगा?" पिता ने पूछा। बहुगुणा न समझ सके कि यह उपहास है या उपहार की प्रस्तुति, चुप रहे। पिता उठकर भीतर दूसरे कमरे मे गये। इतने मे टेलीफोन की घंटी बजी, बहुगुणा सकपकाए, आयी पुलिस परन्तु दृष्य कुछ और था, पिता भीतर से नोट की गड्डियां लेकर आये और उन्हे सौपते हुए कहा—`लो बेटा खूब काम करो' अग्रेजो को भगाना है।[13] ये रुपये थे अट्ठारह हजार (18,000) जिन्हे लाल बहादुर शास्त्री को सौप कर बहुगुणा ने अपने आत्मविश्वास, आत्मनिरीक्षण और दुर्धर्ष व्यक्तित्व

---

10 कन्हैया लाल मिश्र . 'प्रभाकर' का हेमवती नन्दन बहुगुणा पर प्रकाशित स्मारिका मे छपा लेख1990, इलाहाबाद, पृष्ठ–सख्या- 40।

11 रामकृष्ण शर्मा का प्रकाशित लेख इलाहाबाद और भारत छोड़ो आन्दोलन गंगा-जमुना, हिन्दी साप्ताहिक समाचार पत्र, अगस्त, 1999, इलाहाबाद।

12 डॉ० भुवनेश्वर सिह गहलौत उत्तर प्रदेश की महान विभूतियाँ, 1977 इलाहाबाद, पृष्ठ संख्या-150।

13 कन्हैया लाल मिश्र 'प्रभाकर' का बहुगुणा पर प्रकाशित स्मारिका में छपा लेख, वही, पृष्ठ संख्या- 42।

का प्रमाण दिया। इस रुपये की महायता मे आन्दोलन मम्वन्धी साहित्य इलाहाबाद से प्रकाशित होकर उत्तर प्रदेश के कोने-कोने मे पहुँचने लगा।[14]

ब्रिटिश मरकार आन्दोलन के समय प्रेस स्वतंत्रता पर अक्सर प्रतिवन्ध लगा देती थी जिससे लोग म्वतत्रता मग्राम मम्वन्धी खवरो मे वचित हो जाते थे। लेकिन सरकारी कठोर नियंत्रण के बावजूद देशभक्त माइक्लोम्टाइल मे बुलेटिन प्रकाशित कर स्वतत्रता संग्राम की खबरें दूर-दूर तक पहुँचाते रहते थे। बुलेटिन प्रकाशित करने वाले साइक्लोस्टाइलो पर पुलिस की कड़ी निगाह रहती थी। जहाँ कही भी इनका पता चलता उनको जब्त कर लिया जाता था। इलाहाबाद भी साइक्लोस्टाइल द्वारा बुलेटिन निकालने का एक प्रमुख केन्द्र था। इस मन्दर्भ मे 1942 की एक घटना की चर्चा करना समीचीन होगा। दारागंज मुहल्ले के एक मठ मे माइक्लोस्टाइल मशीन रखी हुई थी। रात्रि के 9 बजे थे। 4, 5 युवक मिलकर एक बुलेटिन छाप रहे थे। इतने मे ही एक माधु भागता हुआ आया और खबर दी कि पुलिस आ रही है। अब क्या हो? सभी बुलेटिन लेकर नौजवान तो पलायन कर गये, पर मशीन कैसे हटायी जाय? अचानक वृद्ध दाढ़ी धारी महन्त ने मखमली कपडा लेकर मशीन को उढ़ा दिया और भगवान श्रीकृष्ण का चित्र लगाकर उसी पर रख दिया। बगल मे शख और पूजा की थाली रखकर कीर्तन करने लगे। पुलिस आयी लेकिन भक्तजनों को क्यो छेडती, इधर-उधर झॉका और चली गई[15]।

बुलेटिन छापने का गोपनीय कार्य इलाहाबाद शहर के कई मुहल्लो, मठो तथा पाठशालाओं में होता था। त्रिलोकी नाथ सिन्हा, प्रकाश चन्द्र यादव तथा केशवदेव मालवीय आदि का इस क्षेत्र में विशेष योगदान था। सिन्हा कायस्थ पाठशाला के मेक्रेटरी थे और कायस्थ पाठशाला प्रेस में ही कांग्रेस की बुलेटिन छपवाते थे।[16] प्रेम पर जबरदस्त कुठाराघात के कारण इन गोपनीय बुलेटिनों का विशेष महत्व था। लेकिन तब किसे मालूम था कि तमाम खतरो से खेलकर लिखे गये कागज के ये टुकड़े सचमुच ही भारतीय स्वतंत्रता के भाग्यपत्र वन जाएगे? लोगो को पता था कि इन बुलेटिनों को पढ़ने और बॉटने वालों को कड़ी से कड़ी सजा दी जाएगी, पर आजादी की लडाई लड़ने वाले भला इन सबसे कहॉ डरते थे, बुलेटिनें बराबर छपती रही। बाजार के बरामदो मे, दुकानो के दरवाजो पर, बिजली के खम्भों व पेड़ के तनो पर बादामी रंग के खुरदुरे कागज पर शुद्ध, अशुद्ध टाइप की हुई बुलेटिने चिपकती रही तथा महत्वपूर्ण कार्यकर्ताओं के घरो तक पहुँचायी जाती रही।[17] उदाहरण स्वरूप केशवदेव मालवीय द्वारा 1942 में लिखी गई बुलेटिन का एक अश नीचे उद्धृत है—``आज ही हमारे स्वय सेवक झण्डा लेकर बाजार मे किसी भी जगह मीटिंग करेंगे और नेताओं को सदेश सुनाएगे। जहॉ कहीं आप विगुल, कनस्तर या बिजली के खम्भों पर खटखटाहट सुने और

---

14 प्रो० चिन्तामणि शुक्ल . गाधी युगीन स्वतंत्रता सग्रामों मे उत्तर प्रदेश का योगदान, 1988, मथुरा, पृष्ठ संख्या- 49।

15 प्रो० चिन्तामणि शुक्ल · वही, पृष्ठ संख्या- 51।

16 प्रकाश चन्द्र यादव सघर्ष के संस्मरण (सन् बयालिस के तूफानी दिन) वही, पृष्ठ स० 11।

17 प्रो० चिन्तामणि शुक्ल : गाधी युगीन स्वतत्रता सग्रामों मे उत्तर प्रदेश का योगदान, वही, पृष्ठ संख्या- 50-51।

झण्डा लिये हुए हमारे स्वय सेवक को देखे फौरन हजारों की तादात मे उसे घेर कर बैठ जायं और उसकी गिरफ्तारी को रोके। अगर वह गिरफ्तार कर ही लिया जाता है तो प्रार्थना है कि भीड़ का कोई आदमी उसकी जगह ले ले और इस तरह सैकडो की तादात मे अपने आपको गिरफ्तार कराएं। हमें देखना है कि सरकार कितने लोगो को गिरफ्तार कर सकती है।"[18]

12 अगस्त, 1942 की वह घटना जिसमे विश्वविद्यालय के प्रतिभाशाली छात्र लालपद्मधर सिह ने शहादत दी थी, भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन के इतिहास में एक अमिट छाप है। अब तक इलाहाबाद मे हडताल और प्रदर्शनो का तूफान सा आ गया था। न केवल नौजवान बल्कि महिलाएँ भी आन्दोलन मे सक्रिय भागीदारी लेने लगी थी। 11 बजे कचहरी भवन पर झण्डा फहराने के लिए कृतसंकल्प महिलाओं का एक जुलूस निकला जिसका नेतृत्व हाथ मे तिरगा लिये हुए लडकियाँ कर रही थी। जुलूस कचहरी के सम्मुख जैसे ही पहुँचा वायुमण्डल 'इन्कलाब जिन्दाबाद' के नारे से गूँज उठा। जुलूस मे सबसे आगे विजय लक्ष्मी पडित, जस्टिस आनन्द नारायण मुल्ला की बेटी, एक पुलिस अफसर की लड़की तथा प्रख्यात इतिहासकार डॉ० राम प्रसाद त्रिपाठी की पुत्री कमला त्रिपाठी आदि झण्डा लिए हाथ मे खड़ी थी[19]। जिला कचेहरी पर तैनात पुलिस ने जुलूस को आगे बढ़ने से रोक दिया। 15 मिनट तक दोनों में घूरा-घूरी होती रही। इतने में अचानक ज्वाइंट मजिस्ट्रेट और डिप्टी सुपरिन्टेन्डेन्ट पुलिस अपने हाथ में पिस्तौल तानकर खडे हो गये तथा लडकियो को भाग जाने को कहा। लेकिन जब वे एक इंच भी पीछे नही हटी तो फायर का आदेश दे दिया। लडकियाँ लेट गई',[20] तब तक दूसरा जुलूस जिसमें बड़ी सख्या में नौजवान शामिल थे, आ चुका था। गोली चलाने के आदेश को सुनते ही नौजवान लालपद्मधर सिह छात्रो के समूह से निकलकर आगे आ गये ताकि गोली लड़कियो को न लगे। पद्मधर सिह ने चिल्लाकर कहा 'सूट मी' (गोली मुझे मारो) गोली लगी, पद्मधर सिह गिरे और शहीद हुए[21]। इस अमानुषिक घटना को तत्कालीन सब डिवीजनल अफसर अमीर रजा ने गैर कानूनी बताया था। टिप्पणी स्वरूप अपने बयान मे उन्होंने कहा था कि मैं निकट से देखा कि पद्मधर सिह की मृत्यु कानून गोली चलाने से नही हुई बल्कि जानबूझकर उनकी हत्या की गई। दो सौ निहत्थे और निरीह छात्रों पर गोली चलाना युद्ध भूमि का वीरतापूर्ण कार्य न था। उन लोगों ने एक घटे से अधिक समय तक गोली का सामना किया। पुलिस ने 10-10 मिनट पर 5 या 6 बार गोली चलाई। वस्तुतः स्थिति यह थी कि निहत्थे नौजवानो की आवाज को सुनकर पुलिस ने भी लज्जावश अपने मुँह को दूसरी ओर फेर लिया था। इतना ही नही बल्कि स्थिति को देखकर तत्कालीन जिला मजिस्ट्रेट डिक्सन के चेहरे पर भी उदासीनता

---

18 प्रो० चिन्तामणि शुक्ल वही, पृष्ठ सख्या- 52।

19 कमला बहुगुणा से लिया गया साक्षात्कार।

20 हरेन्द्र प्रताप सिहा भारत को प्रयाग की देन, वही, पृष्ठ संख्या- 111।

21 पी० डी० टण्डन (स्वतंत्रता संग्राम सेनीनी एवं पूर्व विधान परिषद् सदस्य, उत्तर प्रदेश) से लिया गया साक्षात्कार।

छा गई थी और अदालत के कमरे मे जाते समय उनके पैर लड़खड़ा रहे थे[22]।

लालपद्मधर सिह की शहादत की खबर सारे शहर में बिजली की तरह फैल गई। जनता मे क्रोध की सीमा न रही दूसरी ओर सरकार ने भी दमन कार्यवाही त्वरित गति से प्रारम्भ कर दी। शहर मे सूर्योदय से सूर्यास्त तक कर्फ्यू आर्डर लगा दिया गया तथा फौजी मोटर लारी दौड़ने लगी[23]। इस चुनौतीपूर्ण स्थिति मे भी इलाहाबाद के नौजवानो ने भारत छोड़ो-आन्दोलन जारी रखा। सड़क पर जहॉ भी सरकारी गाड़ी दिखी उसे जलाना शुरू कर दिया। जगह-जगह तिरंग झण्डा फहाराय गया। चौक कोतवाली की सड़क पर भारी भीड इकट्ठी हो गई। कुछ नौजवानो ने घंटाघर पर चढ़कर तिरंगा फहराया तो कुछ लोग कोतवाली की ओर बढ़े। पुलिस ने घेरा डाल दिया ईट-पत्थर की वर्षा होने लगी। कोतवाली पर तैनात गोरखा फौज ने गोली चलायी, अहियापुर (मालवीय नगर) के बैजनाथ गुप्त तथा रमेशचन्द्र मालवीय जो सी० ए० वी० के छात्र थे, शहीद हुए[24]। फलस्वरूप आन्दोलन की लपटे सिर्फ शहर तक सीमति नही रही बल्कि देहाती क्षेत्रो मे भी फैल गई। ग्राड ट्रंक मार्ग पर स्थित सैदाबाद बाजार में किसानों ने एक जुलूस निकाला। जुलूस को तितर-बितर करने के लिए पुलिस ने गोलियों की बौछार कर दी और चार व्यक्तियों क्रमश. सियाम्बर, चन्द्रमा प्रसाद, श्री दयाल और सुबोध को हमेशा के लिए सुला दिया गया[25]। आज के दिन शहीद होने वालों की सख्या बहुत थी, परन्तु उनका नाम इतिहास मे अंकति नही हो पा रहा है। अस्पतालों की रिपोर्टो के अनुसार कालविन अस्पताल में गोली से मारे गये पाँच लोगो के शव को मिलेट्री ट्रक में भर कर लाया गया था। लेकिन उनका नाम-पता (सिनाख्त) न होने के कारण उन्हे मिट्टी का तेल छिड़कर जला दिया गया था[26]। स्रोतो से पता चलता है कि ऐसे कई शहीदों के शव को सरकारी सूची से बाहर रखा गया।

अब तक इलाहाबाद का माहौल बिल्कुल गरम हो चुका था। आन्दोलन और पुलिस का दमन-चक्र पूरे जोर-शोर से चल रहा था। युवाओं की राजनीतिक गतिविधियॉ कम करने के लिए 13-14 अगस्त को विश्वविद्यालय बिल्कुल बन्द कर दिया गया। छात्र संघ के दफ्तर में ताला डाल दिया गया और छात्रावास खाली करा लिए गये[27]। इतने से भी जब काम नही चला तो पुलिस ने जिले और शहर दोनों जगह निरपराध गोलियॉ चलायी, जिसमे मुरारी मोहन भट्टाचार्य, भगवती प्रसाद, अब्दुल मजीद, द्वारिका प्रसाद तथा लल्लन मिश्र आदि लोग शहीद हुए[28]। ऐसे में शहर के युवा कार्यकर्ता हेमवती नन्दन बहुगुणा और उनके

---

22 प्रकाश चन्द्र यादव सघर्ष के संस्मरण, वही, पृष्ठ संख्या- 5।

23 हरेन्द्र प्रताप सिंहा . वही, पृष्ठ सख्या- 112।

24 रामकृष्ण शर्मा का प्रकाशित लेख, गंगा-जमुना हिन्दी साप्ताहिक समाचार पत्र अगस्त, 1999, इलाहाबाद।

25 प्रकाश चन्द्र यादव वही, पृष्ठ सख्या- 4।

26 प्रो० चिन्तामणि शुक्ल वही, पृष्ठ संख्या- 55।

27 प्रो० डी०डी० खन्ना का बहुगुणा पर प्रकाशित स्मारिका में छपा लेख; वही पृष्ठ संख्या- 78।

28 नागरिक सुरक्षा संगठन एवं जिला प्रशासन 'इलाहाबाद द्वारा प्रकाशित 'स्वाधीनता आन्दोलन और इलाहाबाद में छपा लेख' 'प्रयाग के शहीदों की वीर गाथाएं, 1997, इलाहाबाद।

साथियो ने भूमिगत होकर आन्दोलन चलाने का निर्णय लिया। भूमिगत हुई करीब पचास (50) विश्वसनीय विद्यार्थियों की इस टुकड़ी के समक्ष सबसे कठिन कार्य यह था कि किस प्रकार शहर के विभिन्न क्षेत्रों में सरकार विरोधी कार्यक्रम चलाएँ और कार्यक्रम का संदेश क्षेत्र के लोगो तक पहुँचाएं क्योंकि तनिक भी संदेह होने पर संदेश वाहक गिरफ्तार हो जाता था तथा पुलिस उससे बहुगुणा और उनके साथियों के छिपने का स्थान पूछती थी[29]। फिलहाल बहुगुणा उस समय तक उग्रवादी रूख अपना चुके थे। उनकी संगठित टुकड़ी अक्सर राम चरन अग्रवाल के दारागंज निवास पर सुबह होने से पहले आ जाया करती थी। वे सब वहॉ दिन भर छिपे रहते, विश्राम करते और योजनाएँ बनाया करते थे। पुनः रात होते ही एक निश्चित समय पर पूरा दल एक साथ निकल पड़ता था[30]।

प्रारम्भिक कुछ दिनो तक इस भूमिगत टुकड़ी ने अपनी गतिविधियों का केन्द्र डॉ० रामप्रसाद त्रिपाठी जो एक सुप्रसिद्ध इतिहासकार एवं इलाहाबाद विश्वविद्यालय में इतिहास विभाग के अध्यक्ष थे, के यहॉ बनाया, क्योकि पुलिस को यह आशा नही थी कि डॉ० त्रिपाठी का निवास राजनीतिक गतिविधियों का एक केन्द्र हो सकता है। डॉ० त्रिपाठी के निवास पर आन्दोलन का केन्द्र बनने का एक और कारण यह भी था कि उनकी पुत्री कमला भी आन्दोलन मे सक्रिय रूप से भाग ले रही थी। इसके उपरान्त आन्दोलन का केन्द्र जार्ज टाउन में यशोदा नन्दन, जो बाद मे इलाहाबाद उच्च न्यायालय के न्यायाधीश हुए, के यहॉ केन्द्रित हुआ। पुलिस परेशान थी क्योकि अधिकतर क्षेत्रों मे वह तभी पहुँच पाती थी जब यह टुकड़ी अपना कार्यक्रम समाप्त कर किसी दूसरे स्थान के लिए प्रस्थान कर जाती थी[31]। ब्रिटिश सरकार अब तक जिन्दा या मरे बहुगुणा का वारंट जारी कर दी थी और उन पर पॉच हजार रुपये (5000) का पुरस्कार भी घोषित कर चुकी थी[32]। अतः पुलिस उन्हे दिन-रात बेरहमी से ढूँढ़ रही थी। बहुगुणा ने जान की बाजी लगाकर इलाहाबाद मे आन्दोलन को जारी रखा पर जब पुलिस उनके बहुत पीछे पड़ गई तो उन्होंने दामोदर दास खन्ना जो उनके दल के एक सदस्य थे, लोकनाथ की गलीवाले उनके आवास में रहकर आन्दोलन को चलाया। वहॉ पर पुलिस का अचानक पहुँचना लगभग असम्भव था परन्तु माहौल को बिल्कुल विपरीत समझते हुए बहुगुणा को अपना कार्यक्षेत्र इलाहाबाद के बाहर बनाना पडा। अन्ततः फौजी कप्तान का कपड़ा पहन कर एक फौजी गाड़ी में बैठ गये और कानपुर जा पहुँचे[34], परन्तु वहॉ भी कुछ माहौल न समझ पाने

---

29 विश्वम्भर नाथ पाण्डेय से लिया गया साक्षात्कार।

30 राम चरन अग्रवाल, स्वतंत्रता सग्राम सेनानी, दारागंज इलाहाबाद द्वारा लिया गया साक्षात्कार।

31 प्रो० डी० डी० खन्ना, का प्रकाशित लेख, वही।

32 नन्द किशोर नौटियाल (सम्पादक, नूतन सबेरा, हिन्दी साप्ताहिक, मुम्बई) का बहुगुणा पर प्रकाशित स्मारिका में छपा सम्पादकीय लेख, 11 मई, 1990, इलाहाबाद।

33 प्रो० डी० डी० खन्ना, · वही, पृष्ठ संख्या- 79।

34 ओंकार शरद · धर्मयुग, 22 अप्रैल, 1979, पृष्ठ संख्या- 35।

के कारण दिल्ली रवाना हुए। दिल्ली मे ही दो भाग कर आये उड़ीसा और गुजरात के बीजू पटनायक तथा मनुभाई शाह से वे परिचित हुए और योजना के तहत रानी विक्टोरिया की मूर्ति को तोड़ने के लिए चढ़ गये। मूर्ति की नाक ही तोड़ पाये थे कि पुलिस आ पहुँची। पत्थर पुलिस पर फेक बहुगुणा कूदकर भागे और पुलिस पीछा करके भी न पकड सकी। अब दिल्ली सरकार ने भी बहुगुणा की गिरफ्तारी के लिए पॉच हजार रुपये का इनाम घोषित किया यानि इनाम की राशि अब दस हजार रुपये हो गयी थी। पता चलता है कि कुछ ही दिनो मे एक 'स्वजातीय' मुखबिर की सूचना पर जामा मस्जिद के घने इलाके मे छिपे बहुगुणा को पुलिस ने गिरफ्तार कर लिया[35]।

इंदिरा, फिरोज व स्वराज भवन की चर्चा किये बगैर शायद यह अध्याय अधूरा होगा। इन्दिरा के नेतृत्व मे भी इलाहाबाद मे आन्दोलन चल रहा था। 1942 के आन्दोलन के दौरान पहली बार एक आन्दोलनकारी के रूप मे वे जेल गई[36]। उनकी गिरफ्तारी की घटना इस प्रकार है—इलाहाबाद शहर के चौक मे इन्दिरा व फिरोज गांधी ने विरोध सभा आयोजित करने का फैसला किया। सभा की तैयारियॉ गुप्त रूप मे की गयी। उसके स्थान व समय की सूचनाऍ मौखिक रूप से बड़ी सतर्कता के साथ दी गई। हिदायत दी गई कि गश्ती दस्तो का ध्यान न आकर्षित करते हुए लोग शहर के चोक के पास जमा हो और सकेत मिलने से पहले आस-पास की दुकानो, मकानों तथा सिनेमा घरों मे रहें। गिरफ्तारी से बचने के लिए सभा से पहले की रात इदिरा ने अपने घरो में नही, बल्कि परिचित लोगो के यहॉ बितायी[37]। सभा के समय वानर सेना की तरुण सचालिका के रूप मे इंदिरा मच पर आयी और इकट्ठे लोगों को सम्बोधित करते हुए कहा—"उपनिवेशिको से हम कहते हैं भारत छोड़ो। भारत को आजाद होना चाहिए और वह आजाद होकर रहेगा।" इतने मे शहर की सड़को पर गश्त लगाने वाले ब्रिटिश सैनिक मैदान में पहुँचे, इंदिरा व फिरोज पकडे गये और जेल भेज दिये गये। सैनिकों ने बन्दूक के कुन्दो से जी भरकर काम लिया। भीड़ तितर-बितर कर दी गई। बहुत से लोग गिरफ्तार किये गये, फिर भी सभा सफल हुई। इंदिरा और फिरोज की पहल पर आयोजित यह सभा देश के कोने-कोने मे होने वाली हजारों सभाओं में से एक थी[38]।

स्वाधीनता आन्दोलन के समय इलाहाबाद मे स्थित स्वराज भवन के योगदान की एक लम्बी दास्तान है। ससार का शायद ही कोई भवन इतना भाग्य शाली हो जिसने अपने सजाने, सॅवारने वालों की चार पीढ़ियो को लगातार अपने देश की आजादी के लिए तिल-तिल कर न केवल कुर्बान किया बल्कि स्वाधीन देश को सजाते, सॅवारते और उसके बिखरे तारों को जोड़ते-जोड़ते उनके प्राणों की आहुति भी दे दिया हो। राष्ट्रीय आन्दोलन के समय बहुत सी ऐतिहासिक बैठके और निर्णय इसी स्वराज भवन में लिये गये जिसने

---

35 ओंकार शरद : धर्मयुग, वही।

36 पी० डी० टण्डन से लिया गया साक्षात्कार।

37 सर्वसुख सिह, स्वतत्रता सग्राम सेनानी एवं पूर्व शिक्षा मत्री उत्तर प्रदेश सरकार से लिया गया साक्षात्कार

38 इदिरा गाधी . कल्पनाए और उपलब्धियां, प्रगति प्रकाशन मास्को, 1990, पृष्ठ संख्या- 324।

आजादी की लडाई की दिशा बदली। 1942 मे लाल बहादुर शास्त्री की शरणस्थली के रूप मे स्वराज भवन का उल्लेख पहले ही किया जा चुका है। इदिरा गाधी ने भी एक स्थान पर लिखा है कि शास्त्री जी की गिरफ्तारी का वारण्ट जब 1942 मे निकल चुका था, उस समय वे वेश बदलकर गुप्त रूप से आनन्द भवन मे रहते थे। वे इसी रूप मे तब तक वहॉ रहे जब तक आन्दोलन को चलाने का पूरा प्रबन्ध नही कर लिया[39]। भारत के अनेकानेक स्वाधीनता सेनानियो की भाति 1942 मे 'स्वराज भवन' भी गिरफ्तार कर लिया गया और सरकारी फौज की एक टुकड़ी यहॉ पहरे पर तैनात कर दी गई थी। सिर्फ इतना ही नही बल्कि बेरहमी के साथ इस भवन को लूटा गया और यहॉ की अनमोल वस्तुऍ नष्ट की गई। लेकिन स्वराज भवन राष्ट्रीय आन्दोलन की सक्रियता और ताजगी के लिए गोपनीय सभाओं का केन्द्र बना रहा। इसी प्रकार स्वाधीनता सेनानियो के लिए कमला नेहरू द्वारा उसी भवन में स्थापित चिकित्सालय को भी सरकारी सिपाही नष्ट करने से नही चूके परन्तु वह चिकित्सालय किसी भी परिस्थिति मे अनवरत चलता रहा[40]।

इस प्रकार स्पष्ट है कि 1942 की क्रान्ति के दौरान इलाहाबाद नेतृत्व विहीन होने के बावजूद आन्दोलन मे शामिल ही नही हुआ बल्कि महात्मागांधी के 'करो या मरो' की ललकार का शानदार तरीके से जबाव भी दिया। जहॉ एक ओर कई नौजवान शहीदो के खून से यह धरती सिंचित हुई वही दूसरी ओर राजर्षि टण्डन, लाल बहादुर शास्त्री, इंदिरा, नेहरू, फिरोज गांधी, कमलापति त्रिपाठी, पी० डी० टण्डन, केशवदेव मालवीय, रफी अहमद किदवई और हेमवती नन्दन बहुगुणा सरीखे कई देश भक्त तथा हजारो कार्यकर्ताओं ने जेल की सीखचो मे बन्द होकर अपनी राष्ट्रभक्ति का आदर्श प्रस्तुत किया। यह भी कहना उचित ही होगा कि बम्बई अहमदाबाद, पूना और दिल्ली से आजादी की चली लहर को पुख्ता करने तथा उसमे और अधिक ताजगी डालकर पूर्वाचल क्षेत्रों विशेषकर बलिया और वाराणसी को दिशा एवं प्रोत्साहन देने मे इलाहाबाद बीच की एक महत्वपूर्ण कड़ी का काम करता रहा।

गिरफ्तारी के बाद बहुगुणा को ब्रिटिश सरकार ने तीन वर्ष तक नैनी सेन्ट्रल जेल, इलाहाबाद तथा अमहट जेल सुल्तानपुर में रखा। कारगार प्रवास के दौरान बहुगुणा जवाहर लाल नेहरू, लाल बहादुर शास्त्री, सम्पूर्णानन्द, कमलापति त्रिपाठी, फिरोजगांधी आदि राष्ट्रीय नेताओं के सम्पर्क में आये। जेल की इस लम्बी अवधि में इन राष्ट्रीय नेताओं के आदर्शों व सिद्धान्तों का उन पर गहरा प्रभाव पड़ा। जिसके कारण बहुगुणा जेल से छूटने के बाद एक छात्र नेता ही न रहकर बल्कि लोकप्रिय जननेता हो गये। वैसे भी बहुगुणा कांग्रेस के सच्चे सिपाही होने के साथ-साथ विचारों से वामपन्थी थे, बचपन से ही उनमें समाजवादी और जनकल्याण की भावना कूट-कूट कर भरी थी। जेल में नेताओं के बीच बात-चीत का सिलसिला शुरू

---

39 नागरिक सुरक्षा संगठन एव जिला प्रशासन इलाहाबाद द्वारा प्रकाशित 'स्वाधीनता आन्दोलन और इलाहाबाद, मे छपा लेख' 'स्वतंत्रता आन्दोलन का अग्रणी इलाहाबाद' 1997, इलाहाबाद।

40 वही; में प्रकाशित लेख 'प्रयाग का गौरव स्वराज भवन'।

होते ही वे देश की वर्तमान हालात पर सब ध्यान केन्द्रित कर देते, स्वतंत्र भारत की तस्वीर खीचते और बेवाक ढग से सारी आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक नीतियो पर बोलने लगते थे[41]।

बहुगुणा हमेशा कहते थे कि भारत का सबसे बड़ा शत्रु 'गरीबी' है। हमारी असली लड़ाई गरीबी से है। कभी-कभी तो वे ऐसे बोलते कि जैसे वे इस देश में लागू की जाने वाली सभी नीतियों का खाका तयार कर चुके हो। बहुगुणा का भाव ऐसा था जैसे स्वतंत्रता प्राप्ति का पूर्वाभास उन्हें हो चुका हो। कारावास के वरिष्ट साथी कमलापति त्रिपाठी ने जब उनसे कहा कि 'बहुगुणा आजादी पाने के लिए अभी हमें बहुत बलिदान देना होगा'। बहुगुणा ने तपाक से उत्तर दिया 'बलिदान चाहे जितना देना पड़े, भारत का नौजवान सिर पर कफन बाध चुका है।' हम अंग्रेजों के साथ अन्तिम और निर्णायक युद्ध लड़ रहे हैं। फतह हमारी होगी। अग्रेजो को भारत छोडना होगा[42]'।

जेल मे बहुगुणा को अनेक यातनाए दी गई क्योकि पहले से ही ब्रिटिश हुकूमत ने उन्हें 'राजद्रोही' और 'अपराधी'[43] करार दिया था। अन्ततः वे सख्त बीमार हुए। उन्हें प्लूरिसी हो गई और हालत दिन ब दिन बिगडती जा रही थी। ब्रिटिश सरकार स्वास्थ्य के आधार पर उन्हे मुक्त होने का अवसर दे रही थी लेकिन इस शर्त के साथ कि अब कभी भी वे राष्ट्रीय आन्दोलन में भाग नहीं लेंगे। यह शर्त बहुगुणा की मानसिक प्रकृति के विपरीत थी लिहाजा उन्होंने इन्कार कर दिया[45], पर कारागारी चिकित्सकों के कोपभाजन बने। डॉक्टर उनकी कोई परवाह नही करते थे। एक दिन गुस्से में आकार पी० डी० टण्डन जो उस समय जेल मे ही थे जोर से चिल्लाए, 'डॉक्टर साहब, आप बैरक के बाहर एकदम निकल जाइये। आप बहुगुणा को मार डालेगे। डॉक्टर नाराज होकर जेल अधीक्षक के पास गये और उनकी (पी० डी० टण्डन) की शिकायत की। कमलापति त्रिपाठी जो पहले से नैनी सेन्ट्रल जेल की सीखचो में बन्द थे, ने जब यह किस्सा सुना तो कहा कि टण्डन को ऐसा नही करना चाहिए था, क्योकि उन्हे हथकडी पड़ सकती है और तनहाई मे रखे जा सकते है। हलाकि कोई कार्यवाही नहीं की गई। दूसरे दिन बहुगुणा जेल की अस्पताल में भरती किये गये। पी० डी० टण्डन ने जेल वार्डेन से छिपाकर एक पत्र विजय लक्ष्मी पण्डित को लिखा जो उन दिनो बाहर थी। उन्होने लिखा कि बहुगुणा की जान खतरे में है और कृपाकर स्काटलैंडी सिविल सर्जन कर्नल लाई जो जेल के प्रभारी है, उनसे बहुगुणा को दिखलाया जाय। तदुपरान्त विजय लक्ष्मी पंडित के प्रयासों के तहत सिविल सर्जन बहुगुणा को देखने आये। अधीक्षक गार्डनर उन्हें सबसे मिलाता था, किन्तु बहुगुणा का

41 कमला पति त्रिपाठी (पूर्व मुख्य मन्त्री, उत्तर प्रदेश एवं पूर्व मंत्री भारत सरकार) का प्रकाशित साक्षात्कार, बहुगुणा पर छपी स्मारिका मे, इलाहाबाद, 1990, पृष्ठ संख्या- 37।

42 कमला पति त्रिपाठी का साक्षात्कार, वही, पृष्ठ संख्या- 38।

43 ए० नील लोहित दासन नाडर (मंत्री केरल सरकार) का स्मारिका में छपा लेख, वही, पृष्ठ संख्या- 61।

44 प्रो० दामोदर दास खन्ना (भू० पू० अध्यक्ष, रक्षा अध्ययन विभाग, इ० वि० वि०) का स्मारिका में प्रकाशित लेख, वही, पृष्ठ सख्या- 79।

45 योगेश्वर तिवारी का स्मारिका मे प्रकाशित लेख, वही, पृष्ठ संख्या- 1।

नाम भी न लेना था जबकि सिविल सर्जन बार-बार पूछता था ``भगौना कहाँ है"? जैसे ही बहुगुणा को यह भनक मिली वह अपनी चारपाई पर खडे हो गये और कहने लगे," सर, ये हमे मार डाल रहे है।" डॉक्टर उनके पास गया और जॉच के बाद कहा, ``इसके फेफडे मे बेहद पानी भर गया है। इसको मेरी मोटर मे बिठाओ। इसे अस्पताल ले जाऊँगा।'' बहुगुणा अस्पताल गये। चार बोतल पानी उनके फेफडे से निकाला गया। कुछ दिन बाद वे सुल्तानपुर भेज दिये गये जहाँ की आबोहवा इस तरह के मरीजों के अनुकूल थी[46]।

1945 मे बहुगुणा जेल से छूटकर आये। इलाहाबाद विश्वविद्यालय के तत्कालीन वाइसचान्सलर डॉ० अमरनाथ झा ने उन्हे बी० ए० द्वितीय वर्ष मे प्रवेश की अनुमति दे दी, यद्यपि वह जेल जाने के पहले बी० एस० सी० के छात्र थे। उन्होंने इतिहास, हिन्दी और अर्थशास्त्र विषयों मे नाम लिखाया और प्रो० सी० बी० त्रिपाठी (पूर्व विभागाध्यक्ष मध्यकालीन एव आधुनिक इतिहास विभाग, इ० वि० वि०) के सहपाठी बने। उनके विश्वविद्यालय से आते ही एक लहर सी दौड गई, विद्यार्थियो मे राष्ट्रीय[47] आन्दोलन के प्रति चेतना फिर जाग उठी[47]। विश्वविद्यालय स्टूडेन्ट यूनियन जो अगस्त 1942 के आन्दोलन मे बन्द हो गया था उसे पुन सक्रिय बनाने के लिए छात्रनेता नारायण दत्त तिवारी को अनशन पर बैठाया गया। परिणामस्वरूप तत्कालीन कुलपति अमरनाथ झा ने जूस पिलाकर अनशन समाप्त करवाया। छात्र यूनियन का ताला खोला गया और विश्वविद्यालय विद्यार्थी छात्र संघ पुर्नजीवित हुआ[48]। जिला स्टूडेन्ट काग्रेस और प्रदेश स्टूडेन्ट काग्रेस जो एक तरह से 1942 के आन्दोलन के बाद समाप्त हो चुकी थी, हेमवती नन्दन बहुगुणा ने उसे पुर्नगठित किया, फलस्वरूप बिखरी शक्ति फिर संगठित होने लगी। पहले वे जिला स्टूडेन्ट कांग्रेस कमेटी के अध्यक्ष रहे फिर बाद मे प्रदेश स्टूडेन्ट कांग्रेस कमेटी के अध्यक्ष हुए। इस सन्दर्भ में कई सभाएं इलाहाबाद के आनन्दभवन मे हुई। इस समय प० नेहरू भी जेल से छूटकर आ चुके थे। बहुगुणा नारायण दत्त तिवारी, सी० बी० त्रिपाठी एव अन्य सहयोगी साथियों के साथ सभा मे शामिल हुआ करते थे और किस प्रकार विद्यार्थी आन्दोलन को आगे बढ़ाया जाय, विषय पर पं० नेहरू के विचारों को मनोयोग से ग्रहण करते और तदुपरान्त क्रियाशील हो जाते थे[49]।

सुभाष चन्द्र बोस द्वारा गठित आजाद हिन्द फौज के जो सेना नायक अंग्रेज सरकार द्वारा गिरफ्तार किये गये थे, उन पर दिल्ली में मुकदमा आरम्भ हुआ। उन सैनिकों की सुरक्षा के लिए देश के लगभग सभी वरिष्ठ बैरिस्टरो ने बहस आरम्भ की जिनमे पं० जवाहर लाल नेहरू भी थे। बहुगुणा ऐसे समय में भला कब चुप बैठने वाले थे। उन्होने विद्यार्थियो को यह सुझाया कि हमें भी इसका विरोध करना चाहिए। इलाहाबाद

---

46 पी० डी० टण्डन का स्मारिका मे प्रकाशित लेख, वही, पृष्ठ सख्या- 65।

47 प्रो० सी० बी० त्रिपाठी (पूर्व अध्यक्ष, मध्यकालीन एव आधुनिक इतिहास विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय) का स्मारिका मे प्रकाशित लेख, वही, पृष्ठ सख्या- 81।

48 प्रो० सी० बी० त्रिपाठी का साक्षात्कार, दिल्ली, दूरदर्शन द्वारा प्रसारित, 25 अप्रैल, 1998।

49 प्रो० सी० बी० त्रिपाठी का साक्षात्कार, वही।

के कलेक्टर ने किसी भी मीटिग और जुलूस पर प्रतिबन्ध लगा रखा था। बहुगुणा भी विरोध मे जुलूस निकालने और मीटिग करने के लिए कटिबद्ध थे। अन्त में यह निर्णय हुआ कि यदि जुलूस इस प्रकार निकाला जाय कि शान्ति भग न हो और यातायात मे किसी प्रकार का व्यवधान न पड़े तो आज्ञा मिल सकती है। बहुगुणा ने अपने साथियो को बुलाकर स्पष्ट आदेश दिया कि दो-दो पक्ति में यह जुलूस सड़क की पटरी मे यूनियन गेट मे चलेगा और चौक से घटाघर होता हुआ, मुहम्मद अली पार्क मे पहुँचेगा और वहा एक सभा कर हम अपना प्रदर्शन समाप्त करेगे। सन् 1942 के आन्दोलन के बाद इलाहाबाद मे विद्यार्थियो का यह सम्भवत· पहला प्रदर्शन था[50]। योजनानुसार यह जुलूस यूनियन गेट से आरम्भ हुआ और 'सहगल', ढिल्लो, शाह नवाज, इन्कलाब जिन्दाबाद के नारे लगाता हुआ मुहम्मद अली पार्क की ओर चला। उसका अगला भाग पार्क तक पहुच गया परन्तु दूसरा छोर यूनियन गेट पर ही था। इतना लम्बा जुलूस, जबकि उस समय विश्वविद्यालय के छात्रो की सख्या 3000 से भी कम ही थी और इतने अनुशासित ढंग से उसका संचालन देखकर सभी आश्चर्य चकित हो उठे[51]।

इस प्रकार विद्यार्थी जीवन मे ही बहुगुणा में संगठन, अनुशासन और योग्य संचालन के विशिष्ट गुणो का परिचय मिलता है, जो आगे चलकर उनके असाधारण और दुर्धर्ष व्यक्तित्व को पुख्ता करने मे मददगार साबित हुआ। आजादी के अन्तिम समर के सिपाही के रूप मे इलाहाबाद के आन्दोलन का नेतृत्व, भूमिगत होकर क्रान्ति का संचालन, जेल मे कैदी की यातना आर फिर लौटकर उसी जोश-खरोश तथा उत्साह का परिचय देते हुए कार्य संचालन, बहुगुणा के अदम्य साहस और उत्कट राष्ट्रभक्ति का सकेत देता है।

---

50 प्रो० सी० बी० त्रिपाठी का स्मारिका मे प्रकाशित लेख, वही, पृष्ठ संख्या- 81-82।

51 प्रो० सी० बी० त्रिपाठी का स्मारिका मे प्रकाशित लेख, वही।

स्वतंत्रोपरान्त उत्तर प्रदेश की राजनीति और बहुगुणा
——मजदूर नेता और विधायक के रूप में

उत्तर प्रदेश जो भारत का एक सीमान्त एवं विशाल राज्य है, का भौगोलिक क्षेत्रफल 2,94,411 वर्ग किमी० है। क्षेत्र विस्तार की दृष्टि से मध्य प्रदेश, राजस्थान एव महाराष्ट्र के पश्चात् देश मे इसका चौथा स्थान है, किन्तु भारत की जनसख्या मे इसका सर्वाधिक 16.44 प्रतिशत अंशदान होने के फलस्वरूप जनसख्या की दृष्टि से देश मे इस प्रदेश का प्रथम स्थान है[1]। पुरातनकाल मे इस प्रदेश को मध्यदेश या ब्रह्मर्षि देश के नाम से वर्णित किया गया है[2]। मध्यकाल मे उत्तर-पश्चिम से आने वाले आक्रमणों के रास्ते मे पडने के कारण इस प्रदेश का उत्तर भारत के इतिहास से निकटतम सम्बन्ध है। यहा पर मुस्लिम शासको का राज्य था, फलस्वरूप एक मिश्रित सस्कृति का विकास हुआ[3]। ब्रिटिश शासन के दौरान उत्तर प्रदेश का बौद्धिक वर्चस्व देश पर कायम रहा। ब्रिटिश शासको ने आगरा और अवध को मिलाकर एक प्रान्त बनाया तथा 1935 मे इसका छोटा करके यूनाइटड प्रोविन्सिज यानि यू० पी० रखा। आजादी मिलने के ढाई वर्ष बाद अर्थात् 12 जनवरी, 1950 को इस क्षेत्र का वर्तमान नाम उत्तर प्रदेश हुआ। इसके तुरन्त बाद पास-पड़ोस के छोटे-छोटे क्षेत्र इसमे मिला लिए गये। 26 जनवरी, 1950 को जब स्वतन्त्र भारत का सविधान लागू हुआ तो उत्तर प्रदेश भारतीय गणतत्र का एक पूर्ण राज्य बना[4]। यह प्रदेश प्राकृतिक सौन्दर्य, शान्ति और शौर्य की प्रतिमूर्ति है। इस धरती पर हुए बलिदान, त्याग और साहस की कहानियॉ यहा के खाभांश पत्थर आज भी कहते हैं।

स्वतत्र भारत में प्रथम आम चुनाव 1952 मे हुआ। उत्तर प्रदेश में पंडित गोविन्द वल्लभ पन्त तत्कालीन मुख्यमत्री थे, जो उस समय प्रधानमंत्री कहे जाते थे। नये सविधान के अनुसार इस आमचुनाव में देश का एक ही प्रधानमत्री निश्चित हुआ तथा प्रदेशो के प्रधानमत्री मुख्यमंत्री कहलाने लगे। उम्मीदवारो के चयन के लिए पार्लियामेण्टरी बोर्ड की बैठक 1951 मे हुई। उस समय तरीका यह था कि प्रदेश की पार्लियामेण्टरी बोर्ड की सूची केन्द्रीय पार्लियामेण्टरी बोर्ड मे पेश होती थी और केन्द्रीय पार्लियामेण्टरी बोर्ड की स्वीकृति के बाद जो सूची बनती, वह पक्की मानी जाता था। उत्तर प्रदेश म उम्मीदवारों के चयन हेतु जिस कांग्रेस पार्लियामेण्टरी बोर्ड का गठन हुआ उसके अध्यक्ष आचार्य जुगल किशोर तथा महामंत्री कमलापति त्रिपाठी नियुक्त हुए। स्रोतो से पता चलता है कि उम्मीदवारो का चयन करते समय उत्तर प्रदेश की पुरानी

---

1 उत्तर प्रदेश वार्षिकी, सूचना एव जनसम्पर्क विभाग, उत्तर प्रदेश, 1994-95, पृष्ठ सख्या- 8।

2 वही, पृष्ठ सख्या- 30।

3 वही, पृष्ठ सख्या- 31।

4 वही, पृष्ठ संख्या- 37-38।

और गहरी गुटबाजी का स्वरूप सामने आया[5]। किन्तु गुटबाजी का यह स्वरूप वर्तमान परिप्रेक्ष्य से हटकर यानि सैद्धान्तिक और वैचारिक थी[6]। रफी अहमद किदवई का गुट जिसमें कृष्ण दत्त पालीवाल, महावीर त्यागी, केशवदेव मालवीय, अजीत प्रसाद जैन तथा जगन प्रसाद राव आदि जैसे महत्वपूर्ण नेता शामिल थे, पं० गोविन्द वल्लभ पन्त का विरोध कर रहे थे[7]। पत जी, जिनके साथ प्रदेश कांग्रेस कमेटी का बहुमत था, बडे गम्भीर व्यक्ति थे और इस गुटबाजी से स्वभावतः दूर भी रहना चाहते थे[8]। इस आम चुनाव के दौरान प्रत्याशियो के चयन मे उत्तर प्रदेश काग्रेस मे पैदा हुई गुटबाजी पर विस्तृत चर्चा की जाय, इसके पहले प्रदेश के प्रमुख जनपद इलाहाबाद मे स्वतंत्रता सिपाही व मजदूर नता के रूप मे उभरे बहुगुणा के बुनियादी जीवन तथा तत्कालीन इलाहाबाद पर एक नजर डालना उचित होगा।

भारत छोड़ो आन्दोलन के दौरान इलाहाबाद जनपद में प्रमुख भूमिका निभाने के आरोप मे बहुगुणा को लगभग ढाई वर्ष राजनैतिक बन्दी के रूप में कठिन कारावास की सजा भुगतनी पड़ी। तत्पश्चात् जेल मे डा० बनर्जी की चेतावनी पर कि 'वह अब जल्द ही मर जाएगा' विवश होकर सरकार ने मृतप्राय बहुगुणा को अगस्त, 1945 मे रिहा किया। जेल से छूटने पर बहुगुणा का वजन सिर्फ 41 पौड तथा जेब मे डाले गये कुल सवा छ· रुपये थे[9]। यानि यही रकम और जर्जर शरीर लेकर बहुगुणा जेल से आये थे। इसके बाद शुरू हुआ संघर्ष का लम्बा इतिहास। देश सेवा का व्रत लेकर बहुगुणा ने अपने स्वत· स्वीकृत गृहनगर इलाहाबाद मे राजनीतिक एव सामाजिक सक्रियता प्रारम्भ की और मई, 1946 में कमला त्रिपाठी, जो प्रख्यात इतिहासकार राम प्रसाद त्रिपाठी की बेटी थी, के साथ परिणय सूत्र में बँध गये[10]। यद्यपि उस समय तक उनके गृहस्थ जीवन की आवश्यकताओं की पूर्ति का कोई साधन स्पष्ट न था, फिर भी पारिवारिक दायरा बढ़ाने से ऊपजी समस्याओं में उनके दृढ़ संकल्प और अपार साहस का परिचय मिलता है। उनके सभी मित्रो व शुभ चिन्तकों ने उन्हे कुछ समय के लिए सक्रियता के विचार को स्थगित करने का अनुरोध किया। परन्तु बहुगुणा ने देश सेवा का संकल्प बहुत पहले ही ले लिया था, अतः पीछे मुड़कर देखना उनके लिए असम्भव था। फलस्वरूप कुछ दिनों तक उन्हे बहुत कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। बहुगुणा में परिस्थितियों से जूझने की अपार शक्ति थी इसलिए उन संघर्ष के दिनों में भी उनके चेहरे पर शिकन नहीं आयी, वे अनवरत कार्यशील रहे[11]।

---

5 कमलापति त्रिपाठी : 'स्वतंत्रता आन्दोलन और उसके बाद' दिल्ली, 1988, पृष्ठ संख्या- 218।

6 पी० डी० टण्डन (स्वतत्रता सग्राम सेनानी, पूर्व विधान परिषद् सदस्य एवं पार्लियामेन्ट सेक्रेटरी उत्तर प्रदेश सरकार) के लिए गये साक्षात्कार से।

7 कमलापति त्रिपाठी : स्वतंत्रता आन्दोलन और उसके बाद, वही, पृष्ठ संख्या- 219।

8 पी० डी० टण्डन के साक्षात्कार से।

9. ओंकार शरद का प्रकाशित लेख, 22 अप्रैल, 1979, धर्मयुग राष्ट्रीय साप्ताहिक पत्रिका, पृष्ठ संख्या- 35।

10 कमला बहुगुणा (पूर्व सांसद एवं पत्नी हेमवतीनन्दन बहुगुणा) के साक्षात्कार से।

11 पी० डी० टण्डन के साक्षात्कार से।

सन् 1947 में स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद कांग्रेस सरकार ने राष्ट्रीय आन्दोलन के सेनानियो को कुछ सुविधाएँ देने का निर्णय लिया। उत्तर प्रदेश की प्रान्तीय सरकार ने यह घोषणा की कि कुछ नवयुवक स्वतन्त्रता सेनानियो को केवल साक्षात्कार के आधार पर पुलिस विभाग मे डिप्टी सुपरिन्टेन्डेन्ट पुलिस के पद पर नियुक्त किया जाएगा। बहुगुणा के कुछ घनिष्ठ लोगों ने बड़ी मुश्किल से उनको अपना व्यक्तित्व विवरण (बायोडाटा) देने को तैयार किया। जब साक्षात्कार के लिए लखनऊ बुलाया गया तो बहुगुणा आनाकानी करने लगे। उनका कहना था कि उन्हे सक्रिय राजनीति में जाना है। किसी प्रकार की सरकारी नौकरी अथवा अन्य कोई बन्धन उन्हे सह्य नही है। उनके मित्र प्रोफेसर सी० बी० त्रिपाठी (पूर्व विभागाध्यक्ष, मध्यकालीन एव आधुनिक इतिहास विभाग, इ० वि० वि०) अपने एक संस्मरण लेख मे लिखते है कि हम सब के बार-बार आग्रह करने पर बड़ी कठिनाई से वह लखनऊ जाने को तैयार हुए। तीसरे दिन शाम तक लौटने की बात थी। सी० बी० त्रिपाठी एक घण्टा पहले ही उनके निवास स्थान पर पहुंचकर उनके लौटने और शुभ समाचार सुनने की प्रतीक्षा करने लगे। बहुगुणा लखनऊ से वापस हुए। उनके चेहरे पर मुस्कान देखकर कमला बहुगुणा सहित मौजूद सभी लोग बड़े आशान्वित हो उठे। सबसे पहले सी० बी० त्रिपाठी ने ही प्रश्न किया--'लगता है आप चुन लिए गये।' बहुगुणा अट्ठहास कर उठे और बोले, 'अरे भाई, उन सबों ने पहचान लिया कि यह तो हमारा भावी मुख्यमत्री है इसे पुलिस विभाग का साधारण कर्मचारी कैसे बनावे।' उपस्थित सभी लोग एक दूसरे का मुँह देखते रह गये[12]। आशय यह है कि इस संघर्षमय परिस्थिति मे भी उनकी महत्वाकाक्षा, आत्मविश्वास और दृढ़ संकल्प मे किसी प्रकार की कमी नही आने पायी थी।

बहुगुणा पर राष्ट्रीय आन्दोलन के महान नेताओं के आदर्शों का स्पष्ट प्रभाव था। उनका मानना था कि सरकारी सेवा में रहकर समाज सेवा का असली संकल्प अधूरा रह जाएगा। परन्तु पारिवारिक जीविका चलाने तथा अपने को पैरो पर खड़ा करने के लिए बहुगुणा को कुछ न तो कुछ करना ही था। फलतः उन्होंने ठेकेदारी का कार्य शुरू किया। इसके लिए वे इलाहाबाद के तत्कालीन रईस राय अमरनाथ से पॉच हजार रुपये (5000/-) कर्ज भी लिए, किन्तु ठेकेदारी उनका पेशा न बन सकी। कुछ ही दिनों बाद उन्होंने यह कार्य छोड़ दिया क्योकि वह पूरी तरह राजनीति में संलग्न होना चाहते थे और उनकी राजनीतिक सक्रियता मे ठेकेदारी के कारण बाधा उत्पन्न हो रही थी[13]। पता चलता है कि इलाहाबाद की तत्कालीन राजनीतिक परिस्थितियॉ भी उनके विपरीत थी। उस समय इलाहाबाद की कांग्रेस में काफी खीचतान थी। नेता कई खेमों में बॅटे हुए थे। विश्वम्भर नाथ पाण्डेय, मुजफ्फर हसन, मंगला प्रसाद आदि के अपने अलग-अलग खेमे थे। इस गुटबाजी के कारण बहुगुणा को आगे बढ़ने में बहुत दिक्कते आ रही थीं। यहाँ तक

---

12 प्रो० सी० बी० त्रिपाठी (पूर्व विभागाध्यक्ष, मध्य०/आधु० इतिहास विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय) का बहुगुणा पर प्रकाशित स्मारिका में छपा लेख, पृष्ठ संख्या- 82।

13 राय राम चरन अग्रवाल (स्वतंत्रता संग्राम सेनानी) के लिये गये साक्षात्कार से।

कि कांग्रेस के कार्यक्रमो मे उनका घुसना तक मुश्किल रहता था[14]। लेकिन ये दिक्कते कुछ समय के बाद उनके समक्ष शून्य सी हो गई। बहुगुणा शीघ्र ही यूथ कांग्रेस से निकलकर अखिल भारतीय कांग्रेस की मूल धारा मे प्रविष्ट हो गये और कर्नलगज वार्ड के सचिव चुने गये[15]।

बहुगुणा, इसके पहले अर्थात् 1947 में भारत को आजादी मिलते ही इलाहाबाद मजदूर आन्दोलन मे शरीक हो गये थे। वहाँ के श्रमिकों में उन्होंने अपना स्थान बना लिया था। बिजली मजदूरों, रिक्शा चालकों, सरकारी प्रेस तथा डिफेन्स वर्क्स आदि ऐसे लगभग दर्जनो श्रमिक यूनियनो का नेतृत्व उन्होंने सम्हाल लिया था[16]। इस सन्दर्भ मे गर्वनमेन्ट प्रेस के पूर्व कर्मचारी राम सुन्दर त्रिपाठी ने दूरदर्शन के एक साक्षात्कार में बताया कि मजदूरो मे जब कही भी कोई परेशानी या आक्रोश की भावना व्याप्त होती, सुनते ही बहुगुणा दौड पडते थे और अपने को पूरी तरह से न्योछावर कर देते थे। मजदूरों मे भी बहुगुणा के प्रति सच्ची निष्ठा थी। उनका समर्पण और लगाव का भाव बहुगुणा को अपनी ओर खींच लेता था[17]। इस प्रकार एक ट्रेड यूनियन नेता और कांग्रेस नेता दोनो रूपों में बहुगुणा के व्यक्तित्व का विकास शुरू हुआ और फिर स्थानीय नेताओं के लिए बहुगुणा की उपेक्षा करना कठिन हो गया[18]।

बहुगुणा ने मजदूर आन्दोलनो की सिर्फ अगुआई ही न की बल्कि मजदूर मुकदमों की वकालत भी की और विजय भी दिलायी थी। ज्ञातव्य है कि उस समय लेबर ट्रिब्यूनल में बहस के लिए वकालत डिग्री की आवश्यकता न होती थी। बम्बई मे बिजली कर्मचारियो का 'बोनस सम्बन्धी' बहुचर्चित मुकदमा, जिसे बहुगुणा ने विधायक होने के बाद 1955 में लड़ा था, इस सन्दर्भ में विशेष प्रासंगिक है। बहुगुणा के लिए यह सबसे चुनौती भरा मुकदमा था। इस मुकदमे के लिए उन्होने दिन-रात पुस्तकों से जूझकर तथ्य तैयार किया था। बहस के दौरान उन्होने उन तथ्यो को पूरे मनोयोग एव सजीदगी के साथ न्यायाधीश के समक्ष प्रस्तुत किया और फैसला मजदूरो के पक्ष में सुनवाया[19]। फैसले के बाद की एक रोचक घटना इस प्रकार है—एक जज ने पूछा, "मि० बहुगुणा आपने वकालत कहाँ से पास की है?" बहुगुणा ने उत्तर दिया, "वकालत सर! मैंने तो इलाहाबाद विश्वविद्यालय से केवल एक साधारण स्नातक की परीक्षा पास की है।" यह सुनकर जज आश्चर्यचकित रह गये और कहा, "मुझे विश्वास नहीं हो रहा है क्योंकि आपने एक व्यवसायिक अधिवक्ता की ही भाँति बहस की है"[20]। इसी प्रकार मेरठ, मुरादाबाद, लखनऊ, जौनपुर,

---

14 कमला बहुगुणा से लिये गये साक्षात्कार से।

15 ओंकार शरद का धर्मयुग मे प्रकाशित लेख, वही।

16 ओंकार शरद का धर्मयुग मे प्रकाशित लेख, वही।

17 राम सुन्दर त्रिपाठी (गवर्नमेण्ट प्रेस के पूर्व कर्मचारी) का दूरदर्शन पर प्रसारित साक्षात्कार,25 अप्रैल, 1998।

18 ओंकार शरद का धर्मयुग मे प्रकाशित लेख, वही।

19 डा० रीता बहुगुणा जोशी एवं डा० राम नरेश त्रिपाठी हेमवती नन्दन बहुगुणा, राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली, 1999 पृष्ठ सख्या- 58-59।

20 डा० रीता बहुगुणा जोशी एव डा० राम नरेश त्रिपाठी : वही, पृष्ठ संख्या- 58।

फैजाबाद, बनारस आदि जनपदो के औद्योगिक मुकदमे इलाहाबाद स्थित इण्डस्ट्रियल ट्रिब्यूनल म तत्कालीन न्यायाधीश राधामोहन के समक्ष पेश हुए थे जिनमें बहुगुणा ने बड़ी बुद्धिमत्ता से बहस की थी[21]।

इलाहाबाद उस समय तक राष्ट्रीय आन्दोलन का एक प्रमुख केन्द्र बनकरके देश के मानचित्र पर अपना विशिष्ट स्थान बना लिया था। नेहरू और शास्त्री जैसे दिग्गज कांग्रेसी नेताओं का अगाध स्नेह था इस जनपद से। परन्तु दूसरी ओर इस जनपद में सोसलिस्ट पार्टी के प्रभाव को भी नजर अन्दाज नहीं किया जा सकता है। सालिगराम जायसवाल और प० शीतलादीन द्विवेदी जैसे सोसलिस्ट नेताओं का इस जनपद के जनमानस पर विशेष छवि उभर कर आ गई थी। समाजवादी नेताओं ने अपनी राजनीतिक सक्रियता के बल पर जनता के मानस पटल को अपनी ओर आकर्षित करने में कोई कसर नहीं छोड़ी थी। यानि इस आम चुनाव मे इलाहाबाद में कांग्रेस और सोसलिस्ट पार्टी के बीच चुनावी संघर्ष की पूरी आशंका ऑकी जा रही थी[22]। ऐसे मे यहाँ के कांग्रेसी प्रत्याशियों के चयन प्रक्रिया में विशेष सजगता बरतनी स्वाभाविक थी। पंडित जवाहरलाल नेहरू ने इलाहाबाद को अपना संसदीय चुनावी क्षेत्र पहले ही घोषित कर दिया था, सवाल अब केवल विधानसभा के प्रत्याशियो का था, जिसके लिए शायद इलाहाबाद में नेताओं की कमी न थी। हेमवती नन्दन बहुगुणा की जो छवि राष्ट्रीय आन्दोलन के समय एक नवयुवक छात्र नेता की उभर कर आयी थी, उससे कही और आगे बढ़कर वे दर्जनों श्रमिक यूनियनो को संगठित करके उसका नेतृत्व करते हुए अब तक पूर्ण रूप से जन नेता बन चुके थे और अखिल भारतीय कांग्रेस की मूलधारा में प्रविष्ट होकर अपनी सगठनात्मक क्षमता को स्पष्ट कर चुके थे। उत्तर प्रदेश विधान सभा चुनाव में उनका प्रत्याशी होना लगभग सुनिश्चित था[23] लेकिन इलाहाबाद जो उनकी कर्मभूमि बन चुकी थी, यहाँ के समाजवादी नेताओं के खिलाफ वे कांग्रेस के प्रत्याशी कैसे बनाये गये, इस सम्बन्ध में विभिन्न मत परिलक्षित होते हैं जिनकी विवेचना आवश्यक है।

'भारत छोड़ो' आन्दोलन के समय लाल बहादुर शास्त्री के मस्तिष्क पर बहुगुणा के दुर्धर्ष व्यक्तित्व की जो रेखाएँ खिच चुकी थी, वह शायद कभी भी मिट नहीं सकती थी। बहुगुणा ने अपने आत्मविश्वास और आत्मनिरीक्षण का परिचय देते हुए आन्दोलन के समय साहित्य के प्रकाशन में जो अतुलनीय भूमिका निभाई थी तथा भूमिगत होकर शहर इलाहाबाद में आन्दोलन का संचालन किया था, लाल बहादुर शास्त्री उससे पूर्णतया परिचित थे। इसी कार्यकुशलता तथा निस्वार्थ भावना से प्रभावित होकर वे पहले से ही बहुगुणा को विधान सभा का टिकट दिलाने के लिए सतत प्रयासशील थे[24]। 1951 में हिमांचल प्रदेश में

---

21 डा० रीता बहुगुणा जोशी एव डा राम नरेश त्रिपाठी : वही।

22 कमला बहुगुणा से लिया गया साक्षात्कार।

23 पी० डी० टण्डन से लिया गया साक्षात्कार।

24 कन्हैया लाल मिश्र 'प्रभाकर' का बहुगुणा पर प्रकाशित स्मारिका मे छपा लेख, 1990 इलाहाबाद, पृष्ठ संख्या- 42।

काग्रेस की आन्तरिक समस्या उत्पन्न हुई जिसका सम्बन्ध आम चुनाव से था। यह समस्या इस प्रकार से उलझी हुई थी कि उसका सुलझना बडा मुश्किल था और न सुलझने पर यहॉ काग्रेस की पराजय सुनिश्चित थी। अखिल भारतीय काग्रेस कमेटी की ओर से प्रधानमंत्री प० नेहरू के निर्देश पर बहुगुणा को हिमांचल प्रदेश का पर्यवेक्षक बनाकर भेज दिया गया। यह प्रदेश बहुगुणा के लिये सर्वथा अनजाना था[25]। यहाँ काग्रेस के ताकतवर गुटो के दो धाकड़ नेता आपस मे जूझ रहे थे। यहॉ कांग्रेस की जनसंघ से गहरी टक्कर थी। बहुगुणा ने पहुँचकर दोनो गुटो मे इस प्रकार से एकीकृत भावना पैदा की कि राजनीतिक विशेषज्ञों ने दॉतों तले उगली दबाई। ज्ञातव्य है कि बहुगुणा ने अपनी अद्‌भुत संगठन क्षमता के बल पर तीन महीने अथक परिश्रम किया और कांग्रेस को विजय दिलायी। कहा जाता है कि इसी घटना को आधार बनाकर लाल बहादुर शास्त्री ने नेहरू से बहुगुणा के टिकट की स्वीकृति दिलायी थी[26]। पंडित कमलापति त्रिपाठी ने अपने एक साक्षात्कार मे बताया है कि 'लाल बहादुर शास्त्री बहुगुणा को लेकर मेरे पास आये और कहा कि बहुगुणा को इलाहाबाद से विधान सभा का टिकट दिया जाय यह चुनाव जीतेगा। शास्त्री के सुझाव पर मैंने बहुगुणा को विधान सभा का टिकट देने की संस्तुति की जिसका नेहरू ने भी अनुमोदन किया था[27]'।

दूसरे पक्ष से यह ज्ञात होता है कि 1952 के आम चुनाव की घोषणा होते ही इलाहाबाद के अधिकाश मजदूर नेता बहुगुणा के टिकट के लिए लामबन्द होकर प्रयास कर रहे थे। बिजली मजदूर नेता अब्दुल हमीद से पता चलता है कि जे० सी० जोशी, यू० एस० दूबे आदि दर्जनों मजदूर नेता इशहाक मियां के नेतृत्व मे दिल्ली रवाना हुए। लाल बहादुर शास्त्री, गोविन्द बल्लभ पन्त तथा जवाहर लाल नेहरू आदि से मिलकर इन नेताओं ने बहुगुणा के टिकट का आग्रह करते हुए कहा कि 'हमारा बहुगुणा मिम्बर बनना चाहिए, नही तो हम मर जाऐंगे।' इतना ही नहीं बल्कि मजदूर नताओं न बहुगुणा के टिकट न मिलने पर 'अनर्थ की आशका' भी व्यक्त की थी। जवाहर लाल नेहरू जो कांग्रेस संसदीय बोर्ड के चेयरमैन थे, बहुगुणा की अचूक प्रतिभा तथा राजनीतिक कुशलता से परिचित हो चुके थे तथापि उन्हें मजदूर नेताओं को बहुगुणा के टिकट के लिए आश्वासन देने में जरा भी हिचक नहीं लगी[28]।

अन्ततः नेहरू के अनुमोदन पर प्रदेश पार्लियामेण्टरी बोर्ड के महामंत्री कमलापति त्रिपाठी ने इलाहाबाद की सूची में बहुगुणा का नाम डाल दिया। उत्तर प्रदेश पार्लियामेण्टरी बोर्ड की सूची पर विचार करने का कार्य केन्द्रीय पार्लियामेण्टरी बोर्ड ने प० जवाहर लाल नेहरू पर छोड़ दिया। यह कार्य नेहरू ने अपने पास से हटाकर पद्माजी नायडू को सौप दिया। 'गुटबाजी' जिसकी चर्चा पूर्व में की जा चुकी है, ने ऐसा रंग पकड़ा

---

25 ओंकार शरद का धर्मयुग मे प्रकाशित लेख, वही।

26 कन्हैया लाल मिश्र 'प्रभाकर' का लेख, वही।

27 प० कमला पति त्रिपाठी (भूतपूर्व मुख्यमंत्री, उत्तर प्रदेश एवं मंत्री भारत सरकार) का डा० रीता जोशी द्वारा लिया गया साक्षात्कार।

28 अब्दुल हमीद (बिजली मजदूर नेता) का डा० रीता जोशी द्वारा लिया गया साक्षात्कार।

कि दिल्ली मे भी विरोधी गुटो के दो दल बन गये और उत्तर प्रदेश की सूची में आये हुए नामों की छीछालेदर शुरू हो गई। फलस्वरूप दोनो गुटो के नेताओं को आमने-सामने करके आपसी विचार विमर्श के आधार पर प्रत्याशियो के चयन की योजना बनायी गई। एक तरफ पं० गोविन्द बल्लभ पन्त, आचार्य जुगुल किशोर, मुनीश्वर दत्त उपाध्याय तथा कमलापति त्रिपाठी बैठे और दूसरी ओर रफी अहमद किदवई का गुट, जिनमे जगन प्रसाद रावत, केशव देव मालवीय और कृष्ण दत्त पालीवाल प्रमुख थे। इस बैठक के आपसी विचार विमर्श मे मनमुटाव दिखाई दिया और स्थिति तू-तू, मैं-मैं तक पहुंच गई, परन्तु मामला सुलझा नही। यह दृश्य देखकर पद्माजी घबड़ा उठी और मामले को पुन· नेहरू को सुपुर्द करते हुए उन्होने इससे अपना पाला छुडा लिया[29]। दूसरे दिन जब इस सूची पर विचार हुआ तो पद्माजी के स्थान पर स्वय नेहरू और कांग्रेस के अध्यक्ष मौलाना अब्बुल कलाम आजाद बैठे। उनके समक्ष दोनों गुटों अर्थात् रफी अहमद किदवई और कमलापति त्रिपाठी की सूचियाँ रखी गई। मौलाना ने पन्त जी से कहा कि केन्द्रीय पार्लियामेण्टरी बोर्ड ने नेहरू को उत्तर प्रदेश की सूची बनाने की जिम्मेदारी सौंपी थी अतः जो सूची इनकी देख-रेख मे बनी है, उसे स्वीकार किया जाय या नही? पन्त जी में संयम और दूरदर्शिता का बेजोड़ मिश्रण था, उन्होंने नेहरू की सूची को तुरन्त स्वीकार कर लिया और कहा कि 'मुझे चुनाव लड़ने के लिए विवश न किया जाय बल्कि मैं इस सूची के अनुसार खड़े हुए सभी उम्मीदवारों को जिताकर ले आने की चेष्टा करूंगा। "मै चुनाव नहीं लडूँगा लेकिन सारा चुनाव लड़ा दूँगा"[30]। गोविन्द बल्लभ पन्त का यह कहना था कि मौलाना स्तब्ध हो गये और उनकी मुद्रा बड़ी गम्भीर हो गई। उनके दिमाग में सवाल यह उठा कि जो विधान सभा बनेगी उसमें कौन दल का नेता बनेगा और कौन मुख्य मंत्री बनेगा? नेहरू भी दो मिनट के लिए चुप हो गये और फिर उन्होने कहा कि पन्त के बिना उत्तर प्रदेश का काम चलेगा नहीं। इसलिए जो सूची पन्त जी लाये हैं उसी को मजूर कर लिया जाय और चुनाव लड़ने की सारी जिम्मेदारी उन्हीं के ऊपर छोड़ दी जाय। फलतः यही हुआ पन्त के नेतृत्व मे बनी हुई उत्तर प्रदेश पार्लियामेण्टरी सूची को मौलाना अब्दुल कलाम आजाद ने स्वीकृति दे दी[31] और इसी सूची को लेकर उत्तर प्रदेश कांग्रेस कमेटी ने चुनाव लड़ा। चुनाव में कांग्रेस की भारी जीत हुई। इस प्रकार पंडित पंत अपनी बौद्धिक कुशलता, संयम और दूरदर्शिता के बल पर राजनीतिक खेल को खेलने और उस खेल में जीतने के प्रयास में सफल हुए[32]।

हेमवती नन्दन बहुगुणा जो पंडित पंत की ही सूची में शामिल में थे, को इलाहाबाद के करछना विधान सभा क्षेत्र से टिकट मिला था। आर्थिक तंगी और सीमित साधनों के कारण बहुगुणा धूमधाम से चुनाव तो नहीं लड़ सके परन्तु अपनी राजनीतिक कुशलता तथा निस्वार्थ सेवा के बल पर प्रसिद्ध सोशलिस्ट नेता

---

29 कमला पति त्रिपाठी : स्वतंत्रता आन्दोलन और उसके बाद, वही, पृष्ठ संख्या- 219।

30 कमला पति त्रिपाठी · वही, पृष्ठ संख्या- 220।

31 कमला पति त्रिपाठी : वही, पृष्ठ सख्या- 221।

32 पी० डी० टण्डन से लिया गया साक्षात्कार।

शीतला दीन द्विवेदी, जिनका करछना विधान सभा जैसे ग्रामीण क्षेत्र पर जबरदस्त प्रभाव था, को करारी मात देने मे सफल हुए[33]। 'स्टेट इलेक्शन इन इडिया' के ऑकड़े के अनुसार पता चलता है कि बहुगुणा को 30 3 प्रतिशत मत मिले थे जबकि शीतलादीन द्विवेदी को मात्र 7 4 प्रतिशत ही मत प्राप्त हो सके[34]। यानि बहुगुणा भारी मतो मे विजयी होकर उत्तर प्रदेश की सबसे बड़ी पचायत के सदस्य बन बैठे। अब वह एक नवयुवक छात्रनेता व मजदूरनेता ही नही बल्कि सत्तादल के नेताओं की पंक्ति मे आकर खड़े हो गये।

बहुगुणा पर महात्मागाधी और सुभाष चन्द्र बोस का गहरा प्रभाव पड़ा था। गांधी की तरह वह समस्या की गहराई तक जाते थे और उसके निराकरण क लिए सुभाष बोस जैसी बेचैनी उनमें थी। नेहरू, शास्त्री, आचार्य नरेन्द्र देव, मौलाना आजाद और गोविन्द बल्लभ पन्त जैसे नेताओं के सम्पर्क मे वे पहले ही आ चुके थे। अपने इन पूर्ववर्ती नेताओं की तरह जनान्दोलन मे ही उनका जन्म हुआ था। उन्होंने पूरे हिन्दुस्तान को उसकी विविधता और उसकी अन्तर्निहित एकता को समझा था। गांधी की तरह वह असली भारत को गॉव मे देखते थे। गरीबी और अमीरी की खाई, विकास मे पिछड़ेपन और अशिक्षा के टापू जैसे मौजूदा भारत के विरोधाभास बहुगुणा को असहनीय था और यही उनकी बेचैनी का शायद कारण भी था[35]। क्योकि उत्तर प्रदेश विधान सभा मे पहुँचने के बाद बहुगुणा ने जिन मुद्दों और समस्याओं पर गहरी चिन्ता जाहिर की है, वे उपरोक्त सन्दर्भ की ओर ही इशारा करते है। विधायक बनते ही वह राजनीति के असीमित दायरे मे काम करने लगे थे। उनके बहुआयामी व्यक्तित्व मे उभार आ गया था। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद से ही बहुगुणा मजदूर आन्दोलनो मे सलग्न थे, उनकी इस सक्रियता ने मजदूरो के प्रति ऐसी सवेदना जतायी, जिससे वह जीवन पर्यन्त मुक्त न हो सके। मजदूरों की समस्याओं को अदालत के समक्ष पेश करने तथा उस पर बहस करने मे वह माहिर थे लेकिन मजदूरो की आवाज को अदालत मे ही नहीं बल्कि प्रदेश की संसद के माध्यम से सत्ता के गलियारे तक पहुँचाने का उन्हे अच्छा अवसर विधायक बनने के बाद ही मिल सका[36]। विधायक बनने के बाद श्रमिक संगठनो से जो उनका सम्बन्ध था, वह टूटा नहीं बल्कि और प्रगाढ़ हुआ और अनवरत 1957 तक (प्रदेश सरकार मे मन्त्री बनने के पूर्व) चलता रहा। 1950 मे वे इडियन नेशनल ट्रेड यूनियन काग्रेस (इन्टक) से जुड़े और 1956 तक बराबर जुड़ रहे। 1952 मे वे गवर्नमेंट प्रेस के अध्यक्ष चुने गये और कई वर्षो तक लगातार चुने जाते रहे। इसी प्रकार 1952 से 1954 तक अखिल भारतीय प्रतिरक्षा संघ के उपाध्यक्ष, 1949 से 1953 तक उत्तर प्रदेश बिजली कर्मचारी संघ के महामंत्री तथा बाद में 1953 से 1957 तक अखिल भारतीय बिजली कर्मचारी संघ के अध्यक्ष रहे। इस दौरान बहुगुणा ने उपरोक्त सगठनों के प्रति अपनी गहरी सहानुभूति दिखाई तथा मजदूरों की अनेक प्रकार की

---

33 पी० डी० टण्डन से लिया गया साक्षात्कार।

34 वी० बी० सिह एवं एस बोस : स्टेट इलेक्शन इन इंडिया, (1952-85) खण्ड-4, न्यू देलही, 1988।

35 नन्द किशोर नौटियाल का बहुगुणा पर प्रकाशित स्मारिका मे छपा सम्पादकीय लेख, 11 मई, 1990, इलाहाबाद।

36 कमला बहुगुणा से लिया गया साक्षात्कार।

ममस्याओं को हल करने की दिशा मे अह भूमिका निभाई थी[37]।

23 मई, 1952 को राज्यपाल ने विधान सभा के अपने अभिभाषण में प्रदेश के मजदूरो की शांति पर सतोष प्रकट किया था। ऐसे मे मजदूरो की रहनुमाई की ख्याति दर्ज किये बहुगुणा भला कब चुप रह सकते थे। उन्होंने राज्यपाल को आडे हाथो लेकर प्रदेश के मजदूरो का हवाला देते हुए विधान सभा मे कहा था कि आज मजदूर भयानक दशा से गुजर रहा है। चाहे उसकी मॅहगाई की बात हो, चाहे छटनी की परेशानी हो, चाहे 'उत्पादन बढ़ाओ' के नाम पर उससे काम लिया जाता हो, तरह-तरह की चीजों से वह परेशान है। आज मजदूर वर्ग महात्मागाधी के बताए आदर्शो पर केवल दश प्रेम की वजह से तथा राष्ट्रीय काग्रेस के नेतृत्व के कारण आपकी तरफ ऑखे लगाकर सब्र के साथ बैठा देख रहा है, वरना मजदूरो की क्राति की लहर मालूम नही कितने थपेड़े अब तक हमारे प्रान्त को लगा चुकी होती[38]।

प्रदेश मे दिनो-दिन मॅहगाई के स्तर में वृद्धि के साथ-साथ श्रमिको के मॅहगाई भत्ते में बढ़ोत्तरी न होने पर चिन्ता प्रकट करते हुए बहुगुणा ने आगे कहा कि 'बाजारो में हमे कोई चीज सुलभ और सस्ती नही दिखाई पडती है। इसके बावजूद भी हमारे मजदूरो की 9 रुपये, 10 रुपये मॅहगाई घटती जा रही है। कपडे और बिजली के मजदूरो को 18 और 27 रुपये मॅहगाई मिल रही है। हमारे प्रान्त में 6 दिसम्बर,1948 को सरकार ने पिछली कैबिनेट (मत्रिमडल) के एक खास प्रस्ताव के अनुसार एक आज्ञा चलाई जिसके द्वारा हमारे प्रान्त के कपडे और बिजली के कारखानों मे मॅहगाई बॅटा करती थी। उस आदेश के अनुसार जो मॅहगाई मिलती है वह जीवन काटने के लिए बेहद कम है। आज इस मॅहगाई के स्तर पर मजदूर जी नही सकता[39]। इसी प्रकार बहुगुणा ने मजदूरो के स्थायीकरण, आवास, सम्बन्धी और उच्च न्यायालय में श्रमिकों के लिए एक पृथक बेच भी बनाने की मांग की थी[40]। श्रमिकों की मेहनत और उत्साह का बखान तथा मिलमालिकों की प्रवृत्ति पर जबरदस्त प्रहार करते हुए उन्होंने कहा कि—"मजदूर आज बड़ी से बड़ी कुर्बानी के लिए तैयार है लेकिन मजदूर चाहता है कि उस कुर्बानी की एक झलक दूसरी ओर भी दिखाई दे। हम अपने काफिले पर तरह-तरह के बोझ लाद रहे हैं लेकिन उन बड़ी-बडी रकमों का क्या होगा जो मिल-मालिक आज अपने घर ले जाता है, जिसको वह दूसरो की मेहनत से अपनी सम्पत्ति बनाता है। आज मिल-मालिक ताला और चाभी दिखाता है, बात-बात पर वह मिलों में ताला लगा देता है। हम चाहते हैं कि मिल-मालिको के ऊपर सख्ती हो, उसकी इस प्रवृत्ति को बन्द कराई जाय"[41]।

---

37 हेमवर्ती नन्दन बहुगुणा आवास से प्राप्त दस्तावेज।

38 हेमवती नन्दन बहुगुणा का भाषण : उत्तर प्रदेश विधान सभा कार्यवाही, 23 मई, 1952, पृष्ठ संख्या- 138।

39 हेमवती नन्दन बहुगुणा : उत्तर प्रदेश विधान सभा कार्यवाही, वही, पृष्ठ संख्या- 139।

40 हेमवती नन्दन बहुगुणा उत्तर प्रदेश विधान सभा कार्यवाही, वही, पृष्ठ संख्या 140।

41 हेमवती नन्दन बहुगुणा . वही, पृष्ठ संख्या- 141।

आय-व्यय के ऑकड़े बनाने मे बहुगुणा बहुत माहिर थे। सरकारी छापे खाने को दिये जाने वाले अधूरे अनुदान से हो रही क्षति पर उन्हे विशेष चिन्ता थी। इसीलिए 14 जुलाई 1952 को उद्योग मंत्री द्वारा लेखन सामग्री और छापेखाने के सम्बन्ध मे पेश किये गये अनुदान पर प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए उन्होंने कहा था कि 'हमारी सरकार आखिरी मौके तक छापने के कागज छापेखाने मे नही भेजती जिससे जरूरत की चीजे सही समय पर छप कर नही आ सकती। नतीजा यह होता है कि आज भिन्न-भिन्न विभाग अपना-अपना छापाखाना खोलना शुरू कर रहे है या अन्यत्र किसी व्यक्तिगत छापेखाने में भेजने को बाध्य हो रहे है। इस परम्परा मे हमारी सरकार का विशेष नुकसान होगा[42]"। छापेखाने में काम करने वाले कर्मचारियो की व्यथा पर चिन्ता प्रकट करते हुए उन्होने कहा कि 'मजदूरो, कर्मचारियो जिनके सम्बन्ध में उनका यह दावा है कि हम उनके प्रतिनिधि हैं, सदन मे एक शब्द भी उनके सम्बन्ध मे किसी ने नहीं कहा[43]"।

इसी प्रकार अस्थायी श्रमिको को स्थाई करने पर बल देते हुए उन्होने कहा कि 'जो राज्य अपने को वेल्फेयर स्टेट (लोक कल्याण राज्य) कहता हो उस राज्य के शासकों को यह पता नहीं है कि सन् 1938 मे जितने आदमी उनके यहॉ मौजूद थे उनकी संख्या आज भी कितनी है और आज भी उनमें से कितने अस्थायी है। ऑकडे के अनुसार 1,367 लोग अस्थायी हैं और उनमे 80% ऐसे लोग हैं जो 1941 में भी मौजूद थे और आज वे रिटायर होने की स्थिति में हैं। 70% लोग उनमें से ऐसे हैं जो अगले दो वर्षो में रिटायर होने वाले है। आपने कहा कि अगर हम उनको स्थायी कर देंगे तो हम फिर निकाल नहीं सकते। लेकिन मै कहता हूँ कि छटनी हर कारखाने मे जरूरत पड़ने पर बराबर होती है। परमानेंट (स्थायी) मजदूर की भी आवश्यकतानुसार छटनी की जा सकती है। इसमें मुझको जरा भी एतराज नहीं है। उनको परमानेट कीजिए और अगर आपके पास कल काम न रहा तो छटनी का जो विनफिट (लाभ) मिलता है वह देकर छटनी कीजिए। जैसे बाहर और जगह होता है, जैसे बिरला, डालमिया और इंडियन प्रेस में होता है। लेकिन यह कोई कायदे की बात नही है कि 43 साल का इंसान जिसने जिंदगी आपके यहॉ बितायी है, उसको आप यो ही निकाल दीजिए। सिविल सर्विस रिग्यूलेशन के खण्ड 361 के अन्तर्गत अनुग्रह राशि देकर ही उन्हे निकाला जाना चाहिए[44]।

श्रमिको की दयनीय दशा पर सरकार को सचेष्ट करते हुए बहुगुणा ने लखनऊ के एशबाग मे बनी कम्पनी की इमारत और उसके अगल-बगल का हवाला देते हुए कहा कि 'एशबाग में आपने आज जो कारखाना खोल रखा है वह आज इस सरकार को ही खा जाना चाहता है। आपने बड़ी-बड़ी विंग पैलेशियल बिल्डिंग्स वहॉ पर बना दी है, लेकिन क्या आपने कभी उनके बगल में खड़े हुए झोपड़ों को देखा है, जिनकी

---

42 हेमवती नन्दन बहुगुणा : उत्तर प्रदेश विधान सभा कार्यवाही, 14 जुलाई, 1952, पृष्ठ सख्या- 54-55।

43 हेमवती नन्दन बहुगुणा : वही, पृष्ठ संख्या- 55।

44 हेमवती नन्दन बहुगुणा : वही, पृष्ठ सख्या- 55।

छतें नीचे आना चाहती हैं, और मजदूर को दबा डालना चाहती है, क्या आपने कभी ध्यान दिया कि 20 और 25 रुपया उनकी निम्नतम मजदूरी है[45]। बहुगुणा का विचार था कि मजदूरों के तनख्वाह के सम्वन्ध मे एक्सपर्ट कमेटी बनायी जाय। काम मे भी गुणात्मक सुधार लाने के लिए कमेटी बनायी जाय लेकिन मजदूर को इतना वेतन दिया जाय जिसमे वह अपना जीवन निर्वाह कर सके[46]। मिल-मालिकों पर प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए उन्होने कहा था कि 'मजदूर और मालिक आज भी समानता की दृष्टि से एक दूसरे को देखना नही चाहते। मालिक यह मानने को तैयार नही हैं कि श्रमिक का जीवन मे वही स्थान है जिस नीति का प्रदर्शन हमारी सरकार करना चाहती है। पूँजीपति के अन्याय से सबसे ज्यादा दिक्कत उन लोगो को है जो ट्रेड यूनियनो के मुखिया हैं और श्रमिक सगठन को आगे ले जाने वाले है। किसी टोपी के साथ इनका सम्वन्ध नही है[47]"।

1954 में प्रदेश सरकार ने जब 'रेक्स रिकार्डर' डिक्टेटिंग एण्ड ट्रांस क्राइविंग मशीन खरीदने का विचार बनाया तो बहुगुणा ने काग्रेसी नुमाइन्दे के रूप मे उसका विरोध किया था। वास्तविकता यह है कि मानव शक्ति के होते हुए वह मशीनीकरण के विरुद्ध थे। 16 फरवरी, 1954 को विधान सभा मे वोलते हुए उन्होंने कहा कि 'मेरी बदकिस्मती यह है कि मै सरकार की सब बातो से सहमत होते हुए भी इसके बिल्कुल विरुद्ध हूँ। मेरा विरोध इसलिए नही है कि इस प्रदेश को बैलगाड़ी की तरफ ले जाने की मेरी भावना है। एक मशीन से एक स्टेनो टाइपिस्ट कम होने वाला है। मै समझता हूँ कि इससे सरकार की अर्थव्यवस्था को कोई बहुत बडा लाभ होने वाला नहीं है। यह बुनियादी सवाल है क्योंकि सबसे बडी एम्प्लायर हमारी सरकार है और अगर यह सरकार खुद इस तरह के गैर जरूरी यन्त्रों का इस्तेमाल करने लगती है तो हमारे जो पूँजीपति बराबर रेशनलाइजेशन और छटनी करते है उनको प्रोत्साहन मिलता है और वे अपने यहाँ की लेबर फोर्स को कम करने के लिए इस तरह की मशीनों की इजाद से लाभ उठाने की कोशिश करेगे और निश्चय ही एक भयावह परिस्थितियो का हमे और इस सरकार को सामना करना पडेगा। मै समझता हूँ कि हमारे जैसे मुल्को के लिए जहाँ आदमी बहुत है, बेकारी ज्यादा है, तनख्वाहे कम हैं, प्रोडक्टिविटी दूसरे देशों के मुकाबले में बहुत कम नहीं है। वहाँ इस तरह की मशीनों का इस्तेमाल करना ठीक न होगा। इस तरह की मशीनो का इस्तेमाल करके सरकार पूँजीपतियों को प्रोत्साहन दे रही है जो मुनाफे की खातिर वर्किंग फोर्स मे श्रमिकों की संख्या को कम करके इस मुल्क की अर्थव्यवस्था को उलट देना चाहते है'[48]।

---

45 हेमवती नन्दन बहुगुणा . वही, पृष्ठ सख्या- 55।
46 हेमवती नन्दन बहुगुणा : वही, पृष्ठ सख्या- 56।
47 हेमवती नन्दन बहुगुणा उत्तर प्रदेश विधान सभा कार्यवाही, 22 जुलाई, 1952 पृष्ठ संख्या- 128-129।
48 हेमवती नन्दन बहुगुणा उत्तर प्रदेश विधान सभा कार्यवाही, 16 फरवरी, 1954, पृष्ठ संख्या- 292-293।

बेकारी के सन्दर्भ मे 4 मार्च, 1954 को विधान सभा में पुन· बोलते हुए बहुगुणा ने कहा था कि 'हमारे सरकार की कुछ कार्यशैलियॉ ऐसी है जो हमारे प्रदेश के आर्थिक ढांचे को नुकसान पहुँचाती हैं। हमारे प्रदेश के सैकडो हजारों ईट के भट्ठो पर काम करने वाले जो मजदूर है, प्राइवेट इंडस्ट्री के जो मजदूर हैं, कोयला न मिलने की वजह से आज वहॉ बेकारी फैल रही है। सरकार के सरकारी विभागों ने ईटों का काम अपने एजेन्टो के द्वारा कराना शुरू किया है। एक तरफ कोआपरेटिव तथा अन्य विभागों के कब्जे मे कोयला भरा पड़ा है और दूसरी तरफ भट्ठे पर कोयला न जाने की वजह से मजदूरों में बेकारी फैल रही है[49]' ।

बहुगुणा समाज के हर वर्ग के प्रति गहरी संवेदना रखते थे। मजदूर, मजरूम और कर्मचारी वर्ग की दयनीय स्थिति यदि उनके हृदय को कचोटती थी तो कृषको की दयनीय दशा और उन पर पड़ने वाले आकस्मिक प्रकोप की पीड़ा से भी वे अछूते नहीं रह पाते थे। प्रदेश के प्रत्येक जिले के अधिकांश गाव उनकी मौखिक सूची में होते थे तथा वहां की कृषिकीय दशा और आकस्मिक प्रकोप के प्रति उनकी सवेदना सदैव जुड़ी रहती थी। इस सन्दर्भ मे 15 मार्च, 1955 को विधान सभा मे उनके द्वारा दिया गया चिन्तनपूर्ण वक्तव्य तथा सुझाव उदाहरणस्वरूप लिया जा सकता है—'इलाहाबाद मे गगाजी ने बड़ी मुश्किल उपस्थित कर दी है। मेरे ही एक क्षेत्र में छ· मील लम्बान में गंगाजी ने कटाव बनाया और कई सालों से अपनी धारा का रुख कर लिया। यद्यपि देवरिया की तरह लोग यहॉ बाढ़ से पीड़ित नही हैं फिर भी तहसील करछना मे लटकहॉ, खजरूअल, गढैला और सिमरहा आदि गॉव की स्थिति बिल्कुल ऐसी है जिससे दुर्भिक्षग्रस्त क्षेत्र और उनमे कोई अन्तर नही रहा है, लेकिन फिर भी हम समझते हैं कि सरकार के सामने बहुत सी कठिनाइयॉ हैं और गंगाजी की धारा को बदलना कोई मामूली काम नहीं है। फिर भी सरकार के सामने हमेशा अपनी बात रखते आये हैं और मुझे खुशी है कि माननीय मंत्री जी ने उतनी जमीन के लगान आदि को छोड़ने की व्यवस्था की है जितना कट कर धारा में मिल गई है, लेकिन वहाँ के किसानों की दयनीय दशा है । वहॉ पीने के पानी की उचित और आवश्यकतानुसार व्यवस्था तक नहीं है। जानवरों से बदतर जीवन वहां के किसान व्यतीत कर रहे हैं। उनके रहने के लिए ठीक मकान नहीं हैं। ऐसी स्थिति मे मै निवेदन करूँगा कि उनकी ओर सरकार अपना पूरा ध्यान लगाकर उनकी हालत ठीक करने की व्यवस्था करें। सिंचाई की व्यवस्था आदि के दूसरे तरीके काम में लाये जायं और वहाँ के लोगों को मकान बनाने तथा कुएँ बनाने के लिए धन की सहायता दी जाय तो यह कठिनाइयाँ कुछ दूर हो सकेंगी[50]।

शिक्षा से बहुगुणा का प्रारम्भ से ही गहरा लगाव रहा। वह ऐसी शिक्षा प्रणाली चाहते थे जो भारतीय

---

49 हेमवती नन्दन बहुगुणा . वही, 4 मार्च, 1954, पृष्ठ सख्या- 476।

50 हेमवती नन्दन बहुगुणा : वही, 15 मार्च, 1955, पृष्ठ संख्या- 156-157।

संस्कृति और सभ्यता की रक्षा करने मे समर्थ हो तथा वर्तमान आवश्यकताओं की पूर्ति कर सके। शिक्षा प्रणाली के सम्बन्ध मे 26 अगस्त, 1953 को विधान सभा मे बहुगुणा ने कहा कि 'शिक्षा प्रणाली मे ऐसा आमूल परिवर्तन होना चाहिए ताकि हम क्लर्क, बाबू न पैदा कर देश के मुनासिब और सही नागरिक पैदा कर सके जो कि स्वावलम्बी हो और देश के उद्धार के काम मे हिस्सा ले सके'[51]। बहुगुणा उच्च शिक्षा मे गुणवत्ता लाने के लिए सदैव प्रयत्नशील रहे। उनका मानना था कि विश्वविद्यालयों की स्वायत्तता का हनन हितकर नही है। इसी सन्दर्भ पर बोलते हुए उन्होने विधान सभा मे कहा था कि 'चांसलर की परसनालिटी को गवर्नर की पर्सनालिटी से मिक्सडअप किया जा रहा है। क्योंकि हमारे सूबे का गवर्नर यूनिवर्सिटी के चांसलर है और रहेगे। अत जब कभी भी वह कोई काम करेगे तो यह हो सकता है कि कान्सटीट्यूशनली गवर्नर की हैसियत से वे अपनी सरकार की राय से काम करें। मै माननीय मंत्रीजी से कहूँगा कि जब कोई विशाल परिवर्तन शिक्षा सम्बन्ध मे या उन सभी एक्ट्स मे तरसीम हो, जिनके आधार पर हमारी सभी यूनिवर्सिटीज आज फंकशन कर रही है तो इस बात का विशेष ध्यान रखा जाय कि चांसलर गवर्नर न होकर कोई तीसरा आदमी बाहर का हो, जिसका सरकार से सम्बन्ध न हो[52]। जहाँ तक एकेडेमिक और एडमिनिस्ट्रेटिव अटॉनामी का प्रश्न है, एक्जिक्यूटिव कौसिल का राइट है स्टैचूट आर्डिनेन्स बनाने का, रेगुलेशन बनाने का, यह कार्य उनके अधिकार क्षेत्र मे नही दिया गया है। उस एक्जिक्यूटिव कौंसिल में 19 आदमी होंगे और उसमें सरकार की तरफ से भी जो नुमाइन्दे रहेंगे और वह डिकलेयर्ड एजुकेशनिस्ट ही होंगे, जो शिक्षा पद्धति से पूरी जानकारी रखते है। तब वह शिक्षा सम्बन्धी उन कार्यो मे अपना पूरा सहयोग दे सकेंगे'[53]।

अध्यापको के प्रति युवा बहुगुणा के हृदय में अत्यंत सम्मानजनक भावना थी। शायद इसीलिए उन्होंने अपने राजनैतिक जीवन के प्रारम्भिक चरण में ही अध्यापकों के हितों के लिए तीव्र संघर्ष किया। ज्ञातव्य है कि उत्तर प्रदेश के अध्यापको ने 1953 में वेतन तथा भत्तों के बारे में एक आन्दोलन छेड़ा था। अध्यापक मण्डल तथा सरकार में समझौते के कोई आसार नहीं नजर आ रहे थे। सैकड़ों अध्यापक गिरफ्तार किये जा चुके थे। अध्यापक मण्डल ने भी निश्चय किया था कि माँगे पूरी होने तक आन्दोलन बन्द नहीं किया जाएगा। केन्द्रीय शिक्षा मंत्रालय भी इस दिशा में तटस्थ नीति अपनाए हुए थी[54]। इसी सन्दर्भ में 24 फरवरी, 1953 को विधान सभा में बोलते हुए बहुगुणा ने कहा था कि, 'हमारे ये अध्यापक जिन्होंने आज हमको, वित्तमंत्री को, शिक्षामंत्री को, मुख्यमंत्री को इस काबिल बनाया कि आज इस समाज के अन्दर अपना

---

51 हेमवती नन्दन बहुगुणा : वही, 26 अगस्त, 1953, पृष्ठ संख्या- 146-147।

52 हेमवती नन्दन बहुगुणा वही, पृष्ठ संख्या- 148।

53 हेमवती नन्दन बहुगुणा वही, पृष्ठ संख्या- 149।

54 साप्ताहिक हिन्दुस्तान, हिन्दी समाचारपत्र, 12 अप्रैल, 1953, दिल्ली, पृष्ठ संख्या- 26।

एक स्थान रखते है, जहॉ पर हम कुछ कर सकते है और आज उनके ही साथ मनुष्यों का सा बरताव नही होना है। आज उनको डराकर दरवाजा बन्द करके पुलिस का भय दिखाना सरकार के लिए उचित नहीं है। हमारे समाज मे अध्यापक को ऐसा वेतन मिलना चाहिए जिससे समाज के अन्दर उनकी इज्ज़त और उनका उचित स्थान बना रहे। क्योंकि समाज के अन्दर अध्यापक एक आवश्यक कार्य करता है। अध्यापको के बात की अवहेलना करने से प्रदेश मे असतोष बढ़ेगा। इस असतोष का उत्तर हमको देना पड़ेगा क्योकि जनता के सामने हमारा असली उत्तरदायित्व यही है। अन्त में मै यह फिर कहूँगा कि अध्यापको के साथ न्याय किया जाय और उनकी मांगो को पूरा किया जाय[55]। शिक्षकों के वेतन भत्ते के बारे मे उनका सुझाव था कि 'प्रान्त के अन्दर जितने भी विश्वविद्यालय है और उनमे जितने भी अध्यापक हैं, उन सभी अध्यापकों का वेतन-भत्ता भी निश्चित किया जाय। सभी के लिए कोई स्तरीय मापदण्ड हो तो अच्छा होगा'[56]।

उच्च शिक्षा केन्द्रो मे गौरवशाली परम्परा के लिए विख्यात इलाहाबाद विश्वविद्यालय से बहुगुणा का आत्मिक लगाव था। बहुगुणा का मानना था कि उच्च शिक्षा के क्षेत्र मे इलाहाबाद विश्वविद्यालय प्रकाशवान सूय की तरह है। 30 सितम्बर, 1954 को विधान सभा मे प्रदेश के शिक्षामंत्री ने मूथम रिपोर्ट के आधार पर 'इलाहाबाद विश्वविद्यालय (ससोधन) विधेयक प्रस्तुत किया था, जिस पर कड़ी आपत्ति प्रकट करते हुए कांग्रेसी विधायक के रूप मे बहुगुणा ने विधान सभा में इलाहाबाद विश्वविद्यालय की गरिमामयी संक्षिप्त झाकी प्रस्तुत की थी तथा तमाम समकालीन समस्याओं जैसे भवन, छात्रावास, लाइब्रेरी, प्राध्यापकों की तनख्वाह मे कमी आदि को उजागर करते हुए उन्होंने अध्यक्ष के माध्यम से शिक्षा मंत्री को विभिन्न पहुलों पर सुझाव दिये थे। इलाहाबाद विश्वविद्यालय की प्रतिष्ठापरक टिप्पणी करते हुए बहुगुणा ने कहा था कि 'इस विश्वविद्यालय ने हमारे देश को, हमारे प्रदेश को सदैव से अच्छे और कुशल एडमिनिस्ट्रेटर, अच्छे और कुशल राजनीतिज्ञ दिये है, और जीवन के हर अग को हमेशा नई प्रेरणा दी है।... .... यहाँ के छात्रों और अध्यापकों ने उस जीवनदायिनी शक्ति को प्रसारित किया जिससे देश आगे बढ़ता है[57]। छात्रों की आवासीय समस्या पर संवेदनात्मक टिप्पणी करते हुए बहुगुणा ने कहा कि 'प्रयाग विश्वविद्यालय के छात्रावास में एक लड़का जिस कमरे में रहता था अब उसी कमरे में तीन-तीन लड़के रहते हैं। वह बेचारे अपनी साइकिल तक अन्दर नहीं रख सकते है। उनकी चारपाइयों के बीच जरा भी जगह बाकी नहीं रहती। इस सम्बध में मूथम कमेटी ने जॉच वाले साल में पाया कि 1763 लड़के हॉस्टल में रहते हैं और 3176 लड़के डेलीगेसी में रहते हैं। इस यूनिवर्सिटी डेलीगेसी का वर्णन करते हुए श्रीमान् बड़ी दर्दनाक हालत वहॉ पर आती है जब एक लड़का ऐसा पाया गया जो बाहर झोपड़ी में गन्दी जगह पर रहता है। डेलीगेसी में रहने वाले कितने ही लड़के ऐसे है

---

55 हेमवती नन्दन बहुगुणा : उत्तर प्रदेश विधान सभा कार्यवाही, 24 फरवरी, 1953, पृष्ठ संख्या- 85।

56 हेमवती नन्दन बहुगुणा : वही, पृष्ठ संख्या- 86।

57 हेमवती नन्दन बहुगुणा : वही, 30 सितम्बर, 1954, पृष्ठ संख्या- 256।

जिनके पास भोजन बनाने के लिए जगह ठीक नही है, वह सड़क पर सोते है। इन हालातों के सम्बन्ध मे माननीय शिक्षा मंत्री ने जरा भी नही बतलाया कि इस दिशा मे वह क्या करने वाले हैं।' आगे बहुगुणा ने कहा कि प्रयाग विश्वविद्यालय के इस विधेयक का मै स्वागत करने के लिए तैयार हूँ लेकिन मै इस बात को सदन मे स्पष्ट रूप से कह देना चाहता हूँ कि हम कभी भी विश्वविद्यालय की हालत ठीक नही कर सकते है जब तक हम उसके लिए उचित धन का प्रबन्ध न कर दे'[58]।

शिक्षको के वेतन सम्बन्धी विचार पर प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए बहुगुणा ने कहा कि 'इस यूनिवर्सिटी के टीचर्स पूरी तनख्वाह भी नहीं पाते है और मुझे दुःख हुआ कि माननीय मंत्री जी से इस सम्बन्ध में मैंने दो शब्द भी नहीं सुने, बावजूद इसके कि उनके डिपार्टमेन्ट के ज्ञानपुर के कालेज, बनारस और नैनीताल के इण्टरमीडिएट कालेज मे शिक्षको की तनख्वाह 500-1,200 है, लेकिन इलाहाबाद यूनिवर्सिटी के लेक्चर्स की जो उनसे कहीं ज्यादा कम्पीटेंट होते हैं, की तनख्वाहें किस कदर कम हैं। चूँकि हमारे पास धन नहीं है, इसलिए हम उन्हें पूरी तनख्वाहें नहीं दे सकते अगर माननीय मंत्री जी ने यह भी कह दिया होता तो मेरे दिल को कुछ संतोष हो जाता'[59]।

मूथम इन्क्वायरी कमेटी की रिपोर्ट ने इलाहाबाद विश्वविद्यालय के अध्यापकों को राजनीतिक होने का संकेत दिया था। इस सम्बन्ध मे बहुगुणा का कहना था कि 'आज इस यूनिवर्सिटी में शिक्षा पाये हुए लड़के इस सेक्रेट्रिएट में सेक्रेटरी और चीफ सेक्रेटरी के पदों पर आसीन हैं। जिस इलाहाबाद यूनिवर्सिटी के पढ़े हुए हमारे माननीय मुख्यमंत्री जी हैं, जिस इलाहाबाद यूनिवर्सिटी के छात्र इस भवन में ही नहीं इस भवन के बाहर भी बड़े-बड़े क्षेत्रों और पदो पर विराजमान हैं। तब, अगर कुछ टीचर पोलिटिशियस खराब हों, उनके नाम पर आउट राइट सभी टीचर्स को कंडेम (निंदा) करें, यह मैं मुनासिब नही समझता हूँ। .... इलाहाबाद यूनिवर्सिटी में जैसे पढ़ाने वाले टीचर्स और वहां की जैसी पढ़ाई किसी दूसरी यूनिवर्सिटी में होती हो, मैं इसको मानने के लिए तैयार नही हूँ'[60]। विश्वविद्यालय के कुलपति की शैक्षिक योग्यता पर बोलते हुए बहुगुणा ने कहा कि 'श्रीमान् जहाँ तक वाइस चान्सलर की तनख्वाह की बात है वह निश्चित तो रख दी गई है, पर उनके सम्बन्ध में कोई दूसरी बात निश्चित नहीं है।............ वाइस चान्सलर की एकेडेमिक क्वालीफिकेशन कितनी होगी आदि के सम्बन्ध में बिलकुल शान्त हैं। .... मैं जानता हूँ कि इसी मूथम कमेटी ने डीन के सलेक्शन के सिलसिले में एक तरीका दे रखा है कि जो सीनियर मोस्ट प्रोफेसर होगा वह डीन हो जाएगा। इसी तरह से यह भी रखा जा सकता था कि जो सीनियर मोस्ट डीन होगा वही वाइस चान्सलर हो जाएगा। . 'मुझे विश्वास है कि किसी बी० ए० पास व्यक्ति को इलाहाबाद यूनिवर्सिटी का

---

58 हेमवती नन्दन बहुगुणा : वही, पृष्ठ सख्या- 257-258।

59 हेमवती नन्दन बहुगुणा : वही, पृष्ठ संख्या- 258।

60 हेमवती नन्दन बहुगुणा : वही, पृष्ठ संख्या- 259।

वाइस चान्सलर होने का सौभाग्य मिलने वाला नहीं है। लेकिन यह स्पष्ट बात है कि जिसकी तनख्वाह हो उसकी क्वालीफिकेशन निश्चित न करना एक अनियमित सी बात मालूम होती है'[61]।

इस प्रकार स्पष्ट है कि—विधान सभा में बहुगुणा द्वारा दिये गये वक्तव्य तत्कालीन उत्तर प्रदेश के सामाजिक और आर्थिक पहलुओं की सही तस्वीर प्रस्तुत करते है। बहुगुणा ने जहाँ प्रदेश की तत्कालीन शिक्षा व्यवस्था के बुनियादी ढांचे पर गम्भीर प्रकाश डाला हैं, वही प्राथमिक, माध्यमिक और उच्च शिक्षा मे गुणात्मक सुधार हेतु अपने मौलिक सुझाव भी प्रस्तुत किये हैं। बहुगुणा स्वतंत्रोपरान्त प्रदेश में बनी पहली विधान सभा में एक मजदूर नेता के रूप में पहुँचे थे। उनमें दलित मजदूर, गरीब और किसानों के प्रति एक संवेदनात्मक छटपटाहट का भाव था जिसके कारण वे उनके शोषण को बर्दाश्त नहीं कर पाते थे। अपने वक्तव्यो मे उन्होंने तत्कालीन समय की मजदूर समस्या जिनमें, मँहगाई, छटनी, स्थाईकरण तथा आवास सम्बन्धी परेशानियॉ प्रमुख थी, पर गम्भीर चिन्तन प्रकट किया है। यही कारण है कि कहीं-कही बहुगुणा का वक्तव्य सरकार की आर्थिक और सामाजिक नीति के विपरीत दिखलाई पड़ता है, किन्तु एक कांग्रेसी विधायक के रूप मे यह चुनौती पूर्ण कार्य कैसे सम्भव था, आज के परिप्रेक्ष्य में विशेष प्रासंगिक है। इसके अलावा बहुगुणा के वक्तव्य तत्कालीन समय के मिल-मालिकों तथा पूँजीपतियों की शोषक नीति पर भी सदैव कठोर प्रहार करते रहे तथा मजदूर व कर्मचारियों की तरफदारी करते रहे।

---

61 हेमवती नन्दन बहुगुणा : वही, पृष्ठ संख्या- 262।

पार्लियामेंट सेक्रेट्री से वित्तमंत्री तक की यात्रा

1952 के आम चुनाव मे काग्रेस राष्ट्रीय स्तर पर वडे बहुमत से विजयी हुई। इसे आश्चर्य जनक तो नही कहा जा सकता लेकिन यह जरूर है कि जवाहर लाल नेहरू के नेतृत्व के तहत काग्रेस की इस प्रबल विजय ने सरकार व दल मे उनकी विशिष्टता[1] को निःसन्देह स्पष्ट कर दिया। नेहरू के काल मे, काग्रेस की केन्द्रीय तथा प्रान्तीय राजनीति मे अधिकाशत. स्वायत्तता थी। काग्रेस का केन्द्रीय नेतृत्व जो 'हाई कमान' के नाम से जाना जाता था, प्राय· राज्य काग्रेसी पार्टियो में उपजी गुटबन्दी तथा आपसी प्रतिस्पर्धा के विरुद्ध पंचायती दृष्टिकोण और मध्यस्थ की भूमिका निभाते हुए उनके विवादों को निपटाने का मजबूत प्रयास करता था[2]। चुनाव के वाद उत्तर प्रदेश मे जो विधान सभा बनी, उसमें भी काग्रेस का बहुत बड़ा बहुमत था। प० गोविन्द बल्लभ पन्त मुख्यमन्त्री थे लेकिन केन्द्रीय नेतृत्व और पं० पन्त के सकारात्मक प्रयासो के वावजूद इस काल मे उत्तर प्रदेश की काग्रेस मे गुटबन्दी और प्रखर हुई। पता चलता है कि इस गुटवाजी में चन्द्रभानु गुप्त की भूमिका प्रमुख थी[3]।

चन्द्रभानु गुप्त कट्टर देश भक्त, निस्वार्थ सार्वजनिक कार्यकर्ता तथा समाजवादी विचारो के समर्थक व्यक्ति थे लेकिन उत्तर प्रदेश की काग्रेसी राजनीति में उन्हीं का एकछत्र प्रभाव चलना चाहिए, ऐसी भी उनकी मानसिकता थी। एक दूसरा प्रबल गुट रफी अहमद किदवई का था, जिसका बराबर चन्द्रभानु गुप्त के गुट मे वैचारिक सघर्ष होता रहता था। स्वाभाविक तौर पर इन संघर्षो का प्रभाव कांग्रेस के केन्द्रीय नेतृत्व तथा देश के प्रमुख नेताओं जवाहर लाल नेहरू और आचार्य नरेन्द्र देव पर भी पड़ता था। रफी अहमद किदवई का गुट गोविन्द बल्लभ पन्त का विरोधी था, इसलिए चन्द्रभानु गुप्त को बाध्य होकर पं० पत का समर्थन करना पडता था। लेकिन 1954 मे पं० पन्त के केन्द्र मे जाने के वाद जब सम्पूर्णानन्द मुख्यमंत्री वने तो कुछ ही समय वाद उनका विरोध शुरू हो गया। अब चन्द्रभानु गुप्त और चौ० चरण सिंह, जो कभी भी एक साथ नही रहे थे, सम्पूर्णानन्द के विरोध में एक मत हो गये[4]। किन्तु चन्द्रभानु गुप्त और चरण सिह की एकता ज्यादा दिनो तक कायम न रह सकी, आपसी स्वार्थो के चलते कुछ समयान्तराल बाद उनमें तनाव पैदा हो ही गया।

1957 में विधान सभा का दूसरा निर्वाचन हुआ। उत्तर प्रदेश कांग्रेस विधान सभा प्रत्याशियो की अन्तिम सूची निश्चित होने के दौरान पुन. ऐसा प्रतीत होने लगा कि कांग्रेस प्रदेश पार्लिया मेण्टरी बोर्ड विवाद

---

1 पाल आर ब्रास · 'दि न्यू कैम्ब्रिज हिस्ट्री ऑफ इंडिया' (दि पोलिटिक्स आफ इडिया सिन्स इन्डिपेन्डेन्स), हैदराबाद 1990, पृष्ठ संख्या- 36।

2 पाल आर ब्रास वही, पृष्ठ सख्या- 37।

3 कमलापति त्रिपाठी · स्वतंत्रता आन्दोलन और उसके बाद, नई दिल्ली, 1988, पृष्ठ संख्या- 224।

4 कमलापति त्रिपाठी—वही, पृष्ठ सख्या- 225।

के घेरे मे है क्योंकि दो विरोधी गुट बोर्ड मे फिर से बन चुके थे। एक तरफ अल्पसंख्यक गुट का नेतृत्व चौधरी चरण सिह और मोहन लाल गौतम कर रहे थे तो दूसरी तरफ बड़ी संख्या वाले दल के नेता चन्द्रभानु गुप्त थे। इन दोनो की सूची मे बहुत बडा अन्तर था[5]। एक तटस्थ दल भी था जिसके मुखिया मुख्यमत्री मम्पूर्णानन्द थे। इन्हे पं० गोविन्द वल्लभ पन्त का भरपूर समर्थन मिल रहा था। तटस्थ दल के नेताओं को चिन्ता यह थी कि टिकट के बंटवारे में कही विद्रोह की स्थिति न पैदा हो जाय और उत्तर प्रदेश कहीं विहार का रूप न ले ले। परिणामस्वरूप केन्द्रीय पार्लिया मेण्टरी बोर्ड ने तीन व्यक्तियो की एक कमेटी गठित की जिसमे प० पन्त, डा० सम्पूर्णानन्द तथा प्रदेश कांग्रेस कमेटी के अध्यक्ष मुनीश्वर दत्त उपाध्याय को चुना गया और प्रत्याशियो की अन्तिम सूची निर्धारित करने की जिम्मेदारी इस आधार पर सौंपी गयी कि यदि कोई भी गुट इस सूची से असंतुष्ट होता है तो केन्द्रीय पार्लिया मेण्टरी बोर्ड उस पर परम्परानुसार विचार करेगा[6]। फिलहाल किसी तरह टिकट का बटवारा हुआ, चुनाव मे महत्वपूर्ण लड़ाई लखनऊ पूर्वी विधान सभा क्षेत्र मे देखने को मिली जहां कांग्रेस के चन्द्रभानु गुप्त तथा प्रजा सोसलिस्ट पार्टी के प्रमुख त्रिलोकी सिंह चुनाव मैदान मे थे। नतीजा प्रजा सोसलिस्ट पार्टी के पक्ष मे गया और चन्द्रभानु गुप्त पराजित हुए[7]। तदुपरान्त डा० सम्पूर्णानन्द उत्तर प्रदेश कांग्रेस लेजिस्लेचर दल के सर्वसम्मति से नेता चुने गये[8] और दुबारा मुख्यमंत्री बने[9]। प्रजा सोसलिस्ट पार्टी के महामंत्री त्रिलोकी सिह ही विरोधी दल के नेता चुने गये[10]।

हेमवती नन्दन बहुगुणा इलाहाबाद के सिराथू विधान सभा क्षेत्र से बड़े बहुमत से विजयी हुए थे। ज्ञातव्य है कि इस चुनाव मे पिछले चुनाव की अपेक्षा बहुगुणा के पक्ष में दो प्रतिशत मत की वृद्धि हुई थी। उन्हे 32 3 प्रतिशत मत मिले तथा प्रजा सोसलिस्ट पार्टी (पी० एस० पी०) के उम्मीदवार राम दुलारे को 17 4 प्रतिशत ही मत प्राप्त हो सके थे[11]। वस्तुतः बहुगुणा की दिनो-दिन बढ़ती गुणात्मक लोकप्रियता का यह चुनाव परिचायक बना। ऐसा पता चलता है कि आजादी के आन्दोलन के सिपाही, विद्यार्थियों के नेता, मजदूरों के रहनुमा तथा कांग्रेस के बुनियादी ढाचे मे ढले बहुगुणा की राजनीतिक कुशलता व सामाजिक पकड मे अजूबे लक्षण दिखाई देने लगे थे और इसी तीक्ष्ण प्रतिभा से प्रभावित होकर तत्कालीन मुख्यमंत्री सम्पूर्णानन्द ने उन्हें विधान सभा सचिव तथा 8 महीने बाद प्रदेश सरकार में श्रम और उद्योग मंत्रालय भी सौंपा[12]।

---

5 दि पायोनियर : अग्रेजी दैनिक समाचार पत्र, लखनऊ, 15 जनवरी 1957, पृष्ठ संख्या-03।

6 दि पायोनियर : वही;

7 दि पायोनियर : वही, 2 मार्च, 1957, पृष्ठ संख्या- 01।

8 दि पायोनियर : वही, 9 अप्रैल, 1957, पृष्ठ संख्या- 01।

9 दि पायोनियर · वही, 11 अप्रैल, 1957, पृष्ठ संख्या- 03।

10 दि पायोनियर : वही, 10 अप्रैल, 1957, पृष्ठ संख्या- 01।

11 वी बी सिह एवं एस. बोस. : स्टेट इलेक्शन इन इंडिया (1952-85) खण्ड-4, न्यू देहली 1988।

12 ओंकार शरद का धर्मयुग (राष्ट्रीय पत्रिका) में छपा लेख, 22 अप्रैल, 1979, पृष्ठ संख्या- 35।

सम्भवत सत्ता प्राप्त करने का बहुगुणा के लिए यह पहला अवसर था और राजनेता बनने के लिए कडी की शुरूआत। बहुगुणा अब तक एक ऐसे व्यक्ति के रूप मे अपनी पहचान बना लिए थे जो सदैव निश्चित मूल्यो के लिए संघर्ष करता है। उनके निश्चित मूल्य आदर्शात्मक थे जो कांग्रेस सोसलिस्ट पार्टी को भी प्रभावित करता रहा तथा प्रशासनिक स्तर पर कांग्रेस मत्रालय के लिए अद्‌भुत रहा[13]। ज्ञात होता है कि बहुगुणा मे यह सोच महान्‌ राष्ट्रभक्त और प्रशासक प० गोविन्द बल्लभ पन्त के कुशल मार्गदर्शन और प्रोत्साहन से विकसिक हुई थी। इलाहाबाद में 11 मई, 1990 को बहुगुणा की प्रतिमा के अनावरण अवसर पर बोलते हुए आर० वेंकट रमण, राष्ट्रपति भारत सरकार ने कहा था कि 'पं० पन्त के बारे में सत्य ही कहा गया है कि वह जो कुछ भी छू देते थे, वह सोना हो जाता था[14]।

ऐसा माना जाता है कि बहुगुणा को प्रदेश मंत्रालय में मनचाहा विभाग सौपा गया था। विशेषता यह रही कि प्रदेश सरकार में शामिल होने के बावजूद उन्होंने मजदूरों तथा श्रमिकों से अपना पुराना सम्बन्ध नही तोड़ा बल्कि जाने-अनजाने में पुरी तरह उनसे जुड़े रहे। यह उल्लेख पहले ही किया जा चुका है कि अब तक बहुगुणा का कई श्रमिक संगठनों तथा कर्मचारी यूनियनों से गहरा सम्बन्ध बन चुका था तथा वे उन संगठनो के उच्च पदो पर भी आसीन थे। मंत्री बनने के बाद उन्होंने इन पदों से इस्तीफा तो दे दिया परन्तु मजदूरों, किसानो तथा अल्पसंख्यकों के प्रति गहरी सहानुभूति रखने के कारण उनकी तरफदारी करते रहे। बहुगुणा की मान्यता थी कि यह वर्ग समाज की रीढ़ है। समाज में जब तक इन्हें उचित दर्जा नही दिया जाएगा, इनकी सुविधाओं का ख्याल नही किया जाएगा, देश विकास नहीं कर सकता।

विधान सभा में बहुगुणा के वक्तव्य बहुत सारगर्भित होते थे। वह जिस विषय पर बोलते थे, गहन अध्ययन और अभ्यास करके बोलते थे। अपने एक साक्षात्कार में पं० कमलापति त्रिपाठी ने बताया है कि बहुगुणा अपना भाषण देते समय कभी भी सन्तुलन नहीं खोते थे और सदन की मर्यादाओं का पूरा ध्यान रखते थे। कभी-कभी विपक्ष के लोग उनकी तीखी आलोचना भी करते थे, साधारण व्यक्ति तो शायद तिलमिला उठता, किन्तु बहुगुणा सभी के विचारों को शान्ति, संजदीगी और तन्मयता के साथ सुनते थे। प्रश्नों का उत्तर देते हुए वह पूरे संयम में रहते थे और अपने कटु आलोचकों के प्रति उनकी कभी दुर्भावना नही रहती थी[16]। उपरोक्त सन्दर्भ की पुष्टि हेतु विधान सभा में बहुगुणा के संवादों तथा विचारों का अवलोकन करना समीचीन लगता है। बहुगुणा नैतिकता और प्रजातंत्र के हिमायती थे। इस सम्बन्ध में वह विरोधी दल के लोगों से भी दो टूक बातें करने में नहीं चूकते थे। 26 अगस्त, 1958 को विधान सभा

---

13 आर. वेकट रमन, राष्ट्रपति भारत सरकार का भाषण, 11 मई, 1990 इलाहाबाद।

14 आर. वेकट रमन, राष्ट्रपति भारत सरकार का भाषण, वही।

15 पी. डी. टण्डन, (स्वतंत्रता संग्राम सेनानी एवं पूर्व विधान परिषद सदस्य, उत्तर प्रदेश) से लिया गया साक्षात्कार।

16 प० कमलापति त्रिपाठी, भूत पूर्व मुख्यमंत्री उत्तर प्रदेश सरकार एवं मंत्री भारत सरकार का डॉ० रीता जोशी द्वारा लिया गया साक्षात्कार।

कार्यवाही के दौरान दिया गया उनका वक्तव्य उक्त सन्दर्भ का द्योतक प्रतीत होता है, जिसमें उन्होंने कहा था कि—'मै इतना कहना चाहता हूँ कि विरोधी दल की तरफ से जितने भी सुझाव इस सदन मे आज तक आये है उनमे कितनी बार खेती की दशा सुधारने के लिए या उत्पादन को बढ़ाने के लिये या इस देश की बदकिस्मती को दूर करने के लिए, जो बाढ़, अतिवृष्टि, अनावृष्टि गल्ले की कमी और दूसरे कारणो के लिए क्या ठोस सुझाव रखे गये। मै मानता हू कि आज हमार सामने एक मोटा दलील और मोटा नारा पेश कर दिया जाता है। पहले विरोध उस सत्ता के खिलाफ होता था जो हमारी मर्जी के खिलाफ इस देश मे आयी थी, जो नैतिकता का गला घोट कर बैठी हुई थी। लेकिन आज सत्ता प्रजातत्र के द्वारा यहाँ आयी हुई है और प्रजातंत्र को यहाँ स्थापित रखने के लिए रही है और जितने दिन यहाँ रहेगी प्रजातंत्र की शक्ति को मजबूत करेगी'[17]।

इसी प्रकार 4 सितम्बर, 1958 को मंत्रिपरिषद् के विरुद्ध अविश्वास प्रस्ताव पर बहस करते हुए बहुगुणा ने कहा कि 'मान्यवर, किसी साहब ने कल फरमाया कि हमारे प्रदेश की सरकार बहुत पिछड़ी है, यह कुछ करती नही है। यहाँ हाहाकार मचा हुआ है। लेकिन मैं कहता हूँ कि सरकार ने कितना ऊँचा काम किया था. इतिहास उसका साक्षी होगा। विरोधी दल जो जनता का अपने को अंगरक्षक कहता है, प्रदेश के जनहित का वह क्या कर रहा है? पचतत्र की एक कथा सुनाते हुए बहुगुणा ने कहा कि 'एक राजा ने एक बन्दर को अपना अगरक्षक बनाया और सो गया। एक मक्खी आयी और राजा के मुँह पर बैठ गई। अगरक्षक ने उसे हटाया, वह वहाँ से हटकर सीने पर आ गई। फिर हटाया तो गले पर बैठ गई। अगरक्षक महाशय को गुस्सा आ गया। उन्होने तलवार उठायी और चला दी। राजा के शरीर के दो टुकडे हो गये, मक्खी उडकर भाग गई। उसी तरह में आपके द्वारा इन मित्रों से प्रार्थना करना चाहता हूँ कि जनहित के वह वैसे ही अंगरक्षक न बने जिससे जनहित के दो टुकड़े हो जायं, जनहित सत्यानाश की तरफ चला जाय। मै विरोधी दल के लोगो से कहना चाहता हू कि जिस देश की जनता के हितो की रक्षा करने के कामो मे जिस किसी दल ने त्याग से काम किया है, उस दल को हमेशा विजय मिली है[18]। इसी प्रकार से विरोधी दल के लोगो द्वारा उठाये गये अविश्वास प्रस्ताव के मुद्दे पर बहुगुणा ने चेतावनी देते हुए कहा कि 'मै विरोधी पक्ष मे बैठे लोगो से कहना चाहता हूँ कि ऐसी प्रार्थनाओं से न कोई आता है, न कोई जाता है। जनता ने किसी काम को करने के लिए हमें यहाँ भेजा है लेकिन अभी तो बड़ा हिस्सा उसका करने को बाकी है, उसे तो अभी हमको पूरा करना ही है। उसको पूरा करके ही हम जाएंगे। बावजूद इसके हमारे उधर के भाई बहुत बेसब्र हो रहे हैं, उतावले हो रहे हैं, लेकिन उनकी बात भी तो कोई सही हो, वे बतलावे कि किस तरह से, किस रास्ते में समस्या का निदान किया जा सकता है'?[19]।

---

17 हेमवती नन्दन बहुगुणा · उत्तर प्रदेश विधान सभा कार्यवाही, 26 अगस्त, 1958, पृष्ठ सख्या—198, 199।

18 हेमवती नन्दन बहुगुणा वही, 4 सितम्बर, 1958, पृष्ठ संख्या—627।

19 हेमवती नन्दन बहुगुणा वही, पृष्ठ सख्या—627-28।

बहुगुणा महात्मा गाधी के अहिसा के सिद्धान्त को अपना आदर्श मानते थे और इसी आदर्श पर चलकर भारत मे प्रजातंत्र और समाजवाद लाने की कल्पना करते थे। 12 मार्च, 1959 को विधान सभा में उनके द्वारा दिया गया वक्तव्य उपरोक्त सन्दर्भ की पुष्टि करता है। बहुगुणा का कहना था कि 'हमारी नीति इस देश मे गरीबी को मिटाने की है, इस देश में समाजवाद को लाने की है। अहिसा तथा प्रजातंत्र के सिद्धान्तो को स्वीकार करते हुए इस नीति को हमें अमली जामा पहनाना है। यह जरूर है कि हमारे देश मे बहुत सारे लोग आज ऐसे हैं जो आज समझते हैं कि इस रास्ते से समाजवाद आने वाला नहीं है, लेकिन यह पहली बार नही है कि जब अहिसा के सम्बन्ध में इस तरह की बात कुछ लोगों के दिलों में उठी हो। महात्मागांधी के समय में बहुत से लोगों के दिलों में खलबली थी कि अहिंसा के रास्ते से स्वराज आने वाला नही है। अहिसा के अस्त्र की विजय होने के बाद भी यदि हमारे बहुत से भाई आज उसमें सुबहा करते हो तो आश्चर्य की बात है। मै समझता हूँ कि मनुष्य की प्रकृति का तकाजा है वह पुरानी बातों से सीखे और आगे देखने की आदत डाले। मुझे भरोसा है कि अपने आँखों देखी बात पर विश्वास करते हुए यह सदन जनता को सही रास्ते पर ले जावेगा, जिससे वह आगे बढ़ सकेगी[20]।

विरोधी सदस्यों द्वारा यह आरोप लगाने पर कि सरकार लघु उद्योगों के नाम पर पूँजीवाद को बढ़ावा दे रही है, पर टिप्पणी करते हुए बहुगुणा ने सदन में कहा कि 'हमने स्माल स्केल इंडस्ट्रीज के काम में जो सहायता दी है वह सर्वविदित है, यह सहायता जिनको दी गयी है, वे कोई बिड़ला नहीं है, टाटा नही,पदमपति सिहानियां नहीं हैं। . .. बल्कि ये उस श्रेणी के लोग हैं जिनके अस्तित्व को आज चीन ने भी स्वीकार किया है कि ऐसे लोगों को रहने देना है, उनके काम को चलने देना है। तो ऐसी छोटी-छोटी पूँजी में काम करने वाले लोग, जो दस हजार और पॉच हजार की हैसियत रखने वाले हैं, उनकी मदद को पूँजीपति की मदद् कहीं जाय तो मुझे कोई अफसोस नहीं और न ही कुछ कहना है क्योंकि यह एक राय का प्रश्न बन जाता है कि पूँजीवाद कहॉ से शुरू होता है और कहॉ जाकर समाजवाद शुरू होता है[21]। इसी प्रकार उत्तर प्रदेश में उद्योगों के विकास का हवाला देते हुए बहुगुणा ने कहा कि 'आज चाहे वह हैण्डलूम का काम हो, चाहे इलेक्ट्रिसिटी से चलने वाले लूम्स का सवाल हो, चाहे खांडसारों का सवाल हो, फाउन्टेनपेन, होजियरी, हैण्डलूम कलेंडरिंग, फर्नीचर, डेरी प्रोडक्ट्स, हैण्डमेड पेपर आदि 40-50 चीजों की लिस्ट है जिनमें हमने उन्नति की है और यह उन्नति हमने साढ़े 12 प्रतिशत से लगाकर 50 प्रतिशत तक की हैं। उत्पादन हर एक में बढ़ा है। अगर सारे उद्योगों को मिलाकर देखा जाय तो सन् 1957 के मुकाबले में 3 92 प्रतिशत प्रदेश के उत्पादन में वृद्धि हुई है जबकि सारे देश में उसी काल में 1.7 प्रतिशत वृद्धि हुई

---

20 हेमवती नन्दन बहुगुणा . वही, 12 मार्च, 1959, पृष्ठ संख्या—76,77।

21 हेमवती नन्दन बहुगुणा : वही, 7 मार्च, 1960 , पृष्ठ संख्या—807।

है'[22]। विरोधी पक्ष के लोगो मे इस बात की चर्चा रही कि उद्योगो के लिए प्रदेश सरकार जो ऋण और अनुदान देती है उसका डिस्वर्समेट बहुत धीमा है। इस सम्बन्ध मे बहुगुणा का कहना था कि 'अनुदान का पैसा सरकारी है, जनता के यहाँ से आता है और जब तक उसकी पूरी सिक्योरिटी न हो जाय तब तक रुपया दे देने मे उसके अदा होने मे दिक्कत हो सकती है और हमारा रुपया डूब सकता है। इसीलिए इसमे कुछ टेक्निकल दिक्कत होती है जिसे दूर करने का प्रयास किया जा रहा है'[23]।

इस प्रसग मे हटकर उत्तर प्रदेश काग्रेस की तत्कालीन राजनीतिक समीक्षा कर तो पता चलता है कि यहाँ 'गुटबाजी का रूप' अपने चरम पर था। प्रदेश के मुख्यमंत्री सम्पूर्णानन्द ने अपन मत्रिमण्डल में कमला पति त्रिपाठी को शिक्षा और गृह विभाग का मंत्री बनाया था। कमलापति ने विश्वविद्यालयों के कानून में कुछ परिवर्तन करने का सुझाव रखा। विश्वविद्यालय के कानून मे संसोधन करने का जो मसौदा प्रस्तुत किया गया उनमे एक प्रस्ताव यह भी था कि सभी विश्वविद्यालयों से खजांची का पद समाप्त कर दिया जाय। चन्द्रभानु गुप्त भी लखनऊ विश्वविद्यालय के एक दशक के खजांची थे। ऐसा पता चलता है कि यही से कमलापति त्रिपाठी भी चन्द्रभानु गुप्त के कोपभाजन बने। चन्द्रभानु गुप्त की समझ में शायद यह आया कि मेरा कोषाध्यक्ष के नाते जो वर्चव है उसे कमलापति त्रिपाठी ने सम्पूर्णानन्द की आज्ञा से संशोधन पेश करके समाप्त कर दिया। स्वाभाविक तौर पर चन्द्रभानु गुप्त के गुट के लोग मुख्यमत्री का विरोध करने लगे तथा उन्हे हटाये जाने की सिफारिश भी करने लगे[24]।

ऐसे ही वातावरण मे उत्तर प्रदेश के काग्रेस के अध्यक्ष का चुनाव आ गया। सम्पूर्णानन्द की राय से मुनीश्वर दत्त उपाध्याय को पुनः अध्यक्ष पद का उम्मीदवार बनाया गया किन्तु पहले से ही तैयार बैठे, इन्तजार कर रहे चन्द्रभानु गुप्त ने मुख्यमत्री के उम्मीदवार के खिलाफ चुनाव लड़ने की चुनौती दे दी। यह चुनौती सिर्फ अध्यक्ष पद तक के लिए ही नहीं बल्कि मुख्यमंत्रित्व पद के लिए भी थी[25]। अखबारनवीसों ने सम्पूर्णानन्द से पूछा कि आपका उम्मीदवार यदि हार जायेगा तो आप क्या करेगे तो उन्होंने जवाब मे कहा कि 'मै इस्तीफा दे दूँगा।' इस प्रकार सम्पूर्णानन्द ने अपने विरोधियो को यह अवसर दे दिया कि वे अथक परिश्रम करके मुनीश्वरदत्त को हराये ताकि सम्पूर्णानन्द अपने बयान के मुताबिक इस्तीफा देने को बाध्य हो जाए। यह हुआ भी। चुनाव बड़े जोरों से लड़ा गया। मुनीश्वर दत्त पराजित हुए और गुप्त की विजय हुई। सम्पूर्णानन्द ने अपनी शर्त के अनुसार त्यागपत्र दे दिया[26]।

---

22 हेमवती नन्दन बहुगुणा वही, पृष्ठ सख्या—811।

23 कमलापति त्रिपाठी · स्वतत्रता आन्दोलन और उसके बाद, 1988, नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या—226।

24 पी डी टण्डन से लिया गया साक्षात्कार।

25 पी डी. टण्डन से लिया गया साक्षात्कार।

26 कमलापति त्रिपाठी . स्वतंत्रता आन्दोलन और उसके बाद, वही, पृष्ठ सख्या—228।

सम्पूर्णानन्द के मुख्यमंत्री पद से त्याग पत्र देने के बाद तत्काल नये मुख्यमत्री के चुनाव का प्रश्न आ गया। कमलापति त्रिपाठी और हेमवती नन्दन बहुगुणा मुख्यमंत्री पद पर चन्द्रभानु गुप्त के निर्विरोध निर्वाचन के विरुद्ध थे। फलत: केन्द्रीय नेतृत्व और जवाहर लाल नेहरू की रूचि से बाहर जाकर उन्होंने मुख्यमंत्री पद के लिए चौ० गिरधारी लाल का नाम पेश किया। कमलापति त्रिपाठी और बहुगुणा के इस साहसपूर्ण कदम से केन्द्रीय नेतृत्व मे खलबली मचना स्वाभाविक था। दिल्ली मे सोचा जाने लगा कि किस प्रकार से यह द्वन्द समाप्त किया जाये। लाल बहादुर शास्त्री दिल्ली से लखनऊ भेजे गये, उन्होने गुप्त के निर्विरोध चुने जाने की पूरी वकालत की, परन्तु बात नही मानी गयी। तदुपरान्त गोविन्द वल्लभ पन्त आये और कहा कि जवाहर लाल प्रधानमंत्री है और उत्तर प्रदेश उनका घर है। उनके घर में यदि उनका उम्मीदवार हार जाएगा तो प्रधानमत्री के पद की प्रतिष्ठा को धक्का लगेगा। प्रधानमंत्री के पद की रक्षा के लिए तुम लोगों को चाहिए कि चन्द्रभानु गुप्त निर्विरोध चुन लिये जाएं। इस चुनाव के बाद जो सरकार बनेगी वह उन लोगों की ही बनेगी जिसे तुम लोग कहोगे[27]। पन्त जी के कहने पर कमला पति और बहुगुणा ने प्रधानमंत्री पद की प्रतिष्ठा बनाये रखने के लिए चन्द्रभानु गुप्त के निर्विरोध चुनाव को तो स्वीकार कर लिया परन्तु सम्पूर्णानन्द के मंत्रिमण्डल के समस्त सदस्यों सहित गुप्त के मंत्रिमंडल में शरीक न होने की घोषणा भी कर दी[28]। इस प्रकार सन् 1960 से तब तक चन्द्रभानु गुप्त मुख्यमंत्री बने रहे जब तक कामराज प्लान के अनुसार उनको इस्तीफा नहीं देना पड़ा। इस अन्तराल में 1962 तक बार-बार गुप्त की कोशिश के बावजूद भी यह गुट उनकी सरकार में शामिल न हुआ।

सन् 1962 में पुनः आम चुनाव आ गया। उम्मीदवारों की सूची बनाने का काम शुरू हुआ। उत्तर प्रदेश में चन्द्रभानुगुप्त ही मुख्यमंत्री थे, इसलिए उन्होंने अपनी पार्टी के 425 व्यक्तियों के नाम पेश किये कि वे विभिन्न निर्वाचन क्षेत्रों में खड़े कर दिये जायें। कमलापति त्रिपाठी भी पार्लिया मेण्टरी बोर्ड के सदस्य थे अतएव उन्होंने भी गुप्त की सूची के समनान्तर अपने दल के 425 व्यक्तियों के नाम की सूची पेश की। सदा की तरह उत्तर प्रदेश विधानसभा का मामला नेहरू जी को सुपुर्द कर दिया गया। नेहरू जी ने अन्तिम सूची बनाने के लिए दोनों सूचियॉ लाल बहादुर शास्त्री को दे दी। लाल बहादुर शास्त्री के द्वारा बनायी गई उम्मीदवारों की सूची में 62 प्रतिशत उम्मीदवार वह थे जो गुप्त की सूची में थे और केवल 38 प्रतिशत उम्मीदवार वह चुने गये जो कमलापति त्रिपाठी की सूची के थे[29]।

लाल बहादुर शास्त्री द्वारा बनायी गई अन्तिम सूची को देखने के बाद कमलापति त्रिपाठी के दल में बड़ी निराशा छा गई। अतएव कमलापति अपने दल के प्रखर नेता हेमवती नन्दन बहुगुणा को साथ लेकर

---

27 कमलापति त्रिपाठी : वही, पृष्ठ संख्या—228, 229।

28 कमलापति त्रिपाठी : वही, पृष्ठ संख्या—229।

29 कमलापति त्रिपाठी : वही, पृष्ठ संख्या—230।

दिल्ली पहुँचे और शास्त्रीजी से कहा कि मेरे दल के साथ ऐसा अन्याय क्यो किया गया? इन नेताओं का मानना था कि चन्द्रभानु गुप्त की सूची और इनकी सूची के 50-50 प्रतिशत उम्मीदवार लिये जाते तो शायद यह न्याय की बात होती। लाल बहादुर शास्त्री का कहना था, कि मैंने जो कुछ भी किया, नेहरू जी की आज्ञा से किया। नेहरू का मानना था कि चुनाव के बाद चन्द्रभानु गुप्त को मुख्यमंत्री बनना है, इसलिए बहुमत उन्हीं का होना चाहिए। पर कमलापति की सूची में इतनी सख्या होनी चाहिए कि यदि चन्द्रभानु गुप्त निरंकुशता करे तो उनकी रोकथाम वह कर सके। बहरहाल कमलापति त्रिपाठी शास्त्री जी से सन्तुष्ट नहीं हुए। ज्ञात होता है कि इसी परिप्रेक्ष्य मे 1961 के दिसम्बर की कठोर सर्दी में कमलापति और बहुगुणा एक महीने दिल्ली मे डटे रहे[30]।

चुनाव का समय जैसे-जैसे नजदीक होता जा रहा था, प्रदेश कांग्रेस कमेटी की हालत दिनो दिन डॉवाडोल होती जा रही थी। चन्द्रभानु गुप्त और कमलापति त्रिपाठी के बीच भारी तनाव बन चुका था—एक की ऑख को दूसरा सुहाता न था। चन्द्रभानु गुप्त का प्रभाव शासन पर था तो कमलापति त्रिपाठी का संगठन पर। दोनो वैचारिक सघर्षो मे जूझ रहे थे। इस स्थिति के घने कुहांसे मे पराजय की मुस्कान बहुतों ने देखी, पर विजय का स्वप्न देखा सबसे पहले बहुगुणा ने[31]। बहुगुणा साथी नेताओं और जनता के मस्तिष्क का अध्ययन करते थे और उसके अनुसार अपनी योजना बनाते थे। इसी कारण उनकी योजना काल्पनिक नहीं, पूरी तरह व्यवहारिक होती थी, कोरा आदर्शवाद उन्हे नही सुहाता था। नकली प्रशंसा के मुकाबले वे असली निन्दा पसन्द करते थे। अत: इस संक्रमणकालीन दौर में बहुगुणा ने अपने राजनीतिक चातुर्य का परिचय दिया। यह जानकर कि कमलापति त्रिपाठी और चन्द्रभानु गुप्त के आपसी द्वन्द आगामी चुनाव में कांग्रेस की पराजय के लिए कारगर साबित होगे, बहुगुणा ने दोनों के बीच में एक महत्वपूर्ण मध्यस्थ की भूमिका निभाई। सबसे पहले चन्द्रभानु गुप्त से उन्होने कहा—'क्या आप चुनाव में हारी हुई कांग्रेस के नेता रहकर मुख्यमत्री बन सकते है?' गुप्त के पास इस प्रश्न का कोई जवाब नही था, अब उनकी दुखती नश बहुगुणा की अगुली के नीचे थी। 'क्या गुप्ता को मुख्यमत्री बनना स्वीकार कर कांग्रेस की विजय सुरक्षित करना हमारे लिए महँगा सौदा है?' यह सवाल रखा बहुगुणा ने कमलापति त्रिपाठी के सामने[32]। कमलापति का विवेक सदा जागृत रहता था। वे तो कांग्रेस की जीत के लिए कुछ भी करने को तैयार थे। अन्ततः दोनों नेताओं के भाव मे परिवर्तन हुआ, कुछ सामजस्य बना। परिणामस्वरूप प्रेदश में कांग्रेस भारी मतों से विजयी हुई।

हेमवती नन्दन बहुगुणा इलाहाबाद के सिराथू विधानसभा क्षेत्र से चुनाव लड़े और भारी मतों से विजयी हुए। इलाहाबाद मे विधानसभा तथा लोकसभा का यह चुनाव पूरे देश के प्रतिष्ठापूर्ण चुनावो में एक

---

30 कमलापति त्रिपाठी वही, पृष्ठ सख्या-—231।

31 कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर' का बहुगुणा की स्मारिका मे प्रकाशित लेख, 11 मई,1990, इलाहाबाद, पृष्ठ संख्या-—40।

32 कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर' वही, पृष्ठ संख्या-—41।

माना जा रहा था क्योकि देश के प्रधानमत्री पं० जवाहर लाल नेहरू यहीं पर फूलपुल क्षेत्र से लोकसभा के प्रत्याशी थे तथा लाल बहादुर शास्त्री भी इलाहाबाद ससदीय क्षेत्र से चुनाव लड़ रहे थे[33]। स्रोतों से पता चलता है कि इलाहाबाद के द्वाबा क्षेत्र जिसमे चायल ससदीय क्षेत्र तथा विधानसभा के चार क्षेत्र क्रमशः सिगथू, करारी, भरवारी तथा चायल आदि का चुनाव परिणाम बहुत पहले से निश्चित सा हो गया था। जिला काग्रेस कमेटी के महामंत्री बहुगुणा अपने गहरे एवं सजीव सम्पर्क तथा रचनात्मक कार्यो से इन क्षेत्रों को कांग्रेसमय बना दिया था[34]। बहुगुणा अब तक क्षेत्रीय समस्याओं से ऊपर उठकर राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय मुद्दो पर चिन्तन करने लगे थे, सिर्फ अपने क्षेत्र के नेता न होकर बल्कि अन्य विधानसभा व लोकसभा के क्षेत्रों मे जाकर कांग्रेस की मजबूती हेतु जनसभाओं को सम्बोधित करने लगे थे। उदाहरण स्वरूप नेहरू के ससदीय क्षेत्र फुलपूर की एक बडी जनसभा को लिया जा सकता है, जिसमे बोलते हुए बहुगुणा ने कहा था कि 'देश एक बडी नाजुक स्थिति से गुजर रहा है। गोवा की मुक्ति से भारत से उपनिवेशवाद का अन्तिम अवशेष समाप्त हो गया पर अभी कश्मीर की समस्या हल करना है और भारतीय भूमि से चीनी हमले को समाप्त करना है। साथ ही पंचवर्षीय योजना का कार्यान्वियन कर देश में आर्थिक-सामाजिक क्रांति लाना है।

नेहरू के अलावा ऐसा कोई नेता नहीं है जो देश की पतवार संहाल सके'[35]।

बहुगुणा की सूक्ष्म राजनैतिक दृष्टि पूर्णतः विकसित हो चुकी थी। किसी भी विषय व समस्या पर वह गहराई से विचार करते थे तथा उसके समाधान हेतु उनका सुझाव बहुत ही सटीक और सारगर्भित होता था। उक्त सन्दर्भ मे उदाहरण स्वरूप एक विशेष घटना का चित्रण किया जा सकता है—1962 के चुनाव में काग्रेस की विजय हुई। प्रधानमंत्री जवाहर लाल नेहरू अपने फूलपुर निर्वाचन क्षेत्र से चुनाव जीत गये थे, पर पिछले चुनाव से उन्हे सवा लाख वोट कम मिले थे। पत्रकारों में यह जिज्ञासा कुलमुला रही थी कि ये सवा लाख वोट कहॉ चले गये? उनकी बेचैनी का आधार यह भी था कि गोवा विजय के कारण नेहरू की लोकप्रियता बढ़ी थी। प्रख्यात पत्रकार कन्हैयालाल मिश्र प्रभाकर चुनाव विशेषज्ञो से वार्ता करने लखनऊ पहॅुचे। उनकी योजना लखनऊ से फूलपुर निर्वाचन क्षेत्र पहुँचकर मानसिक सर्वेक्षण करने की थी। बहुतों से मिले, पर गुत्थी न सुलझी। हेमवती नन्दन बहुगुणा ने अपनी मुलाकात में बताया कि 'चन्द्रभानु गुप्त के मुख्यमंत्रित्व काल में बागों पर टैक्स लगा था। वह जनभावना के विरुद्ध था, उसी का असर वोटों पर पडा है[36]। कन्हैया लाल मिश्र ने अपने एक लेख में उक्त सन्दर्भ की चर्चा करते हुए लिखा है कि जव इसी सन्दर्भ में फूलपुर के एक देहाती बूढ़े ने उन्हें पूरी कहानी सुनाई तो वे बहुगुणा की सूक्ष्म राजनैतिक दृष्टि के

---

33 भारत, हिन्दी दैनिक समाचार पत्र, इलाहाबाद, 20 जनवरी, 1962, पृष्ठ संख्या—05।

34 भारत, हिन्दी दैनिक समाचार पत्र, वही, 9 फरवरी, 1962, पृष्ठ संख्या—03।

35 भारत, हिन्दी दैनिक समाचार पत्र, वही, 31 जनवरी, 1962 पृष्ठ संख्या—02।

36 कन्हैया लाल मिश्र 'प्रभाकर' वही, पृष्ठ संख्या—40

प्रशमक हो गये[37]। कहानी यह थी कि जब जवाहर लाल नेहरू अपने चुनाव क्षेत्र में गये तो लोगो ने शिकायत की कि 'बागो पर कभी टैक्स नही लगा था, लग गया है, अब शायद मंदिरों-मस्जिदों पर भी लगेगा'। नेहरू इस टैक्स के विरुद्ध थे, अपनी सभाओं में उन्होने टैक्स को गलत बताया तथा उसे हटने का पूरा आश्वासन भी दिया था[38], किन्तु प्रदेश के मुख्यमत्री चन्द्रभानु गुप्त चुनाव के अन्त तक उसे न हटा सके थे।

1962 के चुनाव के बाद चन्द्रभानु गुप्त पुनः मुख्यमत्री चुन लिये गये। गुप्त ने नये मंत्रिमण्डल के गठन हेतु तथा उसे एक सजातीय एव निष्ठ स्वरूप प्रदान करने के लिए असंतुष्ट कांग्रेसी नेताओं कमलापति त्रिपाठी, एच० एन० बहुगुणा, जयराम वर्मा आदि से देर तक वार्ता की[39]। फिर भी 14 मार्च,1962 के शपथ ग्रहण मे राज्य कांग्रेस के असंतुष्ट नेता अनुपस्थित रहे[40]। ऐसा माना जाता है कि मंत्रालय में नामावली घोषित करने के सन्दर्भ में मुख्यमंत्री ने असंतुष्ट गुट के नेताओं से विचार-विमर्श नहीं किया। ज्ञातव्य है कि मुख्यमंत्री ने 36 व्यक्ति अपने दल के तथा विरोधी दल के केवल 7 व्यक्ति शामिल किये थे[41]। जबकि कमलापति त्रिपाठी तथा बहुगुणा सम्पूर्णानन्द मंत्रिमंडल के सदस्यों को जो नई विधानसभा में चुनकर आये थे, को मत्रिमंडल में शरीक करके 'सम्मानजनक व्यवहार' की मांग करते आ रहे थे[42]। दिनों-दिन राज्य कांग्रेस की स्थिति जटिल होते देख परम्परानुसार प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू को हस्तक्षेप करना पड़ा। दोनों नेता चन्द्रभानु गुप्त और कमलापति त्रिपाठी प्रधामंत्री आवास पर बुलाये गये। नेहरू ने आमने-सामने दोनों नेताओं को बैठाकर वार्ता की। तदुपरान्त चन्द्रभानु गुप्त को कमलापति त्रिपाठी की पुरानी सूची स्वीकार करनी पड़ी[43]। इस प्रकार असंतुष्ट गुट के लोगों के मंत्रिमंडल में शामिल होने की बात स्पष्ट हो सकी। कमलापति त्रिपाठी, विचित्र नारायण शर्मा ने मत्रिमण्डल स्तर के मंत्रियों के रूप में शपथ ग्रहण की तथा बहुगुणा, जयराम वर्मा तथा बलदेव सिह आर्य आदि ने उपमत्रियों के रूप में शपथ ग्रहण किया[44]। यह मंत्रालय 1962 से लेकर 1964 तक अनवरत चलता रहा। तदुपरान्त कामराज योजना के तहत मुख्यमंत्री चन्द्रभानु गुप्त को अपने पद से इस्तीफा देना पड़ा और उनका मंत्रिमंडल भी भंग हुआ[45]।

ज्ञातव्य है कि कामराज योजना (1964) के अनुसार केन्द्र तथा प्रदेश के वरिष्ठ कतिपय कांग्रेस जनों

---

37 कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर' वही, पृष्ठ संख्या—41।
38 भारत, हिन्दी दैनिक समाचार पत्र, वही, 22 जनवरी, 1962, पृष्ठ संख्या—1।
39 भारत; वही, 13 मार्च, 1962, पृष्ठ संख्या—1।
40 भारत; वही, 15 मार्च, 1962, पृष्ठ सख्या—1।
41 भारत; वही, 15 मार्च, 1962, का सम्पादकीय कालम।
42 भारत; वही, 21 मार्च, 1962, पृष्ठ संख्या—1।
43 कमलापति त्रिपाठी . स्वतंत्रता आन्दोलन और उसके बाद, वही, पृष्ठ संख्या—232।
44 भारत, हिन्दी दैनिक समाचार पत्र, वही, 23 मार्च, 1962, पृष्ठ संख्या—1।
45 कमला पति त्रिपाठी . वही, पृष्ठ संख्या—233.

ने पद त्याग किया था। केन्द्र मे लाल बहादुर शास्त्री व जगजीवन राम ने उस योजना के अधीन जैसे ही पद त्याग किया वैसे ही उत्तर प्रदेश मे चन्द्रभानु गुप्त को अपनी सत्ता छोड़नी पड़ी। तत्पश्चात मुख्यमंत्री पद के लिए सुचेता कृपलानी को चुना गया। सुचेता उस समय अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी में महासचिव के पद पर कार्य कर रही थी और आचार्य कृपलानी की पत्नी थी। इसके बाद प्रदेश कांग्रेस कमेटी के अध्यक्ष पद का चुनाव आ गया। एक तरफ से चन्द्रभानु गुप्त इस पद के उम्मीदवार थे तो दूसरी तरफ से कमलापति त्रिपाठी। यह चुनाव बड़े धूम-धाम से लड़ा गया। कमलापति त्रिपाठी के सारे चुनाव का संचालन हेमवती नन्दन बहुगुणा ने किया। बहुगुणा अब तक उत्तर प्रदेश कांग्रेस के महामंत्री बन चुके थे। उनकी संगठनात्मक क्षमता मे बहुत तेजी आ गई थी। पूरे प्रांत के कांग्रेसी कार्यकर्ता तथा पदाधिकारी बहुगुणा को अपना मानते थे और इज़्ज़त देते थे[46]। फिर भी इस चुनाव में कमलापति त्रिपाठी को तीन-चार वोटों से हरा दिया गया। बहुगुणा का ख्याल था कि त्रिपाठी को तिगड़म करके यह चुनाव हराया गया। अत. उन्होंने चुनाव याचिका दायर कर दी। उस समय सगठन के चुनाव के सम्बन्ध में जो याचिकाएं आती थी उन्हें देखने और फैसला करने का उत्तरदायित्व गुलजारी लाल नन्दा पर था। उन्हीं की अदालत में यह याचिका बहुगुणा ने दायर किया था। फलत. फैसला कमलापति के पक्ष मे हुआ। कमलापति अध्यक्ष निर्वाचित हुए और सात वर्षो तक लगातार इस पद पर बने रहे। इस चुनाव की सफलता में बहुगुणा का सबसे बड़ा हाथ था। बहुगुणा राजनीति के स्वय सेवक, संचालक और चिन्तक थे। वे हार में अधीर नहीं होते थे। बल्कि कल की विजय का विश्वास रखते थे। उनमें नये निर्णयों की गम्भीरता थी तथा उन्हें कार्यान्वित करने की सजगता भी थी और श्रम करना, जुट जाना, जुटे रहना उनका स्वभाव था। इस चुनाव के सिलसिले में स्वयं कमलापति त्रिपाठी ने अपनी पुस्तक `स्वतंत्रता आन्दोलन और उसके बाद' में बहुगुणा की प्रशंसा करते हुए लिखा है कि `इस लड़ाई में बहुगुणा ने जो भूमिका अदा की थी, वह भुलाई नही जा सकती'[47]।

1966 में प्रधानमंत्री लाल बहादुर शास्त्री की मृत्यु के बाद भारत के समक्ष नये प्रधानमंत्री और अखिल भारतीय कांग्रेस के लिए नये नेता का प्रश्न आ खड़ा हुआ। कांग्रेस के कतिपय नेता और विशेषकर ऐसे लोग जो जवाहर लाल नेहरू के प्रगतिशील विचारों से संस्कृत थे, इंदिरा गांधी से मिले और उनसे अनुरोध किया कि वह भारत के भावी सूत्र का संचालन करें। उसी समय कांग्रेस दल के कुछ अन्य लोग यह भी सोंचने लगे कि कांग्रेस को ऐसा नेता चाहिए जो इस देश को पुरानी भारतीय परम्परा के आधार पर चला सके। ऐसे लोगों ने यह निश्चय किया कि मोरारजी देसाई ऐसे व्यक्ति हैं जिनके ऊपर विश्वास किया जा सकता है। फलतः कांग्रेस के नेता पद के लिए चुनाव हुआ और यह चुनाव इंदिरा गांधी तथा मोरारजी देसाई के बीच हुआ। इस चुनाव में इंदिरा गांधी विजयी हुई। परन्तु चुनाव की कड़वाहट के फलस्वरूप

---

46 पी. डी टण्डन का लिया गया साक्षात्कार।

47 कमलापति त्रिपाठी · वही, पृष्ठ संख्या—238।

कांग्रेस दल मे कुछ आन्तरिक कटुता पैदा हो गई। इस आन्तरिक कटुता के परिणामस्वरूप स्थिति बदली और काग्रेस कुछ कमजोर होती दिखाई दी। ऐसी ही स्थिति में 1967 का आम चुनाव हुआ जो काग्रेस की नीव को झकझोर कर रख दिया[48]।

1967 के इस आम चुनाव में काग्रेस की दुर्बलता स्पष्ट दृष्टिगोचर हुई। लोकसभा के चुनाव मे काग्रेस के सदस्यो की संख्या घटी और देश के कतिपय प्रदेशों म मिला-जुला और गैर काग्रेसी सरकारें बनी। उत्तर प्रदेश विधानसभा में भी कांग्रेस बहुमत में न आ सकी। कांग्रेस के बहुमत मे न आने का प्रमुख कारण राज्य मे खाद्य सामग्री के दामो मे हुई वृद्धि तथा बढ़ती हुई आर्थिक कठिनाई को लिया जा सकता है, जिसकी वजह से अधिकांश मतदाता कांग्रेसी नीति से असंतुष्ट थे[49]। लेकिन इसके साथ ही साथ उम्मीदवारों के चयन को लेकर उत्तर प्रदेश में उपजी गुटबाजी तथा बड़ी मात्रा में दल-बदल की नीति को भी हाशिये पर नहीं रखा जा सकता, मूलतः यही प्रदेश काग्रेस के अस्तित्व पर प्रश्न चिन्ह लगाने के लिए पर्याप्त था। स्रोतो से पता चलता है कि इसके अलावा और भी तीन प्रमुख ज्वलंत मुद्दे थे, क्रमशः गोवध, राज्य कर्मचारियो की हड़ताल तथा उर्दू भाषा पर उठे सवाल आदि ने भी इस चुनाव मे काग्रेसी अस्मिता पर विशेष प्रभाव डाला था[50]।

परिणामस्वरूप काग्रेस को इस आम चुनाव में काफी क्षति उठानी पड़ी। उत्तर प्रदेश कांग्रेस के अध्यक्ष कमलापति त्रिपाठी के साथ-साथ दो वरिष्ठ कैबिनेट मंत्री कैलाश प्रकाश और जगमोहन सिह नेगी की पराजय से पार्टी को बहुत बड़ा धक्का लगा। पूर्व मुख्यमंत्री चन्द्रभानु भी बहुत कम अन्तराल में यानि मात्र 70 मतो से अपना चुनाव जीत पाये थे[51]। ऐसी प्रतिकूल परिस्थिति में गौरतलब है कि प्रदेश कांग्रेस कमेटी के महामंत्री हेमवती नन्दन बहुगुणा बड़े बहुमत से विजयी हुए। बहुगुणा इलाहाबाद में बारा विधान सभा से चुनाव लड़े थे और अपने निकटतम प्रतिद्वन्दी हरिशंकर पाण्डेय (निर्दलीय उम्मीदवार) को लगभग नौ हजार (9000) मतो से पराजित किये[52]। वर्तमान परिप्रेक्ष्य में एक कांग्रेसी नुमाइन्दे के रूप मे बहुगुणा की यह विजय एक शानदार विजय कही जा सकती है।

उत्तर प्रदेश में कांग्रेस के प्रति अचानक जनाधार घटने से प्रदेश के वरिष्ठ कांग्रेसियों में विशेष चिन्ता होनी स्वाभाविक थी। कमलापति त्रिपाठी और हेमवती नन्दन बहुगुणा इसी सन्दर्भ में प्रधानमंत्री इंदिरागांधी और कांग्रेस अध्यक्ष कामराज से गम्भीर वार्ता हेतु दिल्ली रवाना हुए। दिल्ली पहुँचकर एक गोपनीय वैठक मे इन नेताओं ने इंदिरा गांधी और कामराज को चुनाव के बाद की स्थिति से अवगत कराया। इसके साथ

---

48 कमला पति त्रिपाठी : वही, पृष्ठ सख्या—248, 249।

49 दि पायोनियर, अंग्रेजी दैनिक समाचार पत्र, लखनऊ, 26 जनवरी, 1967, पृष्ठ सख्या—01।

50 दि पायोनियर वही,।

51 दि पायोनियर : वही, 24 फरवरी, 1967, पृष्ठ संख्या—01।

52 दि पायोनियर . वही, 25 फरवरी, 1967, पृष्ठ संख्या—07।

ही साथ दोनो नेताओं ने कांग्रेस के प्रति घट रहे विश्वास को पुन प्राप्त करने तथा संगठन में और मजबूती देने पर गम्भीरता पूर्वक विचार किया[53]। इधर विधान सभा में कांग्रेस का स्पष्ट बहुमत न होने की वजह से विपक्ष के लोगों मे अपनी सरकार बनाने की विशेष इच्छा जाग उठी थी। ऐसी सम्भावना बनी थी कि चरण सिंह अपने समर्थको के साथ विपक्ष मे शामिल होकर उनकी सम्मिलित सरकार का नेतृत्व करेंगे[54]। किन्तु चरण सिंह. ने इसे अपकार भरे अफवाह की सज्ञा दी तथा इसे आधारहीन बताते हुए कहा कि `विपक्ष के लोगो द्वारा कई बार इस प्रकार का सुझाव मेरे पास आया किन्तु मैंने सदैव इन्कार किया है'[55]। अन्तत: विपक्ष के लोग असफल रहे, सरकार कांग्रेस की बनी और चन्द्रभानु गुप्त मुख्यमंत्री हुए।

चन्द्रभानु गुप्त ने अपने मत्रालय में हेमवती नन्दन बहुगुणा को वित्त मत्री बनाया तथा कई और विभागो का भी भार सौपा, जैसे—सेल्सटैक्स, रजिस्ट्रेशन, स्टैम्प एण्ड कोर्टफीस, ट्रांसपोर्ट एण्ड टूरिज्म और पोलिटिकल पेसन आदि[56]। बहुगुणा ने अपनी सूक्ष्मदृष्टि तथा अचूक प्रतिभा के बल पर तीसरे दिन ही 1967-68 का बजट विधान सभा मे पेश कर दिया। बजट पेश करते समय विधान सभा में बहुगुणा ने कहा कि `हमारे सामने बड़ी कठिन समस्याए है, उन्हें हल करने के लिए मैं इस सदन के प्रत्येक सदस्य और दल के हार्दिक सहयोग की कामना करता हूँ। सहयोग के बल पर ही सरकार वर्तमान परिस्थितियो पर काबू पा सकेगी और इस राज्य के प्रत्येक नागरिक का जीवन अधिक सुखी और समृद्ध बनाने में सफल हो सकेगी'[57]। इसी प्रकार बजट सत्र मैं बोलते हुए 21 मार्च, 1967 को बहुगुणा ने कहा कि `गरीबी का बजट छोटा होता है लेकिन बढ़ती हुई अर्थव्यवस्था मे खर्च का बढ़ना शुभ है और फैलाव राज्य के कार्यों का होना निश्चित है। गरीबी का मुकाबला करने के लिए इनपुट बढ़ाना होगा और पैसा खर्च करना होगा। . लेकिन मैं अदब के साथ कहूँगा कि यह 8 करोड़ इंसानों का प्रदेश है और इस जनसंख्या के लिए दो अरब की रकम बहुत कम है। यह रकम छः अरब की भी हो तो प्रदेश की आवश्यकताओं को देखते हुए ज्यादा न होगी[58]।

अनुपूरक अनुदान के सम्बन्ध में विरोधी दल के सदस्यों द्वारा आशंकाएं व्यक्त किये जाने पर बहुगुणा ने कहा कि `हमारे कामों पर जो खर्च होता है उसका ताल्लुक दुनिया की घटनाओं से होता है और बढ़ती हुई देश की अर्थव्यवस्था में खर्चे को बार-बार बढ़ाना पड़ता है क्योंकि वस्तुओं के भाव बदल जाते है और

---

53 दि पायोनियर : वही, 4 मार्च, 1967, पृष्ठ संख्या- —03।
54 दि पायोनियर :वही, 6 मार्च, 1967, पृष्ठ संख्या—01।
55 दि पायोनियर · वही, 7 मार्च, 1967, पृष्ठ संख्या—01।
56 दि पायोनियर : वही, 15 मार्च, 1967, पृष्ठ संख्या—01।
57 हेमवती नन्दन बहुगुणा : उत्तर प्रदेश विधान सभा कार्यवाही, 17 मार्च, 1967, पृष्ठ संख्या—31।
58 हेमवती नन्दन बहुगुणा : वही, 21 मार्च, 1967, पृष्ठ संख्या—170।

उन भावो को मामने रखते हुए अपने खर्चे का मूल्यांकन करना पडता है और इस माननीय सदन की ओर आज्ञा लेने के लिए दौड़ना पडता है जिसमे प्रदेश की जनता की सर्वोच्च निहित सत्ता है। वित्तीय नियमो के अनुसार बचत के रुपये को दूसरे काम मे लाने के लिए भी इस माननीय सदन के पास आना पडता है[59]। बजट मे 19.76 करोड के सम्पूर्ण घाटे पर बहुगुणा ने सदन मे बताया कि उसमें मुख्य रूप मे 4.64 करोड रुपया प्रोविडेन्ट फन्ड मे बढ़ोत्तरी की वजहसे है और 5.72 करोड़ रुपया जो कई आरक्षित फन्ड के लिए, इन्वेस्टमेन्ट के लिए प्राप्त नहीं हो सकता है[60]। स्रोतों से पता चलता है कि इतने कम समय में और आर्थिक कठिनाई के दौर के कारण बहुगुणा के बजट में कोई नया पन तो नही आ सका था, लेकिन अतीत का सिहावलोकन करते हुए भावी आशा के साथ जिस प्रकार से उन्होंने प्रदेश की आर्थिक तस्वीर प्रस्तुत की, यह विशेष सराहनीय थी[61]।

सम्मिलित सरकार के अभिनय का दौर उत्तर प्रदेश की राजनीति में 1967 मे शुरू हुआ जब एक वरिष्ठ एव अनुभवी कांग्रेसी के रूप में चौधरी चरण सिह अपने पिछले बयानों को भूलकर 17 कांग्रेसी समर्थको के साथ विपक्ष मे जा बैठे। 6 अप्रैल, 1967 को राज्यपाल के अभिभाषाण पर धन्यवाद प्रस्ताव भी नही हुआ था कि चन्द्रभान गुप्त की काग्रेसी सरकार गिरा दी गई। स्वयं चरण सिंह ने 'संयुक्त विधायक दल' बनाकर जिसमें जनसंघ, एस० एस० पी०, सी०, पी० आई०, सी०, पी० एम०, पी० एस० पी०, स्वतंत्र पार्टी, रिपब्लिकन पार्टी तथा निर्दलीय सम्मिलित थे, मुख्यमंत्री की कुर्सी हथिया ली[62]। किन्तु साल भर के अन्दर ही यह 9 दलों की साझा सरकार छिन्न-भिन्न हो गई। वास्तविकता यह थी कि साझी सरकार का प्रत्येक घटक अपने-अपने ढग से कार्यक्रम कार्यान्वित करना चाहता था जिसके कारण उनके विचारों में विभेद होने के कारण आपसी द्वन्द होना सवाभाविक था। परिणामस्वरूप 15 अप्रैल, 1968 को प्रांत में राष्ट्रपति शासन लागू हो गया और विधानसभा भंग हो गई[63]।

फरवरी 1969 में उत्तर प्रदेश में विधानसभा का पुनः चुनाव हुआ। चूँकि यह चुनाव समय से पहले यानि दो वर्ष के अन्दर ही हुआ, इसलिए इसे मध्यावर्ती चुनाव की संज्ञा दी गई। गौरतलब है कि प्रदेश में मध्यावधि चुनाव का जन्म भी यही से प्रारम्भ हुआ[64]। चरणसिंह ने अब तक अपना एक पृथक 'भारतीय क्रांति दल' बनाकर पिछड़ी जातियों के लिए एक नया विकल्प तैयार कर लिया था। 'मुस्लिम मजलिस' भी पूरे प्रांत मे मुसलमानों को एकीकृत करने में कोई कसर छोड़ी थी। यानि यह चुनाव कांग्रेस के लिए काफी

---

59 हेमवती नन्दन बहुगुणा : वही, 20 मार्च, 1967, पृष्ठ संख्या—90।
60 दि पायोनियर, वही, 19 मार्च, 1967, पृष्ठ संख्या—01।
61 दि पायोनियर, वही, 19 मार्च, 1967, पृष्ठ संख्या—01।
62 बी. के शर्मा : पोलिटिकल इन्स्टैबिलिटी इन इंडिया, न्यू देलही 1989, पृष्ठ सख्या—72।
63 बी. के. शर्मा : वही, पृष्ठ सख्या—72-74।
64 आर मोहन का अमृत प्रभात, हिन्दी दैनिक इलाहाबाद (साप्ताहिक परिशिष्ट) में प्रकाशित लेख, 27 जुलाई, 1997।

सघर्षपूर्ण था[65]। हेमवती नन्दन बहुगुणा इलाहाबाद के बारा विधान सभा क्षेत्र से चुनाव लड़े थे। इस समय बहुगुणा उत्तर प्रदेश कांग्रेस कमेटी के महामंत्री थे, संगठनात्मक जिम्मेदारियो के प्रति सदैव से सचष्ठ बहुगुणा ने पूरे प्रदेश को ही अपना चुनावी क्षेत्र समझा, अतः पूरे चुनाव काल में प्रदेश के विभिन्न जिलो और विधान सभाई क्षेत्रो मे कांग्रेसी उम्मीदवारो को जिताने के लिए बहुगुणा दौरा करते रहे और जन समर्थन जुटाते रहे[66]।

इलाहाबाद के बारा विधानसभा क्षेत्र में प्रमुख संघर्ष भारतीय क्रांतिदल के उम्मीदवार सर्वसुख सिह और बहुगुणा के बीच था। चुनाव के दौरान चरणसिह भी इस क्षेत्र में कई चुनावी सभाएं सम्बोधित कर चुके थे किन्तु यह कहना कठिन था कि उनका यह चुनावी दौरा बहुगुणा जैसे एक दिग्गज कांग्रेसी के विरुद्ध भारतीय क्रातिदल के उम्मीदवार को ज्यादा फायदा दे सकता है[67]। स्रोतो से पता चलता है कि इस चुनाव मे बहुगुणा की स्थिति पिछले चुनाव की अपेक्षा ज्यादा भिन्न नही थी। लेकिन `मुस्लिम मजलिस' के प्रति मुसलमानो के बढ़ते हुए आकर्षण के कारण कुछ कांग्रेसी वोट बैक में सेंघ लगती, ऐसा अनुमान था। दूसरी ओर यह भी ज्ञात होता है कि भारतीय क्राति दल के उम्मीदवारको पिछड़ी जाति का एकतरफा समर्थन नही मिल रहा था बल्कि इस समुदाय का एक बड़ा हिस्सा काग्रेस के पक्ष मे था[68]।

पूरे प्रात में चुनावी दौरा करने के बाद बहुगुणा चुनावके तीन-चार दिन पहले अपने बारा विधानसभा क्षेत्र मे पहुँचे थे। 8 फरवरी को चुनावी व्यवस्था का अवलोकन करते हुए इलाहाबाद शहर से 25 किलोमीटर दूर लगभग साढ़े तीन बजे जैसे ही बहुगुणा `नारी-बारी' स्थान पर पहुँचे, दुर्भाग्यवस उनकी गाड़ी दुर्घटनाग्रस्त हो गई। बहुगुणा गम्भीर रूप से घायल हो गये। गाड़ी म ड्राइवर के साथ छः लोग और बैठे थे, वे सभी घायल हुए। ड्राइवर तो दुर्घटनास्थल पर ही अचेतावस्था में पाया गया। बहुगुणा को स्वरूपरानी मडिकल अस्पताल इलाहाबाद में भर्ती किया गया[69]। उनके शारीरिक परीक्षण हेतु तत्काल लखनऊ से चिकित्सा विशेषज्ञ बुलाए गये। अस्पताल मे बहुगुणा की हालत बहुत गम्भीर थी, उनके बायें पॉव में चार जगह फ्रेक्चर तथा नाक से बड़ी मात्रा में रक्त स्राव हो चुका था। ज्ञातव्य है कि दूसरी रात्रि तक किसी भी शुभेक्ष को उनसे मिलने की अनुमति तक नही थी[70]। दूसरे ही दिन चुनाव हुआ। चुनाव के दौरान भारतीय क्रातिदल के समर्थको ने पूरे विधानसभा क्षेत्र मे बहुगुणा के दिवंगत होने की एक भ्रामक अफवाह फैलायी। इसका

---

65 नार्दन इण्डिया पत्रिका, अंग्रेजी दैनिक, इलाहाबाद 28 जनवरी, 1969, पृष्ठ संख्या—01।
66 कमला बहुगुणा, पूर्व सासद मे लिया गया साक्षात्कार।
67 नार्दन इण्डिया पत्रिका, अग्रेजी दैनिक, इलाहाबाद, 2 फरवरी, 1969, पृष्ठ संख्या—01,
68 नार्दन इण्डिया पत्रिका वही, पृष्ठ—सख्या—01।
69 नार्दन इण्डिया पत्रिका, 8 फरवरी, 1969, पृष्ठ संख्या—01।
70 नार्दन इण्डिया पत्रिका, वही, पृष्ठ सख्या—05।

प्रभाव न सिर्फ मतदाता पर पड़ा बल्कि बूथोपर तैनात वहुगुणा के प्रतिनिधि व कार्यकर्ता भी अपना संयम खो वैठे, फलस्वरूप जो जहाँ ही यह खबर सुना, अपनी जिम्मेदारी छोड़कर अपने नेता को देखने चल पड़ा[71]। परिणामस्वरूप यह चुनाव बहुगुणा के हाथ से निकल गया। बहुगुणा भारतीय क्रातिदल के उम्मीदवार सर्वसुख सिह मे 922 मतो के अन्तर से पराजित हुए। बहुगुणा की पराजय सम्भवत पूरे प्रदेश में सबसे ज्यादा चौकाने वाला चुनावी परिणाम था[72]।

मध्यावधि के इस चुनाव में किसी भी दल को पूर्ण बहुमत न प्राप्त हो सका। परन्तु कांग्रेस की स्थिति मे कुछ सुधार अवश्य हुआ। कांग्रेस को पिछले चुनाव की अपेक्षा इस चुनाव में 10 सीटें अधिक मिली। लगभग दो वर्षो तक कांग्रेस मरुस्थलीय स्थिति मे रहने के बाद पुनः सत्ता में वापस आयी। चन्द्रभानु गुप्त ने कुछ निर्दलीय विधायको के समर्थन से 26 फरवरी 1969 को कांग्रेस की सरकार बनायी[73]। आगे चलकर वर्ष के अन्त तक एक वहुत बड़ी समस्या का सामना करना पडा जब नवम्बर 1969 में भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस का राष्ट्रीय स्तर परविभाजन होकर दो फाड़ हो गये, काग्रेस (आर) और कांग्रेस (संगठन)। कमलापति त्रिपाठी जो उत्तर प्रदेश सरकार में उप मुख्यमत्री के पद पर आसीन थे, कांग्रेसी 'सिडीकेट' के नेतृत्व के विरुद्ध हो गये[74] और अपने 9 सहयोगियों के साथ इंदिरा गांधी की कांग्रेस मे शामिल होकर सरकार से पृथक हो गये। चन्द्रभानु गुप्त अल्पमत मे आकर त्यागपत्र दे दिये। महत्वाकांक्षी चरण सिह को अब पुन अच्छा मौका मिला। उन्होंने कांग्रेस (आर) के साथ मिलकर प्रदेश में दूसरी बार फिर साझा सरकार बना ली। किन्तु नियति का खेल कैसा विद्रूप रहा कि 8 माह बाद ही इसका पतन हो गया[75]। 2 अक्टूबर, 1970 को प्रदेश में एक बार फिर राष्ट्रपति शासन लागू कर दिया गया और विधान सभा निलम्बित कर दी गयी[76]।

71 कमला बहुगुणा से लिया गया साक्षात्कार।

72 नार्दन इण्डिया पत्रिका, 12 फरवरी, 1969, पृष्ठ संख्या—01।

73 बी के. शर्मा · पोलिटिकल इन्स्टैबिलिटी इन इडिया, वही, पृष्ठ संख्या—74।

74 बी के. शर्मा; वही, पृष्ठ संख्या—74-75।

75 आर. मोहन का अमृत प्रभात, हिन्दी दैनिक इलाहाबाद (साप्ताहिक परिशिष्ट) में प्रकाशित लेख, 27 जुलाई, 1997।

76 बी के शर्मा · पोलिटिकल इन्स्टैबिलिटी इन इण्डिया, वही, पृष्ठ संख्या—76।

राष्ट्रीय राजनीति और बहुगुणा

——अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी के महासचिव

1969 का वर्ष, भारतीय राजनीति मे राष्ट्रीय काग्रेस और हेमवती नन्दन बहुगुणा दोनो के लिए विशेष महत्वपूर्ण था। जहॉ एक तरफ अखिल भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस के इतिहास में नवीन मोड़ आया अर्थात् इसके विभाजन का वर्ष सिद्ध हुआ वही दूसरी तरफ इसी साल बहुगुणा का राष्ट्रीय राजनीति मे पदार्पण भी हुआ। वे राष्ट्रीय काग्रेस के महामत्री नियुक्त हुए। 3 मई, 1969 को राष्ट्रपति जाकिर हुसैन की मृत्यु के पश्चात् यह बात अचानक महत्वपूर्ण हो उठी कि अगला राष्ट्रपति कौन हो? इंदिरागाधी को लगा कि कांग्रेस के दिग्गज अपनी पसद का राष्ट्रपति उनपर थोपना चाहते हैं ताकि सिडीकेट (के० कामराज, एस० के पाटिल तथा निजलिगप्पा जैसे चोटी के काग्रेसी नेताओं का एक समूह) की कठपुतली बनकर काम करने के अलावा उनके सामने कोई चारा नही रहे[1]। पता नही यह डर सही था या नहीं, लेकिन प्रासंगिक बात यह है कि इदिरागांधी को लगा कि जो सारे उत्तर भारत मे हो रहा है, (उत्तर प्रदेश के साथ-साथ अन्य प्रदेशों में दलबदल द्वारा और कांग्रेसी सरकार बनाने का सिलसिला), वह किसी दिन दिल्ली में भी हो जाएगा, और तब वे कहीं की नही रहेगी, क्योकि दक्षिण और पश्चिम भारत के नेता भी उनसे बहुत खुश नहीं थे[2]।

काग्रेस संसदीय बोर्ड ने बगलौर के अधिवेशन मे 12 जुलाई, 1969 को दो के मुकाबले चार वोटो मे फैसला किया कि लोकसभा के स्पीकर संजीव रेड्डी को राष्ट्रपति पद के लिए काग्रेसी उम्मीदवार के रूप में नामजद किया जाय[3]। इंदिरागाधी इस फैसले से असहमत थीं। उन्होंने जगजीवन राम का नाम रखा लेकिन वह बहुमत को मंजूर नही हुआ क्योकि सिर्फ फखरुद्दीन अली अहमद ने उनका साथ दिया। इंदिरागाधी ने बोर्ड को इशारे में चेतावनी दे दी थी कि प्रधानमंत्री की मर्जी के खिलाफ राष्ट्रपति थोपना उचित नहीं होगा[4]। हिचकिचाते हुए उन्होने परम्परानुसार पार्टी द्वारा प्रस्तावित संजीव रेड्डी के समर्थन प्रपत्र पर हस्ताक्षर तो कर दिये लेकिन कुछ ही समय के बाद वराह वेकंट गिरि जो उपराष्ट्रपति होने के नाते उन दिनों कार्यवाहक राष्ट्रपति बने थे, को एक स्वतंत्रत उम्मीदवार के रूप में नामांकन दाखिल करने का आमंत्रण दे दिया[5]। फलत· सजीव रेड्डी और वी० वी० गिरि दोनो ने नामांकन भरा। चुनाव की तिथि 16 अगस्त घोषित थी। इस घटना के एक सप्ताह बाद इंदिरागांधी ने मोरार जी देसाई को उपप्रधानमंत्री पद से बर्खास्त कर दिया और

---

1 राजेन्द्र माथुर का नवभारत टाइम्स, हिन्दी दैनिक 'समाचार पत्र' लखनऊ में प्रकाशित लेख, 1 नवम्बर, 1984, पृष्ठ संख्या -04।

2 राजेन्द्र माथुर का नवभारत टाइम्स, में प्रकाशित लेख, वही।

3 खुशवंत सिंह : इन्दिरा गाधी, बढ़ते कदम, दिल्ली, 1979, पृष्ठ संख्या -24।

4 राजेन्द्र माथुर का नवभारत टाइम्स मे प्रकाशित लेख, वही, पृष्ठ सख्या -04।

5 राम गोपाल : इण्डिया अण्डर इन्दिरा, नई दिल्ली, 1986, पृष्ठ संख्या -15।

14 निजी बैको का राष्ट्रीयकरण कर दिया[6]। व्यापारिक बैको का राष्ट्रीयकरण इंदिरागांधी का एक साहसपूर्ण फैसला था। यह उनके 'दस सूत्रीय कार्यक्रम' की अपेक्षा कही अधिक अमूलगामी सिद्ध हुआ, क्योकि कार्यक्रम मे निजी बैको पर केवल सामाजिक नियन्त्रण स्थापित करने का प्राविधान था[7]।

देश की जनता मे इन्दिरागाधी के प्रति उत्साह की लहर उठना स्वाभाविक था। सारे बुद्धिजीवी भी उनके वामपन्थी झुकाव के कारण खुश थे। अगस्त, 1969 मे इंदिरागांधी ने एक दिन कहा कि कांग्रेस के सदस्यो को अपनी अन्तरात्मा के अनुसार राष्ट्रपति चुनाव मे वोट देना चाहिए। उन्होंने स्वयं कभी कही वक्तव्य दिया कि गिरि को जिताया जाय लेकिन सारे देश ने इसे सिण्डीकेट और इंदिरागांधी दोनों के महाभारत के रूप मे देखा[8]। यही नही बल्कि सारे विश्व की निगाहें आगामी भारत के राष्ट्रपति के चुनाव पर लगी थी।

उत्तर प्रदेश के कांग्रेसी सदस्य जिनकी इस चुनाव में निर्णायक भूमिका थी, वह मूलतः कांग्रेस सिर्डीकेट के पक्ष मे होते नजर आ रहे थे। प्रान्त में कांग्रेसियो का दो गुट था, जिनका नेतृत्व क्रमश कमलापति त्रिपाठी और चन्द्रभानु गुप्त कर रहे थे। स्रोतों से पता चलता है कि प्रदेश के इन शीर्षस्थ नेताओं ने अपने-अपने पक्ष के लोक सभा सदस्यों तथा विधान सभा सदस्यों को नीलम संजीव रेड्डी के पक्ष मे मतदान करने की अपील की थी[9]। उत्तर प्रदेश मे इकलौते काग्रेसी के रूप में प्रदेश कांग्रेस कमेटी के महामंत्री बहुगुणा इंदिरा गांधी के साथ थे। बहुगुणा विशेष तौर पर इंदिरागांधी के वामपन्थी झुकाव की ओर आकर्षित थे उनका मानना था कि यह संघर्ष मूलतः वामपन्थी और दक्षिणपन्थी विचारधाराओं के बीच है[10]। अस्तु वे घायल अवस्था में भी चुप न बैठ सकें। लखनऊ के बलरामपुर अस्पताल में पैरों पर प्लास्टर चढ़ाये बहुगुणा तत्कालीन राजनीति में अपने को सक्रिय रखे और इंदिरागांधी के आग्रह पर अपने स्वास्थ्य की चिन्ता किये बगैर वी० वी० गिरि का समर्थन जुटाने मे लगे रहे[11]। पूर्व अध्याय में उल्लेख किया जा चुका है कि पिछले उत्तर प्रदेश विधान सभा चुनाव मे बहुगुणा एक कार दुर्घटना में बुरी तरह घायल हो गये थे। इलाज हेतु कुछ दिन तक वे स्वरूप रानी मेडिकल अस्पताल, इलाहाबाद में भर्ती रहे तदुपरान्त लकनऊ के बलरामपुर अस्पताल में आ गये थे। बहुगुणा ने अपनी राजनैतिक कुशलता के बल पर प्रदेश में वी० वी० गिरि के

---

6 स्नेह माधुर का अमृत प्रभात, हिन्दी दैनिक समाचार पत्र, इलाहाबाद में प्रकाशित लेख, 3 नवम्बर, 1984, पृष्ठ संख्या -04।

7 सुरेन्द्र कुमार : इन्दिरागांधी : कल्पनाएँ और उपलब्धियाँ, प्रगति प्रकाशन, मास्को, सोवियत सघ, 1990, पृष्ठ संख्या - 313।

8 राजेन्द्र माथुर का नवभारत टाइम्स हिन्दी दैनिक समाचार पत्र मे प्रकाशित लेख, वही।

9 कमला बहुगुणा (पूर्व लोकसभा सदस्य) से लिया गया साक्षात्कार।

10 पी० डी० टण्डन (स्वतत्रता संग्राम सेनानी, पत्रकार एवं पूर्व विधान परिषद् सदस्य उत्तर प्रदेश) से लिया गया साक्षात्कार।

11 सलालुद्दीन उस्मान का बहुगुणा पर प्रकाशित स्मारिका में छपा लेख, मई, 1990, इलाहाबाद पृष्ठ संख्या -54।

विरुद्ध बह रही आधी को पलटने का प्रशसनीय प्रयास किया[12] और कमलापति त्रिपाठी को नीतिगत आधार पर अपने पक्ष मे कर लिया। 13 अगस्त को कमलापति त्रिपाठी और उनके गुट का समर्थन मिलते ही अचानक पूरे प्रदेश मे चुनाव का माहौल ही बदल गया[13]। अनन्तः 16 अगस्त को चुनाव हुआ जिसमें वी० वी० गिरि जीत गये। गौरतलब है कि गिरि के पक्ष में उत्तर प्रदेश का परिणाम विशेष महत्वपूर्ण सिद्ध हुआ। इतना ही नही बल्कि यह कहा जाय कि उत्तर प्रदेश के मतो से ही वी० वी० गिरि की विजय सुनिश्चित हुई तथा इदिरागाधी का शासन बिना अवरोध के आने वाले कुछ वर्षो तक के लिए सुरक्षित हो गया, समीचीन प्रतीत होता है। क्योंकि यह चुनाव उनके राजनैतिक अस्मिता के लिए बहुत बड़ी चुनौती थी। गिरि की पराजय के बाद उनका प्रधानमंत्री पद से इस्तीफा देना लगभग तय था[14]।

इसी घटना के फलस्वरूप कांग्रेस पार्टी का विभाजन हो गया, एक से दो दल बन गये—कांग्रेस (आर) और काग्रेस (स) एक तरफ थे पुराने धुरन्धर और उनके प्रभाव वाले दो राज्य गुजरात और मैसूर तथा दूसरी तरफ थी इदिरागांधी की काग्रेस, जिसे पार्लियामेन्ट में अपने प्रतिद्विन्दियों से कुछ ही अधिक स्थान प्राप्त थे, लेकिन गुजरात और मैसूर को छोड़कर कांग्रेस शासित शेष सभी राज्य उनका समर्थन कर रहे थे[15]। ज्ञात होता है कि पराजय के कारण बदले की भावना से उन्मुख होकर निजलिंगप्पा ने इंदिरागांधी और उनके अनुयायियो को पार्टी से निकाल दिया और राम सुभग सिंह समेत चार वरिष्ठ मंत्रियों ने उनके मंत्रिमंडल से त्यागपत्र भी दे दिये। इस प्रकार संसद में इंदिरागाधी का बहुमत समाप्त हो गया। उन्हें अपनी सरकार चलाने के लिए वामपन्थियो के साथ-साथ द्रमुक अकाली और भारतीय क्रांतिदल तक का सहयोग प्राप्त करना पड़ा[16] और इन्ही के सहारे इंदिरागांधी की अल्पसंख्यक सरकार 1971 के लोकसभा चुनाव तक चलती रही[17]।

काग्रेस के विभाजन के समय हेमवती नन्दन बहुगुणा की राजनीतिक तीक्ष्णता अतुलनीय थी। प्रारम्भ से ही प्रगतिशील और समाजवादी विचाराधारा से ओत-प्रोत बहुगुणा को इन्दिरागाधी का समाजवादी मूल्यों की ओर अग्रसर होना बहुत रास आया। बैकों के राष्ट्रीयकरण, राजाओं को प्रिवीपर्स देने की प्रथा को समाप्त करना तथा 'कैश' कार्यक्रमों के माध्यम से पूरे देश मे निर्माण कार्यो का जाल बिछा देना आदि ऐसे कार्यो ने इन्दिरागांधी की जनप्रियता में उत्तरोत्तर वृद्धि की। इससे बहुगुणा अछूते नहीं रहे, वह इसमें और गुणात्मक परिवर्तन लाने के पक्ष में थे और इसी दृष्टिकोण के तहत उन्होंने तत्कालीन समय में इन्दिरागांधी के पक्ष में

---

12 सलालुद्दीन उस्मान : वही।
13 नार्दन इण्डिया पत्रिका, अंग्रेजी दैनिक समाचार पत्र इलाहाबाद, 13 अगस्त, 1969, पृष्ठ संख्या -01।
14 सलालुद्दीन उस्मान का बहुगुणा पर प्रकाशित सारिका में छपा लेख, वही।
15 खुशवत सिह : इन्दिरा गांधी, बढ़ते कदम, दिल्ली, 1979, पृष्ठ संख्या 24-25।
16 खुशवंत सिह . वही, पृष्ठ संख्या -25।
17 राजेन्द्र माथुर का नवभारत टाइम्स मे प्रकाशित लेख, वही।

महत्वपूर्ण भूमिका निभाई[18]। इदिरागाधी ने 1969 में ही बहुगुणा को अखिल भारतीय काग्रेस कमेटी का महामंत्री नियुक्त कर दिया था। संगठनात्मक कार्यो की दक्षता मे बहुगुणा का कोई जवाव नही था। अव तक वह जिला एव प्रदेश स्तर पर कई सगठनात्मक पदो पर अपने दायित्व का निर्वहन करते हुए गहरा अनुभव प्राप्त कर चुके थे। राष्ट्रीय काग्रेस का महामत्री वनते ही वहुगुणा ने सगठनात्मक कार्यक्रमो की वागडोर अपने हाथ मे ले ली थी। विशेषता यह रही कि संगठनात्मक कार्यक्रमो मे वे मात्र इदिरागाधी की इच्छानुसार चलने वाले नही थे, सभी वातो और मचो मे किसी के प्रिय-अप्रिय का विचार किये विना वे अपनी राय प्रकट करते थे। किन्तु सैद्धान्तिक और वैचारिक आधार पर बहुगुणा ने इंदिरा गांधी का साथ जिम्मेदारी से निभाया और आगामी चुनावो मे काग्रेस को विजय की ओर ले गये[19]।

इदिरा गाधी ने लोकसभा के आम चुनाव को मार्च 1971 में, यानि निर्धारित समय से एक वर्ष पहले ही करवा दिया। इस दौरान उन्होंने अपनी सहनशक्ति और चतुराई का अद्भुत परिचय दिया। इदिरा गाधी ने वामपथियो, द्रमुक, मुस्लिम लीग और वग्ला कांग्रेस का समर्थन प्राप्त किया[20]। चुनाव की तैयारियो मे प्रतिपक्ष की पार्टियो ने एक महागठबन्धन अथवा 'ग्रैन्ड एलायन्स' कर लिया, जिसका नारा यह था कि इदिरागाधी सविधान और प्रजातत्र नष्ट कर रही है, अदालतो की आजादी समाप्त कर रही है तथा नैतिकता की परवाह नही कर रही, इसलिए उन्हे हटना जरूरी है। इंदिरा गांधी ने जवाव में 'गरीवी हटाओ' का नारा दिया[21]। वामपथी विचारधारा से ओत-प्रोत इदिरागांधी ने कहा था कि "मै एक समाजवादी होने के नाते देश की गरीबी मिटाना चाहती हूँ लेकिन दक्षिणपंथी विचारधारा के लोग मुझे ही मिटा देना चाहते है"[22]। अन्तत यह चुनावी माहौल इदिरागाधी के ही पक्ष मे गया। इस माहौल के निर्धारण में प्रमुख भूमिका निभाई उनकी पूर्व की कार्यान्वित योनजाए, जिनका जनता ने हृदय से स्वागत किया था। अर्थात् इस चुनाव मे इन्दिरा की लहर थी जिसने अद्भुत करिश्मा दिखाया। परिणामस्वरूप इदिरा गाधी की नीतियों के समर्थकों ने संसद मे दो-तिहाई सीटे प्राप्त की[23]। ज्ञातव्य है कि इस चुनाव में लोकसभा के लिए 525 स्थानों पर चुनाव लड़ा गया। उसमे से काग्रेस को 335 स्थान प्राप्त हुए[24]। मार्क्सवादी कम्युनिस्ट पार्टी को 24 स्थान मिले और वाकी विपक्षी अत्यन्त सोचनीय स्थिति में पहुँच गये। इंदिरा गाधी पुनः प्रधानमंत्री वनी, उन्होंने अपनी इस महान

---

18 दिनेश सिह (पूर्व मत्री भारत सरकार) का वहुगुणा पर प्रकाशित स्मारिका मे छपा संदेश, मई, 1990, इलाहावाद।

19 ए० नील लोहित दासन नाडर (पूर्व मत्री केरल सरकार) का वहुगुणा पर प्रकाशित स्मारिका में छपा लेख, पृष्ठ सख्या - 61-62।

20 खुशवत सिह इन्दिरा गांधी, वढ़ते कदम, दिल्ली, 1979, पृष्ठ संख्या -25।

21 गजेन्द्र माथुर का नवभारत टाइम्स, लखनऊ मे प्रकाशित लेख, वही,

22 राम गोपाल · इण्डिया अण्डर इन्दिरा, वही, पृष्ठ सख्या -04।

23 पाल० आर० व्रास दि न्यू कैम्ब्रिज हिस्ट्री आफ इण्डिया, (चतुर्थ खण्ड) हैदराबाद, 1990 पृष्ठ सख्या -39।

24 कमलापति त्रिपाठी . स्वतत्रता आन्दोलन और उसके बाद, दिल्ली, 1988, पृष्ठ सख्या -25।

विजय का भरपूर उपयोग देश और पार्टी को अपने मन-मुताबिक ढालने मे किया। सात मत्रियों को बर्खास्त कर दिया गया और सूचना व प्रसारण मत्रालय उन्होंने खुद अपने हाथ मे ले लिया। चार मुख्यमंत्रियों को भी हटा दिया गया क्योकि उन्होने इंदिरा गांधी का खुलकर समर्थन नही किया था। उन्होंने संविधान मे भी कई सशोधन किये। इन सशोधनो के द्वारा उन्होंने संसद के मूलभूत अधिकारों को भी बदलने का अधिकार दे दिया।[25]

———संचार मंत्री के रूप में

कांग्रेस के ऐतिहासिक विभाजन के बाद इंदिरा कांग्रेस के महामंत्री और एक महत्वपूर्ण राजनेता के रूप मे हेमवती नन्दन बहुगुणा ने तत्कालीन चुनाव में कांग्रेस की सफलता हेतु कड़ी मेहनत की थी और स्वतः इलाहाबाद संसदीय क्षेत्र से चुनकर पहली बार सांसद के रूप में दिल्ली पहुँचे। इंदिरा गांधी ने अपने मंत्रालय में उन्हे राज्य संचार मंत्री बनाया[26]। हलांकि केन्द्र सरकार का यह पद बहुगुणा की तत्कालीन राजनीतिक छवि और प्रतिष्ठा के अनुकूल नही था बल्कि उनके व्यक्तित्व को दबाने और कद को छोटा करने का एक सरल उपाय था। लेकिन बहुगुणा ने उक्त संदर्भ में बिना कुछ सोंचें-विचारे इस जिम्मेदारी का निर्वहन पूरी तन्मयता और लगन से किया, और अभी तक अप्रासंगिक रहे संचार विभाग की अर्थवत्ता को स्पष्ट करने में कोई कसर नही छोड़ा[27]।

सचार मंत्री के रूप मे बहुगुणा ने उल्लेखनीय कार्य किया था। ज्ञात होता है कि संचार सेवा के बहुमुखी विकास हेतु आधुनिक क्रिया-कलापों का श्रीगणेश उनके काल में ही सम्भव हुआ। टेलीफोन पद्धति मे गुणात्मक सुधार के साथ-साथ लम्बी दूरी के पी० सी० ओ० की कार्य प्रणाली में विशेष चुस्ती आयी। बड़े-बड़े शहरो के साथ-साथ दूर-दराज के क्षेत्रों और गाँवों तक इस सुविधा को पहुँचाने की योजना बनायी गयी[29]। 14 मार्च, 1973 को लोकसभा की कार्यवाही के दौरान अपने लिखित उत्तर में बहुगुणा ने बताया कि `श्रेणीगत स्थानों पर घाटा उठाकर पब्लिक काल आफिस (पी० सी० ओ०) खोले जा रहे हैं, बशर्ते की उनसे प्राप्त होने वाली अनुमानित आय सलाना आवर्ती खर्च से कम से कम 25 प्रतिशत हो। उप मंडल मुख्यालय, तहसील और उप तहसील मुख्यालय, सुदूर बस्तियॉ जहाँ 40 किमी० के भीतर कोई टेलीफोन एक्सचेंज न हो, पर्यटक केन्द्र जिनमें तीर्थ स्थान भी शामिल है, कृषि और सिंचाई योजनाओं के स्थल और

---

25 खुशवत सिंह : इन्दिरागांधी, बढ़ते कदम, वही, पृष्ठ संख्या -26।

26 ओंकार शरद : धर्मयुग, 22 अप्रैल, 1979 पृष्ठ संख्या -35।

27 कमला बहुगुणा से लिया गया साक्षात्कार।

28 ए० नील लोहित दासन नाडर (पूर्व मत्री केरल सरकार) का बहुगुणा पर प्रकाशित स्मारिका में छपा लेख, मई 1990, इलाहाबाद, पृष्ठ सख्या 62।

29 एच० एल० हैलन का बहुगुणा पर प्रकाशित स्मारिका में छपा लेख, वही, पृष्ठ संख्या 71-72।

टाउनशिप तथा आबादी के आधार पर कुछ अन्य स्थान भी इस प्रकार के श्रेणीगत स्थानों में आते है[30]। इस प्रकार से बहुगुणा ने दूरभाष जाल को देश भर मे फैलाने का प्रयास किया।

देश मे टेलीफोन कनेक्शनो मे अनवरत वृद्धि को देखते हुए टेलीफोन के उपकरणो के देश मे बनाए जाने पर बल देते हुए बहुगुणा ने बताया कि 'दूर संचार उपस्कर और सामान का उत्पादन मौजूदा सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमो मे काफी मात्रा मे किया जा रहा है। परन्तु स्वदेशी उत्पादन अभी भी देश की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए पर्याप्त नहीं है। वर्तमान आवश्यकताओं की यथासम्भव पूर्ति के लिए मौजूदा कारखानो की उत्पादन क्षमता बढ़ाने के अतिरिक्त नये केन्द्र स्थापित किये जा रहे हैं[31]। बहुगुणा के समय मे दूरभाष सेवा में तेजी से विकास तथा गुणवत्ता लाने के लिए सभी सकारात्मक कदम उठाये गये थे। पी० सी० ओ० में तकनीकी खराबी को मद्‌देनजर रखते हुए लाइनमैन की नियुक्तियॉ की गई। जिनके द्वारा सिक्का दान पात्र वाले चलित स्थानीय टेलीफोन की भी प्रतिदिन जॉच की जाती थी[32]। टेलीफोन एक्सचेज पद्धति मे विशेष गुणवत्ता लाने के लिए 1973 में तीन तकनीकी दल भारत से बाहर विदेशों में भेजा गया। मुख्य दल ने थाईलैण्ड, सिगापुर, आस्ट्रेलिया, ग्रीस, स्वीडन और बेल्जियम आदि देशों में भ्रमण किया। द्वितीय दल ने थाईलैण्ड, आस्ट्रेलिया तथा तृतीय दल ने ग्रीस, रोमानिया और यू० ए० आर० आदि देशों में जाकर विशेष तकनीकी अनुभव एव प्रशिक्षण प्राप्त किया[33]। टेलीफोन के डाइरेक्टरी के प्रकाशन की अवधि छः माह से बढ़ाकर एक वर्ष किया गया। इसके साथ-साथ इसका क्षेत्र भी काफी विस्तृत किया गया यानि देश के हर जिले की अलग-अलग प्रतियॉ प्रकाशित होने लगी। प्रकाशन की अवधि बढ़ाने के सन्दर्भ मे बहुगुणा का कहना था कि 'यह निर्णय देश में कागजो की कमी क कारण लिया गया है[34]।

संचारमंत्री के रूप में बहुगुणा के कार्य करने का ढंग बिल्कुल निराला था। लोगो की समस्याओं और कठिनाइयो से अवगत होते ही उसका हल तत्काल ढूढ़ना उनके लिए पल भर का काम था। इस सन्दर्भ में एक रोचक घटना इस प्रकार है—लखनऊ के फिरंगी महल में मरहूम मौलाना हाशिम मिया का संचार मंत्री बहुगुणा से भेट हुई। बहुगुणा जल्दी में थे, उन्होंने कहा मौलाना यदि बुरा न माने तो शाम को फोन पर मुझे याद दिला देंगे, आपसे वार्ता होगी। मौलाना ने कहा भाई बहुगुणा मेरे यहाँ फोन नहीं है, कई वर्षों से प्रार्थना पत्र दिया हुआ है। यह सुनते ही बहुगुणा ने गौर से मौलाना की तरफ देखा और विभाग के अधिकारी को बुलवाया। अधिकारी से उन्होंने कहा कि मौलाना का पता नोट कर लो, शाम को छः बजे इनके घर से

---

30 हेमवती नन्दन बहुगुणा : लोकसभा कार्यवाही (लिखित उत्तर) 14 मार्च, 1973, पृष्ठ संख्या 105।

31 हेमवती नन्दन बहुगुणा : लोकसभा कार्यवाही (लिखित उत्तर) 28 मार्च, 1973, पृष्ठ संख्या 125।

32 हेमवती नन्दन बहुगुणा : लोकसभा कार्यवाही (लिखित उत्तर) 25 अप्रैल, 1973, पृष्ठ संख्या 50।

33 हेमवती नन्दन बहुगुणा · लोकसभा कार्यवाही (लिखित उत्तर) 28 मार्च, 1973, पृष्ठ संख्या 93।

34 हेमवती नन्दन बहुगुणा : लोकसभा कार्यवाही (लिखित उत्तर) 7 मार्च, 1973, पृष्ठ संख्या 47।

मुझसे टेलीफोन पर बात करा देना मौलाना बार-बार कहते ही रह गये कि मेरे यहाँ फोन कहाँ है, परन्तु बहुगुणा अपनी बात खत्म करके चल चुके थे। उस अधिकारी ने मौलाना साहब से पूछा कि आपक का नम्बर क्या है. जब मौलाना ने पूरी बात बतायी तो उस अधिकारी के दिमाग मे पूरी बात आ चुकी थी। उसने तुरन्त विभाग को आदेश दिये कि किसी भी कीमत पर आज शाम छ. बजे तक टेलीफोन लग जाना चाहिए। अनन्त शाम को मौलाना से बहुगुणा की बात हुई[35]।

डाक सेवा के क्षेत्र को व्यापक बनाने तथा उसमें तीव्र गति देने हेतु बहुगुणा ने गुणात्मक परिवर्तन किये। ज्ञातव्य है कि पद ग्रहण करते समय ही उन्होंने घोषणा की थी—"मैं देश का प्रथम डाकिया हूँ"[36]। अपनी इस घोषणा के प्रति बहुगुणा सदैव सचेष्ट रहे और यही कारण है कि उनके कार्यकाल में डाक विभाग ने उत्तरोत्तर विकास की। उनके कार्यकाल मे कार्य मे अधिक वृद्धि के फलस्वरूप नगरीय डाकसेवा की कार्यक्षमता के ह्रास की रोकथाम के लिए तथा डाकघर की पंक्तियों में खड़े ग्राहकों के समय को बचाने के लिए नये समाधान के रूप मे यान्त्रिक काउन्टर खोले गये। काउन्टरों के कार्य का ढंग धीरे-धीरे इस प्रकार का किया गया कि ग्राहको को एक ही विनय के लिए एक से अधिक काउन्टर पर न जाना पड़े[37]। पिन महिता प्रणाली, जिसकी उपयोगिता पर संदेह किया गया था, ऐसा माना जाता था कि अशिक्षित तथा अर्धशिक्षित व्यक्तियो द्वारा इसके प्रयोग मे कठिनाई होगी। 1972 में एक लम्बी वार्ता के बाद बहुगुणा ने इस प्रणाली को आरम्भ किया। इस सन्दर्भ मे उनका कहना था कि 'जो लोग इस प्रणाली की तर्कसगति पर सदेह व्यक्त करते है वे डाक के कार्ड तथा अन्तर्देशीय पत्र के इतिहास को भूल बैठे है'[38]।

बहुगुणा का मानना था कि भारत जैसे देश मे डाकघर लिखित संदेशों को संचारित करने का एजेण्ट मात्र नही है बल्कि अल्प मुद्रा भेजने का प्रधान और व्यवहारिक रूप से एक ही साधन है। डाकघर देश के औसतन नागरिक की अल्प बचत को गतिशील करता है, जिसका कुछ भाग पंचवर्षीय योजनाओं मे लगाया जाता है। ऑकड़े प्रस्तुत करते हुए उन्होने एक स्थान पर लिखा है कि 'देश के 1,11,682 डाकघरों में एक लाख से अधिक डाकघर बचत योजना सम्बन्धित कार्य करते है। इस समय डाक से बचत बैंक मे लगभग दो करोड पचास लाख खाते है, आज कुल जमा राशि लगभग 2,444 करोड़ रुपये की है। एक प्रकार से कहा जा सकता है देश मे डाकघर सबसे बड़ा बैंक है'[39]।

---

35 ए० जेड० रहमान (पूर्व निजी सचिव-हेमवती नन्दन बहुगुणा) का लेख, 25 अप्रैल, 1990, पृष्ठ संख्या 3 (बहुगुणा के आवासीय दस्तावेजो से प्राप्त)।

36 दिल्ली दूरदर्शण द्वारा प्रसारित हेमवती नन्दन बहुगुणा पर वत्त चित्र, 25 अप्रैल, 1998, 9 बजे पूर्वान्ह, निर्देशक, सुभाष धूलिया।

37 हेमवती नन्दन बहुगुणा का 'आज, हिन्दी दैनिक समाचार पत्र, वाराणसी मे प्रकाशित लेख, "भारत में डाकसेवा की प्रगति के 25 वर्ष" 20 फरवरी, 1973, पृष्ठ सख्या 5।

38 हेमवती नन्दन बहुगुणा का 'आज' हिन्दी दैनिक समाचार पत्र मे प्रकाशित लेख, वही।

39 हेमवती नन्दन बहुगुणा का 'आज' हिन्दी दैनिक समाचार पत्र मे प्रकाशित लेख, वही, पृष्ठ संख्या 2।

देश के सामाजिक ढाँचे को मद्दे नजर रखते हुए संचार मंत्री ने अपना ध्यान विशेष रूप से ग्रामीण डाक जाल के विस्तार की ओर लगाया था। डाकघर वहीं नही खोले गये जहाँ आर्थिक रूप से उचित था बल्कि वहाँ भी खोले गये जहाँ कोई आर्थिक लाभ न होते हुए भी अधिक से अधिक ग्रामीण लोगो को लाभ हो[40]। 7 मार्च, 1973 को लोकसभा की कार्यवाही के दौरान बहुगुणा ने अपने एक लिखित उत्तर में बताया कि 'पाँचवी पचवर्षीय योजना मे 31 हजार नये डाकघर की योजना प्रस्तावित है, जिनमें 29 हजार डाकघर खोलने की योजना गाँवो मे है जो हर ग्राम पचायत में एक दूसरे की दूरी लगभग 2 मील के अन्तर मे होगी। डाकघर खोलने का यह लक्ष्य देश के विभिन्न प्रान्तों मे होगा'[41]। इसके साथ-साथ संचार मंत्री के रूप में बहुगुणा अपने विभागीय कर्मचारियो के प्रति भी सदैव धनात्मक दृष्टिकोण रखते थे। उनके वेतन-भत्ते के अलावा उनकी आवासीय समस्या पर भी गहराई से विचार करते थे। बहुगुणा का मानना था कि कर्मचारियो मे ऊपजी समस्याये उनके उत्तरदायित्व की भावना के विकास में बाधक हैं। ज्ञात होता है कि उन्होंने पाँचवे पचवर्षीय योजना के तहत लगभग 60,000 आवासीय कमरे बनवाने की घोषणा की थी[42]।

40 वही, पृष्ठ संख्या 7।

41 हेमवती नन्दन बहुगुणा : लोकसभा कार्यवाही (लिखित उत्तर) 7 मार्च, 1973, पृष्ठ संख्या 98।

42 हेमवती नन्दन बहुगुणा : लोकसभा कार्यवाही (लिखित उत्तर) वही, पृष्ठ संख्या 120।

मुख्यमंत्रित्व काल

1973 के अन्त मे भारत के राजनैतिक इतिहास मे एक नया मोड़ आया। उत्तर प्रदेश में एक ओर जहाँ पी० ए० सी० और पुलिस के विद्रोह ने शासन के समक्ष कठिन चुनौतियाँ खड़ी कर दी वही दूसरी ओर पूरे प्रान्त मे हडताल, प्रदर्शन, धरना, तोडफोड व आगजनी का भीषण माहौल बन चुका था। इन पर अकुश लगाने मे प्रशासन अक्षम ही नही बल्कि धाराशायी हो चुका था। इन्ही परिस्थितियो मे प्रदेश के मुख्यमन्त्री कमलापति त्रिपाठी ने लज्जावश अपने पद से त्यागपत्र दे दिया[1]। अपने त्यागपत्र मे पं० कमलापति ने लिखा कि ''मेरा इस्तीफा मजूर किया जाय और प्रदेश में राष्ट्रपति शासन लागू कर दिया जाय। पी० ए० सी० विद्रोह के फलस्वरूप प्रदेश की स्थिति डॉवाडोल हो गई है, राष्ट्रपति शासन कर देने से ही प्रदेश का कल्याण है और प्रदेश के हित की रक्षा का सारा उत्तरदायित्व गवर्नर को दे दिया जाय''[2]। कमलापति त्रिपाठी का इस्तीफा मंजूर हुआ और उत्तर प्रदेश मे राष्ट्रपति शासन भी लागू हो गया। लेकिन यह शासन कब तक चलता? प्रदेश मे छ: महीने के अन्तराल में ही विधानसभा के चुनाव सुनिश्चित थे और कांग्रेस की छवि पूर्णत: धूमिल हो चुकी थी। ऐसे मे राष्ट्रपति शासन के दौरान प्रदेश के विधानसभा चुनाव में कांग्रेस के बिल्कुल साफ हो जाने की आशंका नजर आ रही थी। स्वाभाविक तौर पर यथाशीघ्र विकल्प के रूप में नये मुख्यमत्री की नियुक्ति अपरिहार्य थी। फलतः प्रदेशके इस संकटकालीन दौर में हेमवती नन्दन बहुगुणा ही मुख्यमत्री के रूप मे उचित समझे गये तथापि उन्हें ही इस जलते हुए प्रान्त की बागडोर सौंपी गई[3]।

दो वर्ष पूर्व यानि 1971 में बहुगुणा राष्ट्रीय राजनीति के शीर्षस्थ नेताओं की पंक्ति में आ चुके थे, कांग्रेस की जीत मे उनकी बहुत बड़ी भूमिका थी। फिर भी बहुगुणा को कांग्रेस हाई कमान ने केन्द्रीय कैबिनेट के योग्य नहीं समझा, राज्य संचार मंत्री बनाया था। लेकिन 1973 के अन्त तक जब उत्तर प्रदेश जैसे विशाल प्रान्त मे प्रशासनिक और आर्थिक अव्यवस्था के चलते हाहाकार मच गया तथा पूरे प्रदेश के हाथ से निकल जाने की नौबत आ गई, तो बहुगुणा को मुख्यमंत्री बनाकर भेजा गया, एक विचारणीय विषय है। स्रोतो से पता चलता है कि बहुगुणा की राजनीतिक कुशलता एवं सांगठनिक क्षमता प्रधानमंत्री इंदिरा गाधी को 1969 में ही खटकने लगी थी। वह इस बात के लिए तैयार नहीं थीं कि बहुगुणा का हौसला बहुत बढ़ने पाये। वह बहुगुणा के बारे में बहुत कुछ वैसा ही अनुभव करती थीं जैसा कि कामराज उस समय इंदिरा गांधी के बारे मे अनुभव करते थे जब उन्होंने उनको प्रधानमंत्री बनने में सहायता दी थी। 1969 में कांग्रेस के बँटवारे के बाद इदिरा गांधी चाहती थीं कि बहुगुणा केन्द्रीय संगठन में सेक्रेट्री का पद छोड़कर

---

1 दि फाइनेन्शियल एक्सप्रेस अंग्रेजी दैनिक, समाचार पत्र, बाम्बे, 27 अक्टूबर, 1973, पृष्ठ संख्या- 1।

2 कमला पति त्रिपाठी : स्वतत्रता आन्दोलन और उसके बाद, दिल्ली, 1988, पृष्ठ संख्या- 254।

3 दिल्ली दूरदर्शन द्वारा प्रसारित हेमवती नन्दन बहुगुणा पर वृत्त चित्र, 25 अप्रैल, 1998, पूर्वान्ह 9 बजे।

उत्तर प्रदेश वापस चले जाए, किन्तु काग्रेस के तत्कालीन अध्यक्ष जगजीवन राम ने घोषणा कर दी कि बहुगुणा अपने उसी पद पर बरकरार रहेगे। इस घोषणा के बाद इंदिरा गांधी का चिढ़ जाना स्वाभाविक था। शायद इसीलिए उन्होने अपने केन्द्रीय मन्त्रालय मे बहुगुणा के कद को छोटा करने के लिए राज्यमंत्री का ही दर्जा दिया[4]। 1973 का साल खत्म होते-होते उत्तर प्रदेश मे कमलापति त्रिपाठी की लहर बिल्कुल उत्तर चुकी थी। उनके बेटे के खिलाफ तरह-तरह की शिकायते थीं और लोगो मे आम असंतोष था, नये चुनाव होने थे। तथापि विकल्प के रूप मे धनात्मक तलाश जरूरी हो गयी[5]। ऐसा प्रतीत होता है कि तत्कालीन समय मे बहुगुणा की राजनीतिक प्रतिभा को प्रदेश की आवश्यकता मानी गयी और आगामी चुनाव को मद्देनजर रखते हुए उनकी संगठनात्मक क्षमता का उपयोग कांग्रेसी हित मे जरूरी समझा गया[6]।

बहुगुणा का मानवतावादी समग्र और सार्वभौमिक दृष्टिकोण अब तक पूरे देश व समाज को समर्पित हो चुका था। वह राष्ट्रीय राजनीति और केन्द्रीय मंत्रिमण्डल से हटकर उत्तर प्रदेश नहीं आना चाहते थे और न ही मुख्यमत्री भी बनना चाहते थे। उमा वासुदेद से एक साक्षात्कार में उन्होंने स्पष्ट शब्दों में कहा था कि ''मै उत्तर प्रदेश कभी जाना ही नही चाहता था, मुख्यमंत्री की हैसियत से भी नही''[7]। किन्तु पता चलता है कि सजय गांधी का उस समय बढ़ता हुआ प्रभाव इस परिप्रेक्ष्य मे विशेष प्रासंगिक हुआ। अब तक संजय गाधी ने मन्त्रियो के बीच अपनी धाक जमाना शुरू कर दिया था, जिसका मतलब यह है कि बहुगुणा के दिल्ली से हटाये जाने की एक वजह यह भी थी कि संजय उनसे नाराज थे। नाराजगी का कारण यूँ था— सचार मत्री के रूप मे बहुगुणा ने विभाग में सबके लिए यह आदेश जारी कर दिया था कि जो भी दिल्ली मे दस साल से ज्यादा हो उसे यहाँ से बदलकर कहीं और भेज दिया जाय। इस बार की चोट संजय के एक इंजीनियर दोस्त पर पड़ती थी; प्रधानमंत्री का बेटा चाहता था कि उसका दोस्त दिल्ली में ही रहे। बहुगुणा ने कहा कि वह ऐसा खुला पक्षपात नहीं कर सकते और उस इंजीनियर को अन्ततः दिल्ली से जाना पड़ा। जैसे ही बहुगुणा ने मंत्रालय छोड़ा वह फिर दिल्ली वापस आ गया[8]।

बहुगुणा, मुख्यमंत्री कैसे और किन परिस्थितियों मे बने, इस घटना की चर्चा करना भी विशेष प्रासगिक है। पूर्व मुख्यमंत्री पं० कमलापति त्रिपाठी सत्ता की बागडोर को पुनः अपने पास रखना चाहते थे। इस्तीफा लेते समय इंदिरा गाधी ने उनसे यह वायदा किया था कि—''तीन चार महीने बाद स्थिति अनुकूल होते ही राष्ट्रपति शासन समाप्त कर दिया जाएगा और आप पुनः मुख्यमंत्री बन जायेंगे। मेरे पास आपके

---

4 उमा वसुदेव · इंदिरागाधी के दो चेहरे अनुवादक-मधुसूदन, नई दिल्ली, 1977, पृष्ठ संख्या- 24।

5 उमा वासुदेव . वही, पृष्ठ संख्या- 25।

6 पी० डी० टण्डन (स्वतत्रता संग्राम सेनानी एवं पूर्व विधान परिषद् सदस्य, उत्तर प्रदेश) से लिया गया साक्षात्कार।

7 उमा वासुदेव इंदिरागांधी के दो चेहरे, वही, पृष्ठ संख्या- 26।

8 उमा वासुदेव · वही, पृष्ठ संख्या- 26।

सिवाय कोई दूसरा आदमी नहीं है।"[9] इसी वायदे के अनुसार प० कमलापति ने छः महीने के राष्ट्रपति शासन के बाद प्रदेश मे सत्ता की पुर्नप्राप्ति हेतु जोरदार प्रयत्न शुरू कर दिये और कांग्रेस हाई कमान का विश्वास भी प्राप्त कर लिया[10]। काग्रेस हाई कमान ने उत्तर प्रदेश मे काग्रेसी विधानसभा दल के नेतृत्व में किसी भी प्रकार म परिवर्तन न करने का निर्णय ले लिया और कमलापति त्रिपाठी को पुन एक नये लोकप्रिय मत्रालय के गठन की सस्तुति भी दे दी[11]। यद्यपि मुख्यमत्री पद की पुर्नप्राप्ति कमलापति के राजनीतिक अस्मिता के लिए अत्यधिक महत्वपूर्ण थी लेकिन तत्कालीन समय में जनता एव समाचार माध्यमों द्वारा उनके प्रति की जा रही आलोचनात्मक प्रतिक्रियाये प्रदेश के आगामी चुनावी दगल मे कांग्रेस के लिए बहुत बड़ी चुनौती थी[12]। दूसरी तरफ बहुगुणा की प्रदेश की जनता के प्रति आस्था, काग्रेस जनो में मजबूत पकड तथा गतिशील नेतृत्व ने उनकी लोकप्रियता मे बहुत अधिक वृद्धि कर दी थी। ऐसा माना जा रहा था कि इस राजनैतिक सकट का मुकाबला केवल बहुगुणा ही कर सकते है[13]।

इसी सन्दर्भ मे प्रधानमत्री आवास पर लगातार मीटिगे चल रही थी। सुझाव भी बहुत रखे गये परन्तु यशपाल कपूर के सुझाव परिस्थितियो के मुताबिक काफी दमदार थे। उन्होने प्रधानमत्री से कहा—``अगर आप कमलापति त्रिपाठी को वहाँ रखेगी तो हम जीत नहीं सकते, इसलिए उचित यही होगा कि मुख्यमत्री बहुगुणा को बनाया जाय।" इस पर इदिरा गांधी की टिप्पणी थी ``तुम तो जानते हो कि बहुगुणा किस तरह के आदमी है, कोई नही कह सकता कि आगे चलकर वह क्या कर बैठे"[14]। यानि प्रधानमत्री के अन्दर बहुगुणा के प्रति वही दृष्टिकोण छाया हुआ था जो 1969 मे कांग्रेस के विभाजन के बाद अचानक उनके मस्तिष्क मे भर गया था। दूसरी ओर वह कमलापति त्रिपाठी को यह भी कह चुकी थी कि `आप अपनी सरकार बना लीजिए और मत्रिमंडल की सूची हेतु शंकरदयाल शर्मा से अनुमति ले लीजिए[15]। शंकरदयाल शर्मा की सलाह से बने मत्रिमडल की घोषणा हो इसके पहले यशपाल कपूर ने प्रधानमंत्रीके दिमाग मे एक ऐसे सशय का बीज बो दिया जिसकी वजह से पूरा नक्शा ही बुनियादी तौर पर बदल गया। यशपाल कपूर ने इदिरा गाधी को एक छोटा-सा परचा लिखा—``कमलापति त्रिपाठी मुख्यमत्री बन जायेगे, लेकिन जब वह अभी आपकी बात नही मानते तो आगे चलकर तो न जाने क्या करेगे?"[16] इसके उपरान्त ही स्थिति बिल्कुल

---

9 कमलापति त्रिपाठी स्वतत्रता आन्दोलन और उसके बाद, 1988, दिल्ली, पृष्ठ संख्या- 255।

10 दि फाइनेन्शियल एक्सप्रेस, अग्रेजी दैनिक समाचारपत्र, बाम्बे, 20 अक्टूबर, 1973, पृष्ठ संख्या- 3।

11 दि फाइनेन्शियल एक्सप्रेस, वही, 26 अक्टूबर, 1973, पृष्ठ संख्या- 1।

12 दि फाइनेन्शियल एक्सप्रेस, वही, 20 अक्टूबर, 1973, पृष्ठ सख्या- 3।

13 दि फाइनेन्शियल एक्सप्रेस, वही।

14 उमा वासुदेव . इन्दिरागाधी के दो चेहरे, वही, पृष्ठ सख्या- 25।

15. कमला पति त्रिपाठी स्वतत्रता आन्दोलन और उसके बाद, वही, पृष्ठ संख्या- 257।

16 उमा वासुदेव . इदिरागाधी के दो चेहरे, वही, पृष्ठ सख्या- 26-27।

साफ हो गई। अन्तत कमलापति त्रिपाठी अथक प्रयासों के बावजूद सत्ता की पुर्नप्राप्ति में असफल हुए और हेमवती नन्दन बहुगुणा जिनका उत्तर प्रदेश कांग्रेस की अध्यक्षा राजेन्द्र कुमारी बाजपेयी के द्वारा खुले आम विरोध हो रहा था, अपनी जनता मे मजबूत पकड़, लोकप्रियता और अजूबी सगटनात्मक क्षमता के बल पर मुख्यमत्री चुने गये[17]।

इस प्रकार उत्तर प्रदेश में पॉच माह से चल रहे राष्ट्रपति शासन का अन्त हुआ। बहुगुणा ने 25 मंत्रिमडर्लाय सदस्यों के साथ अपनी सरकार बनायी, जिसमें 15 कैबिनेट मंत्री, 11 राज्यमंत्री तथा 9 उपमंत्री नियुक्त हुए। बहुगुणा के मंत्रिमंडल में अल्पसंख्यक, हरिजन तथा पिछड़े वर्ग के लोगों को भी प्रतिनिधित्व दिया गया। यह प्रतिनिधित्व रीजनल एवं डिवीजनल स्तर पर भी सुनिश्चित किया गया। मंत्रिमंडल के सतुलित ढॉचे मे क्रमश· छः मुसलमान, पॉच हरिजन, एक सिक्ख और पिछड़े वर्ग के लगभग सात सदस्य शामिल थे[18]। वस्तुत उत्तर प्रदेश के इतिहास में हर वर्ग के प्रतिनिधित्व का यह पहला प्रयोग था।

बहुगुणा के लिए मुख्यमंत्री बनना तो सरल था किन्तु उसका निर्वहन करना कठिन लग रहा था। प्रदेश में चारो ओर से अनशन-प्रदर्शन, हड़ताल व तोड़-फोड़ की आंधी बह रही थी। दो माह के बाद ही विधानसभा के चुनाव होने थे। कांग्रेस की छवि प्रदेश के जनमानस में बहुत अच्छी नहीं थी तथा सम्पूर्ण राजनीति पर सकट कालीन कुँहरा छाया हुआ था। बहुगुणा के लिए यह कठोर परीक्षा का काल था[19]। स्वाभाविक तौर पर यह चुनौतीपूर्ण काल उनकी अग्रिम राजनीति का निर्धारक पहलू भी था। ज्ञात होता है कि सकट की इस घड़ी में बहुगुणा ने बड़े ही धैर्य एवं सूझ-बूझ से काम लिया और अपनी राजनीतिक प्रवीणता के पूर्व अनुभवो के आधार पर उन्होंने समस्याओं का निराकरण आपसी विचार-विमर्श के तहत शुरू किया[20]। बहुगुणा ने पुलिस तथा पी० ए० सी० के उग्र दृष्टि का शात करके उनमे अनुशासन व देशभक्ति की भावना भरने की चेष्टा की तथा आगामी मध्यावधि चुनाव के लिए कांग्रेस को पुनः सगठित करने मे जुट गये[21]। इतना ही नही बल्कि उन्होने दलित वर्ग, अल्पसंख्यक वर्ग तथा भूमिहीनों पर एक माह के अन्दर ही एक मसीहा के रूप में अमिट छाप छोड़ी[22]।

मुख्यमंत्री बनने के एक माह बाद ही प्रदेश मे कानून और व्यवस्था के बुनियादी ढॉचे को पुर्ननिर्मित करने एव व्याप्त भ्रष्टाचार से मुक्ति पाने के लिए बहुगुणा ने प्रान्त के 18 आरोपित अधिकारियों को निलम्वित कर दिया, जिनमें 11 राजपत्रित अधिकारी तथा एक पुलिस विभाग के डी० आई० जी० भी शामिल थे।

---

17 दि फाइनेन्शियल एक्सप्रेस, वही, 11 नवम्बर, 1973, पृष्ठ संख्या- 4।
18 दि फाइनेन्शियल एक्सप्रेस, वही, 21 नवम्बर, 1973 पृष्ठ संख्या- 4।
19 दिल्ली दूरदर्शन द्वारा प्रसारित बहुगुणा पर वृत्तचित्र, वही।
20 दिल्ली दूरदर्शन द्वारा प्रसारित बहुगुणा पर वृत्तचित्र, वही।
21 सलालुद्दीन उस्मान · बहुगुणा पर प्रकाशित स्मारिका में छपा लेख, मई, 1990, इलाहाबाद, पृष्ठ संख्या- 54।
22 योगेश्वर तिवारी : बहुगुणा पर प्रकाशित स्मारिका मे छपा लेखा, वही, पृष्ठ संख्या- 2।

इसके अलावा कुछ अन्य अधिकारी जो भ्रष्टाचार के घेरे मे सम्भावित थे, के विरुद्ध भी कड़ी जॉच बैठाने का आदेश दिया गया[23]। परिणामस्वरूप शीघ्र ही प्रदेश का यह विकसित रूप उनकी कार्यकुशलता तथा प्रशासनिक क्षमता का प्रमाणिक चिन्ह बन गया[24]। उत्तर प्रदेश के शासन के प्रति जनता मे जो निराशा के भाव बने थे, धीरे-धीरे छटने लगे तथा चारो ओर से उठने वाले आन्दोलन के स्वर दब से गये। ऐसा प्रतीत होता है कि तत्कालीन समय मे अध्यापक, छात्र, कर्मचारी तथा मजदूर आदि सभी मे बहुगुणा की लोकप्रियता बेमिशाल हो गई थी[25]।

फरवरी 1974 मे विधानसभा का चुनाव हुआ। अपनी राजनीतिक प्रवीणता का परिचय देते हुए बहुगुणा ने केरल तथा पश्चिम बंगाल में कांग्रेस और सी० पी० आई० के गठबन्धन के आधार पर उत्तर प्रदेश मे भी पहली बार सी० पी० आई० के साथ चुनावी समझौता किया। उन्होंने विधानसभा के 425 सीटो मे 403 पर अपने प्रत्याशी खडे किये और 22 सीटो पर सी० पी० आई० के उम्मीदवारो को निमंत्रण दिया। ससद सदस्य के रूप मे बहुगुणा स्वय इलाहाबाद के बारा विधानसभा क्षेत्र से चुनाव लड़े[26]। उत्तर प्रदेश के इस विधानसभा चुनाव मे बहुगुणा की लहर थी। वे आश्वस्थ थे कि काग्रेस बड़े बहुमत से विजयी होगी। चुनाव को निष्पक्ष और शान्तिपूर्ण रूप देने केलिए बहुगुणा ने व्यापक सुरक्षा व्यवस्था के लिए आदेश दिये थे। चुनावी जनसभाओं तथा मतदान केन्द्रो पर विरोधी दलो द्वारा दुष्प्रक्रिया के षड्यत्र को नाकाम करने के लिए प्रशासन द्वारा कडी चौकसी का पुख्ता इतजाम किया गया था। इसी सिलसिले में मेरठ, अलीगढ़, आजमगढ़, वाराणसी, कानपुर, इलाहाबाद, लखनऊ और शाहजहॉ‌पुर जैसे प्रदेश के लगभग 21 जनपदो को सवेदनशील घोषित किया गया। इन जनपदो में प्रशासनिक व्यवस्था को चुस्त-दुरुस्त रखने के लिए लगभग 400 से अधिक वायरलेस तथा टेलीप्रिंटर मशीने लगाई गई तथा बड़ी मात्रा में पुलिस बल को तैनात किया गया। मतदान के दिन पूरे प्रदेश मे लगभग दो लाख पुलिस की व्यवस्था थी, जिनमें पी० ए० सी० तथा सी० आर० पी० के लोग भी शामिल थे[27]।

विधानसभा के इस चुनाव मे यद्यपि प्रदेश के प्रमुख कांग्रेसी उमाशकर दीक्षित, कमलापति त्रिपाठी, हेमवती नन्दन बहुगुणा तथा चन्द्रजीत यादव आदि की पारम्परिक गुटवाजी स्पष्ट नहीं होती है, परन्तु यह जरूर पता चलता है कि उमाशंकर दीक्षित सरीखे कई कांग्रेसियों का जोरदार समर्थन बहुगुणा गुट को मिल रहा था, इस आशा के साथ कि चुनाव के बाद बहुगुणा ही मुख्यमंत्री होगे[28] और हुआ भी यही। चुनाव में

---

23 दि स्टेट्स मैन, अग्रेजी दैनिक समाचार पत्र, दिल्ली, 12 जनवरी, 1974, पृष्ठ सख्या- 3।
24 योगेश्वर तिवारी बहुगुणा पर प्रकाशित स्मारिका मे छपा लेख, वही, पृष्ठ सख्या- 2।
25 दिल्ली दूरदर्शन द्वारा प्रसारित बहुगुणा पर वृत्त चित्र, वही।
26 दि स्टेट्स मैन, अग्रेजी दैनिक समाचार पत्र, वही, 20 जनवरी, 1974, पृष्ठ संख्या- 1।
27 दि स्टेट्स मैन, वही, 8 फरवरी, 1974, पृष्ठ संख्या- 5।
28 दि स्टेट्स मैन, वही, 9 जनवरी, 1974, पृष्ठ सख्या- 1।

बहुगुणा को आशातीत सफलता प्राप्त हुई और कांग्रेस बड़े बहुमत से विजयी हुई[29]। तदुपरान्त राष्ट्रीय काग्रेस के महामत्री चन्द्रशेखर और चन्द्रजीत यादव की उपस्थिति में बहुगुणा उत्तर प्रदेश काग्रेस विधामण्डल दल के सर्वमम्मति मे नेता चुन लिये गये[30]।

बड़े बहुमत मे विजयोपरान्त बहुगुणा पुनः उत्तर प्रदेश के मुख्यमत्री बने। इस दौरान उन्होंने अपनी प्रशासनिक कुशलता को सिद्ध करने मे कोई कसर नही छोड़ी और यही कारण है कि उनके शासनकाल मे प्रदेश साम्प्रदायिक दंगो से पूरी तरह मुक्त रहा[31] तथा कोई भी विद्यार्थी या कर्मचारी लाठी-गोली का शिकार न हो पाया[32]। मुख्यमंत्री बनते ही बहुगुणा ने स्पष्ट घोषणा कर दी थी कि यदि किसी भी जिले में दंगा होता है तो वहॉ के जिलाधिकारी और पुलिस कप्तान को ही जिम्मेदार ठहराया जायेगा। जिसका परिणाम यह हुआ कि हर जिले की प्रशासनिक व्यवस्था चुस्त-दुरुस्त हो गयी थी[33]। बहुगुणा हिंसा और आन्दोलन से सदैव सजग भी रहते थे। 24 जून, 1974 को विधानसभा में बोलते हुए उन्होंन कहा था—``मुझे खुशी है कि फिलहाल उत्तर प्रदेश में शाति और व्यवस्था है। लेकिन रह-रहकर मान्यवर, भाषणों में अखबारों में चर्चा सुनता हूँ—कभी हिसात्मक प्रवृत्ति आगे बढ़ने की, कभी सुनता हूँ आन्दोलन करने की। हर उचित आन्दोलन का स्थान है जनतंत्र मे, लेकिन जनतंत्र को समाप्त करने की कुचेष्टा को उत्तर प्रदेश में हम पनपने नहीं देंगे, खड़े नही होने देगे, रहने नही देगे। इस कुचक्र से प्रदेश को बचाना है, भविष्य को बचाना है।"[34]

बहुगुणा ने इसी प्रकार राजकीय कर्मचारियों से कहा कि वे अपनी समस्याओं को राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य मे देखें और अपने थोड़े तथा संकुचित व्यक्तिगत लाभ के लिए प्रेरित न हों। यद्यपि हड़ताल करना उनका अधिकार है जिसकी मै भी कद्र करता हूँ लेकिन यह नही कि वे अभद्र और असंवैधानिक हड़ताल करें जो हिसात्मक आन्दोलन का रूप ले ले। किसी संगठित टुकड़ी के द्वारा अनुशासन हीनता का काम उसी टुकड़ी के लिए बहुत बड़ा अपराध साबित होता है और जनता की आंकलन दृष्टि में उसे नीचा कर देता है। फलतः यह जनतत्र को कभी भी मजबूत नहीं कर सकता किन्तु स्वस्थ और शक्तिशाली ट्रेड यूनियन के विकास के लिए जनतंत्र का मजबूत होना अपरिहार्य है[35]। बहुगुणा अपनी राजनीति के शुरूआतिक दौर में कर्मचारी संघो मे सम्बद्ध होने के कारण कर्मचारियों के प्रति बड़ी आस्था रखते थे एवं उनके हितों का सदैव ध्यान रखते

---

29 दि स्टेट्स मैन, वही, 1 मार्च, 1974, पृष्ठ सख्या- 1।

30 दि स्टेट्स मैन, वही, 7 मार्च, 1974, पृष्ठ सख्या- 1।

31 सलालुद्दीन उस्मान : बहुगुणा पर प्रकाशित स्मारिका में छपा लेखा, वही, पृष्ठ संख्या- 54।

32 ए० जेड० रहमान (बहुगुणा के पूर्व निजी सचिव) द्वारा लिखित एक प्रपत्र, (बहुगुणा आवास से प्राप्त दस्तावेज), पृष्ठ संख्या- 3।

33 दिल्ली दूरदर्शन द्वारा प्रसारित बहुगुणा पर वृत्त चित्र, वही।

34 हेमवती नन्दन बहुगुणा : विधान सभा कार्यवाही, 24 जून, 1974, पृष्ठ संख्या- [illegible]।

35 नार्दन इण्डिया पत्रिका, अंग्रेजी दैनिक, इलाहाबाद, 8 अक्टूबर, [illegible] पृष्ठ संख्या- 1।

थे तथा उचित मार्गदर्शन भी देते थे। उनके अधिकांश भाषणो तथा वक्तव्यो में इसका स्पष्ट संकेत मिलता है। उदाहरण के तौर पर मुख्यमन्त्रित्व काल में कानपुर मे हुई पी० टी० आई० (प्रेस ट्रस्ट ऑफ इंडिया) की एक वार्ता को लिया जा सकता है जिसमे बहुगुणा ने कहा था कि 'राजकीय कर्मचारियों के हितों को ध्यान मे रखते हुए सरकार की जो वचनबद्धता है उसे पूरा करना हमारा दृढ़ संकल्प है। अभी हाल मे उनकी मँहगाई भत्ता बढ़ाने के सवाल पर सरकार पूरे जोर-शोर से कोशिश कर रही है'[36]। इसी प्रकार कर्मचारियों के मार्गदर्शन मे बहुगुणा का सुझाव रहा है कि 'वह जाति-पॉति, धर्म के भेदभाव से ऊपर उठकर काम करें।' विधानसभा मे बोलते हुए उन्होंने कहा कि 'हमारी कर्मचारियों से मॉग है कि जब शोषित और शोषक मे झगड़ा हो तो शोषित की तरफ उनका सहयोग और सहायता हो, शोषक के साथ नहीं[37]।'

बहुगुणा बागडोर संभालते समय इस प्रांत को समस्याओं से घिरा हुआ पाये थे। कानून व्यवस्था, प्रशासन और वित्त की स्थिति बहुत दयनीय थी[38] किन्तु एक कुशल प्रशासकीय क्षमता के बल पर उन्होंने उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री के रूप मे असंभावित सफलता तथा लोकप्रियता प्राप्त की[39]। बहुगुणा की इसी अद्‌भुत क्षमता का बखान करते हुए आर० वेंकट रमन, पूर्व राष्ट्रपति भारत सरकार ने अपने एक भाषण के दौरान कहा था कि—''निःस्वार्थ सेवा, लगन और अपने उद्‌देश्य के प्रति अटल दृष्टि बहुगुणा के समाजवादी आदर्श के अंग थे और यही उनके व्यक्तित्व में निखार लाने तथा जनप्रिय बनाने में मददगार साबित हुए। किन्तु उनकी प्रशासनिक क्षमता विशेष रूप से प्रशंसनीय है, वह किसी कार्य को शीघ्र निपटाने में निपुण थे[40]'। बहुगुणा की अल्पकालिक सफलता पर अपना मत प्रकट करते हुए मुलायम सिंह यादव, पूर्व मुख्यमंत्री उत्तर प्रदेश अपने एक संदेश में लिखते हैं कि "प्रशासनिक कौशल और सूझ-बूझ का जो परिचय बहुगुणा ने दिया और जिस प्रकार समाज के निर्बल वर्ग के हित साधन के लिए कदम उठाये उससे उन्होंने प्रदेशवासियों का दिल जीत लिया था"।[41] इसी प्रकार पूर्व मुख्यमंत्री नारायण दत्त तिवारी का भी मानना है कि "प्रशासन के प्रत्येक अग-प्रत्यंग पर बहुगुणा की पकड़ व अनुशासित रखने की उनकी प्रशासकीय शक्ति अनुकरणीय है"।[42] इतना ही नहीं बल्कि बहुगुणा के विरोधी भी इस बात से सहमत हैं कि वे भारत के सबसे बड़े प्रात

---

36 हेमवती नन्दन बहुगुणा : विधान सभा कार्यवाही, 27 जून, 1974, पृष्ठ संख्या- 264।

37 हेमवती नन्दन बहुगुणा . विधान सभा कार्यवाही, वही।

38. योगेश्वरी तिवारी : बहुगुणा पर प्रकाशित स्मारिका में छपा लेख, मई, 1990, पृष्ठ संख्या- 2।

39 ओंकार शरद, धर्मयुग, 22 अप्रैल, 1979, पृष्ठ संख्या- 35।

40 आर० वेंकट रमन (पूर्व राष्ट्रपति,भारत सरकार) का बहुगुणा के मूर्ति अनावरण समारोह का भाषण, 11 मई, 1990, इलाहाबाद।

41 मुलायम सिह यादव : (पूर्व मुख्यमंत्री, उत्तर प्रदेश तथा पूर्व रक्षा मंत्री, भारत सरकार) का बहुगुणा पर प्रकाशित स्मारिका मे छपा सदेश, मई, 1990 इलाहाबाद।

42 नारायण दत्त तिवारी : (पूर्व मुख्यमंत्री उत्तर प्रदेश एवं पूर्व मंत्री भारत सरकार) का बहुगुणा पर प्रकाशित स्मारिका मे छपा संदेश, वही।

उत्तर प्रदेश के सबसे समर्थ और कार्यकुशल मुख्यमंत्री थे[43]।

बहुगुणा की कार्यशैली विलक्षण थी। वे जनमानस की नाड़ी को पहचानते थे और समस्याओं के तह तक जाकर उनका निराकरण करते थे। प्रत्येक व्यक्ति की समस्या को शीघ्र जानने मे वह पूर्णत: परिपक्व थे। उनका मानना था कि प्रदेश या देश गॉवो में बसता है, गॉवो के लोगो की अपनी समस्यायें होती है, ये गरीब और निर्धन होते है। जब तक इनकी समस्याओं का निदान नही होता, इनकी गरीबी नही मिटायी जाती तब तक देश सम्पन्न नही हो सकता[44]। इसी सन्दर्भ मे टिप्पणी करते हुए पूर्व प्रधानमंत्री चन्द्रशेखर अपने एक साक्षात्कार मे बताते है कि "बहुगुणा ने बेबसी, विषमता और गरीबी को बहुत नजदीक मे देखा था। उनके मन मे उसके लिए टेस थी और इसीलिए जब उन्होंने राजनीति मे हिस्सा लेना शुरू किया, चाहे वह आजादी की लड़ाई हो या उसके बाद की राजनीतिक प्रक्रिया, उनके मन मे उन लोगो के प्रति एक स्वाभाविक सहानुभूति थी।"[45] गॉवो मे कृषि तथा उद्योग के विकास के लिए बहुगुणा सदैव चिन्तित रहे। यही कारण है कि अपने मुख्यमंत्रित्व काल मे उन्होने प्रदेश में कृषि की सुविधाओं तथा उद्योगो के विकास के लिए सर्वाधिक धन आवटित किया था। 7 जून, 1974 को विधान सभा मे प्रदेश की खाद्य स्थिति एवं अन्य आवश्यक वस्तुओं सम्बन्धी स्थिति पर चर्चा करते हुए बहुगुणा ने बेबाक ढंग से कहा था—'कृषि पर चौथी योजना मे 220 करोड़ रुपये का लक्ष्य था। पहली योजना के जिम्मेदार चौधरी साहब थे, चौथे के हम है। हमने 246 करोड परिव्यय किया। सिचाई में 90 करोड़ का परिव्यय रखा गया था, हमने 149 49 करोड का किया है। उद्योग में 45 77 करोड़ का परिव्यय था और 53 करोड़ का हमने किया है।[46] आगे उन्होंने यह भी कहा था कि 'पॉचवी योजना का जो हमारा लक्ष्य है उसमें भी सिंचाई और बिजली पर सबसे अधिक जोर है। बिजली और सिचाई खेती के प्राण है। मुझे भरोसा है कि पॉचवीं योजना काल में सबके सहयोग से हम आज की कठिनाइयो पर हावी हो जायेंगे[47]।'

कृषि के प्रति बहुगुणा की धनात्मक सोच का ही नतीजा था कि उनके शासनकाल में उत्तर प्रदेश की पैदावार में अच्छी वृद्धि हुई थी। 'खाद्यान्नों का उत्पादन जो प्रथम योजना मे 121.88 लाख टन प्रतिवर्ष थी, वह बढ़कर चौथी योजना मे 176 56 लाख टन हो गयी। तिलहन की उपज प्रथम योजना में 9 05 लाख टन था, चौथी योजना अवधि मे 16 40 लाख टन हो गया। आलू जिसका वार्षिक उत्पादन प्रथम योजना काल में 6 53 लाख टन था वह चौथी योजना के अन्त में 16 42 लाख टन हो गया। गन्ने का उत्पादन

---

43 ए० नील लोहित दासन नाडर (मंत्री केरल सरकार) का छपा लेख, वही, पृष्ठ संख्या- 62।

44 रमाकान्त उनियाल का साक्षात्कार, दिल्ली दूरदर्शन द्वारा प्रसारित बहुगुणा पर वृत्त चित्र, वही।

45 चन्द्रशेखर (पूर्व प्रधानमंत्री, भारत सरकार)। का साक्षात्कार, दिल्ली, दूरदर्शन द्वारा प्रसारित बहुगुणा पर वृत्त चित्र, वही।

46 हेमवती नन्दन बहुगुणा : विधान सभा कार्यवाही, 7 जून, 1974, पृष्ठ संख्या- 223।

47 हेमवती नन्दन बहुगुणा : विधान सभा कार्यवाही, वही, पृष्ठ संख्या- 225।

गुड के रूप मे प्रथम योजना अवधि मे 267 60 लाख टन था चौथी योजना अवधि में 566 88 लाख टन हो गया। प्रति व्यक्ति खाद्यान्न कितना-कितना था यह भी उल्लेखनीय है। ज्ञात होता है कि पहली योजना मे 187 किलोग्राम, दूसरी योजना मे थोडा कम यानि 184 किग्रा और चौथी योजना में यह बढ़कर यह 198 किग्रा हो गया था[48]। यानि प्रति व्यक्ति के हिसाव से भी अन्न मे वढ़ोत्तरी हुई है।

बहुगुणा का कहना था कि `कृषि ही भारत का प्रमुख उद्योग है। अभी तक प्रदेश सरकार द्वारा जो सामग्रिकी अपनाई गयी है, कृषि व्यवस्था में सुधार की मॉग को नजरअन्दाज नहीं किया गया बल्कि उसका समर्थन किया गया है।' प्रदेश मे अच्छी कृषि के लिए अपना सुझाव रखते हुए बहुगुणा ने विधानसभा मे कहा था कि—`अगर खेती की तरक्की करनी है तो फर्टिलाइजर लेना होगा। खेती की तरक्की करनी है तो नये बीजली के एक्सपेरीमेन्ट्स करने होगे और बड़े-बड़े इस्टीट्यूशन खोलने होंगे[49]। 'बीज को ठीक रखने का प्रवन्ध करना होगा। हमे हेलीकाफ्टर की सहायता लेनी होगी ताकि फसल को नष्ट होने से बचाया जाय। खेती की उन्नति के लिए बडे-बडे सस्थान बनाना होगा जो रिसर्च और डेवलपमेट करे। खेती के लिए हमे अल्मुनियम का तार लगाना होगा, स्टील के खम्भे लगाना होगा[50]।' बहुगुणा मँहगाई के विरुद्ध थे। खाद्य वस्तुओं की दिनो-दिन बढ़ रही मॉग की यथासम्भव आपूर्ति के विषय मे वे चिन्तित थे। 8 जून, 1974 को खाद्य वस्तुओं पर बहस करते हुए उन्होने कहा था कि `खाद्य वस्तुओं की निःसन्देह आज कठिन समस्या है किन्तु इसका निराकरण असम्भव नही। आम सहयोग से इसे हल किया जा सकता है। इसी प्रकार गेहूँ की कीमत मे हुई वृद्धि की अफवाह के विरुद्ध बोलते हुए बहुगुणा ने घोषणा की कि `खुले बाजार में गेहूँ की कीमत किसी भी तरह सीमा से बाहर नहीं जाएगा, इसके लिए सरकार हर सम्भव कदम उठा रही है।'[51]

एक स्वतंत्रता संग्राम सेनानी होने के नाते बहुगुणा स्वतंत्रता संग्राम सेनानियों के प्रति विशेष आस्था रखते थे। मुख्यमन्त्रित्व काल के दरान उन्होंने निराश्रित स्वतंत्रता संग्राम सेनानियों के लिए लखनऊ में रहने की और खाने-पीने की नि शुल्क व्यवस्था की योजना बनायी। इसके निमित्त लखनऊ शहर के निराला नगर में एक दो मजिला मकान लिया गया। इसके उद्घाटन अवसर पर बोलते हुए बहुगुणा ने कहा कि `फिलहाल आप सब इसी किराये के मकान मे रहेंगे। किन्तु मैं चाहता हूँ कि आपका अपना स्वयं का मकान हो। हमारे प्रदेश मे लगभग 25 हजार स्वतंत्रता संग्राम सेनानी हैं, जिनको माहवारी सम्मानार्थ पेशन मिलती है। यदि उसमें से हर एक का एक रुपया माहवार काटा जाय तो हमारे पास 25 हजार रुपया महीना बचेगा। दो-ढाई साल मे जितना धन आपका बचेगा उसका मैचिंग ग्रांट सरकार देगी और आपका एक सुन्दर सा भवन

---

48 हेमवती नन्दन बहुगुणा . विधान सभा कार्यवाही, 24 जून, 1974, पृष्ठ संख्या- 1105।

49 हेमवती नन्दन बहुगुणा, विधान सभा कार्यवाही, 24 जून, 1974, पृख्या 1094।

50 हेमवती नन्दन बहुगुणा, विधान सभा कार्यवाही, वही, पृष्ठ संख्या- 1099।

51 दि टाइम्स आफ इण्डिया, अग्रेजी दैनिक समाचार पत्र, नई दिल्ली, 9 जून 1974, पृष्ठ संख्या- 1।

स्थापित हो जायेगा। और वही होता रहा। हर एक स्वतत्रता सेनानी की पेशन से हर माह एक रुपया कटता रहा। यह 1975 से 1985 तक कटता रहा। इस बीच उसी रकम मे रिवर बैंक कालोनी मे एक दो मजिला भव्य भवन का निर्माण किया गया। नये भवन मे1983 से ही स्वतत्रता सग्राम सेनानी रहने लगे है। 1975 के अन्त तक बहुगुणा यदि मुख्यमत्री पद से न हटे होते और बराबर कुछ वर्षो तक बने रहते तो शायद यह भवन कई वर्ष पहले ही बनकर तैयार हो जाता, कारण सरकार से मिलने वाली मैचिग ग्राट नई सरकार ने यह कहकर नही दी कि बहुगुणा ने कोई लिखित घोषणा नही की थी[52]।

बहुगुणा मानवतावाद के पक्षधर थे और हरिजनोत्थान के प्रबल हिमायती थे। मुख्यमत्री बनने के कुछ ही दिन बाद उन्होने प्रदेश की सरकारी नौकरियो में अनुसूचित जाति एवं जनजाति के लोगों की प्रोन्नति मे 18 प्रतिशत के आरक्षण का शासनादेश निर्गत कर दिया और विशेष बात तो यह है कि उक्त शासनादेश के आधार पर उसका कार्यान्वियन कराने हेतु वे पूरे मुख्यमंत्रित्व काल में लगे रहे। वास्तविकता यह है कि उस समय उत्तर प्रदेश मे भी दलितो पर सामाजिक उत्पीड़न की ज्वलंत समस्या थी। जब बहुगुणा से इस समस्या के बारे मे कुछ समाधान निकालने के लिए अनुरोध किया गया तो उन्होने यह बताया कि मेरा प्रयास है कि सबसे पहले पुलिस विभाग मे मै अनुसूचित जाति के लोगों के आरक्षण को पूरा करवा दूँ जिससे कम से कम हर थाने और पुलिस चौकी में कास्टेबुल अथवा हेड कान्स्टेबुल या सब-इन्सपेक्टर में से एक अवश्य हो जिससे दलित वर्ग की जनता का मनोबल कुछ मजबूत हो और शोषण म भी कुछ कमी हो। इसके लिए बहुगुणा ने 18 प्रतिशत कोटा पूरा करने के संकल्प को लेते हुए 50 प्रतिशत कास्टेबुल से लेकर सब-इन्सपेक्टर तक की भर्ती करवायी। ऐसा माना जाता है कि बहुगुणा के काल में जितनी अधिक संख्या मे पुलिस विभाग के हरिजन कोटे में नियुक्तियॉ हुई उतना अब तक के अनेक वर्षो के प्रशासन में उत्तर प्रदेश व अन्य प्रदेश में नहीं हुई[53]।

उत्तर प्रदेश के दलित वर्ग की बहुत दिनो से यह मॉग चली आ रही थी कि 18 प्रतिशत आरक्षण के अनुसार जिलाधीश एव पुलिस कप्तान की नियुक्तियॉ भी उत्तर प्रदेश में की जाएं जिससे कि अनुसूचित जाति के लोगो के साथ अन्याय न हो। बहुगुणा पहले मुख्यमंत्री रहे जिन्होंने इस माँग की पूर्ति करते हुए मुख्यमंत्रित्व काल में दस जिलाधिकारी व दस पुलिस कप्तान की नियुक्तियॉ जिलों में की। यही नही बल्कि उन्होने सचिवालय मे भी सचिव, विशेषसचिव, उप सचिव के पदों पर भी अनुसूचित जाति के अधिकारियो की नियुक्तियॉ की। जब तक वह मुख्यमंत्री रहे उनके निजी सचिवालय में अनुसूचित जाति के एक अधिकारी जो उपसचिव के पद पर नियुक्त थे, हरिजन सेल के इंचार्ज रहे और अनुसूचित जाति की नियुक्तियाँ, प्रोन्नति

---

52 रामकृष्ण खत्री का बहुगुणा पर प्रकाशित स्मारिका मे छपा लेख, वही, पृष्ठ सख्या- 59।

53 चौ० चुन्नी लाल (भूतपूर्व सदस्य लोक सेवा आयोग उत्तर प्रदेश) द्वारा प्रकाशित परिपत्र-1, पृष्ठ संख्या- 3 (हेमवती नन्दन बहुगुणा के आवासीय दस्तावेजो से प्राप्त)।

आदि की सारी सूचनाएँ व तथ्य उन्हे देते रहे जिसके आधार पर समय-समय पर इन लोगो की नियुक्तियॉ व प्रोन्नतियॉ होती रही[54]।

हरिजनो के सवाल को लेकर तत्कालीन नेताओं के विचार भिन्न-भिन्न थे, वे तरह-तरह की बाते करते थे किन्तु बहुगुणा का इस सम्बन्ध मे विचार बिल्कुल स्पष्ट था, वे हरिजन उत्पीड़न को समाज के लिए अभिशाप मानते थे। विधानसभा के उद्‌बोधन मे मुख्यमत्री के रूप मे एक बार उन्होने स्पष्ट कहा था—``इस सूबे की सरकार का यह निर्णय है कि हम हरिजनो के साथ अन्याय और अत्याचार नहीं होने देगे और उसके कारण कही किसी दल को हानि होती है, चोट पड़ती है, तो मै उसके लिए क्षमा चाहूँगा लेकिन रास्ता हम नही छोड सकते।"[55] मानवतावाद और गाधीवादी विचारधारा के सच्चे पोषक होने के नाते बहुगुणा अछूत परम्परा के भी सख्त विरोधी थे। उनका मानना था कि किसी व्यक्ति का मूल्याकन जाति के आधार पर नही होना चाहिए और न ही समाज के किसी व्यक्ति को अछूत समझना चाहिए। इसी दृष्टिकोण के तहत अपने शासनकाल मे उन्होने एक राजाज्ञा भी जारी की थी जिसके आधार पर हर विभागो के राजकीय कर्मचारियो की स्क्रीनिग की जाती थी और यह पता लगाया जाता था कि कौन कर्मचारी या अधिकारी अछूत परम्परा मे विश्वास करता है? पता चलने पर उस कर्मचारी या अधिकारी के खिलाफ कार्यवाही की जाती थी तथा उसे सेवा मुक्त करने का भी प्राविधान था[56]।

बहुगुणा की समाज के प्रति आत्मीयता तथा तत्पर निर्णय शक्ति मरहम का काम करती थी और इसीलिए हर आदमी उन्हें अपना मसीहा मानता था। इसी सन्दर्भ में कन्हैया लाल मिश्र `प्रभाकर' ने अपने सस्मरण मे एक घटना का उल्लेख करते हुए लिखा है—``15 अगस्त, 1975 को मैं उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री बहुगुणा के सचिव एस० आर० कोहली के कमरे में जा पहुँचा। बहुगुणा दिल्ली में दो दिन अस्वस्थ होकर लौटे थे और पास के कक्ष में उन लोगो से मिल रहे थे, जिन्हें स्वयं उन्होंने बुलाया था। कुछ देर बाद वे सभी मिलने के लिए बुलाए गये जिनमे मै भी था। एक आदमी अपनी बात कहता, अपना प्रार्थना पत्र बहुगुणा के हाथ मे देता, बहुगुणा तुरन्त उसे कोहली को देते, उस पर अपना निर्णय बताते। कोहली उस प्रार्थनापत्र पर वह निर्णय लिख देते और बहुगुणा दूसरे आदमी की बात पूछते। वह भी अपनी बात कहता, प्रार्थना पत्र बहुगुणा के हाथ में देता, वे उसे कोहली को देते और अपना निर्णय बताते। इतने में ही एक ठेठ देहाती कार्यकर्ता आये। उन्हे देखते ही बहुगुणा ने कहा—`हमने तुम्हारा काम पिछले महीने में ही कर दिया था। तुम अपने कलेक्टर से जाकर मिलो। अब हमसे क्या कहते हो?' हम अपनी बात कहने नहीं आये। हम कहने आये है राजनारायण की विधवा की बात। सुना है वह आर्थिक संकट में है, देहाती

---

54 चौ चुन्नी लाल, वही, पृष्ठ सख्या- 4।

55 हेमवती नन्दन बहुगुणा, विधान सभा कार्यवाही, 24 जून, 1974, पृष्ठ संख्या- 1110।

56 विधान परिषद् कार्यवाही, 25 जुलाई 1974, पृष्ठ संख्या- 197।

कार्यकर्ता ने कहा, तब बहुगुणा ने कहोली की ओर घूमकर कहा— श्रीमती राजनारायण, मुकाम भीकमपुर, डाकखाना खास जिला बलिया। सौ रुपये मासिक पेंशन और केन्द्रीय सरकार को उसके बारे मे पत्र।' आगे प्रभाकर लिखते है कि 'मै पास मे ही खडा था, पूछ बैठा, 'बहुगुणा जी आपको राजनारायण के घर का पता भी याद है?' बहुगुणा ने कहा—'1942 की क्रांति मे इस गॉव के 98 व्यक्तियो ने भाग लिया था, 6 को कालापानी हुआ, राजनारायण को फॉसी हुई। जेल मे छूटते ही मै वहॉ गया था।'[57]

बहुगुणा को समाज के हर वर्ग की चिन्ता थी। उनकी समस्याओं को वे गहराई से समझते थे। धोबी, कोल, जमादार तथा भोटिया जैसे निचले वर्ग के लोग भी उनके संवेदनात्मक दृष्टिकोण से अछूते नही रह पाते थे। शायद इसीलिए उनकी सामाजिक पकड़ को हर राजनेता चाहे वह विरोधी दल का हो या समर्थक, प्रशंसा करने से बाज नही आता है। 11 जुलाई, 1974 को विधानसभा में धोबियों के प्रति गहरी सवेदना व्यक्त करते हुए उन्होने कहा था —"कानपुर और गोरखपुर में ही धोबीघाट बनाने की आवश्यकता नही हर शहर मे इसकी जरूरत है। धोबी जो कपड़े धोकर लाते है उससे शरीर में स्किन डिजीज और वायरस इन्फैक्शन बचाने के लिए यह जरूरी है कि वे कपड़े शुद्ध पानी से धुले हो"[58], यानि बहुगुणा का सकेत था कि धोबी घाट के लिए शुद्ध और समुचित पानी की व्यवस्था की जानी चाहिए। इसी प्रकार बॉदा, मिर्जापुर और बनारस में कुछ कोल जातियॉं निवास कर रही थी, जिन्हें केन्द्रीय सरकार ने उत्तर प्रदेश की जनजातीय श्रेणी मे स्वीकार नही किया था, विधानसभा में बहुगुणा का इस सन्दर्भ में कहना था कि 'इसके लिए हमारी केन्द्रीय सरकार से मॉग जारी है, लेकिन इस बजट मे हमने उनके लिए कुछ धन की व्यवस्था की है ताकि शिक्षा के क्षेत्र मे जाकर वे अपने जीवन में कुछ परिवर्तन कर सकें।' आगे उन्होंने कहा कि 'मान्यवर हमारे प्रदेश में भोटिया समुदाय रहता है, उसके उत्कर्ष के लिए भी हमने इस बजट में पहली बार 4 लाख रुपये का प्राविधान किया है।'[59]

दलित तथा गरीब तबके के लोगों के प्रति बहुगुणा का हृदय बहुत ही उदार था। अपने शासनकाल मे उन्होने गॉव के गरीब, भूमिहीन तथा कर्ज से दबे हुए किसानों के कर्ज में कटौती हेतु कड़े कदम उठाये थे[60]। वह उत्तर प्रदेश के प्रथम मुख्यमत्री थे जिन्होने 'डेब्ट रिजम्पशन एक्ट' की घोषणा की थी ताकि अनुसूचित जाति तथा जनजाति के लोगों को पूँजीपतियों के पंजों से मुक्ति मिल सके[61]। बहुगुणा का मानना

57 पद्मश्री कन्हैया लाल मिश्र प्रभाकर का बहुगुणा पर प्रकाशित स्मारिका मे छपा लेख, वही, पृष्ठ संख्या- 43।

58 हेमवती नन्दन बहुगुणा, विधान सभा कार्यवाही, 11 जुलाई, 1974, पृष्ठ सख्या- 322।

59 हेमवती नन्दन बहुगुणा, विधान सभा कार्यवाही, 25 जुलाई, 1974, पृष्ठ संख्या- 194।

60 रमेश सिनहा (सेक्रेटरी, केन्द्रीय कमेटी, सी० पी० आई०) का बहुगुणा पर प्रकाशित स्मारिका मे छपा लेख, वही, पृष्ठ सख्या- 49।

61 योगेश्वर तिवारी (रीडर, मध्य०/आधु० इतिहास विभाग इलाहाबाद विश्वविद्यालय) का बहुगुणा पर प्रकाशित स्मारिका मे छपा लेख, वही, पृष्ठ सख्या- 2।

था कि किसी वर्ग को दबाकर रखने की प्रवृत्ति तथा आर्थिक, सामाजिक स्थिति मे असमानता से समाज का सतुलन बिगडता है जो केवल उत्तर प्रदेश के लिए ही नही बल्कि पूरे देश के लिए घातक है। विधानसभा मे बोलते हुए उन्होने कहा था कि 'हमारी यह भी मान्यता है कि जो पिछडा रहा है, चाहे इलाका हो, चाहे वर्ग हो, इनकी तरक्की मे हमारी तरक्की का मापदण्ड नीहित है। हम कितना आगे गये है, इससे सिद्ध होगा[62]।'

बहुगुणा का जन्म हिन्दू धर्म के ब्राह्मण जाति में हुआ था। नि:सन्देह उनकी आस्था हिन्दू धर्म मे पूर्णरूपेण थी किन्तु उनके मुख्यमन्त्रित्व काल में इस प्रदेश का हर मुसलमान यह महसूस करता था कि वह उनके अवलम्बन योग्य है तथा उनके धार्मिक, सामाजिक और राजनीतिक हित व अधिकारो के लिए विश्वसनीय रक्षक है। बहुगुणा के साथ मुस्लिम लोग अपने को पूरी तरह सुरक्षित मानते थे। बहुगुणा उर्दू भाषा को उतनाही प्यार करते थे जितना अपनी मातृभाषा हिन्दी को। वे अपने भाषणों में तथा आम चर्चा के दौरान उर्दू शब्दावलियो का अधिकांश प्रयोग किया करते थे।[63] विधानसभा में 24 जून, 1974 को 'भाषा सम्बन्धी बहस पर उन्होने कहा था—''मै उर्दू को इस प्रदेश की और इस देश की वही भाषा मानता हूँ जैसे सविधान मे उसका स्थान दिया गया है। मुझे यह कहा गया कि जो इस देश की भाषा है, जो भाषा इस देश की जननी है उसके खिलाफ की भाषा उर्दू को बहुगुणा इस्तेमाल करते हैं। हॉ करता हूँ और करूँगा क्योकि यह हमारे देश की भाषा है। आप चाहते है कि अल्फाज तो उनके हैं और उसमें भी कुछ अपनी तरफ से फर्क करके रखे। यह मुझसे नही होगा[64]''।

बहुगुणा ने प्रदेश मे शिक्षा की ओर विशेष ध्यान दिया था। उनके मुख्यमंत्रित्व काल में कई शैक्षिक कार्यक्रम शुरू किये गये, जिनमें प्रमुख रूप से कृषि के विकास के लिए गॉवो में वयस्क साक्षरता, संस्कृत का विकास, ओरिएन्टल भाषा और उर्दू तथा दक्षिण भाषाओं में अध्यापन को बढ़ावा दिया गया। माध्यमिक विद्यालयो मे प्रशिक्षित अध्यापक देने के लिए चार राजकीय प्रशिक्षण कालेज खोले गये जिनमें एक महिलाओं के लिए भी था। 1974 में एल० टी० (गृह विज्ञान) पाठ्यक्रम खोला गया और 30 ट्रेनिज सीटों के प्राविधान के साथ इलाहाबाद में राजकीय गृह विज्ञान महिला कालेज स्थापित हुआ। बी० टी० सी० ट्रेनिग यूनिट्स को भी राजकीय माध्यमिक विद्यालयों और ट्रेनिंग कालेजों से सम्बद्ध किया गया। उसी समय बी० टी० सी० की ट्रेनिग को पत्राचार के माध्यम से भी देने का प्राविधान बनाया गया था[65]। माध्यमिक विद्यालयों के अध्यापकों के सेवा निवृत्ति की अवधि के सम्बन्ध में बहुगुणा ने एक राजाज्ञा जारी की थी जिसमें

---

62 हेमवती नन्दन बहुगुणा, विधान सभा कार्यवाही, 25 जुलाई, 1974, पृष्ठ संख्या- 194।

63 रमेश सिनहा का बहुगुणा पर प्रकाशित स्मारिका में छपा लेख, वही, पृष्ठ संख्या- 48।

64 हेमवती नन्दन बहुगुणा, विधान सभा कार्यवाही, 24 जून, 1974, पृष्ठ संख्या- 1100।

65 सूचना विभाग द्वारा प्रकाशित—एल० के० ओ० पृष्ठ सख्या- 173-174 (बहुगुणा के आवासीय दस्तावेजों से प्राप्त)।

सुनिश्चित किया गया कि मान्यता प्राप्त माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षक (महिला-पुरुष दोनों) को सत्र के मध्य मे सेवा निवृत्त न किया जाय, उनका सेवानिवृत्ति काल अकादमिक सत्र के अन्त तक बढ़ाया जाय। सस्कृत अध्यापको के सम्बन्ध मे भी उन्होने कहा कि इन्हें अग्रेजी विषय के साथ डिग्री प्राप्त करना आवश्यक नही है[66]।

शिक्षको के प्रति बहुगुणा में अपार श्रद्धा थी। उनका मानना था कि यदि शिक्षक भूखा रहेगा, अपने परिवार की चिन्ता से ग्रसित रहेगा, तो बच्चो को पढ़ायेगा क्या? अध्ययन काल में शिक्षक ही विद्यार्थियों के लिए आदर्श होता है। आर्थिक तंगी मे शरीर और मस्तिष्क के बीच संतुलन नहीं रख सकता है। अत: शिक्षक को इतनी सुविधाए दी जानी चाहिए कि वह किसी अन्य नौकरी के प्रति आकर्षित न हो। शिक्षको को नौकर मानना शिक्षा का अपमान है। इससे देश की भावी संततियां कभी भी अच्छी नहीं हो सकती हैं[67]। अपनी इस मूल भावना के आधार पर मुख्यमत्री के रूप मे बहुगुणा ने विश्वविद्यालय, डिग्री कालेज, इण्टर कालेज तथा प्राइमरी शिक्षको के वेतनमान का पुनरीक्षण किया और उच्च वेतनमान दे दिया था। यही नही उन्होंने शिक्षको का मँहगाई भत्ता केन्द्रीय कर्मचारियों के समान कर दिया और उसमें यह व्यवस्था कर दिया कि जब कभी केन्द्रीय सरकार मँहगाई भत्ता की किश्त अपने कर्मचारियो को दे तो प्रदेश सरकार भी उसे अपने कर्मचारियो और शिक्षकों को देने के लिए बाध्य होगी[68]। इस व्यवस्था की घोषणा के उपरान्त शिक्षक वर्ग में जो हर्ष की भावना उजागर हुई थी, प्रदेश के इतिहास में शायद कभी सम्भव न हो सकी। ज्ञातव्य है कि बहुगुणा का यह प्रयास भारत में सबसे पहला था। किसी भी प्रान्त द्वारा इस प्रकार की पहल अभी तक नही हुई थी[69]।

इलाहाबाद विश्वविद्यालय से बहुगुणा का विशेष अनुराग था। इस सम्बन्ध में प्रो० सी० वी० त्रिपाठी अपने एक संस्मरण लेख में लिखते है कि `मुख्यमंत्री बनने के बाद बहुगुणा जब इलाहाबाद आये तो मै और उनके एक पुराने मित्र प्रो० ए० डी० पन्त विश्वविद्यालय की कुछ गम्भीर समस्याओं के समाधान को लेकर उनके पास गये। समस्यायें उस समय मुख्यतः दो थी, एक तो विश्वविद्यालय पर लगभग 40 लाख रुपये का ऋण था जिससे प्रतिवर्ष बजट स्वीकृत होने में काट-छॉट और कठिनाई होती थी। दूसरे विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने अध्यापकों के लिए नये वेतनमान की घोषणा की थी और प्रान्तीय सरकारों से सिफारिश की थी कि नये वेतनमान यथा शीघ्र लागू किये जाएं। जब हमने समस्यायें रखी तो बहुगुणा ने तुरन्त कहा,

---

66 वही, पृष्ठ संख्या- 175।

67 प्रोफेसर दामोदर दास खन्ना (भू० पू० अध्यक्ष, रक्षा अध्ययन विभाग इलाहाबाद, विश्वविद्यालय) का बहुगुणा पर प्रकाशित स्मारिका में छपा लेख, वही, पृष्ठ संख्या- 80।

68 प्रोफेसर चन्द्रभूषण त्रिपाठी (भू० पू० अध्यक्ष, मध्यकालीन एवं आधुनिक इतिहास विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद) का बहुगुणा पर प्रकाशित स्मारिका में छपा लेख, वही, पृष्ठ संख्या- 83।

69 प्रोफेसर के० पी० नैतियाल का साक्षात्कार दिल्ली दूरदर्शन द्वारा प्रसारित बहुगुणा पर वृत्त चित्र, 25 अप्रैल, 1998।

'निर्णय हो गया। विश्वविद्यालय कभी कर्ज में नही चल सकता। कर्जा माफ और नया वेतनमान कल से लागू और कुछ।' हम दोनों ने समझा कि उन्होंने हमे टाल दिया क्योकि बातें विनोदपूर्ण वातावरण में हँसी-मजाक के साथ हो रही थी, परन्तु दूसरे ही दिन समाचार पत्रों में जब यह सूचना प्रकाशित हुई कि उत्तर प्रदेश सरकार ने इलाहाबाद विश्वविद्यालय के नये वेतनमान लागू कर दिये है, तब हम लोग आश्चर्य चकित रह गये[70]।'

प्रो० डी० डी० खन्ना अपने संस्मरण में लिखते हैं कि 'बहुगुणा मुख्यमंत्री थे, मैं उत्तर प्रदेश की राजकीय सेवाओं में 'राष्ट्रीय सुरक्षा' विषय को सम्मिलित कराने का एक प्रस्ताव लेकर उनके पास गया। उन्होंने इस प्रश्नपत्र के पाठ्यक्रम को देखा और बहुत प्रभावित हुए। उन्होंने कहा कि यह पाठ्यक्रम तो राजकीय सेवाओं की परीक्षाओं में शामिल किया जाना चाहिए। बहुगुणा ने उसी प्रस्ताव पर मेरे सामने ही राजाज्ञा जारी कर दी कि 'राष्ट्रीय सुरक्षा' विषय को सभी राजकीय सेवाओं की परीक्षा में शामिल किया जाय। यदि सरकारी तंत्र माध्यम से यह कार्य किया जाता तो इसमें कई वर्ष लगते किन्तु बहुगुणा ने कुछ मिनटों में कर दिया। इतना ही नहीं बल्कि उत्तराखण्ड के दो विश्वविद्यालय जिन्हें स्वतः उन्होंने अपने कार्यकाल में खोला था, वहाँ भी रक्षा-अध्ययन विषय की मान्यता दे दी[71]। आगे प्रो० खन्ना बहुगुणा के तेज तर्रार व्यक्तित्व का वर्णन करते हुए लिखते हैं कि'जब हम बहुगुणा के साथ चाय पी रहे थे उसी बीच बहुगुणा टेलीफोन पर वित्त सचिव से पूछ रहे थे कि क्या अध्यापकों के वेतनमान का हिसाब-किताब लगा लिया? वित्त सचिव ने कहा कि हिसाब तो लगा लिया है परन्तु इस पर आने वाले खर्च की व्यवस्था की बात टेढ़ी है। बहुगुणा ने फोन पर ही वित्त सचिव से कहा इस पर आप परेशान न हों, यह समस्या आपकी नहीं मेरी है और मेरे पास इसका रास्ता भी है। बहुगुणा को अभी थोड़े ही समय बाद देहरादून पहुँचकर अध्यापकों के वेतनमान की घोषणा करनी थी। उन्होंने हमसे विदा लेते हुए कहा ठीक है इलाहाबाद के लिए कुछ करना ही होगा क्योंकि इलाहाबाद में लड़कियों के पढ़ने की समस्या है और अन्त में उन्होंने इलाहाबाद विश्वविद्यालय से सम्बद्ध पाँच महिला डिग्री कालेज खोलने की राजाज्ञा दी, यद्यपि केन्द्र सरकार ने नये डिग्री कालेज खोलने पर पाबन्दी लगा रखी थी[72]।

उपरोक्त विवरण से यह स्पष्ट हो जाता है कि प्रदेश की विषम परिस्थितियों में भी बहुगुणा का चुनौतीपूर्ण कार्यकाल कल्याणकारी था तथा मुख्यमंत्री के रूप में उनका समग्रवादी दृष्टिकोण समाज के हर वर्ग के लिए हित साधक था। अपनी कार्यशैली की प्रवीणता तथा प्रशासनिक क्षमता के बल पर उन्होंने असंभावित सफलता प्राप्त की। वास्तव में बहुगुणा की प्रशासनिक सूझ-बूझ का कोई जवाब नहीं था। हर

---

70 प्रो० चन्द्रभूषण त्रिपाठी, वही, पृष्ठ संख्या- 83।

71 प्रो० दामोदर दास खन्ना, वही, पृष्ठ संख्या- 79।

72 वही, पृष्ठ संख्या- 80।

स्तर का प्रशासनिक कर्मचारी और अधिकारी उनसे संतुष्ट हुए बिना नहीं रह सकता था, कारण यह है कि एक उत्कृष्ट प्रशासक के गुण उनमें स्वतः विद्यमान थे। इस सन्दर्भ में उत्तर प्रदेश प्रशासनिक अकादमी, नैनीताल मे बहुगुणा के एक सम्बोधन की चर्चा करना समीचीन लगता है, जहॉ उन्होंने आई० ए० एस०/पी० सी० एस० के प्रशिक्षणार्थियो को सम्बोधित करते हुए कहा था—'क्या कभी तुम अपने किसी अधीनस्थ कर्मचारी का मुरझाया चेहरा देखकर पूछते हो कि भाई क्या चिंतित हो? क्या परेशानी है? इत्यादि। यदि नही तो आप एक अच्छे प्रशासक नही बन सकते। अपने अधीनस्थ के प्रति संवेदनशील बनिये, वह आपके हाथ-पॉव हैं। यदि सहानुभूतिपूर्वक उनकी कठिनाई जानना चाहेंगे तो निःसन्देह वह आपकी आत्मीयता से प्रभावित होकर दुगुने उत्साह से कार्य करेगा, जिससे प्रशासन तथा आपकी क्षमता बढ़ेगी[73]।'

किन्तु, यह राजनीतिक विडम्बना ही कही जा सकती है कि 1975 के अन्त तक अप्रतिम लोकप्रियता हासिल किये हुए बहुगुणा जैसे सफल मुख्यमंत्री को भी अपने पद से हटना पड़ा। 27 नवम्बर, 1975 को उत्तर प्रदेश के मुख्यमत्री पद से इस्तीफा देने के पश्चात् बहुगुणा ने एक पत्रकार वार्ता के दौरान अपने इस असाधारण कदम का कारण न स्पष्ट करते हुए केवल इतना ही कहा था कि 'इसका निर्णय करना कांग्रेस उच्च सत्ता का काम है, मैं प्रधानमत्री और कांग्रेस उच्च सत्ता के प्रति कृतज्ञ हूँ जिन्होंने मुझे देश के सबसे बड़े राज्य का प्रशासन चलाने का दायित्व सौंपा था[74]। ज्ञातव्य है कि त्यागपत्र देने के पूर्व ही बहुगुणा ने सरकारी निवास छोड़ दिया और सीधे गेस्ट हाउस चले गये, जहाँ उन्होंने अपने लिए एक कमरा ले लिया। गेस्ट हाउस मे संवाददाताओं से बात-चीत करते हुए बहुगुणा ने कहा कि'मेरे लिए इस्तीफा देने का सबसे अच्छा वक्त यही था। मैंने इस्तीफा देने के लिए प्रधानमंत्री से अनुमति मांगी थी। उन्होंने इस प्रस्ताव को अस्वीकार नहीं किया। सम्भव है मेरी कुछ खामियां रही हों जिससे राज्य सरकार को इस्तीफा देने की जरुरत पड़ी[75]।' आगे उन्होने कहा कि 'कमजोर वर्गो के हित के लिए तथा देश के लोकतांत्रिक ढॉचे पर खतरा उपस्थित करने वाली फासिस्ट ताकतों के खिलाफ मैं काम करता रहूँगा।' इसके साथ-साथ कर्मचारियों के सहयोग और धैर्य तथा औद्योगिक कर्मचारियों द्वारा उद्योगों में शांति बनाये रखने की उन्होंने भरपूर प्रशंसा की[76]। बहुगुणा के उपरोक्त बयानों से उनके मुख्यमंत्री पद से हटने का कारण तो स्पष्ट नहीं होता, लेकिन स्रोतों से पता चलता है कि अपने मुख्यमंत्रित्व काल में वे प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी के केवल एक एजेन्ट के तौर पर शासन नहीं करना चाहते थे बल्कि एक स्वतंत्र और निष्पक्ष सरकार का आदर्श प्रस्तुत करना चाहते थे और यह इंदिरा गांधी एवं उनकी तथाकथित कैबिनेट को मंजूर नहीं था[77]। बहुगुणा के मुख्यमंत्री पद से हटने के

---

73 कादम्बिनी, मासिक पत्रिका, जुलाई, 1994, हिन्दुस्तान टाइम्स प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या- 6।

74 हिन्दुस्तान, हिन्दी दैनिक समाचार पत्र, 28 नवम्बर, 1975, पृष्ठ संख्या- 1।

75. हिन्दुस्तान, वही, 29 नवम्बर, 1975, पृष्ठ संख्या- 1।

76 हिन्दुस्तान, वही।

77. ए० नील लोहित दासन नाडर (पूर्व मंत्री केरल सरकार) का बहुगुणा पर प्रकाशित स्मारिका में छपा लेख, वही, पृष्ठ संख्या- 62।

कारणो मे यह तथ्य विशेष प्रासंगिक जरूर है, किन्तु इसके साथ-साथ कुछ और भी परिस्थितियाँ जिम्मेदार थी जिनका वर्णन समीचीन लगता है।

1969 मे कांग्रेस विभाजन के समय बहुगुणा ने इदिरागांधी का साथ इसलिए दिया था कि उनकी आस्था वामपंथी विचारधारा में थी और वे समाजवादी व्यवस्था लागू करने का बीड़ा उठा चुकी थी। वामपन्थियो और समाजवादी तत्वों को उन्होने इदिरा समाजवादी नीतियों के समर्थन में संगठित करने का प्रयत्न पूरी निष्ठा के साथ किया किन्तु वही उनके मुख्यमंत्री पद से निष्कासन का एक महत्वपूर्ण कारण बन गया[78]। इस सम्बन्ध मे 1975 की एक महत्वपूर्ण घटना का वर्णन करते हुए भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी, केन्द्रीय समिति के महामत्री रमेश सिन्हा अपने लेख मे लिखते हैं कि—'जब मैंने लखनऊ में इण्डो-सोवियत कल्चरल सोसाइटी की राष्ट्रीय कान्फ्रेन्स आयोजित करने का विचार बनाया तो मुख्यमंत्री बहुगुणा ने तत्काल स्वीकृति ही नही दी, बल्कि इसकी सफलता के लिए पूर्ण सहयोग भी दिया था।' परिणामस्वरूप यह कान्फ्रेन्स इण्डो-सोवियत कल्चरल सोसाइटी आन्दोलन के इतिहास में एक स्मरणीय घटना साबित हुई। सम्पूर्ण भारत के लगभग तीस हजार प्रतिनिधियों ने इसमे हिस्सा लिया। सोवियत संघ से 30 व 40 सदस्यों वाली सांस्कृतिक मंडली के साथ एक उच्च स्तरीय प्रतिनिधि मण्डल भी कांफ्रेंस में शामिल हुआ था। ऐसा माना गया कि भारत-सोवियत मित्रता हेतु अब तक के इतिहास में सबसे बड़ी सभा हुई है। केन्द्रीय सरकार में प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी को छोड़कर लगभग सभी वरिष्ठ मंत्री और कांग्रेस के अध्यक्ष देवकान्त बरुआ भी इस कांफ्रेंस में उपस्थित होकर अपने विद्वतपूर्ण सुझाव रखे[79]।

रमेश सिन्हा आगे लिखते हैं—'पछतावा इस बात का है कि उक्त कांफ्रेंस की सफलता ने दिल्ली के कुछ इर्ष्यालु, स्वार्थी और तुच्छ विचार वाले नेताओं को भयभीत कर दिया जिससे उन्होंने बहुगुणा के खिलाफ षड्यत्रकारी अभियान छेड़ दी। बहुगुणा का इंदिरागांधी के प्रति जो समर्पण भाव था इसे छल-कपट का रूप देकर वे लोग प्रधानमंत्री को मिथ्याबोध कराने लगे। यह दुषप्रचार किया जाने लगा कि बहुगुणा सोवियत रूस से अपना व्यक्तिगत सम्बन्ध बनाकर उनकी सहायता से भारतवर्ष का प्रधानमंत्री बनना चाहते हैं। यद्यपि यह स्वार्थी अभियान बहुत ही कमजोर नीव पर आधारित था तथा बहुगुणा और सोवियत रूस दोनों के प्रति मिथ्यानिन्दक था। वास्तविकता यह थी कि बहुगुणा प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी के प्रति पूर्णतः आस्थाभाव से जुड़े थे और उनकी राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति को प्रभावकारी बनाने के लिए अथक प्रयास कर रहे थे[80]। इतना ही नहीं बल्कि भारत-सोवियत मित्रता की नीति और कांग्रेस-कम्युनिस्ट एकता की नीति, इंदिरागांधी की स्वयं की नीति थी, जिसकी सफलता के लिए बहुगुणा सतत् प्रयत्नशील थे, किन्तु वह दिल्ली के कुछ

---

78 दिल्ली दूरदर्शन द्वारा प्रसारित बहुगुणा पर वृत्त चित्र, वही।

79 रमेश सिनहा (महामंत्री, भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी, केन्द्रीय समिति) का बहुगुणा पर प्रकाशित स्मारिका में छपा लेख, पृष्ठ संख्या- 50-51।

80 रमेश सिन्हा, वही, पृष्ठ संख्या- 51।

वामपन्थी कांग्रेसियो के लिए अभिशाप साबित हुई। जिसका परिणाम यह हुआ कि बहुगुणा को उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री पद से हटना पडा[81]।

1974 के उत्तर प्रदेश के विधानसभा चुनाव के समय भी बहुगुणा पर आरोप लगाया गया था कि उन्होंने जानबूझ कर उन उम्मीदवारो को हरवा दिया था जिनके बारे मे यह समझा जाता था कि उनकी वफादारी सीधे 'दिल्ली' के साथ है। 'दिल्ली' (केन्द्रीय कांग्रेस समिति) को उत्तर प्रदेश विधानसभा चुनाव मे 280 सीटे जीतने की उम्मीद थी. बहुगुणा के बारे मे कहा गया कि वह जानबूझकर चाहते थे कि कांग्रेस 216 से ज्यादा सीट न जीते, ताकि पार्टी कमजोर रहे और सत्ता की बागडोर बहुगुणा के हाथो मे बनी रहे। अगर उसके बाद उन्हे हटाने की कोशिश की गई तो 'उनका गुट' विद्रोह कर देगा और कांग्रेस का मन्त्रिमडल टूट जाएगा[82]। 'दिल्ली' के लिए इस तरह की बात महसूस करना और बहुगुणा के लिए ऐसी योजना को पूरा करने की बात सोचना—दोनो ही इस बात के सकेत थे कि दो ही वर्ष बाद पार्टी का बुरा अजाम होने वाला है। किन्तु तत्कालीन उत्तर प्रदेश और कांग्रेस पर नजर डाली जाय तो पता चलता है कि मुख्यमंत्री कमलापति त्रिपाठी के इस्तीफा के बाद प्रदेश मे कांग्रेस की स्थिति बदतर हो चली थी, जिसे पूर्व रूप देने मे बहुगुणा को कडी मशक्कत करनी पडी थी और चुनाव के दौरान कांग्रेस और कम्युनिस्ट पार्टी के समझौते की कवायद उनके राजनीतिक विलक्षणता की विशेष सूचक थी। इतना ही नहीं बल्कि कांग्रेस केन्द्रीय समिति को भले ही प्रदेश मे अपने 280 प्रत्याशियों के जीतने की उम्मीद थी किन्तु बहुगुणा ने इससे कही ज्यादा यानि 300 सीटे जीतने का एलान किया था[83] और उसके लिए उन्होंने कठोर प्रयास भी किये थे।

1974 मे ही बिडला के सवाल पर जो टक्कर हुई, वास्तव में उसमें सिद्धान्त की लड़ाई का रग था। उत्तर प्रदेश से राज्य सभा के चुनाव के लिए 'दिल्ली' (कांग्रेस केन्द्रीय समिति) राजनारायण के खिलाफ एक स्वतत्र उम्मीदवार के रूप में के० के० बिड़ला का समर्थन करना चाहती थी, जो 1972 में एक और उद्योगपति वी० आर० मोहन के खिलाफ चुनाव हार चुके थे। पहले केन्द्रीय समिति ने प्रकाश मेहरोत्रा के नाम का सुझाव रखा, लेकिन इस पर बहुगुणा ने बड़ी सख्ती से जवाब दिया था, ``क्या शक्कर सेठों का आदमी? मैं उसे नही चाहता[84]।" तदुपरान्त दूसरी पसन्द के रूप में के० के० बिड़ला का नाम उछाला गया। बहुगुणा ने पहले ही तय कर लिया था कि के० के० बिड़ला को संसद में नहीं जाने दूँगा[85]। अस्तु प्रधानमंत्री को अस्पताल से संदेश भेजा, जहाँ वह बीमार पड़े थे—``के० के० बिड़ला जीत नहीं सकते।" ``कोशिश कर देखने मे क्या हर्ज है?" यशपाल कपूर (इदिरा गांधी के निजी सचिव) ने कहा जो इस पूरे मामले में प्रमुख

---

81 रमेश सिनहा, वही।

82 उमा वासुदेव इन्दिरा गाधी के दो चेहरे, वही, पृष्ठ संख्या- 27-28।

83 दि स्टेट्स मैन, अंग्रेजी दैनिक समाचार पत्र, दिल्ली, 26 जनवरी, 1974, पृष्ठ संख्या- 5।

84 उमा वासुदेव इन्दिरागांधी के दो चेहरे, वही, पृष्ठ सख्या- 28।

85 पी० डी० टण्डन का बहुगुणा पर प्रकाशित स्मारिका में छपा लेख, वही, पृष्ठ संख्या- 63।

भूमिका निभा रहे थे। अन्तत यशपाल कपूर प्रधानमंत्री की मजूरी लेकर लखनऊ गये और वहाँ उन्होंने एक काग्रेसी नुमाइन्दे के रूप मे बिडला का प्रचार शुरू कर दिया[86]। सूत्रों से पता चलता है कि इस सन्दर्भ मे बहुगुणा को बहुत क्रूर तथा भयंकर परिणामों वाली धमकियॉ भी दी गई थी, लेकिन वे अपने दृढ़ संकल्प पर डटे रहे[87]। बहुगुणा का मानना था कि एक पूँजीपति को जिताना कांग्रेस के बुनियादी ढॉचे पर करारा प्रहार होगा क्योंकि कांग्रेस प्रारम्भ से ही पूँजीवाद की विरोधी रही है।

लखनऊ के अन्दर बिड़ला के समर्थन में यशपाल कपूर ने मुख्यमंत्री के आवास पर रहकर प्रयाम शुरू किया था। पता चलता है कि उनका यह प्रयास काफी महत्वपूर्ण था, उन्होंने विपक्ष के विधायको को इतनी संख्या मे तोड़ लिया था कि अगर गुप्त मतदान होता तो शायद बिड़ला जीत सकते थे। लेकिन चुनाव के पहले बहुगुणा अस्पताल से वापस आ गये और अपने पहरेदार तैनात कर दिये। परिणामस्वरूप खुला मतदान करना पड़ा। जब बहुगुणा खुद वोट देने गये तो उन्होने सबके सामने राजनारायण को गले लगाकर बड़े तपाक से कहा, ``आप तो हमारे दोस्त है ही।" बिड़ला हार गये और अगले दिन विधानसभा में बहुगुणा ने एक भाषण दिया जिसमे उन्होने कहा कि मैं जो कुछ करना चाहता हूँ उसमें पूँजीपतियों के लिए कोई जगह नही है[88]। यही से उस प्रवृत्ति के साथ टकराव शुरू हुआ जिसके प्रतीक संजय थे और जो समाजवाद-विरोधी, व्यापार तथा कारोबार की खुली छूट और मल्टीनेशनल कम्पनियों का पक्ष लेने वाली प्रवृत्ति का रूप धारण करती जा रही थी। बहुगुणा ने न केवल इस बात का सबूत दिया था कि वह वामपन्थी गुट को ज्यादा पसंद करते है, बल्कि `दिल्ली' के मुकाबले में अपनी ताकत का भी प्रमाण दे दिया था[89]। बहरहाल पूँजीवाद के विरुद्ध यह लड़ाई बहुगुणा के लिए बहुत मॅहगी पड़ी। पता चलता है कि इस घटना के तत्काल बाद उनके खिलाफ कपटपूर्ण चाले तथा षड्यंत्र शुरू हो गये।

आगे चलकर सत्ता की खींचातानी के इस खेल में तांत्रिक कर्मकाण्ड का भी दखल होने लगा। स्वामी पूर्णानन्द इलाहाबद के किसी मंदिर के पुजारी थे। बहुगुणा पूर्णानन्द को इलाहाबाद से जानते थे। जब वह सतना (मध्य प्रदेश) में जाकर बस गये तो बहुगुणा अकसर वहाँ जाते थे। कुछ दिनों के बाद तरह-तरह की अफवाहें फैलायी गई तथा इदिरागांधी तक पहुँचाई जाने लगी कि वे उनको प्रधानमंत्री पद से गिराने के लिए तांत्रिक पूजा करा रहे हैं, ताकि वह खुद प्रधानमंत्री बन सकें। तत्कालीन राजनीतिक अखाड़े में जो कुछ हो रहा था उसका यह एक ऐसा पहलू था जिस पर आसानी से यकीन नहीं किया जा सकता है। एक संदेह की और धुंधली सी भूमिका प्रधानमंत्री की कोठी में पनप रही थी कि जस्टिस जगमोहन सिन्हा के साथ मिलकर बहुगुणा इंदिरागांधी के खिलाफ कोई साजिश कर रहे हैं। ऐसा कहा गया है कि बहुगुणा जून 1975

86 उमा वासुदेव : इन्दिरा गांधी के दो चेहरे, वही, पृष्ठ संख्या- 28।

87 सलालुद्दीन उस्मान का स्मारिका में छपा लेख, वही, पृष्ठसंख्या 54।

88 उमा वासुदेव · वही।

89. उमा वासुदेव : वही।

के महत्वपूर्ण महीने के पहले हफ्ते मे सतना में किसी पार्टी मे कहा था—``अरे अब तो वह छः साल के लिए जा रही है। यशपाल कपूर मेरे ऊपर इल्जाम लगाता है कि मै जज की मिली भगत से इंदिरा गांधी को मिटा देना चाहता हूँ—मै तो कपूर को ही मिटा दूँगा[90]।"

सर्वोदय नेता जयप्रकाश नारायण को राज्य अतिथि के रूप मे सम्मान देना भी बहुगुणा के लिए हानिकारक सिद्ध हुआ। 1974 में बिहार मे आन्दोलन शुरू करके जयप्रकाश नारायण जब आन्दोलन के विस्तार के लिए लखनऊ आये तो सभी को लगा कि उत्तर प्रदेश भी अब बिहार बनकर ही रहेगा। लेकिन लखनऊ मे बहुगुणा ने मुख्यमंत्री के रूप में जयप्रकाश का स्वागत किया और उन्हें राजकीय अतिथि का सत्कार दिया। जय प्रकाश से बहुगुणा ने समस्याओं पर बाते की। जय प्रकाश बहुगुणा की बातों से संतुष्ट हुए और उत्तर प्रदेश मे आन्दोलन नही हुआ[91]। जय प्रकाश को राजकीय अतिथि के रूप मे सम्मान देने के सम्बन्ध मे बहुगुणा की दो इच्छाएँ थी—एक तो जय प्रकाश नारायण राष्ट्रीय आन्दोलन में भाग लेने वालो की वरिष्ठतम कड़ी मे से एक थे, वह राष्ट्रीय सम्मान के अधिकारी थे—दूसरे उत्तर प्रदेश को जय प्रकाश की ऑधी से वह बचाना चाहते थे[92]। लेकिन बहुगुणा की सफलता और लोकप्रियता उनके लिए जहर ही बनी। बहुगुणा से ईर्ष्या रखने वाले राजनीतिज्ञो ने प्रधानमंत्री इंदिरागाधी को सुझाया कि बहुगुणा उनके लिए खतरा बन गये है, जिससे इंदिरागाधी भयभीत हो गयी थी[93]।

वास्तव में जो समस्याये काग्रेस संगठन को अन्दर ही अन्दर खोखला किये दे रही थी उनमें सबसे उलझा हुआ अन्दरूनी मामला इंदिरागांधी और बहुगुणा का आपसी विवाद था। एक भी कांग्रेसी ऐसा नहीं था, वह चाहे पार्टी के अन्दर इन्दिरा समर्थक गुट का हो या इंदिरा विरोधी गुट का जो इस बात को मिसाल के तौर पर 'बहुगुणा के मामले' का हवाला न देता हो कि किस तरह इंदिरागांधी हर उस आदमी पर बड़ी बेरहमी से दबाव डालती है जो "होनहार हो, गुणी हो और जिसका भविष्य उज्ज्वल हो।" भले ही वह आदमी उनके प्रति सोलह आने वफादारी का कसम क्यों न खाता हो। इंदिरागांधी की शिकायत यह रही है कि जिस किसी को भी उन्होंने सहारा दिया और आगे बढ़ाया उसने उनके साथ विश्वसघात किया। उनकी स्वाभाविक प्रवृत्ति समझदार और उत्साही लोगों को चुनने की रही है। लेकिन इस डर से कि वे उन पर हावी न हो जायं, उन पर से भरोसा उठ जाता है। इस सिलसिले में चन्द्रशेखर ने कहा है कि "शायद उनका यह सोचना बहुत गलत नहीं था। बरूआ, सिद्धार्थ शंकर रे और चन्द्रजीत यादव आदि सभी वामपंथी साथियो

---

90 उमा वासुदेव : वही, पृष्ठ संख्या- 29।

91 ओंकार शरद . धर्मयुग, साप्ताहिक पत्रिका, 22 अप्रैल, 1979, पृष्ठसख्या 35 एव 51।

92 दिल्ली दूरदर्शन द्वारा प्रसारित बहुगुणा पर वृत्त चित्र, वही।

93 ओंकार शरद, वही।

ने कुछ दिन के बाद उनका साथ छोड दिया, जबकि ये इंदिरागाधी के पक्ष में सबसे बढ़कर बाते करते थे"[94]। किन्तु बहुगुणा के साथ जो कुछ हो रहा था, वैसा ही इससे पहले भी होता आया था। उदाहरण के तौर पर काग्रेस के विभाजन के बाद बहुगुणा की राजनीतिक पकड़ व लोकप्रियता और उसके प्रति इन्दिरागाधी की दृष्टि को लिया जा सकता है, जिसका विवेचन पूर्व अध्याय में किया जा चुका है।

बहुगुणा का आरोप रहा है कि 'इदिरागांधी नही चाहती थी कि मेरे पाँव वहाँ जमने पाये। गवर्नर अकबर अली खॉ को इसलिए हटाया गया कि उनके साथ मेरी अच्छी निभती थी।' बी० एन० कुरील को प्रदेश काग्रेस कमेटी का अध्यक्ष बनाया गया, लेकिन उन्हे भी इसलिए हटा दिया गया कि वह मुझसे झगडा करने को तैयार नही थे। फिर लक्ष्मीशंकर यादव प्रदेश काग्रेस कमेटी के अध्यक्ष बनाकर भेजे गये; चुनाव के बजाय अब लोग ऊपर से तैनात किये जाने लगे। फिर मोहसिना किदवई आयीं। ठीक है, लेकिन उन्हे चुनावाया क्यो नही जा सकता था? इदिरागांधी धीरे-धीरे 'हम' की जगह 'मै' का इस्तेमाल करने लगी थी'[95]। इसी प्रकार बहुगुणा ने अपने एक साक्षात्कार के दौरान कहा है—"मुख्यमत्री होने पर तमाम कथाएं चल पडी कि बहुगुणा बहुत महत्वाकाक्षी हो गया है, प्रधानमत्री बनना चाहताहै। हेलीकाप्टर पर चलता है, हेलीपेड बनवाता है। अरबो से दोस्ती है, पी० एम० की तरह चलता है। मैं पार्टी में कभी अल्पमत में नही रहा, लेकिन प्रधानमत्री के पास दस लोगो से लिखवाकर भेज दिया गया कि वे बहुगुणा के साथ काम नही कर सकते। मै राजनीति में चटनी की व्यवस्था नहीं कर पाता, मुख्य भोजन पर बल देता हूं। इसलिए लोगो को अच्छा नही लगता. लोगों को रस नही मिलता"[96]।

12 जून, 1975 को राजनारायण की याचिका का फैसला आ जाने के बाद बहुगुणा ने जो कुछ भी कहा या कुछ भी किया, उसका इदिरागाधी पर कोई असर नही पड़ा। उनके मन में बहुगुणा के बारे मे जो एक गाठ पड़ गई थी वह एक ऐसी दीवार की तरह थी जिस पर वह अपना सिर पटकते रहे, पर कुछ नही हुआ। उसी साल अगस्त मे संजय ने अपने एक साथी को बताया कि बहुगुणा का पत्ता जल्दी ही साफ हो जाएगा और उसके बाद उत्तर प्रदेश की राजनीति काबू में आ जाएगी। उस वक्त तक संजय अपनी माँ की राय को काफी दावे के साथ जाहिर करने लगे थे। उन दिनो हर चरण सिंह जोश युवक कांग्रेस के अध्यक्ष थे। वह 5 अगस्त को उत्तर प्रदेश के दौरे पर गये। वहॉ से लौटकर उन्होंने संजय से बताया कि लोग इमरजेंसी के खिलाफ और इदिरागाधी के खिलाफ बाते करते है। सजय ने कहा कि बहुगुणा हम लोगों की पीठ में छूरा भोक रहे है। तदुपरान्त जोश ने बहुगुणा को संजय से मिल लेने के लिए राजी करने की कोशिश की। किन्तु बहुगुणा का जवाब था कि—"मै पडित जी और इंदिरा जी के साथ काम कर चुका हूं।

---

94 उमा वासुदेव : वही, पृष्ठ सख्या- 23।

95 उमा वासुदेव : वही, पृष्ठ सख्या- 28-29।

96 दिनमान, साप्ताहिक पत्रिका मे प्रकाशित बहुगुणा का साक्षात्कार, 21-27 अप्रैल, 1985, पृष्ठ संख्या- 24।

मै उस लडके के पास नही जा सकता जो मेरे बेटे के बराबर है"[97]।

अन्तत 27 नवम्बर की शाम को बहुगुणा से इस्तीफा देने को कह दिया गया। मुख्यमंत्री पद छीन कर उन्हे राजनीतिक वनवास मे डाल दिया गया, ताकि उनकी राजनीतिक छवि धूमिल होकर मिट जाये। चौदह महीने का यह राजनीतिक वनवास बहुगुणा ने सचमुच बड़े धैर्य और सब्र से काटा। क्या खौफनाक जमाना था। देश मे 'मीसा' रोग छाया हुआ था। प्रति क्षण मीसा के खतरे में रहते हुए भी बहुगुणा ने अपने राजनीतिक जीवन को सक्रिय रखा[98]। सेसर को फौरन हिदायत जारी कर दी गई थी कि—'लखनऊ से बहुगुणा के बारे मे जो भी खबर आये उसे पहले सेंसर करा लिया जाय। सिर्फ घटनाओं के बारे में जानकारी छापी जाय।' मंशा यह थी कि उनके बारे में कोई भी खबर न छापी जाय। बहुगुणा ने बहुत गुस्से में आकर अपने एक दोस्त से कहा था कि "जब चुनाव का वक्त आयेगा तब देखेंगे कि ये लोग क्या करते हैं। तब मै इन्हे बता दूँगा"[99]।

इन सबके बावजूद भी बहुगुणा की आस्था काग्रेस पार्टी और इंदिरागांधी के प्रति समाप्त न हो सकी थी। ज्ञात होता है कि 29 नवम्बर, 1975 से 18 जनवरी, 1977 तक, यानि जिस दिन इंदिरागांधी ने चुनाव कराने का ऐलान किया था, बहुगुणा ने उनके पास सात पत्र भेजे थे, जिनमें उन्होंने यह कोशिश की कि अगर इदिरागांधी के दिमाग में कोई गलतफहमियॉ हो तो वे दूर कर दी जायें। बहुगुणा को एक भी पत्र का जवाब नही मिला। उन्होने इस दौरान 38 बार इदिरागांधी से मिलने की कोशिश की। 18 जनवरी को उन्होने इदिरागांधी को एक तार भेजकर चुनावो के दौरान हर तरह की मदद और सहयोग देने की बात कही। इसका भी कोई जवाब नही आया। जब कभी बहुगुणा की उनसे मुलाकात हुई भी और उन्होंने सफाई देने की कोशिश की तो इदिरागांधी ने उनसे यही कहा कि दूसरे लोग तो इसकी उल्टी ही बात करते है[100]। ऐसा प्रतीत होता है कि बहुगुणा की तरफ से सब कुछ दॉव पर लगाकर उस संगठन में बने रहने की यह आखिरी कोशिश थी जिसमें बढ़कर वह यहॉ तक पहुँच चुके थे।

---

97 उमा वासुदेव : वही, पृष्ठ संख्या- 30।
98 ओंकार शरद : धर्मयुग, वही।
99 उमा वासुदेव : वही।
100 उमा वासुदेव : वही, पृष्ठ संख्या- 31।

आपात काल की त्रासदी

25 जून, 1975 को भारत मे आपातकाल लागू हुआ और 19 महीने बाद 18 जनवरी, 1977 को हटा लिया गया। इस दौरान भारतीय राजनीति का संक्रमणकालीन रूप निखर कर सामने आया और पूरे देश मे एक विचित्र दहशत का माहौल कायम रहा। आपातकाल लागू होने की पृष्टभूमि में लोकनायक जयप्रकाश नारायण का बिहार में चल रहा आन्दोलन विशेष प्रासंगिक हुआ। 6 मार्च, 1975 को जे० पी० के नेतृत्व मे दिल्ली मे निकला विरोध जुलूस यह सिद्धकर दिया कि यह आन्दोलन सिर्फ बिहार तक सीमित न होकर देशव्यापी हो गया है। 'सिंहासन खाली करो कि जनता आती है' उद्घोष के साथ जे० पी० का जुलूस यह दिखाने का प्रयत्न था कि मूल आन्दोलन भले बिहार का हो परन्तु उसे पूरे देश का समर्थन प्राप्त है[1]। वह सत्ताधारी दल पर जनता का दबाव डालने का एक सफल अहिसात्मक प्रयोग था। इसके बाद 12 जून को इलाहाबाद उच्च न्यायालय के न्यायाधीश जगमोहन लाल सिन्हा के निर्णय से सत्ता पक्ष पर एक और गाज गिरी जिससे प्रधानमत्री इदिरा गाधी स्वयं विचलित हुए बिना न रह सकी। न्यायाधीश सिन्हा के निर्णय के अनुसार 1971 मे राय बरेली से लोकसभा के चुनाव के दौरान इंदिरा गांधी को भ्रष्ट आचरण का दोषी ठहराया गया था[2]।

सिन्हा ने यह फैसला इंदिरा गांधी के विरोधी राजनारायण की उस याचिका पर दिया था जिसकी सुनवाई मे चार साल लग गया था। सिन्हा ने जनप्रतिनिधित्व अधिनियम की धारा 123 (7) के अन्तर्गत उत्तर प्रदेश की राज्य सरकार के राजपत्रित अधिकारियों' का इस्तेमाल करने और उसी अधिनियम की उसी धारा के अन्तर्गत 'चुनाव में अपनी जीत की सम्भावनाओं को बढ़ाने के लिए प्रधानमंत्री की सेक्रेटरियेट में ऑफिसर ऑन स्पेशल ड्यूटी के पद पर काम करने वाले भारत सरकार के राजपत्रित अधिकारी यशपाल कपूर की सहायता प्राप्त करने[3] तथा साथ-साथ प्रदेश के पुलिस बल की सहायता लेने4 को भ्रष्ट आचरण ठहराया और इन्ही कारणों से उन्हें छः वर्ष तक कोई भी निर्वाचित पद ग्रहण करने के अधिकार से वंचित कर दिया। इस आरोप के सन्दर्भ में सफाई के तौर पर इंदिरा गांधी का कहना था कि 'इलाहाबाद उच्च न्यायालय के निर्णय के बारे में मुझे कुछ नहीं कहना है लेकिन मैं यह कहना चाहती हूँ कि 1971 के चुनाव के दौरान उत्तर प्रदेश में संयुक्त विधायक दल की सरकार थी, जो कुछ भी पुलिस संरक्षण व प्रशासनिक प्रवन्ध मेरे लिए किया गया, वह प्रदेश सरकार का था'[5]।

---

1 एस० एम० जोशी . आपातकाल के दौरान (पुस्तक अंश) 'रविवार' हिन्दी साप्ताहिक पत्रिका में प्रकाशित, 6 जनवरी, 1985, पृष्ठ सख्या- 43।

2 दुष्यंत कुमार का जनसत्ता हिन्दी, दैनिक समाचार पत्र में प्रकाशित लेख, 21 अप्रैल, 1996 (रविवारी) पृष्ठ संख्या- 04।

3 उमा वासुदेव : इदिरा गांधी के दो चेहरे, नई दिल्ली, 1977, पृष्ठ संख्या- 39।

4 दि पायोनियर, अग्रेजी दैनिक समाचार पत्र, लखनऊ, 14 जून, 1975, पृष्ठ संख्या- 01।

5 दि पायोनियर, अंग्रेजी दैनिक समाचार पत्र, वही।

प्रधानमत्री इदिरागाधी अपने पद पर किसी भी कीमत पर बने रहना चाहती थीं। उनका कहना था कि भारत पिछले चार वर्षो में काफी मजबूत राष्ट्र के रूप में उभरा है, जिसके लिए हमें कुछ बाह्य और आन्तरिक खतरो का भी सामना करना पड़ा है। हम अपनी प्रगति को जारी रखेंगे और जो भी खतरे और समस्याये आ रही हैं उनका साहस के साथ सामना करेंगे[6]।' इसी उद्देश्य को मद्देनजर रखते हुए उन्होने इलाहाबाद उच्च न्यायालय के निर्णय के खिलाफ सुप्रीम कोर्ट मे याचिका दायर कर दी। दूसरी ओर विपक्षी नेता भी इंदिरा गांधी को इस्तीफा देने के लिए दबाव बनाने लगे और देश भर में घूम-घूम कर जनसभाएं सम्बोधित करने लगे। नेताओं का आरोप था कि इंदिरा गांधी कानूनी प्रक्रिया की अवहेलना कर रही हैं[7]। जय प्रकाश नारायण ने इलाहाबाद में अखबारी सम्वाददाताओं से बातचीत करते हुए कहा कि 'इंदिरा गांधी का यह नजरिया इलाहाबाद उच्च न्यायालय द्वारा दिये गये निर्णय के ही विरुद्ध नही है बल्कि सार्वजनिक मर्यादा और प्रजातत्र के खिलाफ है। इंदिरा गांधी को एक प्रधानमंत्री के रूप में न्यायालय की इज्जत करनी चाहिए और जब तक सुप्रीम कोर्ट में उनकी याचिका की सुनवाई नही हो जाती तब तक के लिए उन्हे इस्तीफा दे देना चाहिए[8]।'

23 जून को सुप्रीम कोर्ट ने इंदिरा गांधी के पक्ष मे स्थगन आदेश तो दे दिया, लेकिन इसके साथ कुछ शर्ते भी जोड़ दी। अब सुप्रीम कोर्ट का आखिरी फैसला आने तक वह प्रधानमंत्री की हैसियत से काम तो कर सकती थी लेकिन वह ससद मे वोट नहीं दे सकती थीं।[9] इधर विरोधी दल के नेताओं का आन्दोलन जिसमे उनके इस्तीफे की माग की जा रही थी, अपने चरम पर था। अब तक वे इंदिरा गांधी के प्रधानमंत्री पद पर बने रहने का खुलेआम विरोध करने लगे थे। उनकी अन्तिम जनसभा हुई 25 तारीख को दिल्ली के रामलीला मैदान में, जिसका स्वरूप बहुत विराट था। उसमें जे०पी० ने अपने भाषण में भारतीय सेना के सैनिको को सम्बोधित करते हुए कहा कि 'सैनिको को कोई कानून विरुद्ध काम दिया जाय तो वे उसे मानने से इन्कार कर दे।'

इस भाषण के आधार पर जे० पी० पर सेना में बगावत की कोशिश करने का आरोप लगाया गया और उन्हें गिरफ्तार कर लिया गया।[10] इंदिरा गांधी बहुत दिनों तक निर्णय नहीं कर पा रही थी कि जय प्रकाश को छोड़कर अन्य लोगों को गिरफ्तार किया जाय अथवा जय प्रकाश सहित सभी लोगों को नजरबन्द किया जाय। पता चलता है कि इंदिरा गांधी ने जब अपने विश्वसनीय लोगों से पूछा कि जे० पी० को

---

6 दि पायोनियर, वही।

7 दि पायोनियर, वही, 16 जून, 1975, पृष्ठ संख्या- 05।

8 दि पायोनियर, वही।

9 उमा वासुदेव . इंदिरा गांधी के दो चेहरे, नई दिल्ली, 1977, पृष्ठ संख्या- 20।

10 एस० एम० जोशी : आपातकाल के दौरान (पुस्तक अंश) 'रविवार' हिन्दी साप्ताहिक पत्रिका में प्रकाशित, 6-13-19 जनवरी, 1985 पृष्ठ संख्या- 43।

पकड़ने पर कितने लोग अपनी जान से हाथ धोएगे—दो सौ? डेढ़ सौ? सौ? विश्वसनीय लोगो ने जवाब दिया कि सौ से ज्यादा नही। इसी पर जे० पी० को गिरफ्तार करने का आखिरी फैसला किया गया।[11] फिर क्या था, संविधान की धारा 352 के तहत शुरू हो गया भारत मे आपातकाल[12] और गिरफ्तार का दौर सारे देश मे तहलका मच गया।

सबसे पहले व्यक्तिगत स्वतन्त्रता समाप्त हुई। विरोधी दल के प्रमुख नेता नजरवन्द किये गये। न कोई अभियोग, न कोई सुनवाई और न कोई सबूत, जो व्यक्ति सरकार की नजर मे खतरनाक था,वह वन्द कर दिया जाता। जय प्रकाश, मोरारजी, चरणसिह, राजनारायण, अटल विहारी वाजपेयी, एल० के० आडवाणी, मधु लिममे, ज्योति वसु, पीलू मोदी, बीजू पटनायक, श्यामनन्दन मिश्र, मधुदण्डवते आदि सभी वन्द कर दिये गये। जार्ज फर्नाडीज, नानाजी देशमुख, लाडली मोहन निगम, मृणाल गोरे आदि भूमिगत हो गये[13]। इनके अलावा कुछ काग्रेसी भी गिरफ्तार किये गये, जिनमें प्रमुख रूप से चन्द्रशेखर, मोहन धारिया, कृष्णकान्त, रामधन और पी० एन० सिह आदि थे[14]।

26 जून को प्रधानमत्री ने देश के नाम प्रसारित एक संदेश मे कहा कि `आज की स्थिति इतनी विस्फोटक हो गई है कि शाति व्यवस्था की सामान्य स्थिति बनाये रख पाना असम्भव हो गया है—इसलिए मजबूर होकर मुझे आपात स्थिति लागू करनी पड़ी है[15]। उन्होंने यह भी आरोप लगाया था कि 'विरोधी दल विधान सभाओं और संसद की कार्यवाही मे बाधाएं उत्पन्न करके लोकतांत्रिक प्रक्रिया को समाप्त कर देना चाहते है—औद्योगिक अशांति, छात्र असंतोष और हिंसा बढ़ रही है[16]। दूसरी तरफ यह भी तथ्य प्राप्त होता है कि भारत की प्रगति व उन्नति की तीव्र गति से कुछ विदेशी ताकतों मे भारत के प्रति ईर्ष्या व द्वेष बढ़ता जा रहा था। विदेशी ताकतो ने देश के प्रतिक्रियावादी तत्वो का सहारा लेकर देश व्यापी हलचल शुरू करायी। आन्दोलन की बाढ़ के आगे अथवा अपने चुनाव के विरुद्ध उच्च न्यायालय के फैसले से असंतुलित होकर इंदिरा गाधी को देश मे आपातकाल लागू करना पडा[17]। कारण चाहे जो भी रहा हो लेकिन उस समय देश को खतरा हिसा, हत्या, असमाजिक तत्वों, सशस्त्र विद्रोह या गृह युद्ध का नहीं था कि प्रधानमंत्री सम्पूर्ण देश को कैदखाना वना देती। उस समय खतरा उनके प्रधानमंत्रित्व को था—वह खतरा भी वैधानिक और सवैधानिक था। अपने पद पर आये खतरे को ही उन्होंने देश के लिए खतरा माना और एकाकी तौर पर

---

11 एस० एम० जोशी · वही।

12 पाल व्रास दि पोलिटिक्स ऑफ इडिया सिन्स इन्डिपेन्डेन्स, हैदरावाद, 1990 पृष्ठ सख्या- 41।

13 मधुलिमये · संक्रमण कालीन राजनीति, लखनऊ, 1986, पृष्ठ संख्या- 85।

14 उमा वासुदेव इदिरा गांधी के दो चेहरे, वही, पृष्ठ संख्या- 09।

15 भानु प्रताप शुक्ल हर रविवार (खण्ड-एक), दिल्ली, जून 1992, पृष्ठ संख्या- 130।

16 भान प्रताप शुक्ल वही।

17 नकुल का अमृत प्रभात, हिन्दी दैनिक समाचार पत्र, इलाहाबाद में प्रकाशित लेख, 2 नवम्बर1984, पृष्ठ संख्या- 4।

आपात काल की घोषणा कर दी। मत्रिमंडल और संसद की स्वीकृति तो वाद में ली गई। वह भी तब जब सभी उनके कैदी के रूप में स्वीकार करने के लिए मजबूर थे[18]।

शासन के दमन चक्र ने पूरे दश में एक विचित्र दहशत का वातावरण पैदा कर दिया था। दहशत ऐसी कि कौन गिरफ्तार कर लिया जाय, इसका कोई अन्दाजा नहीं[19]। स्वतंत्र भारत की जेल में ऐसे लोग बन्द हुए, जिन्होंने आजादी हासिल करने के लिए कभी अपना सब कुछ त्याग दिया था। जय प्रकाश जैसे महान नेता की आवाज पर हजारों ऐसे लोग कैदखाने में पड़े थे जिन्होंने जीवन का एक भी दिन जेल में नही बिताया था। नतीजतन सैकड़ों की संख्या में ये बन्दी बीमार पड़ गये और अस्सी वर्ष के आस-पास के लोग तो जेल मे ही काल-कलवित हो गये[20]। आपातकाल को दूसरा स्वतंत्रता युद्ध कहना बिल्कुल सार्थक लगता है। `मीसा' और डी० आई० आर० के अन्तर्गत गिरफ्तार किये गये व्यक्तियो की सख्या देखी जाय तो वह क्रमश 34, 988 और 75, 818 थी अर्थात् आपातकाल में 1 लाख 10 हजार 806 व्यक्ति राजबंदी बनाये गये थे। यह संख्या भारत छोड़ो आन्दोलन के राजबंदियों से अधिक थी[21]।

आपातकाल शुरू होते ही अखबारों और प्रचार के दूसरे माध्यमों पर सेंसर का पहरा लग गया। अगर कोई बहस होती भी थी या कोई विरोध प्रकट भी करता था तो दबी जबान से। परिणामस्वरूप अफवाहो की वजह से चारों ओर डर बढ़ता जा रहा था। प्रत्यक्ष जानकारी का क्षेत्र दिन ब दिन छोटा होता जा रहा था[22]। मधु लिमये लिखते है कि जिस फिरोज गांधी की प्रेरणा से संसद की बहस का वृतांत छापने के लिए प्रेस को सम्पूर्ण संरक्षण बहाल किया गया था, उन्हीं फिरोजगांधी की पत्नी को खुश करने के लिए स्वयं ससद ने अपने ऊपर सेंसर शिप लाद दी। अपनी स्वतंत्रता की ही नहीं बल्कि गरिमा की भी आहूति दी[23]। पता चलता है कि आपातकाल की घोषणा के दिन ही समाचार माध्यमों पर पूरी तरह से काबू पाने का प्रयास किया गया था। यहॉ तक कि सभी अखबारों के प्रेसों की बिजली काट देने का फैसला किया गया ताकि सुबह तड़के राष्ट्रीय नेताओं की जो गिरफ्तारियाँ हुई थी उनकी खबर किसी अखबार में न छपने पाये। किन्तु यह फैसला दिल्ली तक में ही पूरी तरह लागू न हो सका। दिल्ली की अखबारों वाली सड़क बहादुरशाह जफर मार्ग में, जहॉ इंडियन एक्सप्रेस, पैट्रियट और नेशनल हेरल्ड के दफ्तर हैं, बिल्कुल अंधेरा था लेकिन स्टेट्स मैन और हिन्दुस्तान टाइम्स को सुबह अपने सप्लीमेंट निकालने से नहीं रोका जा सका और उनमे गिरफ्तारियों का पूरा ब्यौरा छपा। जनसंघ के दैनिक `मदर लैण्ड' ने जिसको सबसे पहला निशाना

---

18 भानु प्रताप शुक्ल : हर रविवार (खण्ड-तीन), दिल्ली, जून, 1992, पृष्ठ संख्या- 178।

19 डा० चन्द्रिका प्रसाद शर्मा : कवि राजनेता, अटल बिहारी बाजपेयी, नई दिल्ली, 1997, पृष्ठ संख्या- 151।

20 डा० चन्द्रिका प्रसाद शर्मा : कवि राजनेता, अटल बिहारी बाजपेयी, वही, पृष्ठ संख्या- 157।

21 एस० एम० जोशी : आपात काल के दौरान (पुस्तक अंश), वही, पृष्ठ संख्या- 46।

22 उमा वासुदेव : इंदिरागांधी के दो चेहरे, वही, पृष्ठ संख्या- 10।

23 मधुलिमये : संक्रमण कालीन राजनीति, वही, पृष्ठ संख्या- 85।

बनाना चाहिए था, झडे वालान मे अपने प्रेस से पूरा अखबार निकाला क्योकि वह इलाका बिजली फेल होने के क्षेत्र मे बाहर था[24]।

सेंसरशिप के चलते देश के तत्कालीन बुद्धिजीवी भी निष्पक्ष दायित्व निर्वहन मे विशेष भूमिका न निभा सके। लेकिन दुर्गाभागवत व फणिश्वर नाथ रेणु जैसे साहित्यकारो तथा कुलदीप नैयर जैसे पत्रकारो की भूमिका को नजर अन्दाज नही किया जा सकता है जिनके भाषण व लेखनी पर पाबन्दी लगाने के लिए शासन ने उन्हे जेल भेज दिया था[25]। इसके अलावा बिहार मे 'तरुण क्रांति' और 'क्रांति नाद' दिल्ली मे 'आवाज' और 'चिनगारी' तमिलनाडु से 'रेजिस्टेंस' बम्बई से 'ओपिनियन' और 'जनता' गुजरात मे 'भूमिपत्र' और पूणे से 'साधना' भी इस युद्ध मे जनता के पक्षधर थे। लिखने, बोलने और छापने की आजादी के लिए इन लघुपत्रो ने निर्भयता पूर्वक सघर्ष किया तथा इनके सम्पादकों ने डटकर सेंसरशिप का मुकाबला किया[26]। पी० एल० देशपाडे, मृणालसेन आदि लेखको तथा कलाकारों ने भी 42 वे संवैधानिक संसोधन के खिलाफ बयान प्रकाशित किये थे। लेकिन फिर भी यह स्वीकार करना पड़ेगा कि स्वतंत्रता आन्दोलन के दौरान बुद्धिजीवियो की भूमिका जितनी उज्जवल थी, उतनी आपातकाल में नहीं थी[27]।

आपातकाल के दौरान नसबन्दी के मामले को लेकर बड़े अधिकारियों ने तहलका मचा दिया था। यद्यपि नसबन्दी की प्रक्रिया, इदिरा गांधी की प्रतिभा सम्पन्न सूझ-बूझ व दूरदर्शिता की पहिचान बन सकती थी लेकिन नियुक्ति, तबादला व तरक्की के नाम पर अधीनस्थ अधिकारियों को भ्रमित किया गया। यहाँ तक कि प्राथमिक विद्यालय के शिक्षको, पटवारियो और ग्राम रक्षकों जैसे नीचे स्तर के अधिकारियों पर भी जोर डाला गया कि वे नसबन्दी कराने के लिए लोगों को पकड़कर लायें और इस बात का सबूत दें कि नसबन्दी के काम को पूरा करने मे उनका बड़ा योगदान रहा है[28]। नतीजतन ऐसे लोगों की भी नसबन्दी करा दी गई जिनके लिए कोई औचित्य नही बनता था। बूढ़े आदमियों, सन्यासियों तक की नसबन्दी जबरदस्ती पकड़कर करा दी गई। पता चलता है कि ऐसी छोटी उम्र के लोगों की भी नसबन्दी करायी गई जो अब तक किशोरावस्था को भी प्राप्त नहीं हुए थे। प्रान्तीय सरकारों ने नसबन्दी के लिए एक लक्ष्य निर्धारित किया था। कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि सत्ताधारियों को प्रसन्न करने के लिए इस प्रकार की अंधाधुंध कार्यवाहियाँ की गयी। परिणामस्वरूप इतना जनक्षोभ फैला कि कहीं-कही स्थिति काबू से बाहर हो गयी और उपद्रव भी हुए[29]।

---

24 उमा वासुदेव इदिरागाधी के दो चेहरे, वही, पृष्ठ संख्या- 22।
25 मधुलिमये सक्रमण कालीन राजनीति, वही, पृष्ठ सख्या- 85।
26 एस० एम० जोशी आपातकाल के दौरान (पुस्तक अंश), वही, पृष्ठ सख्या- 46।
27 मधुलिमये सक्रमण कालीन राजनीति, वही, पृष्ठ संख्या- 85।
28 कमला पति त्रिपाठी : स्वतंत्रता आन्दोलन और उसके बाद, दिल्ली, 1988, पृष्ठ संख्या- 265।
29 कमला पति त्रिपाठी, वही।

तत्कालीन समय मे सर्वोच्च न्यायालय की भी भूमिका विवादास्पद रही है। ज्ञात होता है कि सर्वोच्च न्यायालय के सविधान पीठ के बहुमत ने जनस्वतंत्रताओं को अनदेखा किया था।' मधुलिमये ने अपनी पुस्तक संक्रमण कालीन राजनीति' में इस सन्दर्भ पर टिप्पणी करते हुए लिखा है कि "मैंने 27-28 जून, 1975 को ही रायपुर जेलसे तार और पत्र द्वारा 'हैवियस कार्पस' याचिका सर्वोच्च न्यायालय को भेजी थी। अदालत ने नोटिस भी जारी कर दी। प्राथमिक सुनवाई 30 जुलाई को रखी गई। मैंने एकपत्र द्वारा माँग की कि मुझे दिल्ली ले चलो। मुझे वकील नहीं चाहिए, मै स्वयं सर्वोच्च न्यायालय में बहस करना चाहता हूँ। कई दिन बीते कोई जवाब नही आया। माफी नामे का मै विरोध करता हूँ, यह जानकर मुझे रायपुर से नरसिहगढ़ की जेल भेज दिया गया। वहाँ सितम्बर के अन्त मे सुप्रीम कोर्ट से मेरे पास एक पत्र आया—"मौलिक अधिकारो के क्रियान्वयन को स्थगित किये जाने के आदेश को दृष्टिगत रखते हुए आपकी याचिका वापस ली गई है, ऐसा माना जायेगा।" इस आशय का यह पत्र मुख्य न्यायाधीश ए० एन० राय के हस्ताक्षरो से जारी किया गया था[30]। इसी प्रकार अटल बिहारी बाजपेयी सरीखे कई विरोधी नेताओं ने भी कर्नाटक उच्च न्यायालय मे हैवियस कार्पस याचिकाए दायर की थी जिस पर उच्च न्यायालय का निर्णय था कि अवैध और अनीतिपूर्ण नजरबन्दी के विरुद्ध चुनौती दी जा सकती है किन्तु सर्वोच्च न्यायालय ने इस निर्णय को पलट दिया था[31]।

42 वे संविधान संसोधन का पारित किया जाना भी एक निन्दनीय कदम माना गया। विरोधी संसदीय नेताओं का मानना है कि इस सवैधानिक संसोधन के द्वारा हमारी सविधान की आधारशिला को बदलने तथा उनके विभिन्न तत्वो और उनकी विभिन्न इकाइयों के अधिकारों पर आक्रमण करने का यह प्रतिक्रियावादी प्रयास था जो उनकी नजरबन्दी का अनुचित लाभ उठाकर किया गया। इस सिलसिले में मधुलिमये लिखते है कि—'जन-स्वतत्रताओं पर आक्रमण के साथ-साथ राज्यो के अधिकारों का हनन और केन्द्र के अधिकारो मे वृद्धि हुई। राज्यों में केन्द्र के द्वारा पुलिस भेजना, राज्यो मे आंशिक इमरजेन्सी जारी करना, राष्ट्रपति शासन की अधिकतम अवधि छः माह से बढ़ाकर एक साल करना आदि प्राविधानं इसी मनोवृत्ति के परिचायक थे। जनता व मतदाताओं की इच्छा लोकतत्रकी आत्मा है। पाँच साल बाद चुनाव इस इच्छा की अभिव्यक्ति का एक कारगार साधन है।42वे ससोधन ने लोकसभा और विधान सभाओं की अवधि छः साल तक बढ़ाने की व्यवस्था की थी, कुछ लोग सात साल तक की बात भी कर रहे थे। मतदाताओं के अधिकारों को छीनने का, उनके नियत्रण से आंशिक मुक्ति पाने का यह प्रयास था।'[32]

देश ही नही बल्कि परदेश में भी आपातकाल की भर्त्सना की गई थी। आपातकाल के कारण का खुलासा करने के लिए प्रधानमंत्री इंदिरा गाधी को विभिन्न देशों में अपने दूत भेजने पड़े। परन्तु सोवियत रूस

---

30 मधुलिमये . संक्रमण कालीन राजनीति, वही, पृष्ठ संख्या- 87।

31 डा० चन्द्रिका प्रसाद शर्मा . कवि राजनेता, अटल बिहारी बाजपेयी, नई दिल्ली, 1997, पृष्ठ संख्या- 163।

32 मधुलिमये : संक्रमण कालीन राजनीति, वही, पृष्ठ संख्या- 87-88।

और विश्वशांति परिषद के सिवा अन्य किसी ने भी उन दूतों के स्पष्टीकरणों पर विश्वास नहीं किया[33]। ब्रिटेन और अमरीका में तो दूतों को विपरीत प्रतिक्रियाओं का सामना करना पड़ा। जय प्रकाश की रिहाई के लिए 15 अगस्त, 1975 को ब्रिटेन में फिलिप नोएल बेकर के नेतृत्व में अभियान आरम्भ हुआ। उन्होंने 'लन्दन टाइम्स' में पूरे पृष्ठ का विज्ञापन प्रकाशित कराया, जिसका शीर्षक था, 'भारतीय लोकतंत्र का दीप बुझने न दे।' जय प्रकाश की रिहाई के लिए जिन पाँच सौ विशिष्ट जनो ने अपील निकाली, उनमें भारतीय समस्याओं की सम्यक जानकारी रखने वाले डॉ० जोसेफ नीधम, प्रो० ए० जी० पी० टलर, डॉ० डी० ई० शूमाकर जैसे इत्यादि व्यक्ति थे।[34]

उपरोक्त विवरण के साथ-साथ आपातकाल की आंशिक सफलता को भी हाशिये पर नहीं रखा जा सकता है। इंदिरा गाधी ने आपात स्थिति लागू करते हुए कहा था कि उन्हें आशा है कि देश में अब चार धारायें उत्पन्न होंगी। उनका ख्याल था कि दूर दृष्टि, कड़ी मेहनत, पक्का इरादा और अनुशासन यह भावनाएँ आपातकाल के माध्यम से उत्पन्न होंगी[35]। अनुमानतः ऐसा कुछ हद तक हुआ भी, एकाएक राष्ट्रीय जीवन में सतुलन आता दिखाई पड़ा। कचहरियो मे काम समय से और ठीक ढग से होने लगा, रेलें समय से चलने लगी, व्यापारियो और दुकानदारो ने वस्तुओं की कीमत के सूचकांक प्रकाशित किये और अपनी-अपनी दुकानो पर लगा दिये। कीमतों को न बढ़ने देने का आदेश बड़ी सीमा तक सफल हुआ था। शांति और व्यवस्था के प्रबन्ध मे सुधार दिखाई दिया, छोटे-मोटे अधिकारियों की रिश्वतखोरी इत्यादि की घटनाएं बहुत कम हो गयी थी।[36]

फिलहाल आपातकाल से आंशिक लाभ जरूर हुआ लेकिन उससे कहीं अधिक नुकसान भी हुआ। इस दौरान चाहे जो कुछ भी आशा की गई हो लेकिन तत्कालीन राजनीतिक समीक्षको ने यह सिद्ध कर दिया कि जनता ने आपातकाल योजना को बिल्कुल नापसद किया और उसका हस्र आगामी चुनावो मे कांग्रेस को भुगतना पड़ा। इसे स्वीकार करते हुए कांग्रेस के शीर्षस्थ नेता कमलापति त्रिपाठी ने भी एक स्थान पर स्वय लिखा है कि— "मेरी समझ मे इंदिरा जी को लोगो ने धोखा दिया। उनकी खुशामद करने के उत्साह मे लोगो ने उन्हे गलत राय दी और गलत मार्ग पर चलने के लिए प्रेरित किया।"[37] उदाहरण के लिए कांग्रेस के तत्कालीन अध्यक्ष देवकान्त बरुआ को लिया जा सकता है जिन्हें जय प्रकाश नारायण ने 'दरबारी मसखरा' की संज्ञा दी थी। बरुआ ने इसका प्रमाण भी दिया 'इंदिरा ही भारत है'[38] कहकर उन्होंने सबसे बड़ा

---

33 एस० एम० जोशी आपातकाल के दौरान (पुस्तक अंश), वही, पृष्ठ संख्या- 47।

34 एस० एम० जोशी वही।

35 कमलापति त्रिपाठी स्वतंत्रता आन्दोलन और उसके बाद, वही पृष्ठ संख्या- 266-267।

36 कमला पति त्रिपाठी · वही, पृष्ठ संख्या- 265।

37 कमला पति त्रिपाठी वही, पृष्ठ संख्या- 267।

38 डा० चन्द्रिका प्रसाद शर्मा कवि राजनेता, अटल बिहारी वाजपेयी, वही, पृष्ठ संख्या- 156।

पारितोषिक प्राप्त करने का हक बना लिया था। उन्होंने यह नही सोचा कि कोई व्यक्ति कितना भी बडा क्यो न हो किन्तु वह राष्ट्र नही हो सकता। इस सम्बन्ध मे अटल बिहारी बाजपेयी जो राजबन्दी के रूप मे जेल की सीखचो मे केद थे, कुछ काव्य कुण्डलियाँ रची थी,प्रस्तुत है उसका एक अश—

"इदिरा इण्डिया एक है, इति बरुआ महराज।

अकल घास चरने गई, चमचो के सरताज[39]।।"

कमलापति त्रिपाठी आगे और लिखते है कि "इमरजेंसी लगाना तो भूल थी ही उससे बड़ी भूल ऐसे नेताओं की गिरफ्तारी करना थी जो आदर की दृष्टि से देखे जाते थे और जिनके प्रति जनता के मन मे श्रद्धा थी। चाहे किन्ही कारणो से इन गिरफ्तारियो को ठीक समझा गया हो, पर स्पष्ट है उसका नतीजा अच्छा नही निकला[40]।"

वस्तुत आपातकाल मे इस तरह की आशकाओं ने जन्म लिया कि उससे कठोर, निरकुश और तानाशाही शासन चलेगा जो कभी नही हटेगा? किन्तु प्रधानमत्री इदिरा गाधी के आन्तरिक दृष्टिकोण का अवलोकन किया जाय तो पता चलता है कि वह निरकुश ता थी पर अधिनायकवादी नही। वास्तव मे निरकुशता नेहरू परिवार की पारिवारिक विरासत थी जिसे किसी भी कीमत पर वह कायम रखना चाहती थी। तत्कालीन समय मे ही उनके प्रबल विरोधी बन चुके चन्द्रशेखर ने अपने एक साक्षात्कार में कहा है कि "इदिरा गाधी केन्द्रीय सत्ता की योजना तो बना रही थी पर उन्होंने डिक्टेटरशिप की दिशा में कोई कदम नही उठाये थे[41]।" आगे उन्होंने एक स्थान पर यह भी कहा है कि "मै नहीं समझता कि इंदिरा जी कभी अधिनायकवाद को अपनाएगी[42]।" सच्चाई तो यह है कि परम्परा और मन से वह तानाशाह नहीं थी, अगर होती तो जनरल जिया की तरह वे भी आठ साल तक चुनाव नहीं कराती। उन्होंने ऐसा नहीं किया। उनके मन के कोने मे कही न कही वैधता और जनमान्यता की कद्र थी। लेकिन उनकी धारणा यह थी कि "मै जो भी काम करती हूँ, वह जनता के हित में होता है और वह जनता को पसन्द भी आता है। इमरजेंसी मे मैने जो कुछ भी किया है, वह जनता को अच्छा लगा है और मैं यदि चुनाव कराऊँ तो जनता इन कामों पर मुहर लगायेगी[43]।" इस पर इदिरा गांधी को पक्का विश्वास था। उनके इर्द-गिर्द रहने वाले चापलूस राजनीतिज्ञो और दरबारियो ने यह विश्वास और भी दृढ़ बना दिया था। यद्यपि इंदिरा गांधी का हाथ सदैव जनता की नब्ज पर रहता था। किन्तु 1976-77 में सेसरशिप के चलते उन्हें जनमानस का सही पता नही

---

39 डा० चन्द्रिका प्रसाद शर्मा : वही।

40 कमलापति त्रिपाठी : स्वतत्रता आन्दोलन और उसके बाद, वही पृष्ठ संख्या- 267।

41 उमा वासुदेव : इन्दिरागाधी के दो चेहरे, वही, पृष्ठ संख्या- 12।

42 स्नेह मधुर का अमृत प्रभात, हिन्दी दैनिक समाचार पत्र, इलाहाबाद, में प्रकाशित लेख, 3 नवम्बर, 1984, पृष्ठ संख्या- 4।

43 मधुलिमये : संक्रमणकालीन राजनीति, वही पृष्ठ संख्या- 88।

चल सका, शायद इसीलिए उनका दृढ़ विश्वास भ्रातिमूलक सावित हुआ।

आपातकालीन घोषणा के बाद उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री हेमवती नन्दन बहुगुणा एवं उनके अनुयायिओं ने लोकतांत्रिक परम्पराओं एव सैद्धान्तिक प्रतिबद्धता को कायम रखने के लिए अथक प्रयास किया था। बहुगुणा देश के पहले कांग्रेसी मुख्यमंत्री थे जिन्होंने प्रधानमंत्री को पत्र लिखकर आपात काल का विरोध किया था[44]। बहुगुणा राजनेताओं की गिरफ्तारी के विरुद्ध थे। आपातकाल के दौरान जब पूरे देश मे गिरफ्तारी का दौर अपने चरम पर था तो उत्तर प्रदेश में भी सभी विरोधी नेताओं की गिरफ्तारी का आदेश केन्द्र से बहुगुणा के पास आया था। किन्तु उसमें उन्होंने अपने विवेक से काम लिया और इंदिरा गांधी तथा संजय के मंसूबों को सफल न होने दिया[45]। बहुगुणा का मानना था कि न्याय हित में गलत पाये जाने पर किसी भी व्यक्ति को बख्शा नही जाएगा लेकिन कानून से बँधे लोगों को सरकार छुयेगी नहीं, चाहे वे जिस दल के हो[46]। प्रदेश मे जिन विरोधी नेताओं को पकड़कर जेल मे बन्द करने का आदेश आया उनमें चन्द्रभानु गुप्त का भी नाम था, लेकिन बहुगुणा ने उनको गिरफ्तार नही किया। इसी प्रकार दो-चार नाम ऐसे और भी थे जिनकी गिरफ्तारी अन्त तक न हो सकी। यद्यपि इंदिरा गांधी के आदेश का पालन न करने का नतीजा बहुगुणा भली प्रकार से जानते थे, किन्तु इसकी परवाह उन्होंने नही की। परिणामस्वरूप इसी साल के अन्त तक उन्हे मुख्यमंत्री पद से हाथ धोना पडा[47]।

बहुगुणा, राजनीति मे अपने सिद्धान्तो से समझौता कभी नही करते थे। जैसा कि पूर्व में लिखा जा चुका है—'के० के० बिड़ला को ससद में नही जाने दूँगा' उन्होने यह पहले ही तय कर लिया था और यह करके दिखा भी दिया। यद्यपि इंदिरागांधी के आदेश थे कि बिड़ला को समर्थन दिया जाय। जय प्रकाश नारायण इंदिरा सरकार को उखाडने मे लगे हुए थे, उस समय मुख्यमंत्री बहुगुणा ने जे० पी० के उत्तर प्रदेश के दौरे के समय उन्हे राज्य अतिथि बनाया। इसी प्रकार संजय गांधी की उस समय सारे देश मे तूती बोल रही थी। वे देश की सत्ता के गैर संवैधानिक केन्द्र बन चुके थे। वे राजकाज मे निर्णय लेते और मंत्रियों, मुख्यमंत्रियो तथा आला अफ्सरो को निर्देश भी देने लगे थे[48]। ऐसे समय मे बहुगुणा ने उन्हें अपने पास न फटकने दिया और उनकी डटकर मुखालफत की। अपने एक साक्षात्कार मे बहुगुणा ने बताया है कि "मैं इमरजेंसी काल मे जितने दिन तक मुख्यमंत्री रहा संजयगांधी उत्तर प्रदेश मे दाखिल न हो सके। सारे देश मे घूमते रहे। सब संजय को घुमा रहे थे। मेरा राजसत्ता से मोह या कोई निहित स्वार्थ होता तो मै भी उन्हे

---

44 दिनमान, साप्ताहिक हिन्दी पत्रिका, 21-27 अप्रैल, 1985, पृष्ठ सख्या- 25।

45 राम कृष्ण खत्री का बहुगुणा पर प्रकाशित स्मारिका मे छपा लेख, मई, 1990, इलाहाबाद, पृष्ठ सख्या- 59।

46 दि पायोनियर, अंग्रेजी दैनिक समाचार पत्र, लखनऊ, 28 जून, 1975, पृष्ट संख्या- 1।

47 राम कृष्ण खत्री का बहुगुणा पर प्रकाशित स्मारिका मे छपा लेख, वही।

48 डा० चन्द्रिका प्रसाद शर्मा कवि राजनेता, अटल बिहारी वाजपेयी, वही, पृष्ठ सख्या- 155।

अपने प्रदेश मे घुमाकर, उनका सहयोग प्राप्त करके कुर्सी पर बना रह सकता था[49]।"

स्रोतो से पता चलता है कि उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री के रूप मे बहुगुणा ने आपातकाल के दौरान कानून और व्यवस्था पर कडी नजर रखी थी। उनकी जानकारी में कोई भी निर्दोष व्यक्ति पुलिस के दुव्यवहार से पीडित न हो सका और न ही गिरफ्तार हुआ। पत्रकार वार्ता के दौरान एक सवाल के जवाब मे उन्होने स्पष्ट कहा था कि "अनावश्यक किसी व्यक्ति को गिरफ्तार नही किया जाएगा।"[50] एक साक्षात्कार मे चन्द्र शेखर का कहना है कि "आपातकाल के दिनो मे मै जेल मे था, मैने सुना कि उत्तर प्रदेश के मुख्यमत्री के रूप मे बहुगुणा ने लोगो के साथ सद्भावना और सद्व्यवहार के आचरण का निर्वाहकिया था। व्यक्तिगत रूप से मै कह सकता हूँ कि मेरे जिले मे जिलाधिकारी से उन्होने कहा कि तुम्हे ध्यान रखना चाहिए कि मेरे परिवार या मेरे घरवालो और गॉव वालो के साथ कोई किसी तरह का दुर्व्यवहार न करे। मैने यह भी सुना कि कुछ गॉव वालो के साथ ज्यादतियॉ हुई और उस पर बहुगुणा का हाथ था, ऐसा मै नही मानता[51]।"

49 दिनमान, साप्ताहिक हिन्दी, पत्रिका, 21-27 अप्रैल, 1985, पृष्ठ संख्या- 24।

50 दि पायोनियर, अग्रेजी दैनिक समाचार पत्र, लखनऊ, 28 जून, 1975, पृष्ठ संख्या- 1।

51 चन्द्र शेखर (पूर्व प्रधानमत्री, भारत सरकार) का साक्षात्कार, दिल्ली दूरदर्शन द्वारा प्रसारित बहुगुणा पर वृत्त चित्र (25 अप्रैल, 1998)।

जनता सरकार : प्रतिस्थापना और पतन

——कांग्रेस फार डेमोक्रेसी और सत्ता परिवर्तन

इदिरागांधी ने दिसम्बर, 1977 मे एकाएक नये संसदीय चुनाव की घोषणा करके आपातकाल तथा प्रेस के सेसर मे ढील दे दी। इसके उपरान्त अधिकांश विपक्षी राजनीतिक व्यक्तियों को जेल से मुक्त कर दिया गया। इंदिरागांधी और उनके पुत्र संजय को प्रायः यह विश्वास था कि चुनाव के लिए थोड़ा ही समय दिया गया है, इस अन्तराल मे विपक्षी अपने चुनाव प्रचार हेतु आवश्यक संसाधन इकुटठा करने में असफल रहेगे। किन्तु परिणाम इन सम्भावानाओं के विपरीत हुआ[1]। जनता पार्टी जिसका जन्म ड्राइंगरूप में नहीं वल्कि 'कारगार की कोख' से हुआ था[2], पूरे जोर-शोर से चुनाव लड़ी और कांग्रेस को करारी मात दी। इस चुनाव में कांग्रेस की ऐतिहासिक पराजय हुई, इतना ही नहीं बल्कि आजादी के बाद कांग्रेस सबसे दयनीय हालत मे रही[3]। स्वयं इदिरागाधी रायबरेली में हार गयी थीं। उत्तर प्रदेश में जहाँ से लोक सभा के लिए 85 सीटें हैं, एक भी कांग्रेसी चुन कर नही आया। कमला पति त्रिपाठी भी उपरोक्त तथ्य को स्वीकार करते हुए लिखते है कि 'उत्तर भारत मे कांग्रेस की स्थिति शून्य हो गयी, उसे कोई पानी देने वाला भी नहीं रहा[4]।

चन्द्रशेखर की अपील थी कि 'जनता पार्टी' जनता की पार्टी है। इसका जन्म जनता की आकांक्षाओं की पूर्ति के लिए हुआ है। एक ओर लोकतंत्र के पक्षधर दलों और संस्थाओं के नेता तथा कार्यकर्ता बन्दी जीवन बिता रहे थे, दूसरी ओर देश की जनता गुलामी से भी बदतर जीवन जी रही थी। ऐसी गुलामी जो हजार साल के विदेशी शासन मे भी न दिखाई दी थी[5]। प्रायः यह भी माना जाता है कि जनता पार्टी के गठन के बाद काग्रेस शासन तथा विदेशों की यह धारणा दफन हो गयी कि इस देश में कांग्रेस का विकल्प नही आ सकता। वास्तव में विगत अत्याचारों की श्रृखला तथा लोक सभा का चुनाव गवाह है कि आम मतदाता ने जनता पार्टी और जनता सरकार को जन्म दिया[6]। ध्यातव्य है कि इस चुनाव में विभिन्न राजनैतिक दल-काग्रेस (संगठन), भारतीय लोकदल, जनसंघ और सोसलिस्ट तथा बाद में कांग्रेस फार डेमोक्रेसी भी गैर काग्रेसी सरकार की प्रतिक्षा में एक ही मंच पर अर्थात् जनता पार्टी में शामिल हो गये थे[7]।

जनता पार्टी की स्थापना और जय-प्रकाश के प्रेरक नेतृत्व से जनता में अपार उत्साह जग गया था।

---

1 पाल ब्रास : दि पोलिटिक्स आफ इंडिया सिन्स इन्डिपेन्डेन्स, हैदराबाद, 1990, पृष्ठ संख्या-42।

2 हर रविवार भाग-3, दिल्ली, जून, 1992, पृष्ठ संख्या- 44।

3 आलोक तोमर का दैनिक जागरण, हिन्दी दैनिक समाचार पत्र में प्रकाशित लेख, 12 नवम्बर,1997, पृष्ठ संख्या- 6।

4 कमलापति त्रिपाठी : स्वतंत्रता आन्दोलन और उसके बाद, कश्मीरी गेट, दिल्ली, 1988, पृष्ठ संख्या- 266।

5 हर रविवार भाग-एक दिल्ली, जून, 1992 पृष्ठ संख्या- 27।

6 वही, पृष्ठ संख्या- 19।

7 वर्ल्ड इनसाइक्लोपीडिया आफ पोलिटिकल सिस्टमूस, (खण्ड-एक), [illegible] किंगडम, 1983, पृष्ठ संख्या- 44।

लेकिन दूसरे पक्ष को भी नजर अन्दाज नही किया जा सकता है जिसमे यह पता चलता है कि चुनाव की घोषणा के बाद मतदाता कांग्रेसी नीति के प्रति आन्तरिक रूप से खिन्न तो जरूर थे परन्तु इंदिरा गांधी व संजय के विपरीत जाने का साहस नही जुटा पा रहे थे। मतदाता अक्सर कहते हुए पाये गये कि कांग्रेस को वोट देने के सिवाय उनके पास कोई चारा नहीं है, हमें इंदिरागांधी के कोप का शिकार नहीं होना है[8]। पता चलता है कि फरवरी, 1977 मे यह हवा एकदम से तब बदली जब हेमवती नन्दन बहुगुणा ने जगजीवन राम एव नन्दिनी सत्पथी के साथ कांग्रेस से त्याग पत्र देकर 'कांग्रेस फार डेमोक्रेसी' की स्थापना की[9]। इसी तथ्य को स्पष्ट करते हुए मधुलिमये ने भी अपने एक संस्मरण में लिखा है—"जगजीवन राम और बहुगुणा के विद्रोह की खबर दो फरवरी की दोपहर मैंने आकाशवाणी पर सुनी। उस समय मैं भोपाल जेल में था। इस विद्रोह का मेरे मूल्यांकन पर गहरा असर हुआ। मैं जानता था कि मतदाता जनता पार्टी के साथ हैं परन्तु मेरे मन में कुछ सन्देह था। क्या मतदाताओं का डर टूट जाएगा? क्या वोट डालने के लिए वे घर से निकलेंगे? जगजीवन राम की बगावत के कारण अब जनता का डर समाप्त हो जाएगा, ऐसा मुझे यकीन हुआ। रिहाई के बाद मैने जो दौरा किया, उससे मेरा विश्वास पक्का हो गया"[10]। यानि तत्कालीन समय में जगजीवन राम और बहुगुणा का कांग्रेस से निकलना एक तरफ जहाँ कांग्रेस की ताकत को कमजोर करने मे प्रभावकारी रहा वहीं दूसरी ओर गैर कांग्रेसी दलों के मनोबल को बढ़ाने में भी विशेष मददगार साबित हुआ। इस संदर्भ में मुलायम सिंह यादव का कथन भी विशेष प्रासंगिक लगता है—"1977 में बाबू जगजीवन राम के साथ कांग्रेस छोड़कर बहुगुणा ने देश की राजनीति को ऐतिहासिक मोड़ दिया और कांग्रेस को सत्ता से उखाड़कर जनता पार्टी को सत्ता में लाने में उतना ही प्रमुख योगदान दिया"[11]।

तत्कालीन चुनाव व जनता सरकार की समीक्षा शुरू करें, इसके पूर्व कांग्रेस के आन्तरिक विद्रोह में ही जन्मी 'कांग्रेस फार डेमोक्रेसी' की वर्तमान अर्थवत्ता को मद्देनजर रखते हुए इसकी उत्पत्ति पर एक संक्षिप्त विश्लेषण प्रासंगिक लगता है। पूर्व अध्याय में चर्चा की जा चुकी है कि मुख्यमंत्री पद से हटने के बाद हेमवती नन्दन बहुगुणा को किस प्रकार एक निर्वासित जीवन व्यतीत करने के लिए विवश किया गया तथा उनका प्रदेश और देश में राजनीतिक वर्चस्व समाप्त करने के लिए उनके विरुद्ध विभिन्न हथकंडे अपनाए गये। केन्द्र तथा उत्तर प्रदेश के कई कांग्रेसी नेताओं ने बहुगुणा की छवि बिगाड़ने के निमित्त उन पर आरोपों की झड़ी लगा दी और इदिरागांधी के कान भरने में कोई कसर नहीं छोड़ी। यहाँ तक कि इंटेलिजेन्स ब्यूरों की रिपोर्ट्स के द्वारा यह कहलवाया गया कि बहुगुणा प्रधानमंत्री के समक्ष अपने को शक्तिशाली व स्वतंत्र

---

8 राम कृष्ण खत्री का बहुगुणा पर प्रकाशित स्मारिका में छपा लेख, इलाहाबाद, मई 1990, पृष्ठ संख्या- 59।

9 राम कृष्ण खत्री, वही।

10 मधुलिमये : संक्रमण कालीन राजनीति, लखनऊ, 1986, पृष्ठ संख्या- 89।

11 मुलायम सिंह यादव (पूर्व रक्षा मंत्री भारत सरकार) का स्मारिका में छपा संदेश, इलाहाबाद, मई, 1990।

अस्तित्व वाला प्रदर्शित करना चाहते है[12]।

ज्ञातव्य है कि इसी समय बहुगुणा के समाचारो पर सेंसरशिप भी लग गया था ताकि वे अपनी संवेदना को समाज तक न पहुँचा सके और लोकप्रियता से हाथ धो बैठे। अब उनका वक्तव्य सेंसरबोर्ड की अनुमति पर ही प्रकाशित हो सकता था[13]। स्वाभाविक तौर पर सेंसरबोर्ड जो काग्रेसी संस्कृति के घरौंदे में कैद था, बहुगुणा के विचारों को नजर अन्दाज करता। यद्यपि बहुगुणा ने इसके विरोध में कई पत्र प्रधानमंत्री इंदिरागांधी, सूचना एवं प्रसारण मंत्री विद्याचरण शुक्ल तथा उत्तर प्रदेश के मुख्य मंत्री नारायण दत्त तिवारी को भेजे थे, जिसमे उन्होंने लिखा था कि—'मुझे दुःख है कि यह निर्देश इस आशय का संकेत देता है कि मेरी ओर से अनावश्यक भय महसूस किया जा रहा है, मेरा सुझाव है कि सेंसर की सामान्य नीति के अनुसार यह निर्देश वापस लिया जाय'[14]। किन्तु इस प्रयास का कोई सार्थक परिणाम न निकला बल्कि और बिगड़ता चला गया। यहॉ तक कि कांग्रेसी नेता उनसे मिलने में भी कतराने लगे। उन्हें डर था कि कहीं उनकी शिकायत हाई कमान से न हो जाय[15]।

इस कठिन परिस्थिति और संघर्ष पूर्ण दिनों में भी अस्थिर और चंचल मस्तिष्क वाले बहुगुणा ने हिम्मत नहीं हारी, साहस से काम लिया और चिन्तन-मनन में जुट गये। बहुगुणा अब तक वैचारिक आधार पर इदिरागांधी की तात्कालिक नीतियों से दूर हटने लगे थे तथा कांग्रेसी संस्कृति से उनका मोह भंग होने लगा था। परिणामस्वरूप उन्होंने जग-जीवन राम के साथ 2 जनवरी, 1977 को एक संयुक्त वक्तव्य दे ही दिया। नेताद्वय ने कहा कि "हम लोगो ने 1969 मे इंदिरागांधी का समर्थन इसी आधार पर किया था कि वे महात्मागांधी के आदर्शो पर आधारित अखिल भारतीय कांग्रेस की पुरातन परम्परा को अनवरत जारी रखेगी। इंदिरागांधी ने संकल्प लिया था कि वे संकुचित मानसिकता के तहत व्यक्तिगत मालिकाना की प्रवृत्ति को पार्टी से दूर करेंगी तथा अपने 'गरीबी हटाओं' नारे के अनुसार समाजवादी दृष्टिकोण अपनाते हुए समाज में अल्पसंख्यक, दलित व मजदूर वर्गो के उत्थान हेतु समर्पित रहेंगी। किन्तु आपातकाल के बाद से उनमें अशुभ लक्षण दिखने लगे हैं, लोक जीवन में कहीं भी मर्यादा और पवित्रता का रूप नहीं है। काग्रेस संगठन के बुनियादी सिद्धान्त हर स्तर पर ध्वस्त हो चुके हैं। संगठन तथा सदन दोनों जगह अनुशासनहीनता को न केवल सहन किया जा रहा है बल्कि प्रोत्साहित भी किया जा रहा है"[16]।

जैसे ही इंदिरागांधी ने आम चुनाव की घोषणा की, बहुगुणा खुले रूप से बोल बैठे—'इंदिरागांधी ने

---

12 राम गोपाल : इंडिया अण्डर इंदिरा, नई दिल्ली, 1986, पृष्ठ संख्या- 39।

13 राम गोपाल : वही।

14 हेमवती नन्दन बहुगुणा द्वारा विद्याचरण शुक्ल को लिखा गया पत्र, लखनऊ, 8 जनवरी, 1976 (बहुगुणा के आवासीय दस्तावेजों से प्राप्त)।

15 डा० रीता बहुगुणा जोशी एवं डा० राम नरेश त्रिपाठी : हेमवती नन्दन बहुगुणा, नई दिल्ली,1999, पृष्ठ संख्या- 119।

16 दि हिन्दुस्तान टाइम्स, अंग्रेजी दैनिक समाचार पत्र, नई दिल्ली, 2 जनवरी, 1977 पृष्ठ संख्या- 7।

एक भूल और कर दी अब वे सत्ता मे नही रह पायेगी'[17]। तत्पश्चात् वे शीघ्र ही दिल्ली पहुँचे और कांग्रेस के विकल्प के रूप में एक नये दल के गठन में जुट गये। 2 फरवरी, 1977 को कांग्रेस के शीर्षस्थ नेता जगजीवन राम, उड़ीसा की पूर्व मुख्यमत्री नन्दिनी सत्पथी, पूर्व कैबिनेट मन्त्री के० आर० गणेश, भंग हुई ससद के सदस्य डी० एन० तिवारी व राजमंगल पाण्डेय तथा अन्य नेताओं को साथ लेकर बहुगुणा ने 'कांग्रेस फार डेमोक्रेसी' नामक नये दल की घोषणा कर दी[18]। पता चलता है कि इस नये दल का गठन इतने गोपनीय ढग से हुआ था कि अन्तिम समय तक किसी को कुछ भी पता नहीं था। इस सम्बन्ध में राम कृष्ण खत्री अपने एक सस्मरण मे लिखते हैं—'इंदिरागांधी की उपस्थिति में कांग्रेस मंत्रिमण्डल की एक बैठक चल रही थी एवं बाबू जगजीवन राम का इतजार हो रहा था। बजाय उनके वहां उनका इस्तीफा पहुंचा। तो वहां उपस्थित सभी मंत्री भौचक्के रह गये विशेष रूप से इंदिरा जी। यह काम इतना गुप-चुप व सफाई से हुआ कि इसकी प्रेस कांफ्रेस मे घोषणा से पहले जरा सी किसी को भनक भी नहीं पड़ी थी'[19]। कांग्रेस फार डेमोक्रेसी की स्थापना होते ही पूर्व राष्ट्रपति वी० वी० गिरि के पुत्र शंकरगिरि और हरियाणा के नेता भजनलाल भी पार्टी में शामिल हो गये। जामा मस्जिद के शाही इमाम सहित देश भर से सैकड़ों मुसलमानों ने समर्थन की घोषणा की। विजय लक्ष्मी पंडित दल में तो शामिल नहीं हुई किन्तु कांग्रेस फार डेमोक्रेसी के पक्ष मे प्रचार हेतु तैयार हो गयीं। उन्होंने बयान दिया था कि इमरजेंसी स्वतंत्रता संग्राम के मूल्यों के विरुद्ध है, इसलिए उन्होंने प्रचार का निर्णय लिया है[20]।

कांग्रेस फार डेमोक्रेसी की स्थापना प्रधानमंत्री इंदिरागांधी के लिए बहुत बड़ी चुनौती थी। स्वाभाविक तौर पर पार्टी के इस विघटन ने तहलका मचा दिया था क्योंकि कांग्रेस के लिए यह विद्रोह बहुत मँहगा साबित होता। स्वयं कमलापति त्रिपाठी लिखते हैं कि `1969 में कांग्रेस वैचारिक आधार पर टूटी थी। उस समय प्रधानमंत्री इंदिरागाधी के पास शक्ति, साधन व पर्याप्त समर्थन था, जिसके तहत जगजीवन राम की अध्यक्षता में पुनः खड़ी हो गयी। इतनी बलवती हो गयी कि पाकिस्तान और बगला देश के मामले में जबरदस्त भूमिका अदा करने में सफल हुई। परन्तु अब कांग्रेस को पुनः खड़ा करना सम्भव नहीं होगा क्योंकि अब इंदिरागांधी का न साधन रहा न उनकी वह शक्ति रही जो कांग्रेस के बिखराव के बाद उसमें प्राण संचार कर सकती है[21]। जगजीवन राम ने भी कांग्रेस की कार्यकारिणी समिति तथा प्राथमिक सदस्यता से त्यागपत्र देने के बाद कहा कि 'एक लोकतान्त्रिक संगठन के रूप में कांग्रेस की सारी मर्दायें समाप्त हो चुकी हैं[22]।

---

17 डा० रीता बहुगुणा जोशी एवं डा० रामनरेश त्रिपाठी : हेमवती नन्दन बहुगुणा, नई दिल्ली,1999, पृष्ठ संख्या- 137।

18 दि हिन्दुस्तान टाइम्स, अंग्रेजी दैनिक समाचार पत्र, 3 फरवरी, 1977, पृष्ठ संख्या- 1।

19 राम कृष्ण खत्री का स्मारिका में छपा लेख, वही।

20 डा० रीता बहुगुणा जोशी एवं डा० राम नरेश त्रिपाठी : हेमवती नन्दन बहुगुणा, वही, पृष्ठ संख्या- 137।

21 कमलापति त्रिपाठी : स्वतंत्रता आन्दोलन और उसके बाद, दिल्ली, 1988, पृष्ठ संख्या-262-263।

22 दि हिन्दुस्तान टाइम्स, अंग्रेजी दैनिक समाचार पत्र, नई दिल्ली, 3 फरवरी, 1977, पृष्ठ संख्या- 1।

तत्कालीन चुनाव मे सहभागिता के लिए कांग्रेस फार डेमोक्रेसी के नेताओं से जब सवाल पूछा गया तो बहुगुणा का कहना था कि 'हम लोग लोकतत्र और समाजवाद की बहाली के लिए संघर्षरत है, इसलिए इस चुनाव मे शामिल होना हमारा नैतिक दायित्व बनता है'[23]। किन्तु जगजीवन राम ने त्रिकोणीय संघर्ष मे साफ-साफ इन्कार किया अर्थात् कुछ हद तक जनता पार्टी के समर्थन की बात स्पष्ट हो गयी थी। लगभग चार दशको से ज्यादा कांग्रेस के साथ सम्बन्ध होते हुए भी अचानक कांग्रेस छोड़ने के कारण पूछने पर जगजीवन राम ने इसे 'राष्ट्र की पुकार' कही तथा बहुगुणा ने कहा कि 'हम कांग्रेस को अचेतावस्था मे निकालने का प्रयत्न कर रहे है, अगर उनमे सद्बुद्धि आ जाय तो हमारा उनसे कोई विरोध नही है। हम उनमे जनतात्रिक भवानाएँ पुन. जगाना चाहते हैं'[24]। यानि बहुगुणा का तत्काल इंदिरा कांग्रेस से मोह भग जरूर हुआ था लेकिन उनकी आस्था अभी भी पुरानी कांग्रेसी विचार धारा से जुड़ी थी।

चुनावी परिप्रेक्ष्य मे बहुगुणा ने इस प्रचार को गलत बताया कि जनता पार्टी के साथ उनके सगठन का कोई मतभेद है और उनमे दरार पड़ रही है। एक पत्रकार वार्ता में उन्होंने इस संशय को स्पष्ट करते हुए कहा कि 'केन्द्र में कांग्रेस के स्थान पर एक अच्छी साफ-सुथरी, ईमानदार व स्थिर सरकार देने का हमारा दोनो का समान लक्ष्य है और इसलिए हमने मिलकर उम्मीदवार तय किये है और प्रचार कर रहे है। सत्ता छीनने मे हम विश्वास नही रखते। हमारा उद्देश्य देशहित को सर्वोपरि मानकर अच्छी सरकार की स्थापना मे मदद् देने का है'[25]। पुराने कांग्रेसियों को अपने संगठन मे मिलने का मौका देने के सम्बन्ध में बहुगुणा ने कहा कि 'मैं तो एक बड़ी धारा को इधर आते हुए देख रहा हूँ। हमारा तो धर्मयुद्ध है, इसमें कौन शामिल नही होना चाहेगा।' लेकिन उन्होने यह भी कहा कि 'आगन्तुकों को स्वयं सेवक के समान अपनी गलतियों का प्रायश्चित करना होगा'[26]। परिणामस्वरूप जनता पार्टी के चुनाव अभियान को तूफानी गति देने, 'डेढ़ आदमी राजा का राज' जनता को समझाते हुए बहुगुणा जहां भी गये लोग कांग्रेस छोड़कर कांग्रेस फार डेमोक्रेसी से जुड़ते गये[27]।

बहुगुणा ने इस आम चुनाव में अपना संसदीय क्षेत्र उत्तर प्रदेश की राजधानी लखनऊ को चुना, जहॉ उनका मुकाबला इंदिरागांधी की मामी शीला कौल से था। उन्होंने शीला कौल को एक लाख से अधिक मतों से पराजित किया। पूरे देश मे कांग्रेस का सफाया हो गया और इंदिरागांधी हाथ मलकर रह गयी[28]। ज्ञातव्य है कि इस चुनाव मे कांग्रेस पार्टी को 34.5 प्रतिशत वोट ही मिल सके जबकि इसके पहले के सभी आम

---

23 दि हिन्दुस्तान टाइम्स, वही।

24 दि हिन्दुस्तान टाइम्स, वही।

25 हिन्दुस्तान, हिन्दी दैनिक समाचार पत्र, नई दिल्ली, 20 मार्च, 1977, पृष्ठ संख्या- 1।

26 हिन्दुस्तान . वही।

27 डा० रीता बहुगुणा जोशी एव डा० राम नरश त्रिपाठी, वही, पृष्ठ संख्या- 138-139।

28 वही, पृष्ठ सख्या- 139।

चुनावो मे उसे 41 से लेकर 48 प्रतिशत के बीच वोट मिलते रहे थे[29]। वास्तव में यह एक ऐतिहासिक चुनाव था जिसमे पहली बार जनता ने तानाशाही ताकत को करारी मात देकर लोकतत्र में आस्था प्रकट की थी। इसे 'वोट क्रांति'[30] भी कहना समीचीन लगता है क्योकि इसके जरिये जनता पार्टी में शामिल लोग 295 की सख्या मे जीत कर[31] पहली बार दिल्ली पहुंचे थे।

बहुमत मे आने के बाद दिल्ली में जनतापार्टी के नेताओं की बैठकों का सिलसिला शुरू हुआ। अब मामला दल के नेता कोचुनने का आया। मधुलिमये ने कहा कि 'मेरी राय में मोरारजी भाई का प्रधानमंत्री बनना ठीक नही होगा। वे जिद्दी हैं, अतः मेरा सुझाव है कि जगजीवन बाबू को प्रधानमंत्री का पदभार सौंप देना चाहिए। चौधरी चरण सिंह को उत्तरी इलाकों में किसानों का समर्थन हासिल है, अतः वे उपप्रधान मंत्री बने। इससे एक महान सामाजिक परिवर्तन का भी सूत्रपात होगा'[32]। इसी प्रकार डा० रीता जोशी ने भी अपनी पुस्तक 'हेमवती नन्दन बहुगुणा' में लिखा है कि—'बाबू जगजीवन राम के प्रधानमंत्री होने से इतिहास कुछ और ही होता, क्योंकि वे कांग्रेस के एक महत्वपूर्ण हिस्से को अपनी ओर आकर्षित करने में समर्थ थे जो मोरारजी के बस के बाहर था'[33]। लेकिन जनता पार्टी के कुछ नेताओं को यह असहनीय था। अन्ततः दिल्ली मे राजघाट पर गाधी समाधि पर प्रतिज्ञा लेने के बाद शांति भूषण आदि ने कह ही दिया कि— "इमरजेसी का प्रस्ताव रखने वाले जगजीवन राम को हम प्रधानमंत्री नहीं कबूल करेंगे"[34]। गौरतलब है कि इन्दिरागांधी के निर्देश पर जगजीवन राम ने जून 1975 में संसद में आपातकाल की पुष्टि हेतु प्रस्ताव रखा था और उसके समर्थन में तर्क सम्मत भाषण भी दिया था[35]। किन्तु इमरजेंसी प्रस्ताव रखने पर आपत्ति करने वाले नेता कांग्रेस में उनके विद्रोह से कितने हर्षित हुए थे, इसका भी ध्यान रखना होगा। वैसे मधुलिमये की व्यक्तिगत सोंच इस सन्दर्भ में विशेष प्रासंगिक लगती है। उन्होंने लिखा है—'मुझे लगता है जगजीवन राम की उम्मीदवारी का विरोध करने के पीछे सैकड़ों साल का असद्भाव और जातीयता की मनोवृत्ति ही मुख्यतः जिम्मेदार थी'[36]।

राजनारायण तथा बीजू पटनायक भी जगजीवन राम के सख्त खिलाफ थे। नानाजी देश मुख और अटल बिहारी बाजपेयी यद्यपि उनके पक्ष में थे किन्तु जनसंघ का एक बड़ा हिस्सा मोरारजी के साथ था।

---

29 वर्ल्ड इनसाइक्लोपीडिया आफ पोलिटिकल सिस्टम्स, खण्ड-एक, यूनाइटेड किंगडम, 1983, पृष्ठ संख्या- 45।

30 दिल्ली दूरदर्शन से प्रसारित हेमवती नन्दन बहुगुणा पर वृत्त चित्र, वही।

31 पाल ब्रास : दि पोलिटिक्स आफ इंडिया सिन्स इंडिपेन्डेन्स, हैदराबाद, 1990, पृष्ठ संख्या- 42।

32 मधुलिमये . संक्रमण कालीन राजनीति, लखनऊ, 1986, पृष्ठ संख्या- 90।

33 डा० रीता बहुगुणा जोशी एवं डा० राम नरेश त्रिपाठी : हेमवती नन्दन बहुगुणा, नई दिल्ली,1999, पृष्ठ संख्या- 140।

34 मधुलिमये : संक्रमण कालीन राजनीति, वही, पृष्ठ संख्या- 90।

35 हर रविवार भाग-तीन वही, पृष्ठ संख्या- 237।

36 मधुलिमये : संक्रमण कालीन राजनीति, वही, पृष्ठ संख्या- 90।

समाजवादियो मे विष्णु कामथ सरीखे कुछ लोग भी मोरारजी के पक्ष में थे। स्वयं चरणसिंह भी जगजीवन राम के खिलाफ थे. उन्होंने कृपलानी, जय प्रकाश को एक पत्र द्वारा सूचित किया कि उनका समर्थन मोरारजी को रहेगा। अर्थात् कुल वातावरण जगजीवन राम विरोधी मालुम हुआ[37]। वैसे नेता के चुनाव के लिए लोकतांत्रिक प्रणाली के उपचार को ताक पर रखना शोभनीय नहीं था। मोरारजी देसाई ने भी चुनाव के पूर्व स्वय कहा था कि संसदीय दल मे नेता का चुनाव होगा[38]। किन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि संसदीय प्रविधि से हटकर तत्कालीन राजनीति गुटबाजी में तब्दील हो गयी। इस प्रक्रिया से जगजीवन राम का नाराज होना स्वाभाविक था। अब मामला आया उन्हें मनाने का, क्योंकि मोरारजी ने अपनी सरकार बनाने के लिए उन्हें सन्तुष्ट रखना जरूरी समझा। मधुलिमये लिखते हैं कि "मोरारजी के कहने पर नानाजी और मैं जगजीवन राम को मनाने उनके पास गये। मोरारजी ने कहा था कि गृह मंत्रालय तथा विदेश मंत्रालय को छोड़कर हम उन्हें वित्त, सुरक्षा या अन्य कोई भी मंत्रालय लेने के लिए मनाएँ। गृह मंत्री पद का वचन मोरारजी ने चरण सिह को दिया था और विदेश मंत्रालय का सौदा उन्होंने अटल बिहारी बाजपेयी से किया था"[39]। आगे उन्होंने यह भी लिखा है कि "हमारी बातों पर बाबूजी राजी हो गये"[40]। लेकिन सूत्रों से यह भी पता चलता है कि जय प्रकाश नारायण की अपील पर जगजीवन राम जनता सरकार में सम्मिलित होने के लिए तैयार हुए थे[41]। सरकार मे शामिल होने की घोषणा के समय जगजीवन राम ने अपने एक वक्तव्य में कहा भी था कि 'जय प्रकाश नारायण की इच्छा के अनुसार मैने प्रधानमंत्री मोरारजी को सहयोग देने का निश्चय किया है[42]।'

हेमवती नन्दन बहुगुणा, लोकतंत्र की बहाली का उद्देश्य पूरा हो जाने के बाद सत्ता में शामिल न होकर कांग्रेस फार डेमोक्रेसी को मजबूत बनाते हुए उसे वैचारिक क्रांति का धारदार हथियार बनाना चाहते थे, परन्तु तत्कालीन परिस्थितियों ने उन्हें ऐसा नहीं करने दिया। जय प्रकाश नारायण तथा जगजीवन राम के कारण उन्हें विलय प्रस्ताव मंजूर करने के लिए बाध्य होना पड़ा[43]।

मंत्रियों की सूची बनाते समय वरीयता का सवाल बड़ा पेंचीदा रहा। मोरारजी ने कहा चरण सिह, जगजीवन राम के अलावा मैं बाकी नाम वर्णमाला के अनुसार रखूँगा। परन्तु यह सिर्फ कहने की बात थी, पहले ही उन्होंने सम्पूर्ण मंत्रिमण्डल की रचना कर डाली थी। जबकि आम धारणा यही थी कि जैसा तय हुआ था वैसे हर दल से दो-दो मंत्री रहेंगे, और एक अकालीदल का तथा एक निर्दलीय विद्रोही कांग्रेसियों का। सूची में मूलनाम इस प्रकार थे—चरण सिंह, राजनारायण, जगजीवन राम, हेमवती नन्दन बहुगुणा, अटल

---

37 मधुलिमये . वही, पृष्ठ सख्या- 91।
38 डा० रीता बहुगुणा जोशी एवं डा० राम नरेश त्रिपाठी, वही, पृष्ठ संख्या- 140।
39 मधुलिमये : संक्रमण कालीन राजनीति, वही, पृष्ठ संख्या- 9।
40 मधुलिमये : वही, पृष्ठ संख्या- 91।
41 हिन्दुस्तान, हिन्दी दैनिक समाचार पत्र, नई दिल्ली, 28 मार्च, 1977, पृष्ठ संख्या- 1।
42 हिन्दुस्तान, वही।
43 दिल्ली दूरदर्शन से प्रसारित बहुगुणा पर वृत्त चित्र, 25 अप्रैल, 1998।

बिहारी बाजपेयी, लाल कृष्ण अडवाणी, जार्ज फर्नांडीज, कौशिक, सिकन्दरबख्त, पी० राम चन्द्रन, प्रकाश सिह बादल व चन्द्रशेखर आदि[44]।

हेमवतीनन्दन बहुगुणा ने सत्ता में शामिल होकर पेट्रोलियम, रसायन एवं उर्वरक मंत्री का पद सम्हाला[45]। पिछले मंत्रालयो की तरह ही उन्होंने इस बार भी इस मंत्रालय पर अपनी अलग छाप छोड़ी। मंत्री पद पर आते ही उन्होंने सर्वप्रथम दवाओं के मूल्य को नियंत्रित करने की दिशा में प्रभावशाली कदम उठाया। इस सन्दर्भ में उन्होंने दवा की बिक्री करने वालों की दुकानों तथा गोदामों पर आकस्मिक जाँच कराई जिससे पता चला कि दवा विक्रेता निर्धारित मूल्यों से अधिक दाम ले रहे है। ऐसे विक्रेताओं के विरुद्ध कानूनी कार्यवाही की गई। उन्होंने ड्रग कन्ट्रोलर्स को निर्देश दिया कि दुकानों का पाक्षिक सर्वे करें और दोषी दुकानदारो के खिलाफ कड़ी कार्यवाही करे[46]। सार्वजनिक क्षेत्र के रासायनिक खाद कारखानों का विकेन्द्रीकरण बहुगुणा का ही प्रयोग था। इस सन्दर्भ में उनका मानना था कि विकेन्द्रीकरण किये बगैर प्रबन्ध की दृष्टि से रासायनिक खादो का उत्पादन, विकास, आधुनिकीकरण तथा विस्तार में अधिक समय ही नहीं लगता बल्कि यह पूरी पद्धति सरकारी खजाने पर बोझ बन जाती है और करदाताओं के पैसे का सदुपयोग नहीं हो पाता[47]। इसके अलावा एक पत्रकारवार्ता में उन्होंने यह भी स्पष्ट किया कि आर्थिक दृष्टि से सार्वजनिक क्षेत्र के खाद कारखानों को चार कम्पनियो मे इसलिए बॉटा जा रहा है कि इससे उत्पादन की ही समस्या का निदान नहीं होगा बल्कि उत्पादन लागत में भी कमी होगी[48]।

बहुगुणा के कार्यकाल की एक प्रमुख समस्या यह भी थी कि भारत तत्कालीन समय में तेल के गम्भीर संकट से गुजर रहा था। कारण यह था कि तेल प्रधान देश तेल की कीमत बढ़ाने के उद्देश्य से तेल की आपूर्ति रोक दिये थे। इस संकट से निबटने के लिए बहुगुणा ने रोमानिया, इराक, नार्वे, लीबिया, साउदी अरब तथा रूस आदि तेल प्रधान देशों की यात्राएँ की तथा आशानुरूप सफलताएँ भी प्राप्त की[49]। नतीजतन देश में न पेट्रोल की कीमत बढ़ी न मिट्टी के तेल की और न ही उनके कार्यकाल में इनकी आपूर्ति मे कही कोई रूकावट आयी[50]। दिल्ली दूरदर्शन से प्रसारित एक साक्षात्कार मे पता चलता है कि इराक यात्रा के दौरान बहुगुणा को अपनी बात रखने के लिए कड़ी मशक्कत करनी पड़ी थी। किसी कीमत पर भी इराक के राष्ट्राध्यक्ष वार्ता हेतु तैयार न थे। उनका कहना था कि बहुगुणा अपना पत्र यहाँ छोड़कर चले जायें, उनके

---

44 मधुलिमये : संक्रमण कालीन राजनीति, वही, पृष्ठ संख्या- 92।

45 हिन्दुस्तान, हिन्दी दैनिक समाचार पत्र, नई दिल्ली, 28 मार्च, 1977, पृष्ठ संख्या- 5।

46 दिल्ली दूरदर्शन से प्रसारित बहुगुणा का वृत्त चित्र, 25 अप्रैल, 1998।

47 दैनिक जागरण, हिन्दी दैनिक समाचार पत्र, कानपुर, 4 अगस्त, 1977, पृष्ठ संख्या- 1।

48. दैनिक जागरण, वही।

49 डा० रीता बहुगुणा जोशी एवं डा० राम नरेश त्रिपाठी, हेमवती नन्दन बहुगुणा, वही, पृष्ठ संख्या- 142।

50 नन्दकिशोर नौटियाल का बहुगुणा पर प्रकाशित स्मारिका में छपा सम्पादकीय लेख, इलाहाबाद, मई, 1990।

पत्र पर ही हम विचार करेंगे[51]। परन्तु बहुगुणा पत्र सौपकर वापस आने वालों में नहीं थे, उनका कहना था कि पत्र ही देना था तो हम भारत से ही डाक द्वारा भेज सकते थे, हम पत्र छोड़कर नहीं जाएंगे। हम वार्ता करने आये है, पत्र देने नही। अन्तत बहुगुणा को वार्ता हेतु पन्द्रह मिनट का समय दिया गया। किन्तु आश्चर्य की बात है कि तीन घटा पन्द्रह मिनट तक अब्दुल बकर और सौगुन साहब से बहुगुणा की बात-चीत चलती रही और उन्होने अपना उद्देश्य पूरा किया[52]। बहुगुणा की इस इराक यात्रा की सफलता पर देश म चारो ओर प्रशसा की गयी। स्वयम् प्रधानमंत्री मोरारजी देसाई ने प्रसन्नता व्यक्त करते हुए बहुगुणा को 4 जनवरी, 1979 को एक पत्र भेजा जिसमें उन्होंने लिखा था कि—"मुझे यह जानकर प्रसन्नता है कि इराक से "क्रूड आयल" आयात के सम्बन्ध मे आपने आशातीत सुधार किया है। ईरान से तेल आयात की स्थिति में अनिश्चितता पैदा हो जाने के कारण इराक द्वारा अतिरिक्त आपूर्ति के लिए सहमत हो जाना निश्चित ही स्वागत योग्य है'[53]।

जनता सरकार के गठन के बाद तत्कालीन गृहमंत्री चरण सिंह द्वारा इंदिरागांधी के विरुद्ध कार्यवाहियॉ शुरू हुई। चरण सिंह ने उनके अच्छे कार्यो की भी आलोचना शुरू कर दी थी। ज्ञातव्य है कि देश की स्वतत्रता की रजत जयंती के उपलक्ष पर इंदिरागांधी ने सभी स्वतंत्रता सेनानियों को 15 अगस्त, 1972 से दो सौ रुपये माहवार सम्मानार्थ पेंशन देना शुरू किया था जिस कारण सरकार पर 25 करोड़ सालाना भार पड़ता था। इस सन्दर्भ में चरण सिंह का कहना था कि यह खर्च अनुत्पादक खर्च है और दो सौ रुपये देकर स्वतत्रता सेनानियों को खरीद लिया गया है। उन्होंने देश में जहां-जहाँ दौरा किया, इसी विषय को अपनी आलोचना का मुख्य मुद्दा बनाया और शीघ्रातिशीघ्र इसे बन्द करने की बात करने लगे। नवम्बर, 1977 में एक दिन कैबिनेट में उन्होंने स्वतंत्रता सेनानियों की पेंशन बन्द करने का प्रस्ताव भी रख दिया। परन्तु बहुगुणा के रहते यह प्रस्ताव पास नहीं हो पाया। बहुगुणा ने कैबिनेट में जितने भी स्वतंत्रता सेनानी मंत्री थे, मुख्य रूप से जगजीवन राम, मधुलिमये आदि सबको अपनी ओर राजी किया और एकजुट होकर प्रधानमंत्री मोरारजी से स्पष्ट शब्दों में कह दिया कि उनके रहते यह पेंशन बन्द नहीं की जा सकती, ऐसा हुआ तो वह सब त्यागपत्र दे देंगे। बहुगुणा का कहना था कि जो सेनानी अंग्रेज सरकार के किसी प्रलोभन मे नहीं बिके वे दो सौ माहवार पर कैसे बिक सकते हैं[54]।

काकोरी क्रांतिकारी षडयंत्र केस (दिसम्बर, 1927) के सिलसिले में राजेन्द्र नाथ लाहिरी, राम प्रसाद

---

51 दिल्ली दूरदर्शन से प्रसारित बहुगुणा पर वृत्त चित्र, 25 अप्रैल, 1998।

52 एम० एल० हैलन का स्मारिका में प्रकाशित लेख, वही, पृष्ट 73।

53 मोरार जी देसाई (प्रधान मत्री भारत सरकार) द्वारा बहुगुणा को लिखा गया गोपनीय पत्र, नई दिल्ली, 4 जनवरी, 1979, (बहुगुणा के आवासीय दस्तावेजो से प्राप्त)।

54 रामकृष्ण खत्री का बहुगुणा पर प्रकाशित स्मारिका में छपा लेख, मई, 1990, पृष्ठ संख्या- 60।

बिस्मिल, अस्फाक उल्ला खॉ तथा टाकुर रोशन सिह की शहादत के पचास वर्ष पूर्ण होने के अवसर पर लखनऊ मे 17, 18 व 19 दिसम्बर, 1977 को 'काकोरी शहीद अर्द्धशताब्दी समारोह' बड़े शानदार ढंग से आयोजित हुआ। इसमें सम्मिलित होने देश के सभी प्रदेशों से स्वतत्रता सेनानी आये थे। चूंकि सम्मेलन के दो दिन पूर्व ही उत्तर प्रदेश के मुख्य मत्री राम नरेश यादव ने चरण सिह के संकेत पर प्रदेश के लगभग सभी स्वतत्रता सेनानियों की पेशन बन्द करने का आदेश निकाला था, स्वाभाविक तौर पर प्रदेश भर के स्वतत्रता सेनानियों मे जबरदस्त असतोष फैला हुआ था। इसलिए उत्तर प्रदेश के हर जिले से स्वतंत्रता सेनानी अच्छी तादात में काफी जोश-खरोश के साथ आये थे। स्वागत समिति के अध्यक्ष बहुगुणा थे और मुख्य अतिथि जगजीवीन राम। दोनों ने अपने-अपने भाषण में उत्तर प्रदेश शासन द्वारा स्वतंत्रता संग्राम सेनानियो की पेशन बन्द कराने के आदेश की जोरदार शब्दों में भर्त्सना की और चेतावनी देते हुए कहा कि यह आदेश तुरन्त वापस न लिया गया तो इसका परिणाम बुरा होगा। इस चेतावनी का बहुत बड़ा असर हुआ और दूसरे ही दिन पेंशन बन्द कर देने का आदेश वापस ले लेने की घोषणा हो गयी[55]।

बहुगुणा चाहे जिस मंत्रालय या पद पर रहे हों, उनकी संवेदना अनुसूचित जाति तथा जनजाति के लोगों के प्रति सदैव गहरी ही रही। इस बार भी उन्होंने अपने रसायन, उर्वरक एवं पेट्रोलियम तीनों मंत्रालय में हरिजन, हरिजन सेल बनवाया था। उनके मंत्रालय के जितने भी पब्लिक अण्डर टेकिंग व सरकारी विभाग थे उन सभी मे अनुसूचित जाति के लोगों का उनके कोटे के अनुसार नियुक्तियाँ एवं प्रोन्नति का पूरा कार्य हो रहा था। जलाने वाली गैस व पेट्रोलियम की डिस्ट्रीब्यूटरशिप के लिए भी उन्होंने सारे भारत वर्ष में अनुसूचित जाति के कोटे के अनुसार आरक्षण कर दिया। यह कार्य भारत में पहली बार केवल बहुगुणा ने ही किया[56]। इसके अलावा बहुगुणा पहले मंत्री थे जिन्होंने पेट्रोलियम विभाग में विशेष तौर से ओ० एन० जी० सी० में आरक्षित रिक्तियों का डिरिजर्व करने का अधिकार अपने हाथ में ले रखा था और उसी वजह से उनके समय में उनके मंत्रालय के सभी विभागों में आरक्षित रिक्तियाँ नहीं हुई और आरक्षण पूरा होता रहा। लेकिन उनके मंत्रालय से हट जाने के बाद अब डिरिजर्व का अधिकार विभागाध्यक्षों को दे दिया गया जिससे आरक्षण अधूरा रह गया[57]।

बहुगुणा के ही प्रयासों से बरौनी रिफाइनरी में चल रहे विवाद का निपटारा सम्भव हो सका। पता चलता है कि 1970 से वहॉ की यूनियन का केन्द्र से झगड़ा चल रहा था और रिफ़ाइनरी पूर्णतया घाटे में थी। पेट्रोलियम मंत्री के रूप में बहुगुणा ने पाया कि मजदूरों के पीड़ित होने के कारण बरौनी रिफाइनरी बन्द

---

55 रामकृष्ण खत्री, वही।

56 चौ० चुन्नीलाल (अध्यक्ष-अनुसूचित जाति, जन जाति सेल, लोकतांत्रिक समाजवादी पार्टी उत्तर प्रदेश एवं सदस्य लोक सेवा आयोग उत्तर प्रदेश) द्वारा प्रकाशित परिपत्र-1, पृष्ठ सख्या- 5 (बहुगुणा के आवासीय दस्तावेजों से प्राप्त)।

57 चौ० चुन्नी लाल, वही।

होने के कगार पर आ चुकी है। वहाँ के अधिकारियो ने बहुगुणा को अवगत कराया कि रिफाइनरी के यूनियन नेता अधिकाशतः अपराधी प्रवृत्ति के है तथा हथियार बन्द हैं। अधिकारियों ने महसूस किया कि बरौनी क्षेत्र औद्योगिक संस्कृति से रहित है, इसलिए यहाँ पर रिफाइनरी की स्थापना करके सरकार ने बड़ी भूल की है। अब उनको केवल एक ही उपाय सूझ रहा था कि रिफाइनरी केन्द्र को छः माह के लिए बन्द कर दिया जाय तथा अपराधी प्रवृत्ति के कर्मचारियो पर मुकदमें दायर कर उन्हे निलम्बित कर दिया जाय। तभी शायद शान्ति और अनुशासन का माहौल कायम हो सकता है[58]।

ज्ञातव्य है कि बरौनी रिफाइनरी केन्द्र पर कोई भी अधिकारी निरीक्षण कार्य हेतु जाने का साहस नहीं जुटा पाता था। तत्कालीन पेट्रोलियम सचिव बी० बी० बोहरा भी स्वयं वहाँ जाने का साहस न कर सके थे, यद्यपि बहुगुणा का निर्देश था कि वे वहाँ जाकर निरीक्षण करें। वे दस किलोमीटर दूर स्थित बरौनी आवासीय क्षेत्र मे जाकर टिके। वापस लौटने पर बहुगुणा ने पूछा कि वे रिफाइनरी में क्यों नहीं गये तो उत्तर मिला 'ऐसा करना मौत को गले लगाना था[59]।' कुल मिलाकर कहा जाय कि स्थिति बहुत विस्फोटक थी तथा वहाँ आतक का राज्य कायम था। स्वाभाविक तौर पर उत्पादक क्षमता कमी की ओर नहीं बल्कि शून्यता की ओर अग्रसर थी। रिफाइनरी विवाद के इस सन्दर्भ मे बहुगुणा ने बड़े सूझ-बूझ से काम लिया। विशेष बात तो यह है कि उनका पूर्व का राजनैतिक प्रशिक्षण भी एक मजदूर नेता के रूप मे ही हुआ था। वह मजदूर नेताओं की प्रवृत्ति से पूर्णतया परिचित थे। तथा उन्हे संभालना भी भली प्रकार जानते थे। बहुगुणा ने यूनियन के नेताओं को दिल्ली आमंत्रित किया और उनके बीच बैठकर वार्ता शुरू की। केवल अक्टूबर महीने मे उन्होने उनके बीच लगभग दस बैठकें की। कभी-कभी तो पूरी रात वार्ता चलती रही। इस अथक परिश्रम का परिणाम था कि नवम्बर के प्रारम्भ में समझौता हुआ और वह रिफाइनरी जिसे बन्द करने का प्रस्ताव था, ने नवम्बर मे अपनी क्षमता नब्बे प्रतिशत और आश्चर्य तब हुआ जब दिसम्बर में एक सौ दस प्रतिशत उत्पादन करने लगी[60]।

——जनता सरकार के विघटन का दौर

जनता पार्टी चूँकि कई राजनैतिक पार्टियों से मिलकर बनी थी इसलिए विचारों की भिन्नता शुरूआत मे ही दीखने लगी। फिर भी आशा यह बँधाई गई कि विभिन्न घटकों के लोग आपसी मतभेदों को दूर रखते हुए देश की वर्तमान समस्याओं का समाधान करेंगे और चाहे-अनचाहे में जो गलत तत्व राजनीति में आ गये है, उन्हे पीछे ढकेलने मे कोई कसर नहीं छोड़ेंगे। विचार यह भी बनाया गया कि इंदिरा गांधी को राजनैतिक रूप से अन्तिम शिकस्त दे दी जाएगी और कांग्रेस बिल्कुल सिकुड़कर एक अधमरी पार्टी के रूप में रह

---

58 डा० रीता जोशी का बहुगुणा पर प्रकाशित स्मारिका में छपा लेख, इलाहाबाद, मई, 1990, पृष्ठ संख्या- 90।

59 डा० रीता बहुगुणा जोशी एवं डा० राम नरेश त्रिपाठी : हेमवती नन्दन बहुगुणा, वही, पृष्ठ संख्या- 142।

60 डा० रीता जोशी का बहुगुणा पर प्रकाशित स्मारिका में छपा लेख, वही, पृष्ठ संख्या- 90।

जाएगी[61]। परन्तु ऐसा कुछ भी दिखाई न पडा। राजनीतिक समीक्षकों का मानना है कि 1978 का वर्ष केवल सत्ता की अंधी दौड मे ही फँसा रहा। जिस निम्न स्तर की कुर्सी प्रधान राजनीति जनता पार्टी मे चलाई गई वह उन आश्वासनो और सकल्पो के सर्वथा विपरीत थी जो महात्मा गाधी की समाधि पर सत्ता ग्रहण करने के पहले लिए गये थे।[62] नतीजतन जिस इंदिरा गाधी को सदैव-सदैव के लिए समाप्त करने का स्वप्न लगभग एक वर्ष पहले देखा जा रहा था वहीं इदिरा गाधी ही देश की प्रमुख जन नेता के रूप में फिर उभरकर सामने आ गयीं[63]।

राष्ट्र की सभी समस्याओं का समाधान चुनावी राजनीति से क्या सम्भव हो सकता है? अब यह सवाल उपरोक्त सदर्भ मे विशेष महत्वपूर्ण लगता है। कारण तीस वर्षो की लम्बी अवधि के बाद केन्द्र में पहली बार गैर काग्रेसी जनता मत्रिमडल प्रतिष्ठित हुआ और अधिकाश राज्यों में भी कांग्रेस के स्थान पर जनता सरकारें आयी। चूँकि जनता पार्टी गाधीवाद और लोकनायक जय प्रकाश के 'समग्र क्रांति' की पूर्ण समर्थक थी, इसलिए जन साधारण में यह भावना व्याप्त होना अस्वाभाविक नहीं कि 'जनता पार्टी' के हाथों केन्द्र व राज्य सरकारों की बागडोर आ जाने के बाद देश की सभी समस्याओं का समाधान हो जाएगा[64]। किन्तु यह बात कोरी कल्पना ही बनकर रह गई। ऐसा प्रतीत होता है कि जनता पार्टी भी कांग्रेस की परम्परागत गुटीय राजनीति के घरौंदे के बाहर न आ सकी। जिसके कारण किसी नवीन राजनीतिक संस्कृति का सृजन सम्भव नही था। सगठित होकर उनका गॉव की ओर चलने का उद्घोष संसद भवन, अशोक रोड और पार्लियामेन्ट स्ट्रीट के आस-पास के हाहाकार में ही समाप्त हो गया।[65] ऐसा माना जाता है कि जितनी ताकत जनता पार्टी के कुछ नेता और एकाध घटक एक-दूसरे की टांग खीचने तथा सार्वजनिक बिम्ब बिगाड़ने में लगाते रहे यदि उसका दसाश भी समस्याओं के समाधान एवं सामूहिक चिन्तन में लगाते और सचमुच 'एकात्म' दल के रूप मे प्रमाणिकता पूर्वक जनसहयोग मॉगते तो तत्कालीन भारत मे केवल सत्ता ही नहीं बल्कि सब कुछ बदला हुआ नजर आता[66]।

शासन पर अधिकार जमाये रखने के लिए विपक्ष को दल-बदल के लिए उकसाना एवं अपने दल में शामिल होने की दावत देना, किसी स्वस्थ चिन्तन का परिचायक नहीं माना जा सकता। दक्षिणी राज्यों एवं असम के चुनाव के पूर्व जिस अनुत्तरदायी ढंग से जनता पार्टी हाई कमान ने कांग्रेसियों को प्रान्तीय स्तर पर जनता पार्टी में शामिल होने के लिए दरवाजें खोल दिये वह उसकी सिद्धान्तप्रियता या आदर्शवादिता का द्योतक नही था। शायद इसीलिए प्रधानमंत्री मोरारजी देसाई, गृहमंत्री चरण सिंह ने न केवल इसका विरोध

---

61 दैनिक जागरण, हिन्दी दैनिक समाचार पत्र, 1 जनवरी, 1979, कानपुर, से प्रकाशित सम्पादकीय लेख, पृष्ठ संख्या- 4।

62 दैनिक जागरण, वही, 1 जनवरी, 1979, पृष्ठ संख्या- 4।

63 दैनिक जागरण, वही।

64 भानु प्रताप शुक्ल : हर रविवार (खण्ड-एक), दिल्ली, जून, 1992, पृष्ठ सख्या- 58 ।

65 भानु प्रताप शुक्ल . वही, पृष्ठ संख्या- 58।

किया अपितु इसे घातक भी बताया था[67]। इसी प्रकार जनता पार्टी मे 'दोहरी सदस्यता' का मामला भी प्रारम्भिक दौर से लेकर अन्त तक विवादित रहा। ज्ञातव्य है कि जनता पार्टी के स्थापना काल में ही जनसंघ ने आर० एस० एस० (राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ) से अलग होने की बात कही थी किन्तु सरकार बनने के बाद भी आर० एस० एस० की दल मे प्रासंगिकता कायम रही। आर० एस० एस० के लोग कार्यकर्ताओं, विद्यार्थियों, युवा सगठनो के बीच तथा लोक सभा और मंत्रालय में भी मौजूद रहे[68]। प्रारम्भिक दिनों में ही बहुगुणा ने इस सन्दर्भ को बड़े ही स्पष्ट तौर पर उठाया था। किन्तु सत्ता स्वार्थ के चलते यह मुद्‌दा बन्द बस्ते में ही पड़ा रहा। बहुगुणा का कहना था कि यदि पार्टी को धर्म निरपेक्ष स्वरूप पर रखना है तो उसमें शामिल घटको की दोहरी सदस्यता से मुक्त होना पड़ेगा। दोहरी निष्ठा और दो मुँहे चरित्र से कोई पार्टी नही चल सकती[69]। चन्द्रशेखर के साथ एक बैठक में उन्होंने स्पष्ट शब्दों में कहा था कि 'आर० एस० एस०' के लोग भारत को हिन्दू राष्ट्रके रूप में देखना चाहते हैं। इसका मतलब यह हुआ कि सिक्ख, मुस्लिम, क्रिश्चयन तथा पारसी आदि सम्प्रदाय के लोगो के लिए यहाँ कोई स्थान नही है। यह एक गम्भीर प्रश्न है कि यदि हमारे समाज मे प्रत्येक धर्म को सुरक्षित स्थान नहीं मिलेगा तो देश की एकता और अखण्डता को बचाना मुश्किल होगा। आगे चलकर हमारा देश दस राष्ट्रों मे विभाजित हो जाएगा[70]।' इस सन्दर्भ में मधुलिमये ने भी लिखा है कि राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ सही माने में सास्कृतिक कार्यक्रम के लिए समर्पित होता या जनसघीय लोग उससे अपना सम्बन्ध विच्छेद करते तो शायद पार्टी का यह हस्र न होता[71]।

वस्तुतः जनता पार्टी एकरस दल नहीं बन पायी, इसकी जिम्मेदारी किस पर है, मतभेद या बहस? पार्टी मे मतभेद नीतियो एवं उसके क्रियान्वयन को लेकर था, ऐसा नहीं दीखता क्योंकि विवाद नीतिगत नहीं बल्कि 'दलगत' एवं 'गुटगत' दिखाई देते हैं। यानि समस्या मतभेद की नहीं वल्कि मनभेद की थी[72]। मतभेद, मतदान और बहस को पार्टी की कमजोरी मानना तो पूरी तरह उचित नहीं लगता किन्तु विद्रोह-बगावत, दल के अन्दर गुटबाजी तथा नीहित स्वार्थो से प्रेरित होकर कार्य करने की प्रवृत्ति को हाशिये पर रखना भी आत्मघाती होगा। जगजीवन राम एवं बहुगुणा के वक्तव्य इस सन्दर्भ में विशेष प्रासंगिक लगते हैं—'जनता पार्टी में कड़वाहट है—एकरसता की प्रक्रिया रूक सी गई है। सत्ता की होड़ बढ़ गयी है—सेवा का संकल्प समाप्त हो रहा है'[73]।

---

66 भानु प्रताप शुक्ल : वही, पृष्ठ संख्या- 59।

67 भानु प्रताप शुक्ल : वही, पृष्ठ संख्या- 110।

68 एच० एन० बहुगुणा : ह्वाई आई लेफ्ट जनता पार्टी, अ साल पम्फलेट, अगस्त, 1979, न्यू देलही, पृष्ठ संख्या- 5।

69 डा० रीता बहुगुणा जोशी एवं डा० राम नरेश त्रिपाठी : हेमवती नन्दन बहुगुणा, वही, पृष्ठ संख्या- 154-155।

70 एच० एन० बहुगुणा : ह्वाई आई लेफ्ट जनता पार्टी, वही, अगस्त, 1979, पृष्ठ संख्या- 5।

71 मधुलिमये : संक्रमण कालीन राजनीति, लखनऊ, मार्च, 1986, पृष्ठ संख्या- 98।

72 भानु प्रताप शुक्ल : हर रविवार (खण्ड-एक) दिल्ली, जून, 1992, पृष्ठ संख्या- 96।

73 भानु प्रताप शुक्ल · हर रविवार (खण्ड-तीन), वही, पेंज 44।

गुटबाजी एवं नीहित स्वार्थो के चलते जनता पार्टी के नेताओं ने इंदिरा गांधी एवं अन्य कांग्रेसियो को तो अपना कोप-भाजन बनाया ही, अपने दल के शीपस्थ नेताओ को भी झूठे आरोपों-प्रत्यारोपो की मार से नही बख्शा। झूठे आरोपो की एक गम्भीर मार तत्कालीन पेट्रोलियम व रसायन मत्री बहुगुणा ने भी झेली थी। बहुगुणा पर आरोपों की झडी पार्टी के ही वरिष्ठ नेता तथा सांसद सिब्बन लाल सक्सेना ने लगाये थे। यद्यपि आगे चलकर ये आरोप पूरी तरह से मनगढ़ंत व बेबुनियाद सावित हुए किन्तु बहुगुणा के व्यक्तित्व पर कीचड़ उछालने तथा समाज मे उनकी छवि धूमिल करने का अपनाया गया यह तरीका पार्टी में स्वार्थवादी व इर्ष्यालु प्रवृत्ति के पूर्णतः वयस्क हो जाने का संकेत देता है। सिब्बन लाल सक्सेना ने बहुगुणा पर कुछ गम्भीर आरोप लगाये थे। ये आरोप मूलत. 1971 से 1975 तक की समयावधि के थे।[74] प्रमुख आरोपो का विवरण निम्नवत है—

1 बहुगुणा अपने इलाहाबाद ससदीय क्षेत्र में 50,000 मतदाता मध्य प्रदेश से पंजीकृत कराये हैं।

2 मुख्यमत्री के रूप मे बहुगुणा ने इंदिरा गांधी के जन्म दिन पर 75 लाख रुपये बटोरे थे जिनमे स 45 लाख इंदिरा गाधी को तथा 30 लाख रुपये स्वयं रख लिए थे।

3 किसानों के इजिन खरीदने के सम्बन्ध मे कोआपरेटिव बैक अथवा किसी फर्म विशेष के माध्यम से खरीद-फरोख्त करने का निर्देश बहुगुणा ने दिया था।

4 अपने दोनो लड़को के लिए बहुगुणा ने इलाहाबाद तथा बम्बई मे आलीशान मकान बनवाये है। बडे पुत्र विजय बहुगुणा पर आरोप था कि उनके मुख्यमत्रित्व काल में उन्हें 85 कम्पनियों का अधिवक्ता नियुक्त किया गया तथा शेखर बहुगुणा का बम्बई की स्टूडियो कम्पनियो में शेयर सुनिश्चित किया गया है।

5 बहुगुणा ने सिहानिया, मोदी तथा बिड़ला आदि जैसे देश के शीर्षस्थ पूँजीपतियों से पैसा लिया है।

6 मुख्यमत्रित्व काल मे क्रांति कुमार को एग्रो चेयरमैन नियुक्त करके 200 एग्रो दुकाने खुलवायी गई। प्रति दुकान से 5 हजार रुपये वसूल करके 10 लाख रुपये इकट्ठा किया गया।

7 पम्प सेटो के क्रय-विक्रय के तहत बहुगुणा ने 5 करोड़ रुपये इकट्ठे किये। मुख्यमंत्री के पद पर रहते हुए अपने अनाप-सनाप दौरे मे उन्होंने अत्यधिक पैसे ख़र्च किये।

8 आचार्य नरेन्द्र देव विश्वविद्यालय फैजाबाद के कुलपति पद पर अपने एकसम्बन्धी पी० सी० पाण्डे को नियुक्त करने तथा इसी प्रकार कई सम्बन्धियों की नियुक्ति के सम्बन्ध में।

9 इलाहाबाद के ससदीय चुनाव में कांग्रेसी प्रत्याशी सतीश चन्द्र खरे को हराने के लिए मुख्यमंत्री बहुगुणा ने समाजवादी नेता जनेश्वर मिश्र को 5 लाख रुपये दिया था। इसके अलावा बहुगुणा पर

---

74 ब्लिट्ज, अंग्रेजी साप्ताहिक समाचार पत्र, बम्बई, 6 मई, 1978, पृष्ठ सख्या- 5।

यह भी आरोप लगाया गया था कि केन्द्रीय सरकार द्वारा परिवार नियोजन के सन्दर्भ में 10 करोड़ रुपये आयी हुई राशि का उन्होंने दुरुपयोग किया था[75]।

इस प्रकार सिब्बन लाल सक्सेना ने बहुगुणा पर 79 आरोप लगाये थे।

ज्ञातव्य है कि ये सारे आरोप ब्लिट्ज समाचार पत्र में 22 अप्रैल, 1978 को प्रकाशित कराने के पूर्व ही सिब्बन लाल सक्सेना ने प्रधानमंत्री मोरारजी देसाई, गृहमंत्री चरण सिह तथा प्रतिरक्षा मंत्री जगजीवन राम के पास बन्द फाइल की एक-एक प्रति जनवरी महीने में ही भेज दिया था[76] तथा प्रधानमंत्री से माँग की थी कि बहुगुणा को तत्काल अपने मंत्रिमंडल से बर्खास्त करे और उनके खिलाफ सी० बी० आई० जॉच बैठाई जाय[77]। इस सम्बन्ध में प्रधानमंत्री ने 23 जनवरी, 1978 को बहुगुणा के पास एक व्यक्तिगत पत्र भेजा था जिसमे उन्होंने लिखा था कि—मैं नही समझता हूँ कि इन आरोपो में कहाँ तक सच्चाई है किन्तु मेरा विचार है कि अच्छा होगा यदि आप इस सम्बन्ध में अपनी टिप्पणी मुझे यथाशीघ्र भेज दें[78]। बहुगुणा ने 6 फरवरी को प्रधानमंत्री के पत्र का जवाब देते हुए लिखा कि—'मुझे दुःख है कि श्री सक्सेना का पत्र जिसे वे पिछले चार माह के परिश्रम का प्रतिफल मानते हैं, वह काल्पनिक तथा पूर्णतया सत्यता से परे है और दुर्भावना से प्रेरित है। मैं उसके प्रत्येक अंश का खण्डन करता हूँ.......फिलहाल आपको स्मरण होगा कि प्रो० सक्सेना ने इसी प्रकार के पत्र मंत्रियो सहित कई सम्मानित व्यक्तियों के बारे में मई 1977 मे भी लिखे थे। ऐसा प्रतीत होता है कि इस बार उन्होंने मुझे अपना निशाना बनाया है[79]।'

इसके साथ ही साथ बहुगुणा ने बिलट्ज में प्रकाशित समाचार का खण्डन भेजते हुए सम्पादक करजिया को चेतावनी दी थी कि यदि उन्होने तत्काल समाचार का खण्डन प्रकाशित न किया तो उनके तथा सिब्बन लाल सक्सेना के विरुद्ध वे मान-हानि का मुकदमा दायर कर देंगे। बहुगुणा के इस कदम का प्रधानमत्री मोरार जी देसाई ने भी स्वागत किया था। प्रधानमंत्री ने बहुगुणा को इस सन्दर्भ में एक पत्र भी भेजा था जिसमे उन्होंने लिखा कि 'मैने सिब्बन लाल सक्सेना से भी कह दिया है कि उन्होंने जो आरोप लगाये हैं, वे यथार्थ से परे है तथा उद्वेग पैदा करने वाले हैं। मुझे प्रसन्नता है कि आप सम्बन्धित पक्षों के विरुद्ध कानूनी कार्यवाही के कदम उठा रहे हैं। मुझे आशा है कि इससे वे सबक सीखेंगे[80]'। अन्ततः 6 मई,

---

75 ब्लिट्ज, अंग्रेजी साप्ताहिक समाचार पत्र, बम्बई, 22 अप्रैल, 1978, पृष्ठ संख्या- 7।

76 हेमवती नन्दन बहुगुणा द्वारा प्रधान मंत्री मोरारजी देसाई को लिखे गये पत्र से, नई दिल्ली, 6 फरवरी, 1978।

77 डा० रीता बहुगुणा जोशी एवं डा० राम नरेश त्रिपाठी : हेमवती नन्दन बहुगुणा, वही, पृष्ठ संख्या- 147।

78 प्रधान मत्री मोरारजी देसाई द्वारा बहुगुणा को लिखा गया व्यक्तिगत पत्र, नई दिल्ली, 23 जनवरी, 1978 (बहुगुणा के आवासीय दस्तावेजो से प्राप्त)।

79 बहुगुणा द्वारा प्रधानमंत्री मोरारजी देसाई को लिखा गया पत्र, नई दिल्ली, 6 फरवरी, 1978 (बहुगुणा के आवासीय दस्तावेजो से प्राप्त)।

80. प्रधान मत्री मोरार जी देसाई द्वारा बहुगुणा को लिखा गया पत्र, नई दिल्ली, 1 मई, 1978।

78 को ब्लिट्ज मे एक टिप्पणी प्रकाशित हुई जिसमें सम्पादक ने स्पष्ट लिखा कि 'सक्सेना का असली उद्देश्य बहुगुणा के चरित्र पर कीचड उछालना था। उनका आरोप पत्र झूठा तथा जालसाजी के अलावा और कुछ नही था। बहुगुणा पूरी तरह आरोप मुक्त हैं। हमें उम्मीद है कि श्री सक्सेना भी बहुगुणा से क्षमा-याचना मॉगने मे हमारे साथ होगे[81]'। ब्लिट्ज के सम्पादक करंजिया ने अपनी इस टिप्पणी के प्रकाशन के साथ-साथ एक पत्र भी बहुगुणा को भेजा जिसमे उन्होंने स्पष्ट लिखा था कि 'एक मनकी वृद्ध नेता ने मेरे और आपके बीच जो मूर्खतापूर्ण विवाद पैदा किया था, वह हाल मे ही प्रकाशित ब्लिट्ज के अक से समाप्त हो गया। ... इसके बावजूद हम प्रकाश के लिए खेद व्यक्त करते है[82]।' इस प्रकार अर्न्तनिहित गुटबाजी और दुर्भावना से प्रेरित होकर बहुगुणा के विरुद्ध किया गया यह षड्यंत्र यद्यपि नाकाम रहा किन्तु जनता पार्टी की आन्तरिक कलह को स्पष्ट करने मे यह कांड विशेष मद्दगार साबित होता है।

आन्तरिक गुटबाजी का एक विशेष उदाहरण प्रधानमंत्री मोरार जी देसाई तथा गृहमंत्री चरण सिंह के बीच चल रहा गहरा मतभेद भी था, जो कांति देसाई का सगठन मे जबरदस्त हस्तक्षेप को लेकर एक राजनैतिक जग के रूप मे तब्दील हो गया। प्रधानमंत्री पुत्र मोह से ग्रसित होने के कारण अपने पुत्र कांति देसाई को दल का महासचिव बनाना चाहते थे किन्तु शीर्षस्थ नेताओं को यह पसन्द नहीं था[83]। परिणामस्वरूप तीन-तीन सत्र राज्य सभा मे बहस चलती रही। नेताओं का आरोप था कि 1977 विधानसभा चुनाव के लिए जो चदा कमेटी बनी थी कांति उसके सदस्य नहीं थे लेकिन वह हर काम म दखल देते थे। चन्दा के नाम पर उन्होंने 80-90 लाख रुपये इकट्ठे किये थे। चन्दा इकट्ठा करने मे मशहूर चन्द्रभानु गुप्त, उद्योगपति वीरेन शाह, नाना जी, पीलू मोदी जो काम नहीं कर सके, वह कांति ने कर दिखाया[84], किन्तु किस अधिकार से, क्या वह पार्टी के खजांची थे? ऐसा नहीं, बल्कि इसे सत्ता का पूरी तरह दुरुपयोग ही कहा जा सकता है। इस सन्दर्भ में 13 मार्च, 78 को प्रधानमंत्री मोरारजी ने चरण सिंह को पत्र भेजा जिसमें उन्होंने स्पष्ट लिखा था कि 'यदि मेरे बेटे के विरुद्ध आरोप सिद्ध हो जाता है तो मैं प्रधानमंत्री पद ही नहीं बल्कि राजनीति से सन्यास ले लूँगा[85]'। 21 मार्च को चरण सिंह का जवाब आया जिसमें उन्होंने आरोप की जॉच हेतु आयोग गठित करने की मॉग की[86]। 23 मार्च तथा 29 मार्च को प्रधानमंत्री ने अपने जवाब में आयोग गठित करने के प्रति आपत्ति प्रकट करते हुए अपनी स्पष्ट असहमति जतायी[87]।

---

81 ब्लिट्ज, अंग्रेजी साप्ताहिक समाचार पत्र, 6 मई, 1978, पृष्ठ संख्या- 5।

82 आर० के० करजिया, सम्पादक, ब्लिट्ज, अग्रेजी, साप्ताहिक समाचार पत्र, बम्बई द्वारा हेमवती नन्दन बहुगुणा को लिखा गया पत्र, 5 मई, 1978 (बहुगुणा के आवासीय दस्तावेजों से प्राप्त)।

83 मधुलिमये : संक्रमण कालीन राजनीति, लखनऊ, 1986, पृष्ठ संख्या- 90।

84 मधुलिमये वही, पृष्ठ सख्या- 94।

85 प्रधानमत्री मोरारजी देसाई द्वारा चरण सिह को लिखा गया पत्र, नई दिल्ली, 13 मार्च, 1978 (बहुगुणा के आवासीय दस्तावेजो से प्राप्त)।

86 गृह मत्री चरण सिह द्वारा लिखा हुआ पत्र मोरारजी देसाई को, 21 मार्च, 1978।

87 प्रधानमत्री मोरारजी देसाई द्वारा लिखा हुआ पत्र, चरण सिंह को, नई दिल्ली, 29 मार्च, 1978।

1978 के राज्य सभा के शीतकालीन सत्र से ही कांति का मामला बहुत तेज हो गया था। लालकृष्ण आडवाणी विरोध पक्ष के हमले से इतने परेशान हुए कि उन्होंने मोरार जी को इस्तीफे की धमकी दे डाली। अडवाणी ने अपने एक स्पष्ट वक्तव्य में कहा कि 'क्राति के मामले को टाला नहीं जा सकता।' अन्ततः यह मामला 'कमीशन ऑफ एन्क्वायरी अधिनियम' के तहत सर्वोच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश चन्द्रचूड़ के ममक्ष न्यायिक जॉच हेतु रखा गया। किन्तु उनके इन्कार कर देने पर यह मामला भूतपूर्व न्यायाधीश वैद्यलिगम को सौंप दिया गया था[88]।

जनता पार्टी में सत्ता और स्वार्थ के चलते जो संघर्ष हुआ वह तो उसके विनाश का कारण बना ही परन्तु इंदिरा गांधी को आपातकालीन आरोपों के तहत जेल भेजना भी दल के विघटन का एक प्रमुख कारण प्रतीत होता है। स्रोतों से पता चलता है कि सत्तारूढ़ होने के बाद जनता पार्टी ने आपातकालीन जोर जुल्म की जॉच के लिए सात आयोग गठित किये थे। सर्वाधिक महत्वपूर्ण था शाह आयोग, जिसने एक लाख 84 हजार रुपये की लागत से आपातकाल में इंदिरा गांधी के कार्यकलापों का ऐतिहासिक दस्तावेज प्रस्तुत किया था[89]। शाह आयोग के नतीजे अत्यत विस्फोटक थे और उनके आधार पर केन्द्रीय गुप्तचर ब्यूरो ने कुल मिलाकर 17 मुकदमे दाखिल किये। इनमे प्रमुख अभियुक्त इदिरा गांधी के अतिरिक्त उनके पुत्र संजयगांधी मे लेकर विद्याचरण शुक्ल, प्रकाश चन्द्र सेठी, नारायण दत्त तिवारी, हरिदेव जोशी, ज्ञानी जैल सिंह तथा कई शीर्षस्थ कर्मचारी भी थे।[90]

इदिरा गांधी के विरुद्ध दिल्ली स्थित विशेष अदालत में प्रख्यात जीप केस था। अभियोजन पक्ष के अनुसार इसमें मध्य प्रदेश के तत्कालीन मुख्यमंत्री प्रकाश चन्द्र सेठी के अलावा इंदिरागांधी के तत्कालीन अतिरिक्त निजी सचिव आर० के० धवन, एन० वी० मनचन्दा, जीतपाल और कैप्टन सुरेश वासुदेव अभियोगी थे। आरोप यह था कि कुछ व्यापारिक संस्थाओं से 139 जीपें बिना कीमत दिये दबाव में डालकर प्राप्त की गयी। इनका इस्तेमाल रायबरेली और अमेठी में चुनाव के दौरान किया गया। इसी प्रकार शाह आयोग और रेड्डी आयोग की सूचनानुसार इंदिरागांधी और उनके सहयोगियों के विरुद्ध दीवानी और फौजदारी के 21 मुकदमे चल रहे थे। संजय गांधी के विरुद्ध भी पाँच महत्वपूर्ण मुकदमे थे, जिनमें एक मुकदमा देहरादून में चल रहा था जिसका सम्बन्ध तेल और प्राकृतिक गैस आयोग को मारूति द्वारा रद्‌दी किस्म के रोड रोलर देने से था[91]।

गृहमंत्री चौधरी चरण सिह बदले की भावना से प्रेरित होकर लोकसभा में इंदिरागांधी पर आरोप

---

88 मधुलिमये : सक्रमण कालीन राजनीति, वही, पृष्ठ संख्या- 95।

89 दिनमान, हिन्दी साप्ताहिक समाचार पत्र, दिल्ली, 21-27 अक्टूबर, 1979, पृष्ठ संख्या- 26।

90 दिनमान, वही।

91 दिनमान, वही, पृष्ठ संख्या- 27।

लगाया कि आपात स्थिति के दौरान जेलों में कैद वरिष्ठ विपक्षी नेताओं की हत्या कर देने की पूरी तैयारी कर ली गई थी[92]। एक स्थान पर उन्होंने यह भी कहा कि इंदिरागांधी जैसी महिला जिनके सिर पर अपराधों का बोझ लदा हुआ है, स्वतंत्र रूप से घूम रही हैं तथा अपने लिए समर्थन प्राप्त करने की कोशिश कर रही हैं, इसके चलते देश की सामान्य जनता सरकार की क्रिया-कलापों से क्षुब्ध है[93]। इंदिरागांधी ने गृहमंत्री के आरोपो का खण्डन करते हुए इसे बेबुनियाद बताया। उन्होंने कहा कि जय प्रकाश नारायण, अटल बिहारी बाजपेयी, चरण सिंह व अन्य प्रमुख नेताओं को यह सूचना मिलते ही पैरोल पर रिहा कर दिया गया था कि वे अस्वस्थ हैं[94]। दूसरी ओर यह भी पता चलता है कि इंदिरागांधी जाने-अनजाने में घटी-घटनाओं पर प्रायश्चित भी कर रही थी। इसके लिए वह संसद में क्षमा मॉगने के लिए भी शायद तैयार थीं। लेकिन जनता सरकार के कुछ नेता उन्हें किसी भी कीमत पर जेल भेजने को उत्सुक थे। मधुलिमये लिखते हैं कि विशेषाधिकार के प्रस्ताव पर भाषण देते समय मैंने कहा कि माफी मॉंग लेने पर इस दुर्भाग्यपूर्ण श्रृंखला को समाप्त कर दिया जाय। मगर मेरी बात नहीं मानी गई। लोग द्वेष और दुर्भावना से भरे हुए थे, स्वयं प्रधानमत्री मोरारजी इससे मुक्त नही थे[95]। नतीजा यह हुआ कि प्रधानमंत्री के प्रस्ताव द्वारा उनकी संसद की सदस्यता भी समाप्त कर दी गयी और केन्द्रीय जाँच ब्यूरों द्वारा भ्रष्टाचार निरोध कानून की धारा पाँच (2) (ए) के अन्तर्गत उन्हें 4 अक्टूबर, 1977 को गिरफ्तार कर लिया गया। इस दौरान इंदिरागांधी ने कहा कि 'उनकी गिरफ्तारी राजनीति प्रेरित है तथा उसका उद्देश्य उन्हें जनता के बीच जाने से रोकना है'[96]।

किन्तु, इंदिरागांधी को गिरफ्तार करके उन्हें भारी संकट में डालने तथा उनके व्यक्तित्व को धूमिल करने की नीति बरतना गृहमंत्री चरण सिह के लिए हास्यास्पद साबित हुई। ऐसा कहा जाता है कि उन्होंने दूरदर्शिता से काम नहीं लिया बल्कि बदला लेने की भावना में लिप्त हो गये[97]। नतीजतन इंदिरागांधी का महत्व तथा लोकप्रियता और अधिक बढ़ गई। दूसरी ओर वह चिकमंगलूर के उपचुनाव में जनता पार्टी के उम्मीदवार को पराजित करके लोक सभा में पहुँची थी अर्थात् वह जनता के द्वारा चुनी गई थी। उनकी सदस्यता भी खत्म करना अनुचित था। वह लोकतंत्र के खिलाफ था और उसमें भी बदले की बू आ रही थी[98]। इस सन्दर्भ में कमलापति त्रिपाठी लिखते हैं कि 'भारत की जनता को यदि इमरजेन्सी पसन्द नहीं आयी थी तो बदले की भावना से प्रेरित जनता पार्टी द्वारा नीति का संचालन भी उसे पसन्द नहीं आया। यही कारण कि 1980 मे जो चुनाव हुआ उसमें इन्दिरागांधी दो स्थानों से चुनकर आयीं और कांग्रेस दल की भारी विजय हुई[99]।

92 दैनिक जागरण, हिन्दी दैनिक समाचार पत्र, कानपुर, 15 जुलाई 1977, पृष्ठ संख्या- 1।

93 राम गोपाल : इंडिया अण्डर इंदिरा, नई दिल्ली, 1986, पृष्ठ संख्या- 70।

94 दैनिक जागरण, हिन्दी दैनिक समाचार पत्र, कानपुर, 16 जुलाई, 1977, पृष्ठ संख्या- 1।

95 मधुलिमये . सक्रमण कालीन राजनीति, वही, पृष्ठ संख्या- 104।

96 दैनिक जागरण, हिन्दी दैनिक समाचार पत्र, 4 अक्टूबर, 1977, पृष्ठ सख्या- 1।

97 कमलापति त्रिपाठी : स्वतंत्रता आन्दोलन और उसके बाद, दिल्ली, 1988, पृष्ठ संख्या-267-268।

98 मधुलिमये : संक्रमण कालीन राजनीति, वही, पृष्ठ संख्या- 105।

आपातकाल के काले कारनामो तथा लोकतांत्रिक मूल्यो की अवहेलना से पीड़ित होकर जनता ने जनता पार्टी को सत्ता जरूर सौप दी थी लेकिन सत्ता पर सिहासनारूढ़ अधिकांश नेता दलगत राजनीति एव व्यक्तिगत स्वार्थ और महत्वाकांक्षाओं पर ही अन्त तक जोर देते रहे[100]। उन्होने सगठनात्मक चुनावो की ओर भी कोई ध्यान नही दिया। परिणामतः ऊपरी जोड़-तोड़ और उठा पटक में समय बीतता रहा। एक शानदार सघर्ष और जीत के बाद भी सरकार भीतर से कमजोर एवं टूटी हुई दिखाई देने लगी। अब गयी, तब गई, की स्थिति मे जनता उसका मूल्यांकन करने लगी थी। शीर्ष पर बैठे चन्द नेताओं की हठधर्मिता, अहंकार तथा अक्खड़पन से एक ओर जहाँ अनावश्यक विवाह उठ खड़े हुए वही सरकार में शामिल प्रगतिशील नेताओं की छवि, दिशाहीनता की स्थिति मे तेजी से बिगड़ती जा रही थी[101]। जनता पार्टी के भीतर इस विग्रह पूर्ण स्थिति और गिरती हुई साख से बहुगुणा मानसिक स्तर पर बहुत चिन्तित रहे। अन्ततः उन्हे इन्ही कारणो की वजह से केन्द्रीय मंत्रिमंडल से भी इस्तीफा देना पड़ा। 13 जुलाई, 1979 को इस्तीफा देने के बाद बहुगुणा सही विकल्प की तलाश मे जुट गये और साम्प्रदायिक शक्तियों तथा तानाशाही के विरुद्ध सभी धर्मनिरपेक्ष ताकतो को एकजुट करने लगे[102]।

चरण सिह और मोरारजी का आपसी विवाद भी इस दरम्यान खूब फलता-फूलता रहा। ज्ञातव्य है कि काति देसाई के मामले तथा इंदिरागांधी की गिरफ्तारी को लेकर एक बार चरण सिह को अपने पद से इस्तीफा भी देना पड़ा था। उनके विश्वासपात्र राजनारायण को भी स्वास्थ्य मंत्री पद से हाथ धोना पड़ा। यद्यपि काफी लम्बे चले दलीय बहस के बाद चरण सिंह को पुनः कैबिनेट में शामिल करके उप प्रधान मंत्री[103] का पद दिया गया, किन्तु चरण सिह तथा देसाई के मध्य असंतोष समाप्त नहीं हुआ। असंतोष का कारण शायद यह भी था कि गठबन्धन सरकार में लोकदल का प्रतिनिधित्व सबसे अधिक था। अतः स्वाभाविकतौर पर प्रधानमंत्री पद का वास्तविक हकदार चरण सिंह अपने को मानते थे। पता चलता है कि आगे इसी पहलू को लेकर महत्वाकाक्षाओं से प्रेरित चरण सिंह ने अपने पार्टी सदस्यो के साथ जनता पार्टी छोड़ दी[104]। परिणामस्वरूप जनता पार्टी टूट गयी।

इस सबके साथ इंदिरागांधी का खेल भी चल रहा था। किसी तरह जनता पार्टी टूटे, यह सरकार खत्म हो, इसी में वह बराबर लगी रहीं। इंदिरागांधी सत्ता राजनीति में माहिर थी। चरण सिंह के सत्ता लोभ को वह भॉप चुकी थी, उनकी नीयत और मनोबल को भी वह जानती थी। बस अवसर की तलाश थी

---

99 कमलापति त्रिपाठी वही, पृष्ठ सख्या- 267।

100 दिनमान, हिन्दी साप्ताहिक समाचार पत्र, दिल्ली, 9-15 सितम्बर, 1979, पृष्ठ संख्या- 3।

101 डा० गीता बहुगुणा जोशी एव डा० राम नरेश त्रिपाठी : हेमवती नन्दन बहुगुणा, नई दिल्ली,1999, पृष्ठ संख्या- 155।

102 वही।

103 राम गोपाल : इंडिया अण्डर इंदिरा, नई दिल्ली, 1986, पृष्ठ संख्या- 86।

104 राम गोपाल : वही।

उन्हे। वह अवसर स्वयं चरण सिह के समर्थकों ने उपलब्ध करा दिया। अत: बिना शर्त समर्थन दिया कांग्रेस (आई) ने चरण सिंह को ताकि वह सरकार गठित कर सके[105]। 28 जुलाई, 1979 को राष्ट्रपति के आमंत्रण पर चरण सिह ने अपनी सरकार बनायी और खुद प्रधानमंत्री पद की शपथ ग्रहण की[106]। इदिरागांधी के समर्थन से चरण सिह की सरकार बनने के साथ ही चारो ओर यह प्रकट हो गया था कि अब से लेकर अगले चुनाव तक के बीच सरकार बनाने वाला दल, उसको समर्थन देने वाला दल और अगली सरकार बनाने की आशा करने वाला दल जो कुछ करेगा वह चुनाव के समय सबसे अच्छी स्थिति में रहने के लिए करेगा। किन्तु इन तीनों में मध्यावधि चुनाव के लिए सबसे अधिक चिन्ता नि:सन्देह इंदिरागांधी को थी क्योंकि जितनी अधिक देर तक बाकी दोनो दलों में किसी एक की सरकार बनी रह जाती उतनी अधिक कठिनाई उन्हें जन मानस मे फैली निराशा का उपयोग करने में होती। उनको अपनी छवि के बारे में कोई संशय न था। उन्होंने स्पष्ट रूप से अपवी छवि यह बनायी की हमारे दल ने चरण सिंह को सरकार बनाने में असमर्थन केवल इसलिए दिया है कि वह मोरारजी की सरकार गिरा सकें, अपनी सरकार बनाये रख सकें[107]।

चरण सिह तथा बहुगुणा के बीच वैचारिक मतभेद बहुत पहले से चला आ रहा था। किन्तु सरकार बनाने के बाद चरण सिंह ने ऐसा अनुभव किया कि बगैर बहुगुणा के उनकी सरकार शायद नही चल सकती। चरण सिह स्वयं बहुगुणा के घर गये और बहुगुणा को राजनैतिक परिस्थितियों की अनिवार्यता के कारण मंत्रिमंडल में शामिल होना पड़ा। चरण सिंह की सरकार में वे वित्तमंत्री बने[108]। इतना ही नहीं चरण सिह ने बहुगुणा को कुछ समय पूर्व के० जी० बी० एजेण्ट (रूसी जासूस) होने का जो आरोप लगाया था, सत्ता के लोभ ने उन्हें उसका भी खुलासा करने के लिए मजबूर कर दिया। 29 सितम्बर 1979 को प्रधानमंत्री ने वित्तमत्री बहुगुणा को एक पत्र के माध्यम से और सार्वजनिक रूप से भी यह बयान दे डाला कि बहुगुणा के रूसी जासूस होने की बात असल में उन्होंने मोरार जी देसाई से सुनी थी[109]। अपने पत्र में चरण सिह ने बहुगुणा को लिखा कि—'मै व्यक्तिगत रूप से इस आरोप के बारे में न तो जानता था और न ही मैंने कोई जॉच ही कराई थी। वे मोरारजी देसाई हैं जिन्होंने स्वयं मार्च, 1978 में यह बात मुझे राजनारायण की उपस्थिति मे उस समय बतायी थी, जब मैं विलिंगटन अस्पताल में बीमार पड़ा था और मोरारजी मुझे देखने आये थे। मुझसे पहली भूल यह हुई कि मैने प्रधानमंत्री की बात पर विश्वास किया और दूसरा उन्हें लिखे अपने पत्र में इस आरोप के स्रोत की चर्चा नहीं की। यदि मैं यह सावधानी बरतता तो समस्त नैतिक मूल्यों को तोड़कर यह पत्र समाचार पत्रो तक न पहुंचता। इससे आपको जो कष्ट हुआ है उसका मुझे पूरी तरह

---

105 दिनमान, हिन्दी साप्ताहिक समाचार पत्र, 9-15 सितम्बर, 1979, पृष्ठ संख्या- 3।

106 दिनमान, वही, 2-8 सितम्बर, 1979, पृष्ठ संख्या- 5।

107 दिनमान, वही, पृष्ठ संख्या- 15।

108 दिल्ली दूरदर्शन से प्रसारित बहुगुणा पर वृत्त चित्र, 25 अप्रैल, 1998।

109 दिनमान, वही, 21-27 अक्टूबर, 1979, पृष्ठ संख्या- 15।

से अहसास है। मुझे खेद है कि इसके लिए मैं उत्तरदायी हूँ'[110]।

किन्तु दोनों नेताओं का यह सम्बन्ध ज्यादा दिनो तक न चल सका। उनके राजनैतिक मतभेद पुंन शुरू हो गये और बहुगुणा को चरण सिंह सरकार से भी इस्तीफा देना पड़ा। चरण सिंह की विशेष इच्छा थी की बहुगुणा अपनी पार्टी लोकतात्रिक कांग्रेस का लोकदल मे विलय करें परन्तु बहुगुणा के लिए ऐसा सम्भव न था। उनका कहना था कि उनके 31 सूत्रीय कार्यक्रम, जो वर्तमान में राष्ट्रीय भावना के प्रतीक है और जिसका निर्माण लोकतांत्रिक कांग्रेस के राष्ट्रीय सम्मेलन में पारित विचारों का संकलन है, स्वीकार किया जाय[111]। चरण सिह इस मुद्दे को किसी तरह टालना चाहते थे। उनका कहना था कि लोकदल में विलय के बाद बातचीत द्वारा इन समस्याओं को सुलझाया जा सकता है[112]। लेकिन बहुगुणा कब तक इन्तजार करते? उन्होंने भावनाओं को दबाकर मंत्रिमंडल में बने रहना उचित न समझा, अन्ततः इस्तीफा दे ही दिया। ज्ञातव्य है कि मंत्रिमंडल से त्याग पत्र देने का फैसला बहुगुणा ने खुद कर लिया था। सम्भवतः चरण सिंह को इसकी भनक मिल गयी। इसके पहले कि बहुगुणा अपनी योजना को असली रूप देते चरण सिंह ने त्याग पत्र की निश्चित तिथि से एक दिन पहले ही खुद त्याग पत्र की मांग कर दी। चौधरी ने उनके खिलाफ कुछ आरोप लगाये थे जिनका बहुगुणा ने जवाब भी दिया। त्याग पत्र की परिस्थितियों का जिक्र करते हुए बहुगुणा ने कहा कि—'चरण सिंह की कार्यपद्धति में अधिनायकवाद की बू आती है और उनका दृष्टिकोण इतना रूढ़िवादी है कि उससे महत्वपूर्ण और आर्थिक कार्यक्रमों की चुनौती का मुकाबला नहीं किया जा सकता'[113]। बहुगुणा का यह भी कहना था कि सत्तारूढ़ गठजोड़ में लोकतांत्रिक कांग्रेस के अलावा कुछ ऐसे संगठन भी हैं जो विभिन्न राज्यों में विरोधी दलों से हाथ मिलाए हुए है। लेकिन उनके प्रतिनिधियों से चरण सिंह ने त्यागपत्र की मांग नहीं की[114]। इस प्रकार स्पष्ट होता है कि लोकतांत्रिक कांग्रेस के लोकदल में न मिलने के कारण ही चरण सिंह ने प्रतिशोध का रुख अपनाया था। लेकिन तथ्यों से यह भी पता चलता है कि बहुगुणा को लोकदल में बने रहने में कोई परहेज नहीं था बशर्ते कि उनकी हैसियत और सिद्धान्तों को चौधरी ने उदारता से स्वीकार किया होता[115]।

चरण सिह की सरकार में द्वन्द चल ही रहा था कि इंदिरागांधी ने समर्थन वापस ले लिया। वास्तव

---

110 प्रधानमंत्री चरण सिह द्वारा वित्त मत्री बहुगुणा को लिखा हुआ पत्र, 29 सितम्बर, 1979 (बहुगुणा के आवासीय दस्तावेजों से प्राप्त)।

111 दिनमान, वही, 25 नवम्बर-1 दिसम्बर, 1979, पृष्ठ संख्या- 18।

112 दिनमान, वही।

113 दिनमान, वही, 18-24 नवम्बर, 1979, पृष्ठ संख्या- 19।

114 दिनमान, वही।

115 दिनमान, वही।

मे इंदिरागांधी नये चुनाव की इच्छुक थीं और वह इसी द्वन्दमय स्थिति का इन्तजार भी कर रही थी[116]। सिर्फ उन्हे एक बहाना चाहिए था। वह बहाना अदालत में उनके खिलाफ चल रहे मुकदमें से मिल गया। चरण सिह विशेष अदालत की व्यवस्था रद्द करने के पक्ष में नहीं थे उनका कहना था कि मैंने इसके लिए इदिरा काग्रेस से समर्थन नही मागा या पाया था[117]। किन्तु, समर्थन वापसी के सिलसिलेमें इंका नेता स्टीफन ने अपने वक्तव्य मे दूसरी ओर सकेत किया है। उनका कहना था कि 'हमने विशेष अदालत रद्द करने की कोई शर्त नही रखी थी, हमने तो समर्थन वापस इसलिए लिया है कि राजनारायण यह झूठ बोले थे कि उनका दल इंदिरागांधी से समर्थन मांगने नहीं गया था। ऐसा कहकर वह सिर्फ यही बताना चाहते हैं कि हम अपनी तुनुक मिजाजी से हिन्दुस्तान के भविष्य को बना या बिगाड़ सकते है'[118]। इस प्रकार कांग्रेस के समर्थन वापस लेने का कारण उपरोक्त में से कुछ भी रहा हो लेकिन चरण सिंह ने लोकसभा में अविश्वास प्रस्ताव आने के पहले ही त्यागपत्र दे दिया। तदुपरान्त, जगजीवन राम अपनी सरकार बनाने की चेष्टा करने लगे। इसी वास्ते उन्होने इंदिरागांधी के नजदीकी लोगों से मंत्रणा भी करनी शुरू कर दी। किन्तु, उन्होंने खुलेआम यह न कहने की सावधानी बरती की इंदिरागांधी के बिना शर्त समर्थन में भी सरकार बनाने के लिए वे तैयार हो जाएंगे। इंदिरागांधी बिना किसी सिद्धान्त के किसी सरकार को समर्थन देकर एक सरकार गिरा और एक बना या दोनों की गिरा सकती थी, यानि उनकी छवि बनाने में ये दोनों नेता सहयोग ही देते रहे[119]। इस दौरान इंदिरागांधी ऐसी स्थिति में रही कि वह लोकतंत्र में विचार और संगठन की स्वतंत्रता का उपयोग करके यह सिद्ध कर सकें कि शिखर राजनीति के स्तर पर उनको अछूत मानकर चलने वाले अपने को एक हास्यास्पद स्थिति में पहुँचाएंगे। अनन्तः राष्ट्रपति ने जगजीवन राम को अपनी सरकार बनाने का निमंत्रण नहीं दिया। लोकसभा भंग हुई, चरण सिंह को काम चलाऊ सरकार बरकरार रखने का दायित्व सौंपा गया और मध्यावधि चुनाव घोषित हुआ[120]।

---

116 राम गोपाल : इण्डिया अण्डर इन्दिरा, न्यू देलही, 1986, पृष्ठ संख्या- 87।

117 दिनमान, वही, 2-8 सितम्बर, 1979, पृष्ठ संख्या- 15।

118 दिनमान, वही, पृष्ठ संख्या- 16।

119 दिनमान, वही।

120 दिनमान, वही।

बहुगुणा के इक्तीस सूत्रीय कार्यक्रम, डी०एस०पी० का जन्म

वित्तमन्त्री पद और लोकदल से अलग होने के बाद से ही बहुगुणा के अर्स कांग्रेस या इंदिरा कांग्रेस में शामिल होने की सम्भावनाओं पर विचार होने लगा था। किन्तु अर्स कांग्रेस में शामिल होना इसलिए अस्वाभाविक था कि जिस लोकदल से उनका मोहभंग हुआ उसी लोकदल के साथ अर्स कांग्रेस का सत्ता में गठजोड़ था। इंदिरा कांग्रेस उनके अनुकूल थी, क्योंकि दलित-वंचितों और अल्पसंख्यकों की जितनी चिन्ता इंदिरा गांधी को थी उससे कहीं ज्यादा बहुगुणा को थी[1]। फर्क सिर्फ यह था कि बहुगुणा ने साम्प्रदायिकता और तानाशाही दोनों से संघर्ष का नारा दिया था। तानाशाही का मतलब इंदिरा कांग्रेस से था। सवाल यह उठा कि अगर वह इंदिरा कांग्रेस से हाथ मिलाते है तो उसकी शर्त क्या होगी? उनकी हैसियत क्या होगी? वैसे नेहरूवाद की सार्थकता और उसके प्रति अपने सम्पूर्ण आग्रह की घोषणा करके उन्होंने इंदिरा कांग्रेस के निकट पहुँचने की इच्छा का संकेत दे दिया था। क्योंकि चरण सिंह द्वारा नेहरू का अवमूल्यन करने पर बहुगुणा ने स्पष्ट कहा था कि 'नेहरू गांधी की नीतियों में विश्वास करने वालों को इकट्ठा होना चाहिए'[2]। किन्तु इंदिरा कांग्रेस से मिलने की सम्भावनाओं पर उन्होंने एक प्रेस क्लब में आयोजित सम्वाददाता सम्मेलन में और अन्य अवसरों की बात-चीत के दौरान स्पष्ट नहीं किया। उनका कहना केवल यह था कि ऐसा सम्भव हो सकता है[3]।

26 अक्टूबर को लोकतांत्रिक कांग्रेस के राष्ट्रीय सम्मेलन ने एक प्रस्ताव द्वारा गांधी-नेहरू नीति पुर्नपुष्टि की ओर कहा—"दिवंगत नेहरू जीवित नेहरू से अधिक शक्तिशाली हैं। सत्तासीन होना एक बात है लेकिन एक प्रभावशाली प्रशासन देना बिल्कुल दूसरी बात है। जनता एक प्रभावशाली सरकार चाहती है, उसे न केवल एक प्रभावशाली सरकार देनी चाहिए बल्कि उस सरकार का इमानदार भी होना जरूरी है—वह इमानदारी उसके उद्देश्य और उसके कार्य दोनो में होनी चाहिए[4]।" इतना कहकर लोकतांत्रिक कांग्रेस उस सरकार के उद्देश्य और कार्य की इमानदारी के सामने एक बड़ा प्रश्न चिन्ह रख दिया जिसमें वह स्वयं साझेदार थी। बहुगुणा का कहना था कि वह जहाँ भी रहे है अपने विश्वासों की रक्षा करते हुए—निजत्व को सुरक्षित रखते हुए—दूसरों में परिवर्तन करते रहे है[5]। इस कथन की सत्यता-असत्यता अपनी जगह पर है परन्तु आम धारणा यह रही है कि विभिन्न खेमो में उनकी तस्वीर भिन्न रही है। कुछ लोग कहते हैं कि वह वामपन्थी मान्यता वाले ऐसे बहुरंगी और

---

1 दिनमान साप्ताहिक हिन्दी समाचार पत्र, 18-24 नवम्बर, 1979 पृष्ठ संख्या- 19।

2 दिनमान, वही।

3 हिन्दुस्तान टाइम्स, अंग्रेजी दैनिक समाचार पत्र, 14 अक्टूबर, 1979, पृष्ठ संख्या- 1।

4 नव भारत टाइम्स, हिन्दी दैनिक समाचार पत्र, 27 अक्टूबर, 1979, पृष्ठ संख्या- 1।

5 नव भारत टाइम्स, वही।

असरदार राजनीतिज्ञ रहे जो सभी प्रगतिशील शक्तियो को एक मंच पर इकट्ठा करने में सक्षम थे। कुछ के लिए वह घोर अवसरवादी रहे जिसकी सारी राजनीति का आधार सरक्षण देकर मित्रो को अपने इर्द-गिर्द रखना है। कुछ ऐसे भी जो उनको दलितो-वचितो का मसीहा मानते है। अल्पसंख्यको को उनसे बड़ी उम्मीदें रही हैं। लेकिन अधिकाश लोग इस बात पर बल देते है कि वह एक व्यवहारिक और कुशल राजनीतिज्ञ रहे जो यह सदैव जानता रहा कि उसके हितो की रक्षा कहॉ पर हो सकती है और कौन सा काम, कब और किस तरह करना चाहिए[6]।

वस्तुत: तानाशाही के विरोध में बहुगुणा ने बहुत बातें की हैं। लेकिन जब प्रेस क्लब मे उन्होंने कहा कि 'इंदिरा कांग्रेस से उनका समझौता हो सकता है,' तब यह बात महज रूप मे उभर कर आ जाती है कि अपने विश्वासों की रक्षा करते हुए एक जिम्मेदार उत्प्रेरक विपक्षी नेता की हैसियत से उन्होंने इंदिरा गांधी और संजय गाधी से किस समीकरण के आधार पर सहयोग देने के लिए अपने को तैयार किया था। त्यागपत्र देने के बाद चरण सिह और अपने बीच के मतभेदों के प्रसंग में उन्होंने कहा था 'यह मेरी दृढ़ मान्यता है कि राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय के गॉधी-नेहरू द्वारा निरूपित स्वरूप की पुर्नस्वीकृति के बिना न तो राष्ट्र की रक्षा हो सकती है न ज्वलंत राष्ट्रीय समस्याओं का समाधान हो सकता है। मैं चाहता हूँ कि चरण सिंह इस विषय पर अपना दृष्टिकोण स्पष्ट करे। क्योंकि बिना इसके सिद्धान्त विहीन एकता जनता को छलने का एक तरीका हो सकती है। हमारी जनता को एक बार छला जा चुका है और मैं दुबारा छले जाने का इच्छुक नहीं हूँ[7]। किन्तु, यदि यह छल सचमुच बहुगुणा की अन्तरात्मा को मथ रहा था तो इंदिरा कांग्रेस, लोकदल और जनता पार्टी किसी से भी उनकी पटरी बैठने की सम्भावना बहुत कम रह जाती है। फिलहाल स्रोतों से पता चलता है कि ये तीनों दल उन्हें अपने साथ रखने के लिए तैयार थे, लेकिन वही खुद इसके लिए तैयार नहीं रहे।

ज्ञातव्य है कि राजनीतिक प्रतिवद्धता को चलाने का आधार उन्होंने 31 सूत्रीय कार्यक्रम को बनाया था। जिस पर सहमति न तो चरण सिह ने दी न ही देवराज अर्स ने। यह अवश्य है कि उस 31 सूत्रीय कार्यक्रम के कुछ मुद्दे ऐसे थे जिन पर अपने-अपने कारणों से कई राजनीतिक दल सहमत नहीं हो सकते थे—जैसे—अल्पसख्यक सस्थान के रूप में अलीगढ़ मुस्लिम विद्यालय को कानूनी मान्यता प्रदान करना; अल्पसंख्यकों के निजी कानून में किसी भी तरह का हस्तक्षेप न करना; उर्दू को उसकी सही जगह देने के लिए एक सक्रिय और समयबद्ध कार्यक्रम लागू करने की कोशिश[8]। स्पष्ट है कि ये तीनों मुद्दे बहुत ही विवादास्पद रहे होंगे। कुल

---

6 दिनमान साप्ताहिक हिन्दी समाचार पत्र, 18-24 नवम्बर, 1979, पृष्ठ संख्या- 19।

7 दिनमान · वही।

8 दिनमान . वही।

मिलाकर बहुगुणा के अर्स कांग्रेस या इंदिरा कांग्रेस में शामिल होने की अटकले या सम्भावनाएं जितनी महत्वपूर्ण मानी गयी थी उतनी ही महत्वपूर्ण थी लोकदल की बहुगुणा से भयक्रांत दिखाई देने की स्थिति। राजनीतिक लड़ाई में यह स्थिति हास्यास्पद है, कम से कम लोकदल के लिए, जो बहुगुणा को स्वीकार भी नही कर सकता था लेकिन यह भी बर्दाश्त नही कर सकता था कि वह इंदिरा कांग्रेस मे मिल जाएं।

मोहभंग के शिकार बहुगुणा की सेवाए लोकदल, अर्स कांग्रेस, इंदिरा कांग्रेस, जनता पार्टी और मार्क्सवादी कम्युनिस्ट पार्टी सभी के लिए उपलब्ध थी। शर्त केवल यह थी कि उनके 31 सूत्रीय कार्यक्रम को स्वीकार किया जाय। किन्तु पूर्व समय से ही इसे स्वीकार करने को कोई तैयार नही था। चरण सिंह लोकदल में उनके विलय के बाद ही इस समस्या पर विचार करने को इच्छुक थे। देवराज अर्स ने लिखा, 'सी० एफ० डी० के 31 सूत्रीय कार्यक्रम को पूर्णतया या आंशिक रूप से कांग्रेस अर्स के कार्यक्रम में शामिल किया जाना इस बात पर निर्भर करता है कि बहुगुणा क्या स्थिति लेते है, और कार्यक्रम की क्या खूबियॉ है .... आपकी और मेरी अलग-अलग राजनैतिक पार्टियॉ है, अतः मेरे द्वारा कांग्रेस फार डेमोक्रेसी के कार्यक्रम को स्वीकार करने या न करने का प्रश्न ही नही उठता[9]। नम्बूदिरी पाद ने जवाब दिया 'मैं पत्र में उठाये गये विभिन्न मुद्दो के बारे में कुछ नहीं कहना चाहता ... मैं केवल यही कामना कर सकता हूँ कि अंत में आप सही निर्णयो पर पहुँचेंगे[10], इंदिरा गांधी ने लिखा, "मैने कांग्रेस फार डेमोक्रेसी के 31 सूत्रीय कार्यक्रमों को भी देखा है मैं आपसे पूरी तरह सहमत हूँ कि हमें राष्ट्रीय, अन्तर्राष्ट्रीय राजनीतियों के गांधी-नेहरू आधार का दृढ़ता पूर्वक अनुसरण करना चाहिए। जनता पार्टी और लोकदल ने इस आधार के प्रति अपने विरोध को छिपाया नहीं है ... मुझे अकसर आश्चर्य होता है कि कैसे आप अपनी भूमिका और प्रतिबद्धता के साथ इस स्थिति से जुड़े रहे हैं। .... सभी विचारवान और प्रगतिशील लोगों को एकजुट होना चाहिए। मैं आपसे और सी० एफ० डी० के आपके मित्रों से इसी अपील को दोहराता हूँ[11]।

बहुगुणा ने एक अवसर पर यह भी कहा था 'कम बुरे का चुनाव उन्हें करना है'[12]। यानि राजनीतिक प्रतिबद्धता तथा सिद्धान्तों की अपरिहार्यता उन्हें इंदिरा कांग्रेस की ओर खींच रही थी। दूसरी ओर कुछ समय पूर्व चरण सिंह और उनके संयुक्त वक्तव्य में पूर्ण भ्रांति के स्थान पर पूर्ण सहमति होने, समान आधार पा लेने और

---

9 देवराज अर्स (अध्यक्ष, कांग्रेस अर्स) द्वारा बहुगुणा को लिखा गया पत्र दिल्ली, 10 अक्टूबर, 1979 (बहुगुणा के आवासीय दस्तावजो से प्राप्त)।

10 नम्बूदिरीपाद द्वारा बहुगुणा को लिखा गया पत्र दिल्ली, 8 अक्टूबर, 1979।

11 इंदिरागांधी द्वारा बहुगुणा को लिखा गया पत्र दिल्ली, 21 अक्टूबर, 1979 (बहुगुणा के आवासीय दस्तावेजों से प्राप्त)।

12 हिन्दुस्तान टाइम्स, अंग्रेजी दैनिक समाचार पत्र, 21 अक्टूबर, 1979, पृष्ठ संख्या- 4।

समान उद्देश्य के लिए एकजुट होने तथा एकता को स्थिर रखने की घोषणा अब निराधार हो चुकी थी। कार्यक्रमों के आधार पर नेताद्वय के बीच आपसी सहमति नही हो पा रही थी, चारों ओर से निराशा के भाव स्पष्ट होने लगे थे। अब उन्हें पुन: एक ऐसे विकल्प की तलाश करनी ही थी जिसमें उनके हितों की रक्षा हो सके[13]। तदुपरान्त वह इंदिरा गाधी की ओर मुखातिब हुए, लेकिन कांग्रेस में बहुगुणा शामिल हों, इसके पहले उनके 31 सूत्रीय ऐतिहासिक कदम और साथ-साथ बातचीत का जो सिलसिला शुरू हुआ उसका सक्षिप्त पुनरावलोकन उपरोक्त सदर्भ मे विशेष प्रासगिक लगता है।

बहुगुणा के 31 सूत्र—

1 भूमि सुधार कार्यक्रमों की सख्ती के साथ निश्चित समय में अमलदारी। खंड और तहसील स्तर की समितियो मे भूमिहीनो का प्रतिनिधित्व।

2 खेती के काम मे आने वाले सामानो की उचित कीमत पर उपलब्धि।

3 लघु कुटीर उद्योगो और प्रशिक्षण केन्द्रो की राज्यो द्वारा स्थापना जहॉ आधुनिक कारीगरी सिखाई जा सके तथा ग्रामीण बेरोजगारों को रोजगार मिल सके। इस क्षेत्र में अनिवार्य रूप से कर्ज के रूप में कच्चे माल की उपलब्धि और बिक्री की व्यवस्था।

4 ग्रामीणो की दशा में सुधार के ठोस कदम।

5 बधुआ मजदूरों की मुक्ति के लिए कानूनों का सख्ती से पालन और उनका विस्थापन।

6 खेतिहर मजदूरों को न्यूनतम मजदूरी की गारंटी, आवासीय भूखण्डों का मुफ्त आवंटन।

7 फसल बीमा योजना का कार्यान्वयन।

8 ग्रामीण संस्थानों मे अधिकार का विकेन्द्रीकरण।

9 विदेशी शोषण के प्रभाव से मुक्त नियोजित और आत्म निर्भर अर्थव्यवस्था।

10 ग्रामीण बेरोजगारी गारटी योजना का कार्यान्वयन।

11 सार्वजनिक क्षेत्र के संस्थानो को अधिक सशक्त करना।

12 लघु-कुटीर और ग्रामीण उद्योगों की रक्षा की कानूनी सुरक्षा और उनके क्षेत्रों का सीमांकन।

13 नीचे से लेकर निर्देशक मण्डल तक मे मजदूरों की भागीदारी।

---

13 दिनमान . वही, 25 नवम्बर से 1 दिसम्बर, 1979, पृष्ठ संख्या- 18।

14 चोर बाजारी-जमाखोरी, मिलावट, करवचन की सख्ती से रोकथाम के लिए विशेष न्यायालयों का गठन और कम से कम 7 साल की सख्त सजा का प्राविधान।

15 अहिंदी भाषी क्षेत्रो में हिन्दी का आरोपित न किया जाना।

16 धर्म निरपेक्षता को सशक्त करने के लिए भारतीय चरित्र का अवमूल्यन करने वाले राजनीतिक, सास्कृतिक और सामाजिक संगठनों के विरुद्ध एक राष्ट्रीय सहमति की स्थापना।

17 साम्प्रदायिक दंगो और अत्याचारों से मरने वाले अनुसूचित जाति, अनुसूजित आदिम जाति तथा कमजोर वर्ग को पूर्ण मुआवजा।

18 राष्ट्रीय एकता समिति की सिफारिशो का कार्यान्वयन और प्रभावग्रस्त क्षेत्रों के जिलाधीशों और पुलिस अधीक्षकों को दड और तबादला।

19 अल्पसंख्यको, अनुसूचित जाति, अनुसूचित आदिम जनजातियो के सदस्यों को शांति बनाये रखने वाले विशेष पुलिस दल में 50 प्रतिशत की भर्ती।

20 उर्दू को उसका उचित स्थान दिलाने के लिए उसके शिक्षण के लिए सक्रिय और समयबद्ध कार्यक्रम।

21 अल्पसंख्यक संस्थान के रूप मे अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय को कानूनी मान्यता।

22 अल्पसंख्यो के निजी कानून में किसी तरह की दखलंदाजी पर रोक।

23 हर स्तर पर पाठ्य पुस्तकों मे से साम्प्रदायिक पूर्वाग्रह पैदा करने वाले अंशों को निकालना।

24 आर्थिक और सामाजिक ढंग से पिछड़े छात्रो के लिए शिक्षा संस्थाओं में सीट का आरक्षण और विशेष सुविधा।

25 विज्ञान और प्रद्योगिकी का तीव्र विकास।

26 सभी भारतीय भाषाओं की सुरक्षा और विकास।

27 मतदान की उम्र 18 वर्ष करना।

28 पर्वतीय और पिछड़े क्षेत्रो के विकास की समस्त नीति पर पहल।

29 सारे देश के लिए समान शिक्षा नीति।

30 सार्वजनिक जीवन और प्रशासन में भ्रष्टाचार करने वालों को सख्त सजा।

31 गुट निरपेक्षता की नीति-पूँजीपतियो साम्राज्यवादियों, नव उपनिवेशवादियों से संघर्ष के लिए लोकतान्त्रिक

समाजवादी और साम्राज्यवादी विरोधी देशो, नवस्वतत्र एशियायी लातीनी अमेरिकी और अफ्रीकी देशो मे एकता[14]।

ज्ञातव्य है कि 14 नवम्बर से लेकर 19 नवम्बर तक के 6 दिन शर्तों पर सहमति में लग गये लेकिन हेमवती नन्दन बहुगुणा वायदा करने के वावजूद इन दोनो में किसी भी तिथि को लोकतांत्रिक कांग्रेस के इंदिरा कांग्रेस मे विलय की विधिवत घोषणा नही कर सके। 14 नवम्बर को नेहरू जन्म दिवस था और 19 को इंदिरा जन्मदिन, शायद घोषणा न करने का कारण यही था। लेकिन स्रोतों से पता चलता है कि विलय की घोषणा के कुछ और भी कारण थे जिनमें प्रमुख रूप से दिल्ली की जामा मस्जिद के शाही इमाम सैयद अब्दुल्ला बुखारी की रजामदी की प्रतिक्षा भी थी[15]। इमाम की शर्ते मामूली शर्ते नहीं थी। मुसलमानों के लिए लोकसभा को 20 प्रतिशत और मत्रिमंडल मे 20 प्रतिशत जगह देने तथा लोकसभा मे गैर मुस्लिम प्रत्याशियों के चयन में अपनी राय या दखलदाजी के अधिकार को विधिवत स्वीकार किये जाने की मॉग इंदिरा गाधी को ग्राहय करना बड़ा कठिन लग रहा था[16]। 20 नवम्बर की भी रात गये तक शर्तों पर बात-चीत होती रही। अन्ततः बहुगुणा के प्रयासों से अब्दुल्ला बुखारी के महत्व को इदिरा शिविर में स्वीकार किया गया जिसके चलते 21 नवम्बर की सुवह लोकतांत्रिक कांग्रेस के इंदिरा कांग्रेस में विलय की घोषणा हो सकी।

वहुगुणा की घोषणा के साथ अब्दुल्ला बुखारी ने भी उसे अपना समर्थन देने की घोषणा की। समर्थन अब्दुल्ला बुखारी ने 1977 में जनता पार्टी को भी दिया था लेकिन पार्टी ने अल्पसंख्यकों की जान-माल सम्बन्धी रक्षा तक की समस्या पर गम्भीरता से ध्यान नहीं दिया था। इस बार भी इंदिरा गांधी ने सेना, सुरक्षा, पुलिस और शाति व्यवस्था कायम करने वाली मशीनरी में अल्पसंख्यकों को उचित प्रतिनिधित्व देने, दंगे आदि में अपनी जिम्मेदारी के निर्वाह में असफल जिलाधिकारियों को दंडित करने, जामा मस्जिद की उचित सुरक्षा, अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय के अल्पसंख्यक चरित्र को बरकरार रखने और उर्दू के पठन-पाठन को सभी स्तरों पर व्यवस्थित करने का आश्वासन दिया। शुरू-शुरू मे इंदिरा गांधी इन शर्तों को मानने के लिए तैयार नहीं थी लेकिन अन्ततः अब्दुल्ला बुखारी अपनी राजनैतिक कीमत वसूल करने में सफल हो गये[18]।

जहॉ तक बहुगुणा की वात है 14 नवम्बर को शाम को पत्रकारों से बात-चीत करते हुए उन्होंने कहा

---

14 दिनमान : साप्ताहिक समाचार पत्र, 25 नवम्वर से 1 दिसम्बर 1979, पृष्ठ सख्या- 18।
15 दैनिक जागरण . हिन्दी दैनिक समाचार पत्र, 20 नवम्बर, 1979 मे प्रकाशित सम्पादकीय लेख।
16 दैनिक जागरण, वही।
17 दैनिक जागरण, वही, 22 नवम्वर, 1979, पृष्ठ संख्या- 1।
18 दिनमान वही, 25 नवम्वर से 1 दिसम्वर, 1979, पृष्ठ संख्या- 18।

कि-- इदिरा गाधी ने उनके 31 सूत्रीय कार्यक्रम को स्वीकार किया है, अत उनमे मिलने का रास्ता साफ हो गया है[19]। 19 नवम्बर को उन्होंने कहा कि 'विलयन की घोषणा महज औपचारिक रह गई है'[20]। वास्तव मे 14 नवम्बर की सुबह को शातिवन मे (नेहरू समाधि) श्रृद्धांजलि अर्पित करने के अवसर पर इदिरा गांधी से भेट होने पर जब बहुगुणा ने माला पहनाई और देश की नेता इदिरा गाधी कहा तभी यह स्पष्ट हो गया था कि पिछले दो महीने मे चलने वाली बात एक सफल नतीजे पर पहुँच चुकी है[21]। अपनी तरफ से फैसला उन्होने कर ही लिया था। सवाल सिर्फ अब्दुल्ला बुखारी को साथ लाने का था और बुखारी भी मोहभंग के शिकार थे। पूर्व सूचनानुसार 1977 मे जनता पार्टी के दिग्गजो ने उन्हे काफी बड़े सब्ज बाग दिखाये थे किन्तु बाद मे वे बदल गये। इदिरा गाधी की ओर से भी कुछ ऐसे वायदे किये गये थे जिन पर बुखारी को शुरू मे यकीन नही हुआ था लेकिन अन्य रास्तो के अभाव में रास्ता उधर से निकलाना ही था, अत उसे निकाला गया[22]।

इंदिरा गाधी ने बहुगुणा की अहमियत समझी। उनके निवास पर अपनी पार्टी के नेताओं और परिवार के सदस्यों, प्रमुख रूप से कमलापति त्रिपाठी, दरबारा सिह, नारायण दत्त तिवारी, मोहसिना किदवई, कल्पनाथ राय, राजीव गाधी, सजय व सोनिया आदि के साथ गयी[23]। बहुगुणा यह जानने के बाद भी कि इंदिरा शिविर के कई नेताओं को वह सुहाते नही, विलय का फैसला किये। इदिरा गाधी ने भी अपने सहयोगियों को समझाया कि वर्तमान परिस्थिति मे बहुगुणा के प्रति उनके पूर्वाग्रह उनके सहयोग की तुलना में कम है। क्योकि वह उत्तर प्रदेश मे इदिरा कांग्रेस की चुनावी सम्भावनाओं मे रीढ़ साबित हो सकते है। मुस्लिम मत दिलवाने में सहायक हो सकते हैं और चुनाव अभियान मे संगठन कर्ता के रूप में उनकी भूमिका प्रभावी हो सकती है[24]। बहुगुणा का भी इस सन्दर्भ में कहना था कि इंदिरा गांधी के अलावा अन्य किसी नेता ने उनके 31 सूत्री कार्यक्रम के प्रति स्वस्थ प्रतिक्रिया नहीं दिखाई[25]। इदिरा गांधी ने यहाँ तक कहा कि कुछ मुद्दों पर वह उनके कार्यक्रम से भी काफी आगे जा सकती हैं। इस परिस्थिति में बहुगुणा को यह आशा होनी स्वाभाविक थी कि दोनों मिलकर एक स्थाई और उद्देश्यपूर्ण सरकार बना लेने के बाद उनको अपनी राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओं को अमल में लाने का मौका मिल सकता है। इतना ही नहीं बल्कि जिस तानाशाही प्रवृत्ति की चर्चा पूर्व में की जा चुकी है

---

19 हिन्दुस्तान टाइम्स अंग्रेजी दैनिक समाचार पत्र, 15 नवम्बर, 79, पृष्ठ संख्या- 1।
20 हिन्दुस्तान टाइम्स, वही, 20 नवम्बर, 79, पृष्ठ सख्या- 4।
21 दिनमान वही।
22 दिनमान वही।
23 हिन्दुस्तान टाइम्स, वही, 14 नवम्बर, 79, पृष्ठ संख्या- 1।
24 दिनमान वही।
25 दैनिक जागरण · हिन्दी दैनिक समाचार पत्र, 23 नवम्बर, 1979, पेज 1।

इस इदिरा गाधी बनाम तानाशाही को बहुगुणा अब अतीत की वस्तु मान रहे है क्योकि उन्होने एक स्थान पर यह कहा है कि 'आगे वैसी स्थिति पैदा होने की सम्भावना नही है'[26]।

21 नवम्बर, 1979 को बहुगुणा ने काग्रेस फार डेमोक्रेसी के काग्रेस मे विलय की विधिवत घोषणा की। घोषणा पत्र म लिख तथ्यों का सार इस प्रकार है—'अपने साथियो, मित्रो एव शुभ चिन्तको से परामर्श के उपरान्त मे सहर्ष सी० एफ० डी० का श्रीमती इदिरा गांधी की काग्रेस में विलय घोषित करता हूँ। इस प्रकार हमने कुछ समय मे राजनैतिक दलो मे तेजी से बढ़ती हुई टूट व बिखराव को रोकने का प्रयत्न किया है[27]। जनता पार्टी और लोकदल गठबन्धन की सरकारें निराशाजनक असफलता ही पुकारी जा सकती हैं। राष्ट्र एक बहुमुखी सकट के कगार पर है। राजनैतिक दलो मे जनता का विश्वास नही रह गया है। विचारो एवं कार्यक्रम पर एकता कायम करने के स्थान पर राजनैतिक दल सत्ता के बॅटवारे मे लग गये है। साम्प्रदायिकता बढ़ती जा रही है। यह स्थिति राष्ट्रीय एकता, जनतत्र एवं संसदीय व्यवस्था के लिए गम्भीर खतरा है। केन्द्र में एक स्थायी और उद्देश्यपूर्ण सरकार ही राष्ट्र के सम्मुख गम्भीर आर्थिक संकट का मुकाबला कर सकती है[28]। आगे बहुगुणा ने कहा कि अपने राजनैतिक जीवन में एक प्रजातात्रिक, समाजवादी एवं धर्म निरपेक्ष समाज के स्थापनार्थ प्रयत्नशील रहा हूँ। गाधी नेहरू ढॉचे के अन्तर्गत हम एक सुदृढ़ सामाजिक एव आर्थिक व्यवस्था की ओर अग्रसर होने की चेष्टा करेगे तथा विघटनकारी एवं अवसरवादी शक्तियो का मुकाबला करेंगे। मैं सभी प्रगतिशील समाजवादी एव प्रजातात्रिक शक्तियो एव व्यक्तियां से अपील करता हूँ कि भारत की छवि को सुधारने तथा स्वतंत्रता संग्राम के उद्देश्य को साकार करने के लिए हमारा सहयोग करें[29]। बहुगुणा की सगठनात्मक क्षमता का पूरा-पूरा लाभ उठाने के लिए सी० एफ० डी० का काग्रेस मे विलय करने के बाद उन्हें कांग्रेस का सेक्रेटरी जनरल (प्रधान महासचिव) बनाया गया। यद्यपि कांग्रेस के सविधान मे इस पद का कोई प्रयोजन नहीं रहा है फिर भी अन्य सचिवो से श्रेष्टता देने के लिए इस पद की घोषणा की गई। काग्रेस के इतिहास में बहुगुणा प्रथम व अन्तिम सेक्रेटरी जनरल थे[30]।

इदिरा काग्रेस मे बहुगुणा की पुन वापसी को लेकर तत्कालीन राजनीतिज्ञों व राजनीतिक समीक्षकों में द्वन्द्व की स्थिति कायम रही है। शायद इसीलिए बहुगुणा को सर्वाधिक विवादास्पद राजनेता की संज्ञा भी दी जाती है।

---

26 दिनमान वही।

27 हेमवती नन्दन बहुगुणा. अध्यक्ष काग्रेस फार डेमोक्रेसी द्वारा इदिरा काग्रेस मे विलय का जारी घोषणा पत्र, 5 सुनहरी बाग, नई दिल्ली, 21 नवम्बर, 1979, (बहुगुणा के आवासीय दस्तावेजो से प्राप्त)।

28 काग्रेस फार डेमोक्रेसी द्वारा इदिरा काग्रेस मे विलय का जारी घोषणा पत्र, वही।

29 काग्रेस फार डेमोक्रेसी द्वारा इदिरा काग्रेस में विलय का जारी घोषणा पत्र, वही।

30 डा० रीता बहुगुणा जोशी एव डा० राम नरेश त्रिपाठी हेमवती नन्दन बहुगुणा, वही, पृष्ठ सख्या- 161-62।

एक ओर उन्हें दल पर घोर अवसरवादी होने का आरोप लगता है वही दूसरी ओर उन्हें 'सिद्धान्तो का पुजारी'[31] और अधिकारवाद की लडाई का धुरन्धर[32] भी स्वीकार किया जाता है। वस्तुत 1977 मे बहुगुणा का कांग्रेस फार डेमोक्रेसी सी० एफ० डी० गठित करना, जनता पार्टी मे विलय, पुन जनता पार्टी छोडकर कांग्रेस मे आना उनकी राजनैतिक प्रतिष्ठा के लिए बहुत बड़ा प्रश्न चिन्ह साबित हुआ। यहाँ तक कि उन पर अवसरवादिता और दल बदलने का ऐसा काला-धब्बा लगा जो जीवन पर्यन्त नही धुल सका[33]। वरिष्ठ पत्रकार भानु प्रताप शुक्ल का मानना है कि जनता पार्टी के विघटन मे भी बहुगुणा ने कुशल भूमिका निभाई थी। बहुगुणा ने चरण सिंह को जिम्मेदार ठहराते हुए यह मुहिम चलाई कि चरण सिंह को पार्टी और सरकार मे जब तक हटाया नहीं जाता तब तक समस्या हल नही होगी। इसके लिए उन्होंने सबसे पहले भूतपूर्व जनसंघ के नेताओं को विश्वास मे लेकर उन्हें चरण सिंह से अलग करने का प्रयास किया और जब उनका दॉव सफल हो गया तो वे स्वय चरण सिंह के खेमे मे शामिल हो गये मात्र इसलिए कि उनके बिना जनता पार्टी का पूर्ण रूप से टूटना सम्भव नही था। और वे अपने गुट सहित चरण सिंह का समर्थन न करते और कल्पनाथ राय के माध्यम से इंदिरा गाधी का कुछ दिनों के लिए अस्थायी समर्थन न दिलाते तो जनता पार्टी का पतन न होता न चरण सिंह प्रधानमन्त्री बनते और न मध्यावधि चुनाव होता[34]।

इस प्रकार राजनीतिक समीक्षको के एक पक्ष द्वारा जनता पार्टी के विघटन मे तथा मध्यावधि चुनाव के लिए बहुगुणा को जिम्मेदार ठहराया जाता है। परन्तु इसके विपरीत दूसरे पक्ष के तर्क कही ज्यादा सबल प्रतीत होते है। स्रोतो से पता चलता है कि यद्यपि जनता सरकार की स्थापनाकाल के समय से ही चरण सिंह के साथ बहुगुणा के वैचारिक मतभेद थे लेकिन वह मतभेद गृहमत्री के रूप मे चरण सिह की बदले की भावना से प्रेरित कार्यप्रणाली मे थे जो पूर्व प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी को किसी भी कीमत पर जेल भेजने को इच्छुक थे[35]। इसी प्रकार स्वतंत्रता संग्राम सेनानियो के पेशन का भी सवाल था, जिसे बन्द करके ही चरण सिंह दम लेना चाहते थे। एक स्वतत्रता सग्राम सेनानी होने के नाते बहुगुणा द्वारा इसका विरोध करना स्वाभाविक था[36]। लेकिन इस विरोध का यह मतलब नहीं लगाया जा सकता कि वे चरण सिंह को दल से व सरकार से निकालने का प्रयत्न कर रहे थे। दूसरी ओर जनसंघ के नेताओं को विश्वास में लेने का प्रश्न उठता है। बहुगुणा सिद्धान्ततः जनसंघ से कभी

---

31 खुशवन्त सिंह (पत्रकार) का दिल्ली दूरदर्शन से प्रसारित साक्षात्कार, 25 अप्रैल, 1998।

32 दिनमान वही, 6-12 मार्च, 1983, पृष्ठ संख्या- 19।

33 दिल्ली दूरदर्शन पर प्रसारित बहुगुणा के वृत्तचित्र के आलेख से 25 अप्रैल, 1998।

34 भानु प्रताप शुक्ल : हर रविवार (खण्ड-एक) दिल्ली, जून, 1992, पृष्ठ सख्या- 316-17।

35 डा० रीता बहुगुणा जोशी एवं डा० राम नरेश त्रिपाठी : हेमवती नन्दन बहुगुणा, वही, पृष्ठ सख्या- 154।

36 राम कृष्ण खत्री का बहुगुणा पर प्रकाशित स्मारिका में छपा लेख, इलाहाबाद, मई 1990, पृष्ठ संख्या- 60।

भी न जुड़ सके; उन्हें विश्वास में लेने की बात तो दूर थी। जनता पार्टी के स्थापना काल से ही जनसंघ की दोहरी सदस्यता का वे विरोध करते रहे [37]। जहॉं तक जनता पार्टी के टूटने का सवाल है इसके दो प्रमुख कारण सर्वविदित है जिसे बहुगुणा ने भी अपने एक साक्षात्कार मे स्पष्ट किया था 'पहला— नेताओं की महत्वाकांक्षाऍं। दूसरा —जनसघ। इन्ही की वजह से दल में दरार पड़ी और दल दलदल मे धॅंस गया।'[38] चरण सिंह की सरकार में शामिल होना भी बहुगुणा के लिए तत्कालीन राजनैतिक परिस्थितियों की अनिवार्यता थी। क्योंकि मोरार जी देसाई की सरकार गिरते ही भारतीय राजनीति मे एक विकल्पहीनता की स्थिति पैदा हो गई थी। वामपन्थी एव लोकतांत्रिक शक्तियॉं बिखर रही थी। बहुगुणा ने अपने एक वक्तव्य मे बताया है कि 'बढ़ रहे साम्प्रदायिक और तानाशाही खतरों से मुकाबला करने के लिए धर्म निरपेक्ष और समाजवादी विचारो की एकजुटता को मजबूत करना तत्कालीन परिस्थितियों मे जरूरी समझा गया[39]।

आलोचकों का यह भी मानना है कि बहुगुणा वामपन्थी और लोकतान्त्रिक ताकतो की तलाश मे ही सदैव लगे रहे, इसके लिए उन्होने हर घाट का पानी पिया। लोकतंत्र की रक्षा के लिए कांग्रेस को छोड़ा और तोड़ा लेकिन पुनः उसी इंदिरा कांग्रेस में इस अन्दाज से शामिल हो गये कि जैसे सबसे बड़ी वामपन्थी और लोकतंत्रवादी इंदिरा गाधी ही हैं। बेचारी 'वामपन्थी और लोकतांत्रिक ताकते' इस 'मसीहा' की बाट जोहती रह गयीं[40]। इस सन्दर्भ में कुछ राजनीतिक समीक्षक उन पर अवसरवाद और स्वार्थनिहित दल-बदल का आरोप लगाने से नही चूकते, जबकि तत्कालीन राजनीतिज्ञो का विचार बिल्कुल इसके विपरीत है। स्वयं पूर्व प्रधानमंत्री विश्वनाथ प्रताप सिंह अपने एक साक्षात्कार मे बताते हैं कि—"बहुगुणा ने यदि दल परिवर्तन किया है तो सैद्धान्तिक आधार पर। इसे दल-बदल नहीं कहा जा सकता। दलबदल वह होता है जब कोई दूसरे दल मे चला जाय और वहॉं से कुछ अपना लाभ उठाये। उस समय राजनैतिक लाभ क्या था .... पता नहीं क्या अजाम होता?"[41] इसी प्रकार, पूर्व प्रधानमंत्री चन्द्रशेखर का भी मानना है कि—"मैं नहीं समझता हूँ कि बहुगुणा जी ने कई दल बदले। बहुगुणा कांग्रेस पार्टी में थे और कांग्रेस में ही बहुत दिनों तक रहे। उसके बाद जब आपातकालीन स्थिति आयी तो वे जनता पार्टी में शामिल हुए। जनता पार्टी में बिखराव आया तो बहुत से लोग अलग हुए बहुगुणा जी अकेले नहीं थे। तो मैं ऐसा नहीं मानता कि उन पर आरोप लगाया जाय कि उन्होंने बार-बार दल बदले, यह बात सही

---

37. साप्ताहिक हिन्दुस्तान : हिन्दी साप्ताहिक समाचार पत्र में प्रकाशित बहुगुणा का साक्षात्कार, 13 जून, 1982, पृष्ठ संख्या- 7।
38. साप्ताहिक हिन्दुस्तान . वही।
39 हिन्दुस्तान टाइम्स, अंग्रेजी दैनिक समाचार पत्र, 17 सितम्बर, 1979, पृष्ठ संख्या- 7।
40 भानु प्रताप शुक्ल : हर रविवार (खण्ड-एक), वही, पृष्ठ संख्या- 295।
41 विश्वनाथ प्रताप सिंह (पूर्व प्रधानमत्री भारत सरकार) का दिल्ली दूरदर्शन से प्रसारित साक्षात्कार, 25 अप्रैल, 1998।
42 चन्द्र शेखर (पूर्व प्रधानमंत्री भारत सरकार) का दिल्ली दूरदर्शन से प्रसारित साक्षात्कार, 25 अप्रैल, 1998।

नही है[42]।" जहाँ तक इंदिरा काग्रेस के तत्कालीन स्वरूप की बात है इंदिरा गाधी द्वारा बहुगुणा को लिखे गये पत्र मे यह स्पष्ट हो जाता है कि वह काग्रेस की पूर्व स्थिति पर प्रायश्चित कर रही थी तथा पुन समाजवाद और धर्मनिरपेक्षवादी दृष्टिकोण की ओर उन्मुख थी[43]। दूसरी बात यह भी विशेष प्रासंगिक लगती है कि वामपन्थी आदर्शों से ओत-प्रोत बहुगुणा का 31 सूत्रीय कार्यक्रम सभी राष्ट्रीय दलो के समक्ष चुनौती स्वरूप था किन्तु इंदिरा गाधी द्वारा जिस सहज ढग से वह स्वीकृत हुआ वह लोकतन्त्रात्मक धर्मनिरपेक्षता की एक मिशाल ही कहा जा सकता है।

वस्तुत बहुगुणा अपने सिद्धान्तो से समझौता नही करते थे, भले ही इसके लिए उन्हें हानि उठाने पड़े। उनके सिद्धान्त थे—"चुनाव हमारे लिए कुर्सी बदल का नहीं बल्कि व्यवस्था बदल का माध्यम है।" तथा "चुनाव हमारे लिए स्वराज की मुहिम को घर-घर पहुँचाने का कारगर औजार तथा लोकतांत्रिक प्रणाली को सशक्त और विश्वसनीय बनाने का जन-आन्दोलन है[44]।" उनका नारा था :

"हमारा लक्ष्य, घर-घर स्वराज

नई व्यवस्था, नया समाज।[45]"

आम तौर पर यही उनके राजनैतिक सिद्धान्त उनकी प्रतिष्ठा के सूचक थे। यानि इसी प्रतिष्ठा की लड़ाई वे खुलकर लड़ते रहे। उत्तर प्रदेश के पूर्व मुख्यमंत्री पंडित नारायण दत्त तिवारी ने अपने एक साक्षात्कार मे बताया है कि "जब कभी उनके सम्मान और प्रतिष्ठा को चोट पहुँचती थी या उनकी क्षमता को असम्मानित किया गया, उससे वह प्रभावित हुए बिना न रह सके। लेकिन उन्होंने अपनी बुनियादी विचारधारा नहीं छोडी। वे अपने सम्मान के लिए खड़े रहे। अपने सम्मान के लिए राजनीति में खड़े रहने वालों में वे विरले व्यक्ति थे।"[46] दलबदल और अवसरवाद पर पंडित तिवारी का आगे कहना है कि "दल-बदल के कई रूप होते हैं। एक दल-बदल होता है जो कठिनाइयों के बीच नया दल खड़ा किया जाता है, विचारधारा वही हो, तो मै इसे दल-बदल की कानून की परिधि से ऊपर ले जाता हूँ। किसी विचार व मुद्दे को लेकर जब संघर्ष किया जाता है तो उससे निकला हुआ दल तकनीकी रूप मे दल-बदल तो कहा जा सकता है लेकिन राजनीतिक और वैचारिक रूप मे तब

---

43 इंदिरागाधी द्वारा बहुगुणा को लिखा गया पत्र, 21 अक्टूबर, 1979 (बहुगुणा के आवासीय दस्तावेजों से प्राप्त)।

44 नन्द किशोर नौटियाल . नूतन सबेरा, हिन्दी साप्ताहिक समाचार पत्र मे प्रकाशित सम्पादकीय लेख, बम्बई, 24-30 अप्रैल, 1994, पृष्ठ संख्या- 2।

45 नन्द किशोर नौटियाल · वही।

46 नारायण दत्त तिवारी (पूर्व मुख्य मंत्री उत्तर प्रदेश एवं पूर्व केन्द्रीय मंत्री भारत सरकार) का दिल्ली दूरदर्शन से प्रसारित साक्षात्कार, 25 अप्रैल, 1998।

तक दलबदल न कोई कानून था और न इस तरह की कोई बात थी। बहुगुणा जी, जितनी शाखाए उतने पेड की कल्पना को साकार करते हुए एक वटवृक्ष की मुख्य शाखा के रूप मे विराजमान थे[47]।''

अवसरवाद के सम्बन्ध में बहुगुणा का दावा था कि 'मैंने कभी भी सत्ता का मोह नहीं किया।' अपने एक साक्षात्कार के दौरान उन्होंने स्पष्ट शब्दों में कहा है कि ''नीहित स्वार्थ होता तो आपातकाल के दौरान उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री के रूप में मैं भी संजय गांधी की हाँ में हाँ मिलाता और मुख्यमंत्री की कुर्सी संजोए रखता[48]।'' किन्तु यह बहुगुणा के सिद्धान्तों के विपरीत था। इमरजेंसी काल की धाँधलियों से वे चिन्तित थे[49]। अस्तु विपरीत धारा मे जाकर इंदिरा गांधी को चिट्ठी लिख दिया कि 'देश पर इमरजेंसी थोपना उचित नही है[50]।' इसी प्रकार 1969 में विधान सभा चुनाव मे पराजित होने के बाद भी चन्द्रभानु गुप्त मुख्यमंत्री, उत्तर प्रदेश की ओर से बहुगुणा के पास मंत्रिमंडल में शामिल होने का निमंत्रण आया था लेकिन उन्होंने यह कहकर अस्वीकार कर दिया कि 'हारे हुए व्यक्ति को अगले चुनाव की प्रतीक्षा करनी चाहिए'।[51] अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी के महामंत्री बनने के बाद भी एक अवसर था जब इंदिरा गाधी द्वारा बहुगुणा को राज्य सभा में भेजने की बात आयी, किन्तु उन्होंने सैद्धान्तिक आधार पर उसे भी अस्वीकार कर दिया था।[52] स्पष्ट है कि एक अवसरवादी राजनेता को ऐसे मौकों से चूकना नहीं चाहिए। परन्तु बहुगुणा ने ऐसे मौकों को ठुकराया है और जरूरत पड़ने पर केन्द्रीय मंत्रिमंडल और लोकसभा से भी इस्तीफा दिया है।

मध्यावधि चुनाव अभियान शुरू करते समय इंदिरा गांधी ने दो परस्पर विरोधी बातें अलग-अलग मौकों पर लोगों के सामने रखी। अधिकतर स्थानों पर तो उन्होंने यह दावा किया कि उनकी पार्टी पूर्ण बहुमत प्राप्त करेगी और एक स्थाई सरकार बनायेगी[53]। मगर कहीं-कहीं उन्होंने यह भी बताया कि यदि किसी भी पार्टी को पूर्ण बहुमत नहीं मिलता है तो उनकी पार्टी 'समान विचारों वाली' पार्टियों के साथ एक मिली-जुली सरकार बनाने पर विचार कर सकती है[54]। पूर्ण बहुमत का दावा करना किसी भी बडे राजनैतिक दल के लिए अस्वाभाविक नहीं था, क्योंकि उसके बिना मतदाता को यह विश्वास दिलाना सम्भव नही है कि वह जिन कार्यक्रमों और नीतियों

---

47. नारायण दत्त तिवारी का साक्षात्कार, वही।
48 दिनमान हिन्दी साप्ताहिक समाचार पत्र में प्रकाशित बहुगुणा का साक्षात्कार, 21-27 अप्रैल, 1985, पृष्ठ संख्या- 24।
49. हरकिशन सिंह सुरजीत का दिल्ली दूरदर्शन से प्रसारित साक्षात्कार, 25 अप्रैल, 1998।
50 दिनमान, वही, 21-27 अप्रैल, 1985, पृष्ठ संख्या- 25।
51. डा० रीता बहुगुणा जोशी एवं डा० राम नरेश त्रिपाठी : हेमवती नन्दन बहुगुणा, वही, पृष्ठ संख्या- 168 ।
52. डा० रीता बहुगुणा जोशी एवं डा० राम नरेश त्रिपाठी, वही।
53. दैनिक जागरण, हिन्दी दैनिक समाचार पत्र, 8 नवम्बर, 1979, पृष्ठ संख्या- 1।
54. दैनिक जागरण, वही, 10 नवम्बर, 1979, पृष्ठ संख्या- 1।

के लिए मत दे रहा है वह कार्यरूप मे सामने आ पायेगी। यही दावा जनता पार्टी और लोकदल के नेता भी कर रहे थे लेकिन जहॉ जनता पार्टी ने कई क्षेत्रीय दलों के साथ स्थानीय गठबन्ध करने की घोषणा की थी और लोकदल क्षेत्रीय तथा अखिल-भारतीय दलो को एक मंच पर लाने की कोशिश कर रहा था वहीं इंदिरा गांधी कई स्थानों पर स्थानीय समझौतो के बावजूद यह आभास दिला रही थी कि उनकी पार्टी ही एक मात्र ऐमी पार्टी है जो अकेले चुनाव मैदान मे उतर आयी है[55]। वैसे इस चुनाव मे छः मान्यता प्राप्त राष्ट्रीय दल और 27 मान्यता प्राप्त प्रान्तीय दल अपने-अपने चुनाव चिन्हों के साथ चुनाव मैदान में थे। इसके अतिरिक्त 13 गैर मान्यता प्राप्त राजनैतिक दलो ने भी चुनाव आयोग में अपने को नामित करा लिया था[56]।

इस चुनाव में इंदिरा गांधी का प्रमुख मुद्दा 'स्थायी सरकार' और 'व्यवस्था' से जुड़ा हुआ था। उन्होंने जनता पार्टी के ढाई साल के शासन के जबाब में अतीत के अपने 11 वर्षीय शासन को भारतीय इतिहास में स्वर्ण युग की संज्ञा[57] दे रही थी। अपने कई भाषणों में उन्होंने कहा कि 'जब वे सत्ता से अलग हुई देश में अन्न और विदेशी मुद्रा के भण्डार मौजूद थे किन्तु जनता पार्टी ने उन्हें बरबाद किया'[58]। जनता पार्टी और लोकदल की विदेश नीति पर भी हमला करते हुए उन्होने कहा कि 'आज छोटे-छोटे देश भी भारत को ऑख दिखाने लगे हैं'[59]। तत्कालीन राजनीतिक विशेषज्ञों का भी मानना था कि 1977 में केवल कांग्रेस ही नहीं पराजित हुई वरन् वर्षों के परीश्रम से बना सत्ता का वह ढाँचा भी घातक रूप क्षतिग्रस्त हो गया जिस पर भारत का विकास टिका हुआ था और जिसने भारतीय समाज को स्थिरता देकर उसकी उन्नति का मार्ग प्रशस्त किया था। इस अचानक घटने वाली घटना ने आज देश को राजनैतिक अस्थिरता और अनिश्चितता के दलदल मे धकेल दिया है[60]।

वस्तुतः सरकारों का पलटना आदि लोकतंत्रीय व्यवस्था के वैध अंग जरूर हैं लेकिन किसी दल या व्यक्ति विशेष का दीर्घकाल तक के लिए सत्ताधारी बने रहना स्थिरता का पर्यायवाची नही है और न स्थिरता को बनाये रखने के लिए ऐसा होना आवश्यक ही है। यदि ऐसा होता तो विश्व के अनेक राष्ट्र राजतंत्र का बहिष्कार करके लोकतत्र का स्वागत नही करते। ग्यारह साल तक सत्ता का संचालन इंदिरा गांधी जैसे लोकप्रिय और दृढ़ व्यक्ति

---

55 दिनमान : वही, 1-17 नवम्बर, 1979, पृष्ठ संख्या- 15।
56 वर्ल्ड इन साइक्लोपीडिया ऑफ पोलिटिकल सिस्टम, (खण्ड-एक) यूनाइटेड किंगडम 1983 . पृष्ठसंख्या 445।
57 दिनमान : वही, 18-24 नवम्बर, 1979, पृष्ठ संख्या- 17।
58 दैनिक जागरण, वही, 7 नवम्बर, 1979, पृष्ठ संख्या- 1।
59 दैनिक जागरण, वही, 8 नवम्बर, 1979 पृष्ठ संख्या- 1।
60 दिनमान : वही, 18-24 नवम्बर, 1979, पृष्ठ संख्या- 25-26।

के हाथो मे था, केन्द्रीय मत्रियों के घटकवाद और निजी स्वार्थों की टकराहट से मुक्त था। भारत के अधिकाश प्रदेश काग्रेस की छत्रछाया में थे[61]। तो फिर इतनी सुखद और सुविधाजनक स्थिति के बाद भी स्थिरता को सुरक्षित रखने के लिए देश पर आपात स्थिति लागू करने की कृपा क्यो की गई? अदल-बदल कर कमलापति त्रिपाठी, बहुगुणा, नारायण दत्त तिवारी को उत्तर प्रदेश के मुख्यमत्रित्व के पद पर क्यों स्थापित किया गया? ऐसा लगता है कि यह नीति उभरती हुई अस्थिरता के विरुद्ध अपनाई गई एक चतुर परन्तु व्यर्थ रणनीति नहीं थी[62]।

फिलहाल 1980 के इस मध्यावधि चुनाव मे इदिरा गाधी की हा हवा रही। उनके प्रति जन समूह में आदर का भाव उमड़ पड़ा था। लोग आपातकाल की त्रासदी को भूलकर पुन इदिरा शासन के प्रति आकर्षित होने लगे थे। कमलापति त्रिपाठी लिखते हैं कि 'ज्यादातर स्थानो पर देश की जनता ने उनकी जय-जयकार के नारे लगाये और युवा वर्ग तो जैसे इंदिरा जी के लिए पागल हो गया था। वह नारे लगाया करता था कि 'आधी रोटी खायेगे, इंदिरा को वापस लाएंगे'[63]। अन्ततः जनता पार्टी के सहयोगी दलों के पृथक-पृथक रूप से चुनाव में भाग लेने के कारण हुआ मत-विभाजन इंदिरा गांधी को लाभकारी सिद्ध हुआ। कांग्रेस (आई) को बहुमत मिला, यानि 351 सीटों पर उसे विजय प्राप्त हुई[64]। मत विभाजन का ही परिणाम रहा कि केवल 42 7% मत प्राप्त होने पर भी इंदिरा गांधी ने सदन में दो तिहाई बहुमत प्राप्त कर ली[65]। प्रमुख विपक्षी दलों में लोकदल, सी० पी० एम० तथा जनता पार्टी थी जिन्हें क्रमशः 41, 35 और 31 सीटो पर ही विजय मिल सकी तथा उनके वोट का प्रतिशत भी आपसी द्वन्द के कारण घट गया जो क्रमशः 9.43%, 6.03% और 18.94% तक ही रहा[66]।

इसी परिप्रेक्ष्य में समकालीन राजनीति के दूसरे स्वरूप पर भी नजर डालनी होगी। पता चलता है कि अब तक भारतीय राजनीति पूँजी के शिकंजे में पूरी तरह आ चुकी थी। चुनावों में राजनैतिक दल धन का प्रयोग खुले आम प्रतिस्पर्धा के तौर पर करने लगे थे जिसके कारण भारतीय लोकतंत्र का खोखला होना व भ्रष्ट होना तीव्रगति से जारी हुआ[67]। नतीजतन वर्तमान समाज के निजी एवं सार्वजनिक जीवन के नैतिक मापदण्डों में लगातार आ रही गिरावट को इसी दूषित राजनीति की परिणति माना जा रहा है। वस्तुतः राजनीति में बड़े पैमाने पर पूँजी

---

61 प्रभा दीक्षित का दिनमान, हिन्दी साप्ताहिक पत्रिका में प्रकाशित लेख, 18-24 नवम्बर, 1979, पृष्ठसंख्या 24।
62 प्रभा दीक्षित : वही।
63 कमलापति त्रिपाठी : स्वतंत्रता आन्दोलन और उसके बाद, वही, पृष्ठ संख्या- 268।
64 राम गोपाल : इंडिया अण्डर इंदिरा, न्यू देलही, 1986, पृष्ठ संख्या- 87।
65 राम गोपाल : वही।
66 वर्ल्ड इनसाइक्लोपीडिया आफ पोलिटिकल सिस्टम, (खण्ड-एक) यूनाइटेड किंगडम, 1983, पृष्ठ संख्या- 443।
67 दुष्यंत कुमार (वरिष्ठ पत्रकार) का जनसत्ता हिन्दी दैनिक समाचार पत्र मे प्रकाशित लेख, 21 अप्रैल, 1996, पृष्ठ संख्या- 4।

की घुसपैठ तीसरे आम चुनाव से ही हुई मानी जाती है। आगे चलकर दिनों दिन इसका रूप और विकराल होता चला गया। ज्ञातव्य है कि 12 जून, 1975 को इलाहाबाद उच्च न्यायालय ने इंदिरा गांधी के खिलाफ राजनारायण की जिस याचिका पर निर्णय दिया था उसका मूल स्वर इसी प्रकार के भ्रष्टाचार पर आधारित था। लगे आरोपो मे सुधार के बजाय इदिरा गांधी नेआगे और मजबूती दिखाई, यानि 1977 के आम चुनाव में कांग्रेस ने 1971 की तुलना मे लगभग 6 गुना अधिक पैसा खर्च किया[68]। यद्यपि मोरारजी सरकार ने चुनावों में पारदर्शिता लाने के लिए पहल की थी किन्तु चुनाव सुधारो की दिशा में कुछ कर पाते इससे पहले ही जुलाई 1979 में उनकी सरकार चली गयी।

चौधरी चरण सिह की काम-चलाऊ सरकार 1980 मे चुनाव का सारा खर्च सरकारी खर्चे के तौर पर करने की योजना लागू करना चाहती थी ताकि राजनीतिज्ञों पर पैसे वाले व्यापारिक और उद्योगपति घरानों का दबाव खत्म हो सके[69]। इस बावत चरण सिंह ने अध्यादेश लाने का प्रयास किया परन्तु तत्कालीन राष्ट्रपति नीलम सजीव रेड्डी ने इसे मंजूरी नहीं दी। अन्ततः 1980 के आम चुनाव में भी पैसे की ताकत का जमकर प्रदर्शन हुआ। पूँजीपतियों और समाज के प्रभावशाली वर्ग जिसके हित में नीतियॉ बनती हैं, ने कांग्रेस की मद्द में कोई कसर नही छोड़ी[70]। दरअसल यह प्रभावशाली वर्ग आर्थिक रूप से कोई भी ऐसा खतरा नही उठाना चाहता था जिससे कांग्रेस की स्थिति कमजोर हो। कुछ करोड़ रुपये से चुनाव लड़ने वाले कांग्रेस के बारे में बताया जाता है कि उसने सौ करोड़ से ज्यादा रुपये तो अपने प्रत्याशियों में बाँटे। बाकी खर्च अलग रहा। जनता पार्टी ने भी अपने प्रत्याशियों को चन्दा दिया। हलांकि दोनों में अन्तर जमीन-आसमान का रहा। लेकिन एक मोटी बात यह रही कि अब तक चुनाव सुधारों के लिए कोसने वाला विपक्ष भी उसका अनुकरण करने लगा था[71]।

हेमवती नन्दन बहुगुणा उत्तर प्रदेश के गढ़वाल संसदीय क्षेत्र से चुनाव लड़े थे। इंदिरा कांग्रेस के प्रधान महासचिव होने के साथ-साथ संगठनात्मक अनुभव में प्रवीण होने के कारण उन्होंने पूरी शक्ति के साथ चुनाव अभियान का संचालन किया था। इस दौरान उन्होंने 118 संसदीय क्षेत्रों का तूफानी दौरा किया था[72]। वे दूसरे प्रत्याशियों के चुनावी क्षेत्रो के दौरों मे इतना व्यस्त रहे कि अपने निर्वाचन क्षेत्र गढ़वाल तथा अपनी पत्नी कमला बहुगुणा के क्षेत्र फूलपुर में एक सप्ताह का भी समय न दे पाये थे[73]। दूसरी ओर इंदिरा गांधी के वफादारों ने

---

68 दुष्यत कुमार : वही।
69 वही।
70 वही।
71 वही।
72 डा० रीता बहुगुणा जोशी एवं डा० राम नरेश त्रिपाठी : हेमवती नन्दन बहुगुणा, वही, पृष्ठ संख्या- 165।
73 डा० रीता बहुगुणा जोशी एवं डा० राम नरेश त्रिपाठी : वही।

सी० एफ० डी० से सम्बन्ध रहे उम्मीदवारो को हराने के लिए भयकर भीतरघात किया। कमला बहुगुणा इसी भीतरघात का शिकार रही यानि फूलपुर संसदीय क्षेत्र से चुनाव वह हार गयी। स्वयं बहुगुणा के क्षेत्र में यशपाल कपूर, चन्द्रास्वामी को लेकर पहुँचे परन्तु षड्यंत्र सफल नहा हुआ। बहुगुणा को गढ़वाल की जनता ने बड़े उत्साह के साथ एक लाख पच्चीस हजार मतो से विजयी बनाया[74]।

बहुमत प्राप्त करने के बाद इंदिरा गांधी ने जनवरी 1980 मे पुनः अपनी सरकार बनायी। इस सरकार मे मंत्रियों की जो मूल सूची बनायी गई थी उसमें वित्त मंत्री के रूप में बहुगुणा का भी नाम था। लेकिन प्रधानमंत्री के कुछ तथाकथित वफादार सहयोगियों और खास तौर से उनके पुत्र संजय गांधी को यह ग्राह्य नहीं था[75]। फलतः बहुगुणा को मंत्री बनाए जाने के प्रस्ताव का संजय गांधी ने कड़ा विरोध किया। परन्तु बहुगुणा की राजनीतिक उपयोगिता को देखते हुए इंदिरा गांधी उन्हें मंत्रिमंडल में रखने के फैसले पर अड़ी रही। तब संजय गांधी ने अपनी बात मनवाने के लिए दूसरा तरीका सोंचा। उन्होंने अपने समर्थकों से उन तमाम संगठनों की एक सूची बनाने को कहा जिनसे बहुगुणा जुड़े हुए थे। बाद में प्रधानमंत्री के पास ढेर सारे तार भिजवाये गये जिनमें बहुगुणा को उप प्रधानमंत्री बनाये जाने की माँग की गयी थी। इस तरह के तार भेजने वालों के रूप में उन संगठनों के नाम दिये गये थे जिनसे बहुगुणा सम्बन्धित थे[76]। संजय गांधी इतने से ही संतुष्ट नहीं हुए, उनके इशारे पर युवा इंकाइयों ने ढेर सारे पोस्टर छपवाये और रातों-रात संसद, विलिंगडन क्रेसेट सफदरजंग रोड, केन्द्रीय सचिवालय के आस-पास की जगहों को उन पोस्टरों से पाट सा दिया जिनमें बहुगुणा को उप प्रधानमंत्री बनाये जाने की माँग की गई थी[77]। अगली सुबह इंदिरा गांधी की नजर उन पोस्टरो पर पड़ी, उन्हें लगा कि बहुगुणा की महत्वाकांक्षा बहुत तेज गति से बढ़ रही है। इस भय से सशंकित होकर उन्होंने तुरन्त ही मंत्रियों की प्रस्तावित सूची से हेमवती नन्दन बहुगुणा का नाम हटा दिया[78]।

यही से कांग्रेस में तथाकथित वफादारों को मौका मिला, कानाफूसी शुरू हुई और बहुगुणा पर आन्तरिक आलोचनाओं का वार पड़ने लगा। नतीजतन वह घोर उपेक्षा के शिकार हुए[79] और अन्ततः उसी कांग्रेस को पुनः छोड़ने पर मजबूर हुए जिसमें दुबारा शामिल होते समय शायद किसी भी हालत में उसे छोड़ने की कल्पना वह नहीं किये थे। वास्तविकता यह थी कि चुनाव के बाद ही अचानक कांग्रेसी संस्कृति में पुनः बदलाव आने लगा

---

74 वही।

75. रविवार, साप्ताहिक हिन्दी पत्रिका, कलकत्ता, 12-18 सितम्बर, 1982, पृष्ठ सख्या- 8।

76. रविवार, साप्ताहिक हिन्दी पत्रिका : वही।

77 रविवार : वही।

78. रविवार : वही।

79. दिल्ली दूरदर्शन से प्रसारित बहुगुणा पर वृत्त चित्र के आलेख से, 25 अप्रैल, 1998।

था। मौका परस्ती को महत्व दिया जाने लगा। कांग्रेस अध्यक्षा अपने प्रधान सचिव बहुगुणा से मंत्रणा तो क्या उनसे साधारण भेंट की भी आवश्यकता नहीं समझी। बहुगुणा संगठन मे नाम मात्र के प्रधान महासचिव रह गये थे[80]। उनसे राय लिये बगैर संगठन में मनमाना परिवर्तन कर दिया जा रहा था। नई कार्यसमिति व संसदीय बोर्ड से भी बहुगुणा व उनके समर्थकों को नजर अन्दाज किया गया। ज्ञातव्य है कि दिल्ली में एक मार्च 1980 को धमवीर की अध्यक्षता मे प्रदेश कांग्रेस (आई) कार्य समिति और संसदीय बोर्ड के सदस्यों के नामों की घोषणा की गई जिसमे स्वय बहुगुणा तथा उनके किसी भी समर्थक (भू० पू० लोकतान्त्रिक कांग्रेस के लोग) को शामिल नहीं किया गया[81]। इसी प्रकार पार्टी के प्रधान महासचिव होते हुए भी बहुगुणा दिल्ली में स्थित केन्द्रीय कार्यालय नहीं जाते थे और प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी जो पार्टी की भी प्रधान थी, उन्हें पार्टी का कोई काम भी नहीं दे रही थी [82]। इस प्रकार प्रधान महासचिव के पद को पूरी तरह अर्थहीन बना दिये जाने पर बहुगुणा जैसे कार्यकुशल नेता को इंका में घुटन महसूस होना स्वाभाविक थी। अन्ततः वह अधिकारवाद के विरोध में पुनः उठ खड़े हुए[83] और इंदिरा गांधी से अलग हो गये।

इतना ही नही बल्कि बहुगुणा ने संसद सदस्य से भी त्यागपत्र दे दिया। कांग्रेस दल छोड़ने के बाद जीती हुई सीट से त्यागपत्र देकर बहुगुणा ने भारत के संसदीय लोकतंत्र के इतिहास में एक उच्च सिद्धान्त प्रतिपादित किया। आचार्य नरेन्द्र देव इसके अपवाद थे जरुर किन्तु बहुगुणा उनसे भी कहीं अलग रहे। क्योंकि आचार्य देव तो चुनाव दुबारा हार गये थे किन्तु बहुगुणा विजयी रहे[84]। तदुपरान्त उन्होंने डेमोक्रेटिक सोसलिस्ट पार्टी (डी० एस० पी०) की स्थापना की और बम्बई में उसी स्थान पर पहला अधिवेशन किया जहाँ कुछ समय पूर्व भारतीय जनता पार्टी का प्रथम अधिवेशन हुआ था। अधिवेशन में नारा दिया गया कि 'देश का नेता कैसा हो? एच० एन० बहुगुणा जैसा हो'।[85]

गढ़वाल लोकसभा संसदीय क्षेत्र से मई 1980 में बहुगुणा के इस्तीफा दे दिये जाने के पश्चात् चुनाव आयोग ने रिक्त सीट की आपूर्ति हेतु मई 1981 में उप चुनाव की घोषणा की[86]। फिर लड़ा गया यह ऐतिहासिक चुनाव जो कई बार विभिन्न साजिशों के तहत टलता रहा। लगातार तीन-तीन बार चुनाव की घोषणाएं होती रही

---

80 डा० रीता बहुगुणा जोशी एवं डा० राम नरेश त्रिपाठी, हेमवती नन्दन बहुगुणा, वही, पृष्ठ संख्या- 165।

81 अमृत प्रभात, हिन्दी दैनिक समाचार पत्र, 4 मार्च, 1980, पृष्ठ संख्या- 1-5।

82 अमृत प्रभात, वही 7 मार्च, 1980, पृष्ठ संख्या- 1।

83. दिनमान : वही, 6-12 मार्च, 1983, पृष्ठ संख्या- 19।

84 योगेश्वर तिवारी का स्मारिका में प्रकाशित लेख, इलाहाबाद, मई, 1990, पृष्ठ संख्या- 3।

85 दिनमान : वही, 6-12 मार्च, 1983, पृष्ठ संख्या- 19।

86. अमृत प्रभात, वही, 15 मई, 1981, पृष्ठ संख्या- 1।

किन्तु सयोग 19 मई, 1982 को सिद्ध हुआ जब पुनः बहुगुणा कांग्रेसी प्रत्याशी चन्द्रमोहन सिंह नेगी को उन्तीस हजार चौबीस (29,024) मतों से पराजित कर[87] संसद में प्रतिपक्ष मोर्चा के अगुवा बने। बार-बार चुनाव टाले जाने का कारण शायद बहुगुणा की शक्ति को क्षीण करने[88] की साजिश थी ताकि किसी तरह उन्हें पराजित किया जा सके। क्योंकि ऐसा कहा जाता है कि इंदिरा गांधी बहुगुणा की राजनीतिक चातुर्यता से इतना डरती थीं कि उन्हें लोकसभा में वापस नहीं देखना चाहती थीं। उन्हें भय था कि संसद में उनकी वापसी उनके दल के लिए घातक होगी क्योंकि वह कांग्रेसी सांसदों को तोड़ देंगे[89]। बहरहाल गढ़वाल चुनाव के लम्बित होने की वजह से बहुगुणा के व्यक्तित्व पर बार-बार प्रकाश पड़ता रहा, उन्हें प्रतिष्ठा मिलती रही और अन्ततः चुनाव उनके पक्ष में गया।

पता चलता है कि चुनाव के दौरान सरकारी नीति ने लोकतंत्र की जड़ें पूरी तरह खोखली कर दी थीं। प्रचार-प्रसार के साथ-साथ मतदान और मतगणना के दौरान भी भ्रष्टाचार और धाँधली का ही आलम रहा। अस्तु इस सन्दर्भ में चुनावी माहौल का संक्षिप्त अवलोकन प्रासगिक होगा। संसद की सदस्यता से त्यागपत्र देने के पश्चात सरकारी समर्थकों ने बहुगुणा के मतदाताओं को गुमराह करने के लिए प्रचार आरम्भ किया कि 'देखो, बहुगुणा को तुमने इतने मतो से जिताया था, किन्तु तुम्हारें वोटों को बहुगुणा न लात मार दी है'[90]....। बहुगुणा ने अपने एक साक्षात्कार में बताया है कि "इस प्रचार का प्रभाव समाप्त करने में मुझे बहुत वक्त लगा। मैने गढ़वाल की जनता को समझाया कि मैंने तुम्हारें मतों की उपेक्षा नहीं की, बल्कि संसद की सदस्यता त्यागकर तुम्हारे स्वाभिमान की रक्षा की है[91]।"

एक बार चुनाव रद्द कर दिये जाने के बाद जब दूसरी बार 19 मई, 1982 के चुनाव की चर्चा चली तब अधिकांश लोग उसी भ्रम में रहे कि इस बार भी पहले की तरह बड़ी चतुराई से चुनाव टाल दिया जायेगा। इसी अनिश्चितता के कारण लोगों में एक तरह की उदासीनता बनी रही[92]। इसी की एक वजह यह भी थी कि मतदान में अधिक लोगों ने भाग नहीं लिया। जो लोग बहुगुणा के समर्थक समझे गये, उन्हें तरह-तरह से परेशान किया गया। नील घाटी के तीन हजार भोटिया आदिवासियों को अपने घरों की ओर लौटने की बसें नहीं दी गई। जबकि 1954 से उन्हें यह सुविधा प्रतिवर्ष मिलती रही थी। बहुगुणा का साथ देने के कारण दो अध्यापकों के तबादले करवा दिये गये—एक को अरुणांचल भिजवा दिया गया, दूसरे को अण्डमान। कई लोगों के घर छापे

---

87 अमृत प्रभात, 24 मई, 1982, पृष्ठ संख्या- 1।

88. डा० रीता बहुगुणा जोशी एवं डा० राम नरेश त्रिपाठी, हेमवती नन्दन बहुगुणा, वही, पृष्ठ संख्या- 172।

89 दिनमान : वही, 6-12 मार्च, 1983, पृष्ठ संख्या- 19।

90 साप्ताहिक हिन्दुस्तान, वही, 13-19 जून, 1982, पृष्ठ संख्या- 7।

91. हेमवती नन्दन बहुगुणा का साप्ताहिक हिन्दुस्तान में प्रकाशित साक्षात्कार, 13-19 जून, 1982, पृष्ठ संख्या- 7-52।

92. दि पायोनियर, अंग्रेजी दैनिक समाचार पत्र, 12 मई, 1982, पृष्ठ संख्या- 5।

डलवाये गये[93]।

बहुगुणा के समर्थन मे दीवार पर पोस्टर चिपकाने वालों को अकारण गोली चलायी गयी। इतना आतंक फैलाया गया—ताकि मतदान कम हो और बहुगुणा को वोट कम पड़े। गत कई आम् चुनावों में यहॉ पर आठ सौ से अधिक पुलिस के सिपाही नहीं भेजे गये थे, परन्तु पिछली बार (1981 का रद्द किया गया चुनाव) यह सख्या अट्ठारह सौ (1800) तक पहुँच गई थी और इस बार नौ हजार (9000) के करीब थी[94]। यानि पूरा निर्वाचन क्षेत्र छावनी में तब्दील कर दिया गयाथा। बहुगुणा समर्थकों को बेरहमी से पीटा गया। दुकानदारों को पुलिस ने डराया-धमकाया—कांग्रेस (आई) का झण्डा नहीं लगाओगे तो मिलावट के अपराध में जेल में बन्द कर देंगे। कांग्रेस ने इतने अधिक लोगों को बाहर से बुलवा लिया था कि वहाँ के निवासियों को पीने का पानी तक मिल पाना सम्भव न हो पाया था। सरकारी डाक-बंगले तथा रेस्ट हाउस पहले ही बुक करवा लिये थे। साथ ही साथ आम जनता में यह भय फैला दिया गया था कि चुनाव इस बार भी नहीं होगा। लोगों को लगता था कि इतना सब कुछ करने के पश्चात बरात बिना ब्याह किये यों ही लौट जाएगी[95]। कब क्या हो जाय, कोई कुछ नहीं कह सकता था। जातिवाद के नाम पर लोगों को विभाजित करने की कम चेष्टा नहीं की गई। लोग बहुगुणा को खतरा मोललेकर वोट तो दे सकते थे पर जान नहीं। परन्तु इतना सब करने के पश्चात कुछ नहीं हुआ। गढ़वाल की जनता गरीब हो सकती है परन्तु उसमे चेतनाका अभाव नहीं दिखा, उन्होंने सिद्ध कर दिया कि उनमें आत्म गौरव है। वे किसी भी प्रलोभन के आगे नहीं झुके। चुनावोपरान्त बहुगुणा ने कहा भी था कि 'यह जीत मेरी नहीं बल्कि गढ़वाल के लोगों की गरिमा की जीत है[96]।'

गढ़वाल चुनाव जीतकर संसद में पहुँचे बहुगुणा प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी के लिए फिर एक विकट समस्या बन गये। संसद में विपक्षी दलों के नेता बहुगुणा की प्रतिभा से भली भाँति परिचित थे, इसलिए उन्होंने विपक्ष द्वारा पेश किये गये अविश्वास प्रस्ताव पर बहस की शुरूआत करने का काम बहुगुणा को ही सौंपा[97]। विपक्षी नेताओं का यह अनुमान था कि बहुगुणा को विपक्षी अगुआई करते देख इंदिरा गाधी और उनके पार्टी के प्रवक्ता निश्चय ही अपना संतुलन खो बैठेंगे। तब उन्हें वाकयुद्ध में आसानी से हराया जा सकता है। विपक्षी नेता अपनी इस योजना में बहुत हद तक सफल रहे, क्योंकि सरकारी पक्ष की ओर से अविश्वास प्रस्ताव का जवाब देने के

---

93 हेमवती नन्दन बहुगुणा का साक्षात्कार, वही।

94 हेमवती नन्दन बहुगुणा का साक्षात्कार, वही।

95 हेमवती नन्दन बहुगुणा का साक्षात्कार, वही।

96 दि पायोनियर, अंग्रेजी दैनिक समाचार पत्र, 25 मई, 1982, पृष्ठ संख्या- 1।

97. रविवार, साप्ताहिक हिन्दी पत्रिका, कलकत्ता, 5-11 सितम्बर, 1982, पृष्ठ संख्या- 11।

क्रम मे पहले वक्ता ने ही अविश्वास प्रस्ताव को इंदिरा गाधी बनाम बहुगुणा विवाद में बदल दिया था। सरकारी पक्ष की ओर से जवाब देने की शुरूआत विद्याचरण शुक्ल ने की थी। उनके बाद इदिरा गांधी ने भी विपक्षियो के आरोपो का जोरदार ढंग से जवाब दिया, लेकिन बहस के अन्त में सरकारी पक्ष के स्पष्टीकरणों और आरोपों का जवाब देने का अधिकार अविश्वास प्रस्ताव पर बहस की शुरूआत करने वाले बहुगुणा को ही था, जिन्होंने इस मौके का भरपूर फायदा उठाया।

पता चलता है कि बहुगुणा की आक्रामकता के कारण इंदिरा गाधी की बेचैनी बहुत बढ़ गई थी, वे सदन मे गुस्से से काँप रही थी[99]। लेकिन उनके सहायक और समर्थक हार मानने के लिए तैयार नहीं थे। उन लोगों ने संसद के सत्र समापन के बाद राष्ट्रीय स्तर की दो समाचार समितियों से सम्पर्क कर ऐसा समाचार प्रकाशित करवाया जिससे यह प्रतीत होता था कि इंदिरा गांधी ने बहुगुणा द्वारा उठाये गये हर सवाल का दो-टूक जवाब दिया है[100]। किन्तु प्रधानमंत्री को तो इसका मौका लोकसभा में भी मिला था, फिर उन्होंने सदन के बाहर उपलब्ध साधनों का प्रयोग कर बहुगुणा के हमले का जवाब क्यों दिया? अचानक उठे इस सवाल का जवाब इंदिरा गांधी द्वारा भले ही अपनी छवि को बचाने का उपाय कहा जाय लेकिन इतना तो स्पष्ट होता ही है कि 'इंडिया इज इदिरा'[101] का सूत्र अभी भी प्रधानमंत्री की प्रवृत्ति में बसा हुआ था।

वस्तुतः इंदिरा गांधी के प्रशंसक यह मानकर चलते हैं कि प्रधानमंत्री स्वयं तो योग्यता, दक्षता एवं सत्य निष्ठा की अवतार थी, परन्तु उनके अधिकांश वर्तमान राजनीतिक सहयोगी कामचोर और भ्रष्ट थे—इसलिए चाहते हुए भी इंदिरा गांधी काम करने वाली सरकार देने का अपना दो वर्ष पुराना वायदा पूरा नहीं कर पा रही थी[102]। आमतौर पर इन सहयोगियों को 'चुस्त-दुरुस्त' रखने के लिए कभी सरकार से संगठन में, कभी संगठन से सरकार में, कभी केन्द्र से राज्य में तो कभी राज्य से केन्द्र में उछालते रहना पड़ता था। आखिर ये लोग ही थे जिनके भरोसे उन्होंने 1979 मे काम करने वाली सरकार देने का वायदा किया था। आपातकाल में पूरी तरह अस्तित्वहीन हो चुकी कांग्रेस पार्टी को 'पुर्नजीवित'[103] करने का इन्हीं लोगों के भरोसे उन्होंने जनवरी 1978 में बीड़ा उठाया था और 1980 में सत्ता मे वापसी के बाद इन्हीं लोगों को अपना दाहिना हाथ बनाया था। वरिष्ठ पत्रकार भानु

---

98 रविवार : वही।
99 रविवार : वही।
100 रविवार : वही।
101 राम गोपाल : इण्डिया अण्डर इन्दिरा, न्यू देलही, 1986, पृष्ठ संख्या- 148।
102 भानु प्रताप शुक्ल : हर रविवार (खण्ड-तीन) दिल्ली, जून 1992, पृष्ठ सख्या- 32।
103. भानु प्रताप शुक्ल : वही।

प्रताप शुक्ल लिखते हैं—'इस समय प्रधानमंत्री एक ऐसे झुंड की मुखिया रह गई थी जिसकी तुलना सर्कस के बजाय मानसिक अजायब घर से करना अधिक उपयुक्त था'[104]। यद्यपि शुक्ल जी का वक्तव्य कुछ अतिरंजित हो सकता है लेकिन निःसन्देह यह कहा जा सकता है कि प्रधानमंत्री की विश्वसनीय टुकड़ी में छल, दम्भ और स्वार्थ लिप्सा का दृष्टिकोण हावी था जो अधिनायकवादी प्रवृत्ति का उन्नायक माना[105] जा सकता है। वैसे दक्षिण भारत के तत्कालीन विधानसभा चुनाव में कांग्रेस की स्थिति अपरोक्त तर्क को और अधिक पुख्ता कर देती है।

———दक्षिण में कांग्रेस की करारी पराजय

तत्कालीन इंदिरा कांग्रेस बीमारी अवस्था से गुजर रही थी। पार्टी के कुछ लोग छिटककर भाग रहे थे, तो ढेर सारे नेता अपने स्थानीय रहनुमाओं की नीद हराम किये हुए थे। दक्षिण भारत के तीन राज्यों—आंध्र प्रदेश, कर्नाटक और त्रिपुरा के विधानसभा चुनाव इसी माहौल मे लड़े गये[106]। आंध्र प्रदेश मे चुनावी प्रतिद्वन्दिता इंदिरा कांग्रेस, तेलगू सिनेमा के सर्वश्रेष्ठ नायक रहे एन० टी० रामाराव के नवगठित राजनीतिक दल तेलगू देशम, भारतीय जनता पार्टी, कांग्रेस (जे) तथा सी०पी० आई०, सी० पी० एम, लोकदल, जनता इत्यादि पार्टियों के संयुक्त मोर्चे के बीच था[107]। कर्नाटक में एक तरफ इंदिरा कांग्रेस थी और दूसरी तरफ भाजपा, जनता,कर्नाटक-क्रांतिरंगा, मुस्लिम लीग, सी० पी० आई, सी० पी० एम०, द्रमुक, अन्ना द्रमुक, कांग्रेस (एस) तथा लोकदल आदि पार्टियाँ थीं। इसी प्रकार त्रिपुरा में इंदिरा कांग्रेस का मुकाबला मार्क्सवादी कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व वाले वामपन्थी मोर्चे से था[108]। चुनावी माहौल की जहाँ तक बात है तत्कालीन समय मे ऐसा कोई राज्य नहीं था जहाँ कि इंदिरा कांग्रेस से लोग विक्षुब्ध न हों, बल्कि कहना चाहिए जहाँ विक्षुब्धुओं की फौज लगातार बढ़ती जा रही हो। आंध्र प्रदेश के विक्षुब्ध इंकाई सम्मुखीन चुनाव में इंदिरा कांग्रेस को कितना नुकसान पहुँचा सकते थे—इसकी आशंका इंदिरा गांधी के शिविर में जाड़े की कुहांसे की तरह सबको ग्रस्त किये हुए थी। कर्नाटक इंका का गृहयुद्ध भी प्रधानमंत्री के सिरदर्द को बढ़ा रहा था। गुजरात, महाराष्ट्र, बिहार और उड़ीसा में भी इंका के शरीर में आपसी फूट, चेचक के दानों की तरह छितराई हुई थी। प्रधानमंत्री का अपना घर (उत्तर प्रदेश) भी इस बीमारी से मुक्त नहीं था। राजीव बनाम मेनका। धवन बनाम अरुण नेहरू, फोतदार और उनके सहयोगी आदि द्वन्द शीतयुद्ध में

---

104. भानु प्रताप शुक्ल : वही, पृष्ठ संख्या- 33।
105 राम गोपाल : इण्डिया अण्डर इंदिरा, वही, पृष्ठ संख्या- 138-139।
106 रविवार : वही, 19-25 दिसम्बर, 1982, पृष्ठ संख्या- 8।
107 रविवार : वही।
108. रविवार : वही।

बदल चुके थे[109]। कुल मिलाकर चुनाव के शुरूआतिक समय मे ही सत्तारूढ़ दल की तस्वीर धुँधली और हताशाजनक रही।

अन्ततः आंध्र और कर्नाटक के चुनावी नतीजों ने एक तरफ जहाँ इंदिरा कांग्रेस को स्तब्ध कर दिया वहीं दूसरी तरफ प्रतिपक्षी दलों सहित चुनाव पूर्व के विश्लेषकों-समीक्षकों को भी हैरत में डाल दिया। वास्तविकता यह थी कि मौसम की मॉग और हवाओं का रुख पहिचानने में माहिर इंदिरा गांधी इस बार दक्षिण हवाओं के रुख और वहॉ के मौसम की मॉग को पहिचानने में चूक गयी थी[110]। इससे ज्यादा दुखद स्थिति और क्या हो सकती है कि जिस दक्षिण ने 1977 में जनता लहर को पहिचानने तक से इन्कार कर दिया था और मेडक संसदीय चुनाव में इंदिरा गांधी को भारी बहुमत से समर्थन दिया था, उसी मेडक में विधानसभा के सभी चुनाव क्षेत्रों से इका उम्मीदवार हार गये। इसके साथ-साथ रामाराव ने पूरे आंध्र में दो तिहाई बहुमत प्राप्त किया[111]। ऐसा माना जाता है कि आंध्र और कर्नाटक के मतदाताओं की प्रतिक्रिया, उस नीति का विरोध था जिसके चलते गुंडूराव को देवराज अर्स का विकल्प मान लिया गया था, या जिसके चलते अपमानित अंजैया की आँखों में आँसू आ गये थे[112]। स्रोतों से ऐसा प्रतीत होता है कि एक तरफ गुंडूराव दम्भ के प्रतीक माने गये तो दूसरी ओर रामाराव दिव्यता और देवत्व के। तेलगु फिल्मों में रामाराव विष्णु और रामकी भूमिकाओं के जरिये आंध्रवासियों मे जो लोकप्रियता प्राप्त की थी उसका एक असर यह था कि वहाँ के नये मंदिरों में स्थापित की जाने वाली भगवान विष्णु या राम की प्रतिमाएं, रामाराव की फिल्मी तस्वीर की ही अनुकृति होती थी। जनमानस में उसका जो स्वरूप अंकित था वह अन्य अभिनेताओं की लोकप्रियता से बिल्कुल भिन्न था[113]।

स्थानीय नेताओं के आक्रोश को भी इस सन्दर्भ में नजर अन्दाज नहीं किया जा सकता है। इसमें कोई शक नहीं कि आंध्र और कर्नाटक में इंदिरा कांग्रेस के चुनाव अभियान की बागडोर पूरी तरह केन्द्रीय नेताओं के हाथ में थी। महीनों पहिले दिल्ली के विश्वस्त संसद सदस्यों और विधायकों को भेजकर सम्भावित प्रत्याशियों की सूची बना ली गई थी और टिकटों के बँटवारे के समय भी इसी सूची ने निर्णायक भूमिका निभाई[114]। परिणामस्वरूप इन प्रदेशों के स्थानीय नेता बेहद दुखी रहे। कई स्थानीय नेताओं ने बाकायदा विद्रोह का झंडा उठाकर दूसरी पार्टियों के चुनाव चिन्हों पर चुनाव लड़ने को श्रेयस्कर माना। लेकिन जिन लोगों को पार्टी से बाहर

---

109. रविवार : वही, पृष्ठ संख्या- 9।
110 दिनमान, हिन्दी साप्ताहिक पत्रिका, वही, 16-22 जनवरी, 1983, पृष्ठ संख्या- 16।
111. राम गोपाल : इंडिया अण्डर इंडिया, वही, पृष्ठ संख्या- 157-158।
112. स्वतंत्र भारत, हिन्दी दैनिक समाचार पत्र में प्रकाशित सम्पादकीय लेख, 12 जनवरी, 1983 ।
113 स्वतंत्र भारत, वही, 3 जनवरी, 1983, पृष्ठ संख्या- 5।
114. दिनमान, वही, 16-22 जनवरी, 1983, पृष्ठ संख्या- 16।

कुछ मिलने के आसार नहीं दिखाई दिये, उन्होंने पार्टी में रहकर ही यह साबित करने के लिए कमर कस ली कि 'दिल्ली की पसन्द जनता की पसन्द नहीं हो सकती।'[115] स्थानीय नेताओं को इस बात पर भी बेहद रोष था कि दिल्ली से भेजे गये उत्तर भारत के पर्यवेक्षक सारी शक्ति अपने पास समेटे हुए थे। आर्थिक साधनों से लेकर प्रचार सामग्री तक के लिए उन्हे केन्द्रीय पर्यवेक्षक का मुँह ताकना होता था और केन्द्रीय पर्यवेक्षक का यह हाल था कि वे इस चुनाव के बहाने अपनी राजनैतिक शक्ति बढ़ाने और अपने ही लोगों को आगे लाने का काम कर रहे थे[116]। यानि उनकी रूचि दक्षिण के चुनावों से अधिक अपने उत्तर के राजनैतिक भविष्य में थी।

आंध्र और कर्नाटक के चुनाव परिणाम भारतीय राजनीति के दो दृष्य उपस्थित करते है। आंध्र में पार्टियों के बीच कोई एकता नही थी फिर भी वहाँ एन० टी० रामाराव की तेलगू देशम ने सबको पछाड़ दिया। इसका असर सत्तारूढ़ दल इंदिरा कांग्रेस पर ही नहीं बल्कि विपक्षी दलों पर भी पड़ता नजर आया। जनता पार्टी और लोकदल के पाँव तो पूरी तरह उखड़ गये, भारतीय जनता पार्टी भी जो व्यापक जन समर्थन का दावा करती थी, केवल तीन स्थान जीतने में कामयाब हुई[117]। इसके विपरीत कर्नाटक में भारतीय जनता पार्टी को छोड़कर प्रायः सभी विपक्षी दल एक मंच पर आ गये थे। फिर भी उन्हें जनता ने स्पष्ट बहुमत नहीं दिया, किसी तरह सम्मिलित सरकार बनी।[118] हेमवती नन्दन बहुगुणा के अनुसार— यह ईसलिए हुआ कि रामाराव के पास एक भावनात्मक मुद्दा था। एक ऐसा कार्यक्रम जिसका आधार स्थानीय जनता की भावनाओं से था और साथ ही इस कार्यक्रम को लागू करने के लिए एक निश्चित नेतृत्वभी। उन्होंने आंध्र के सम्मान की बात उठायी और यह सिद्ध किया कि वर्तमान शासन में आंध्र की प्रतिष्ठा दिन पर दिन गिरती जा रही है और इसके लिए उन्होंने हवाई अड्डे पर भूतपूर्व मुख्यमंत्री अंजैया के साथ हुए कथित दुर्व्यवहार का उदाहरण भी दिया। एक निश्चित मुद्दे के साथ जनता के सामने एक ऐसा व्यक्तित्व को पेश कया गया जो फिल्मों में काम करने के बाद भी शराब नहीं पीता, नशा नहीं करता, जिसके चारित्रिक पक्ष पर उँगली नहीं उठायी जा सकती। इन बातों का भारतीय जनमानस पर गहरा असर पड़ता है[119]।... पिछले दशक से राजनीति को गंदला कर दिया गया। राजनीतिज्ञों के साथ प्रत्येक दुर्व्यवसन और भ्रष्टाचार को जोड़ दिया गया। ऐसे में एन० टी० रामाराव एक स्वच्छ और स्फूर्तिदायिनी हवा की तरह आम जनता में बह गये[120]।"

---

115. दिनमान, वही।
116 दिनमान, वही।
117 दिनमान, वही, पृष्ठ संख्या- 18-19।
118. राम गोपाल : इण्डिया अण्डर इंदिरा, वही पृष्ठ संख्या- 153-154।
119. हेमवती नन्दन बहुगुणा का दिनमान में प्रकाशित साक्षात्कार, 16-22 जनवरी, 1983, पृष्ठ संख्या- 19।
120. हेमवती नन्दन बहुगुणा का प्रकाशित साक्षात्कार, वही।

इसी प्रकार कर्नाटक में जनता क्रांतिरंगा के विजयी होने के विषय में भी बहुगुणा का विचार बिल्कुल स्पष्ट था, उनका कहना था कि—"यहाँ पर भी जनता के सामने कोई नई बात नहीं रखी गई। परन्तु आम जनता इंदिरा कांग्रेस के स्थानीय प्रशासन से इतना ऊब चुकी थी कि वह एन-केन प्रकारेण इससे छुटकारा चाहती थी। इसलिए एक सुविचारित कार्यक्रम और स्थानीय मुद्दा न होते हुए भी आम लोगों ने जनता क्रांति रंगा के मंच में विश्वास व्यक्त किया, बिना दुल्हे के भी जनता ने बरात का स्वागत किया। सत्तारूढ़ दल के प्रति इतना रोष था कि कोई भी आकर लड़की को ले जाये परन्तु अमुक गुडा न ले जाये।"[121]

इन्हीं परिस्थितियों में कुछ सम्भावनाएं यह भी दिख रही थीं कि प्रधानमंत्री अपने दल के भीतर बगावत को रोकने और विपक्षी दलों को शक्ति अर्जन से वंचित रखने के लिए अकस्मात लोकसभा के मध्यावधि चुनावों की घोषणा कर सकती हैं। जैसा कि बैंक राष्ट्रीयकरण के बाद उन्होंने किया था[122]। लेकिन वर्तमान परिप्रेक्ष्य में इंका की आन्तरिक कमजोरियाँ क्या उन्हे ऐसा करने देती या खुद वह ऐसा खतरा मोल ले सकती थी? शायद नहीं। उपरोक्त सन्दर्भ में बहुगुणा के दूरदर्शी विचारों का उल्लेख करना यहाँ विशेष प्रासंगिक होगा। एक सवाल के जवाब में उन्होंने कहा था कि—"मध्यमवधि चुनावों की घोषणा इंदिरा गांधी नहीं कर सकती। उनके जो सहायक उन्हें दक्षिण में भारी विजय का आश्वासन दे चुके थे, उन पर दुबारा भरोसा करने की भूल वे नहीं करेंगी। आर्थिक क्षेत्र में भी उनके पास कोई ऐसा चमत्कार नहीं बचा है जिससे वह आम जनता में एक उत्साह की लहर पैदा कर सकें। क्या वह एन० टी० रामाराव की तरह अनाज के दाम एकदम घटा सकती हैं? क्या वह गरीब एवं मध्यवर्ग पर पड़ने वाले भारी आर्थिक बोझ को घटा सकती हैं? अगर नहीं तो क्या कह कर वह लोगों के सामने जायेंगी। मेरा तो निश्चित मत है कि 1985 तक वे इसी तरह हालात की लहरों पर बहती चली जायेंगी। हालात पर उनका अधिकार नहीं रहेगा"।[123] बहुगुणा द्वारा इंदिरा कांग्रेस के वर्तमान स्वरूप तथा वर्तमान राजनैतिक परिस्थितियों पर खींची गई यह तस्वीर समीचीन प्रतीत होती है। क्योंकि शासन के तौर-तरीके और अर्थव्यवस्था में भारी परिवर्तन, केन्द्रीय सरकार की प्रतिष्ठा जनमानस में पुनःस्थापित करने का काम अब पहले से अधिक कठिन प्रतीत होता जा रहा था।

---

121 हेमवती नन्दन बहुगुणा का प्रकाशित साक्षात्कार, वही।

122 दिनमान, 16-22 जनवरी, 1983, पृष्ठ संख्या- 19।

123 हेमवती नन्दन बहुगुणा का प्रकाशित साक्षात्कार, वही।

——विपक्षी एकता का तीव्र प्रयास, लोसपा का विघटन और दमकिपा

आंध्र प्रदेश और कर्नाटक के चुनावो के बाद इंदिरा कांग्रेस को जो धक्का लगा वह तो लगा ही, पर यह कह सकना कि प्रतिपक्ष इसका पूरा फायदा उठा पायेगा, बड़ा मुश्किल था। इसका एक कारण तो यह दिया जा सकता है कि आंध्र में प्रतिपक्ष के नाम पर जो पार्टी उभरी थी उसका अपना कोई अस्तित्व राष्ट्रीय स्तर पर न तो था और न ही आगे कोई सम्भावना थी। तेलगुदेशम की जीत जरूर दर्शाती है कि आंध्र के लोगों ने स्वतंत्रता के बाद पहली बार केन्द्रीय सरकार को यह जता दिया है कि उनके प्रदेश की राजनीति अब दिल्ली से नहीं चलायी जा सकती। परन्तु इसका मतलब यह नहीं कि प्रतिपक्ष ऐसी स्थिति में देश को राष्ट्रीय स्तर पर कोई नया विकल्प दे पाये। देश ने पहली बार 1977 मे जनता पार्टी को एक राष्ट्रीय विकल्प के रूप में उभारा था, लेकिन उसका हस्र क्या हुआ, सर्वविदित है। अलग-अलग विचारधारा वाले गुट व नेता अपनी निजी महत्वाकांक्षाओं तथा अस्तित्व को लेकर खड़े हो गये, नतीजतन जनता पार्टी तीन साल के अन्दर ही टूट गई और सत्ता खो बैठी। वर्तमान वातावरण में प्रतिपक्ष के समक्ष फिर वही मौका आया जब वह सर्वदलीय एकता के माध्यम से देश को एक नया विकल्प दे सकती थी। परन्तु यह न तो आंध्र और कर्नाटक में हो पाया और न ही अन्य प्रदेशों मे आगे सम्भव हो सका।

वास्तव में इस सर्वदलीय एकता में सबसे बड़ी बाधा भारतीय जनता पार्टी के प्रति और भारतीय जनता पार्टी का अन्य पार्टियों के प्रति दृष्टिकोण था[124]। इस पार्टी का अपना दावा था कि यह एक ऐसा दल है जिसका अपना सगठन है और जिसका प्रभाव केरल तक फैलने लगा है। विलय के सम्बन्ध में इस पार्टी ने कोई उत्साह नहीं दिखाया क्योंकि इसके नेता यह समझते रहे कि प्रतिपक्ष की जितनी भी दक्षिण पन्थी या मध्यममार्गी पार्टियां हैं, उनमे सबसे सुदृढ़ आधार भारतीय जनता पार्टी का ही है। विलय होने के बाद यदि प्रतिपक्ष को सफलता मिलेगी तो उसका मूल कारण भारतीय जनता पार्टी की संगठन शक्ति और लोकप्रियता होगी। जबकि अधिक लाभ वे दल या वे व्यक्ति उठा ले जायेंगे, जिनका अपना महत्व या तो समाप्त हो रहा है या एक दो बड़े नेता के बाद समाप्त हो जाएगा[125]।

उपरोक्त सन्दर्भ में बहुगुणा का विचार भी कुछ हद तक इसी प्रकार था। उनका कहना था कि— "सर्वदलीय एकता में परेशानी भारतीय जनता पार्टी के अहं के कारण है। कोई कहता है हमारी पार्टी का बड़ा

---

124. साप्ताहिक हिन्दुस्तान, हिन्दी साप्ताहिक पत्रिका, 28 मार्च, 1982, पृष्ठ संख्या- 10।

125 साप्ताहिक हिन्दुस्तान, वही।

नाम है। कोई कहता है हमारी पार्टी शासक पार्टी रही है और कोई कह रहा है कि किसानों मे हमारा सबसे बडा आधार है। पर सच बात यह हैकि इन सब पार्टियों का जिनमे मै अपनी पार्टी भी शामिल करता हूँ, स्वरूप करीब-करीब क्षेत्रीय है, चाहे हमसब अपने दलों का नाम राष्ट्रीय क्यो न रख ले[126]।... तो अब इन सब दलों को एक साथ करने मे रुकावट कहाँ आती है। स्पष्ट बात यह है कि अगर भाजपा के साथ एकता हो सकती थी तो 80 के चुनाव के समय जनता पार्टी क्यो टूटी? जनता पार्टी को यह स्पष्ट करना होगा, जो उसने अभी तक जनता को नही बताया है कि भाजपा उससे अलग क्यों हुई और सभी लोग उससे अलग क्यों हुए? ये जो लोग अलग हुए उनको भी बताना होगा कि 1980 से पहले चुनाव लड़ते समय उनको भाजपा में दोष नहीं दीखता था तो चुनाव हारने के बाद दोष क्यो दीखने लगा? हमें तो दोष दीखता था, दीखता है। खासकर बालासाहब देवरस के इस भाषण के बाद कि देश के मुसलमानों पर कड़ी नजर रखनी होगी। समूचे राष्ट्र को बचाने के बजाय हिन्दू समाज को बचाने का जो उनका इरादा है और जिस तरह से कार्यवाही दशहरे के बाद भाजपा सांसदों का नागपुर शिविर में हुई उससे राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ और भाजपा का अटूट सम्बन्ध दिखाई देता है[127]।.... आज जनता पार्टी को यह जवाब देना है कि 1980 की टूट के बाद वह आंध्र में भाजपा के साथ मिलकर क्यों चुनाव लड़ी? उनको जवाब देना है कि जब वे केरल में वामपंथियो के साथ चल रहे हैं तो बंगाल में वे उसके घोर विरोधी क्यों हैं? करीब हम सभी में दोष है, जब तक हम अपने इन दोषों को देखते नहीं और जब तक राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और विदेश नीति पर स्पष्ट नजरिया नहीं बनाते हैं, तब तक इस प्रतिपक्ष की एकता की मुकम्मिल तस्वीर नहीं उभर सकती [128]।"

इसी प्रकार बहुगुणा का यह भी कहना था कि 'कद हम सबके बराबर हैं। समय सबके लिए टेढ़ा है। इसलिए अगर कुछ करना है तो किसी एक आदमी को आगे रखकर सभी को इमानदारी से उनका साथ देना होगा। कोई दूसरा रास्ता नही है[129]।... पर इन लोगों की बहस का कोई आधार मैं समझा नहीं, सिर्फ स्थान बॉटने के अलावा। लोकदल (क) की कठिनाई यह है कि वह एक साथ दो फ्रंट पर वार्तालाप कर रहा था। एक पर उनको स्पष्ट उत्तर मिल गया। हमारे फ्रंट से उनको यह उत्तर मिला है कि रीति-नीति पर एक-एक करके चर्चा कर लें। लेकिन जब लोकदल (क) आंध्र में भाजपा के साथ फ्रंट बनाया और उसके महामंत्री जार्ज फर्नाडीज बम्बई में शिवसेना के साथ एक मंच पर बैठे रहे, तो फिर एकता के नाम पर कितनी बार नाम बदले

---

126 हेमवती नन्दन बहुगुणा का रविवार (साप्ताहिक पत्रिका) में प्रकाशित साक्षात्कार, 21-27 नवम्बर, 1982 पृष्ठ संख्या- 31।

127 हेमवती नन्दन बहुगुणा का रविवार (साप्ताहिक पत्रिका) मे प्रकाशित साक्षात्कार, वही।

128 हेमवती नन्दन बहुगुणा का साक्षात्कार, वही।

129 हेमवती नन्दन बहुगुणा का साक्षात्कार, वही।

जाएं, तो मै स्पष्ट कर दूँ कि हर छः महीने में झण्डा और नाम बदलने की शक्ति मुझमें नहीं है[130]।... सैद्धान्तिक रूप से हमारी पार्टी का कहना है कि राज अगर आये भी, तो हम जानना चाहेगे कि बिहार में इतनी बार प्रतिपक्ष का राज आया, पर एक पैसा भी भूमि सुधार पर क्यों नहीं लगा? अगर नीति पर साफ दिमाग न हो, चाहे वे आर्थिक सवाल हो, क्षेत्रीय दलो के प्रतिनिधित्व का सवाल हो, क्षेत्रीय असन्तुलन को मिटाने का सवाल हो, यदि हमारी दृष्टि साफ नहीं है तो एकता कही नहीं ले जाएगी। जब तक मौलिक बातों पर एकता न बने तो एकता नकारात्मक दिखेगी और नकारात्मक एकता अब सफल नहीं होगी[131]।'

कांग्रेस की गिरती हुई साख से उत्साहित प्रतिपक्ष के अधिकांश नेता और बहुगुणा जहाँ एक ओर राष्ट्रीय मुद्दों पर आम सहमति के आधार पर कांग्रेस के विकल्प की तैयारी में जुटे थे वहीं दूसरी ओर राजनारायण (नेता लोकतांत्रिक समाजवादी पार्टी) की गतिविधियाँ स्वयं अपने दुर्ग में दरार बढ़ा रही थी। राजनारायण अपने समर्थकों के साथ लोकतांत्रिक समाजवादी पार्टी से विदा लेकर लोकदल (क) में विलय हेतु षड्यंत्र शुरू कर दिये थे।[132] राज नारायण तथा उनके समर्थकों का यह आरोप था कि दल के राष्ट्रीय अध्यक्ष हेमवती नन्दन बहुगुणा का रूस समर्थक दलों से सम्बन्ध, दल में बढ़ते व्यक्तिवाद का प्रश्न[133] तथा बहुगुणा की तानाशाही पूर्ण रवैये[134] के कारण ऐसा निर्णय लिया गया है। पता चलता है कि लोसपा का समाजवादी घटक यह नहीं पसन्द करता था कि उनका दल 4 अक्टूबर, 82 को होने वाले वामपन्थी दलों के प्रदर्शन में भागीदार हो। किन्तु बहुगुणा इस घटक की परवाह किये बना उस प्रदर्शन में गये जहाँ रूस को शांतिदूत बताते हुए नारे लगाये गये थे। बहुगुणा के इस प्रदर्शन में भाग लेने पर इस घटक के लोगों में जबरदस्त एतराज था[135]। व्यक्तिवाद और तानशाही के सन्दर्भ में राजनारायण और उनके समर्थकों का आरोप था कि उनके लोगों को संगठन में कोई स्थान नहीं दिया गया है। यद्यपि उत्तर प्रदेश में जनेश्वर मिश्र को उपाध्यक्ष बनाया गया था किन्तु प्रदेश शाखा की वास्तविक संचालक कमला बहुगुणा (हेमवती नन्दन बहुगुणा की पत्नी) थी। परिणामस्वरूप उनके साथ पटरी न बैठने के कारण जनेश्वर मिश्र ने त्यागपत्र दे दिया[136]।

किन्तु, लोसपा के विघटन का कारण कुछ और प्रतीत होता है। स्रोतों से पता चलता है कि राजनारायण

---

130. हेमवती नन्दन बहुगुणा का साक्षात्कार, वही।
131 हेमवती नन्दन बहुगुणा का साक्षात्कार, वही।
132. आज, हिन्दी दैनिक समाचार पत्र, 26 फरवरी, 1982, पृष्ठ संख्या- 1।
133. आज, वही, 29 सितम्बर, 1982, पृष्ठ संख्या- 1।
134 नवभारत टाइम्स, हिन्दी दैनिक समाचार पत्र, 26 दिसम्बर, 1982, पृष्ठ संख्या- 1।
135. आज, हिन्दी दैनिक समाचार पत्र, 29 अक्टूबर, 1982 पृष्ठ संख्या- 1।
136 पाञ्चजन्य, हिन्दी समाचार पत्र, 29 अगस्त, 1982, पृष्ठ संख्या- 5।

किसी भी प्रकार ससद मे पहुँचने के लिए उत्सुक थे। 1980 के लोकसभा चुनाव में कांग्रेस प्रत्याशी कमला पति त्रिपाठी ने वाराणसी शहर मे उन्हें पराजित कर दिया था। उसके तत्काल बाद लोकदल छोड़ने के लिए उन्हें मजबूर होना पड़ा। उन्हे विश्वास था कि द्विवार्षिक चुनाव म बहुगुणा का मदद से वे राज्यसभा तक पहुँच जाएंगे[137]। लेकिन सत्ता काग्रेस उन्हे पराजित देखने के लिए कृत संकल्प थी। लोकदल के राज्यसभा प्रत्याशी गोयल को औपचारिक रूप से ग्यारहवी वरीयता देकर कांग्रेस ने विजयी बनवा दिया। अतः राजनारायण एक बार फिर ससद मे पहुँचने से वचित हो गये। उनके समर्थकों की धारणा थी कि बहुगुणा ने राजनारायण को जिताने म पूरी मदद नहीं की। अस्तु राज नारायण को अब संसद मे पहुँचने का केवल एक ही रास्ता दिखाई पड़ रहा था कि मान-अपमान भुलाकर वह पुन. चरण सिंह की शरण में पहुँच जाएं। हरियाणा में देवीलाल के इस्तीफे से रिक्त लोकसभा का चुनाव होना था। इसके साथ-साथ आने वाले 1984 के राज्य सभा के चुनाव में उन्हें लोकदल (क) के बैनर तले अपनी जीत का पूरा भरोसा था[138]।

बहरहाल लोकतांत्रिक समाजवादी पार्टी का अन्र्तकलह बढ़ता गया और राजनारायण समर्थको ने एक-एक करके इस्तीफा देना शुरू किया। उत्तर प्रदेश लोसपा शाखा से त्यागपत्र देने वालों में सर्वप्रथम पॉच प्रमुख व्यक्तियो का नाम आया जिनमे चार विधायक और सत्यदेव त्रिपाठी शामिल थे[139]। इसी प्रकार देश-प्रदेश से राजनारायण समर्थकों के इस्तीफे की खबर आने लगी। पंजाब और असम में लोसपा के यूनिट से लगभग सभी लोग इस्तीफा दे दिये। दिल्ली मे भी राजनारायण के कट्टर समर्थक रहे साँवलदास गुप्ता के नेतृत्व में दल के लगभग पाँच सौ कार्यकर्ताओं ने इस्तीफा दे दिया[140]। विघटन की इसी प्रक्रिया में लोकतांत्रिक समाजवादी पार्टी के नेता राजनारायण तथा उत्तर प्रदेश शाखा के अध्यक्ष बनारसी दास ने भी 7 फरवरी, 1983 को अपना इस्तीफा पार्टी के राष्ट्रीय अध्यक्ष बहुगुणा के पास भेज दिया[141]। दोनों नेताओं ने एक पत्रकार वार्ता के दौरान कहा कि अब वे अविभाजित जनता पार्टी को पुर्नजीवित करने का प्रयास करेंगे और चन्द्रशेखर, अटल बिहारी बाजपेयी, चरण सिंह और जगजीवन राम से मिलकर कांग्रेस (आई) का राष्ट्रीय विकल्प खड़ा करने का प्रयास करेंगे[142]। इस सन्दर्भ मे बहुगुणा का कहना था कि 'उनके दो मित्र पार्टी से चले गये हैं लेकिन लोसपा का अस्तित्व अब भी कायम है, क्योंकि वह जनता द्वारा स्थापित की हुई थी। पार्टी की स्थापना केवल तीन नेताओं द्वारा नहीं हुई थी। किसी

---

137 पाञ्चजन्य, वही।

138 पाञ्चजन्य, वही।

139 नवभारत टाइम्स, वही, 6 फरवरी, 1983, पृष्ठ संख्या- 1।

140 ट्रिब्यून, अंग्रेजी समाचार पत्र, 26 फरवरी, 1982, पृष्ठ संख्या- 1।

141 अमर उजाला, हिन्दी दैनिक समाचार पत्र, बरेली, 8 फरवरी, 1983, पृष्ठ संख्या- 1।

142 अमर उजाला, वही।

को लोसपा भग करने का अधिकार नही है। काग्रेस का राष्ट्रीय विकल्प खड़ा करने का प्रयास उनकी पार्टी का संकल्प है, जिसे वह जारी रखेगी'[143]। एक स्थान पर बहुगुणा ने यह भी कहा कि 'लोसपा में शामिल होने के लिए किसी को निमत्रित नही किया गया था इसलिए जो पार्टी छोड़ना चाहे, वे स्वेच्छा से जा सकते है, उन्हे रोका भी नही जाएगा[144]'।

वास्तविकता यह थी कि बहुगुणा काग्रेस के राष्ट्रीय विकल्प के लिए एक समन्वय समिति के गठन हेतु प्रयासरत थे। जिसके तहत राष्ट्रीय मुद्दो को मद्दे नजर रखते हुए आपसी सहमति के आधार पर एकता सम्भव थी। किन्तु विभिन्न संगठनों, जिनका उदय ऐतिहासिक कारणों से हुआ था, का पृथक अस्तित्व बरकरार रखना था[145]। बहुगुणा के इसी प्रयास के चलते 25 मार्च, 1983 को एक समन्वय समिति का गठन हो गया, जिसमे तीन पार्टियॉ—बहुगुणा की लोकतात्रिक समाजवादी पार्टी, रतुभाई अदानी की सोशलिस्ट पार्टी तथा शरद पवार की राष्ट्रीय कांग्रेस शामिल हुई और बहुगुणा को इसका संयोजक चुना गया[146]। समन्वय समिति के माध्यम से बहुगुणा और अन्य नेताओं ने एक संयुक्त वक्तव्य में कहा कि 'स्वतंत्रता के पैतीस सालों में हमारे देश की एकता और अखण्डता पर इतना बड़ा खतरा पहले कभी नही आया। असम हो या पजाब, शासक दल की नीतियाँ केवल अपने संकीर्ण स्वार्थों से प्रेरित हैं। केन्द्र और राज्यों की सरकारें जिस प्रकार अल्पसख्यकों और उनके अधिकारो तथा भावनाओं के प्रति उपेक्षापूर्ण अवहेलना का रुख अपनाए हुए हैं, उससे हमारे राष्ट्र का धर्म निरपेक्ष स्वरूप बिगड़ रहा है। अनुसूचित जातियाँ और जनजातियाँ तथा समाज के अन्य निर्बल वर्ग बढ़ते हुए उत्पीड़न और अत्याचार के शिकार हो रहे हैं और फलतः देश में सामाजिक दरारें और भी गहरी होती जा रही हैं[147]।.... महात्मा गांधी तथा दूसरे अग्रणी नेताओं के नेतृत्व में लड़े गये स्वतंत्रता आन्दोलन की थाती के रूप में हमे जनतंत्र, धर्मनिरपेक्षता और समाजवाद पर आधारित दर्शन मिला। इस दर्शन और विचारधारा के प्रति समर्पित सभी लोगों का अब यह कर्तव्य हो जाता है कि इन भयावह और कठिन चुनौतियो का सामना करने के लिए एक झण्डे के नीचे एक जुट हो[148]।

परिणामस्वरूप अक्टूबर 1983 मे छः विपक्षी दलों ने एक संयुक्त मोर्चे का गठन कर लिया। इस बार चन्द्रशेखर को मोर्चे का अध्यक्ष बनाया गया और समन्वय समिति में बहुगुणा, शरद पवार, रतुभाई अदानी एवं

---

143 अमर उजाला, वही।

144 हिन्दुस्तान, हिन्दी दैनिक समाचार पत्र, 8 फरवरी, 1983, पृष्ठ संख्या- 1।

145 हिन्दुस्तान, हिन्दी दैनिक समाचार पत्र, 20 सितम्बर, 1984, पृष्ठ संख्या 3।

146 डा० रीता बहुगुणा जोशी एवं डा० राम नरेश त्रिपाठी : हेमवती नन्दन बहुगुणा, वही, पृष्ठ संख्या - 190 ।

147 डमोक्रेटिक सोसलिस्ट पार्टी समाचार बुलेटिन नं० 2 डी० एस० पी० कार्यालय, नई दिल्ली, 10 मई, 1983, पृष्ठ संख्या- 8।

148 डेमोक्रेटिक सोसलिस्ट पार्टी समाचार बुलेटिन नं० 2, वही।

इन्द्र कुमार गुजराल सदस्य बने। इस गठबन्धन मे लोकतान्त्रिक समाजवादी पार्टी, कांग्रेस (एस) राष्ट्रीय कांग्रेस, जनता पार्टी, जनवादी पार्टी तथा रिपब्लिकन पार्टी शामिल थी[149]। समन्वय समिति राजनीतिक दिशा मे कुछ सफल प्रयोग करती कि इससे पूर्व ही बहुगुणा के स्वास्थ्य मे गिरावट आनी शुरू हो गयी। अन्तत दिसम्बर 83 मे चिकित्सकों की सलाह पर अपने हृदय का आपरेशन कराने के लिए व अमेरिका के 'ह्यूस्टन' नगर के लिए रवाना हुए[150]। अचानक उनके विदेश जाने मे उनके अनुयायी तथा विरोध पक्ष के नेताओं में एक असमजमता की भावना छा गई थी। नेताओं का ऐसा मानना था कि 'भारत मे उनके अनुपस्थित रहने का यह बडा गलत समय है[151] क्योंकि सम्भवत विपक्ष की राजनीति मे अगले कुछ सप्ताह के अन्दर ही कुछ महत्वपूर्णपरिवर्तन अवश्यम्भावी थे। जोड-तोड चल रही थी, विपक्षी एकता का प्रयास जारी था। सयुक्त मोर्चे के नेता के रूप मे विरोध पक्ष की गतिविधियो मे बढ़-चढ़ कर हिस्सा लेने के कारण बहुगुणा का अनभव बेमिशाल था। ऐसा माना जा रहा था कि इस समय विरोध पक्ष जो कुछ भी करेगा उसमे बहुगुणा का सबसे अधिक हाथ होगा[152]।

फरवरी 1984 में अमेरिका मे स्वास्थ्य लाभ लेकर भारत वापस लौटने के बाद बहुगुणा पुनः आगामी आम चुनाव की सामरिकी सुनिश्चित करने में लग गये। इसके लिए चूँकि सबसे पहली और अपरिहार्य आवश्यकता विपक्षी एकता को लेकर थी, अतः 21 फरवरी 84 को लोकतांत्रिक समाजवादी पार्टी की कार्यकारिणी की बैठक में सर्वप्रथम विपक्षी एकता पर ही प्रस्ताव पारित हुआ[153]। प्रस्ताव में कहा गया कि लोसपा की राष्ट्रीय समिति इसको चिन्ता का विषय मानती है कि राष्ट्रीय विरोध को एकजुट करने की प्रक्रिया की गति बहुत धीमी है।... ऐसा संगठन जो एक विश्वसनीय राष्ट्रीय विकल्प का केन्द्र बिन्दु हो सके, बनाने में विरोधी दलों की अक्षमता के कारण जन मानस क्षुब्ध है और अपना धीरज खो रहा है। .. विपक्षी एकता का स्वरूप 1971 वाला नही बल्कि 1977 वाला होना चाहिए और केवल वही आजकल की स्थिति पर काबू पा सकता है और देश को वशानुगत अधिनायकवाद से मुक्ति दिला सकता है[154]।

स्वदेश वापसी के बाद बहुगुणा अक्टूबर 83 मे गठित छः विपक्षी दलों के संयुक्त मोर्चे की कार्यवाही से भी सन्तुष्ट नही थे। उनका कहना था कि 'अभी तक संयुक्त मोर्चा अपने उद्देश्य में बुरी तरह असफल रहा है और इसका आगे कोई भविष्य नही दिख रहा है। मोर्चे के अध्यक्ष चन्द्रशेखर ने कहा था कि जनता पार्टी के

---

149 डा० रीता बहुगुणा जोशी एव डा० राम नरेश त्रिपाठी : हेमवती नन्दन बहुगुणा, वही पृष्ठ सख्या- 190

150 नई दुनिया, मध्य साप्ताहिक सामाचार पत्र, जबलपुर, 25 जनवरी, 1984, पृष्ठ संख्या- 5।

151 नई दुनिया, वही।

152 नई दुनिया, वही।

153 'विपक्षी एकता पर प्रस्ताव' डी० एस० पी० कार्यकारिणी की बैठक की कार्यवाही, केन्द्रीय कार्यालय, नई दिल्ली, 21 फरवरी, 1984। (बहुगुणा के आवासीय दस्तावेजो से प्राप्त)।

154 'विपक्षी एकता पर प्रस्ताव' डी० एस० पी० कार्यकारिणी की बैठक की कार्यवाही, वही।

संगठन के चुनाव के बाद एक पार्टी बनाने की बात की जाएगी किन्तु चुनाव के बाद भी इसकी कोई चर्चा नही हो सकी है। कश्मीर और कलकत्ता सम्मेलनों में एक पार्टी के गठन का निर्णय हो चुका था। यह भी तय हो गया था कि 15 फरवरी को मेरे (बहुगुणा) आवास पर बैठक होगी और उसके बाद नई पार्टी का नाम, नीति और झण्डा घोषित किया जाएगा। लेकिन 14 फरवरी को मोर्चे के महामंत्री इन्द्रकुमार गुजराल का फोन आया कि बैठक नही होगी। बैठक नही होने का कोई कारण नही बताया गया। इस प्रकार मोर्चे के कर्णधार अविश्वास में जी रहे है। इनमें आत्म विश्वास कैसे पैदा किया जाय'[155]। दैनिक भास्कर, समाचार पत्र की एक भेंट के दौरान बहुगुणा ने स्पष्ट शब्दो मे कहा कि—'हमे अपनी पार्टी के नाम, पद या झण्डे के प्रति कोई मोह नही है, केवल नीतियॉ ही सर्वोपरि है[156]'।

अन्ततः आगामी आम चुनावों की निकट आशंका को मद्देनजर रखते हुए कांग्रेस के मुकाबले में चरण सिह तथा बहुगुणा अक्टूबर 84 में पुनः निकट आ गये और 21 अक्टूबर को दलित मजदूर किसान पार्टी नामक नये दल का गठन किया। ज्ञातव्य है कि इस नव निर्मित दल में लोकतांत्रिक समाजवादी पार्टी, लोकदल, राष्ट्रीय कांग्रेस (गुजरात) और देवीलाल के नेतृत्व वाली जनता पार्टी शामिल हुई[157]। दमकिपा के गठन के समय जारी एक संयुक्त वक्तव्य में नेताओं ने कहा कि 'वर्तमान कुशासन, निराशा एवं भयानक चारित्रिक पतन के कारण पूरे देश में फैली निराशा की स्थिति को बदलने, लोगों की प्रबल आकांक्षाओं के अनुरूप सत्तारूढ़ दल के विरुद्ध एक सशक्त राष्ट्रीय विकल्प बनाने के लिए आज नई पार्टी का गठन किया गया है। ... हम लोग ज्यादा से ज्यादा तथा विस्तृत एकता के लिए अथक प्रयास करते रहे लेकिन दुर्भाग्य से एकता वार्ता में एकता के आधार को ही गौड़ कर दिया गया, जैसे—बिना वृक्षों के मधुबन की कल्पना है'[158]। नेताओं ने आगे कहा कि 'हमें खेद है कि हम आज के दिन अपने अन्य अनेक मित्रों को इस दल में शामिल होने के लिए नहीं समझा पाये, लेकिन राष्ट्र की दिन प्रतिदिन बदतर हो रही स्थिति तथा चुनावों की निकटता ने हमें अब बिना समय खोये इस प्रयास को करने के लिए मजबूर कर दिया। हम यहॉ पुनः स्पष्ट करना चाहेगे कि किसी को भी पृथक रखने की हमारी कदापि इच्छा नहीं है। इसके विपरीत हमारी सद्भावना है कि राष्ट्र की एकता तथा पुर्नविकास की इच्छुक सभी शक्तियों को भविष्य मे धीरे-धीरे बल मिलेगा और वह मजबूत होंगी'[159]।

---

155. दैनिक भास्कर, हिन्दी दैनिक समाचार पत्र, भोपाल, 19 जून, 1984, पृष्ठ संख्या- 1।
156 दैनिक भास्कर, वही।
157 हिन्दुस्तान, हिन्दी दैनिक समाचार पत्र, 22 अक्टूबर, 1984, पृष्ठ संख्या- 1।
158 दलित मजदूर किसान पार्टी के गठन के समय 21 अक्टूबर, 1984 को जारी किये गये वक्तव्य की अनुवादित प्रति, दमकिपा केन्द्रीय कार्यालय, नई दिल्ली, 25 अक्टूबर, 1984 (बहुगुणा के आवासीय दस्तावेजों से प्राप्त)।
159. दमकिपा के गठन के समय जारी वक्तव्य, वही।

इंदिरागांधी की हत्या और चुनावों में उपजी सहानुभूतिक लहर

विपक्षी एकता की असमजसता का दौर एक ओर चल ही रहा था कि अचानक भारतीय राजनीति ने स्तब्धता का रूख अपना लिया। पगलाई हुई हिसा ने देश का दीपक बुझा दिया यानि प्रधानमंत्री इंदिरागांधी की नृशस हत्या। इस अमानुसिक हत्या से एकाएक देश नेतृत्वविहीन होकर एक बड़े सकट से घिर गया। भारत के राजनैतिक भविष्य पर एक बडा प्रश्न चिन्ह लग गया और सवाल उठने लगा कि विश्व का सबस बड़ा यह लोकतंत्र इस अधेरे से कैसे उबर सकेगा[1]? सूचना मिलते ही सरकारी भवनो पर राष्ट्रीय ध्वज झुका दिये गये तथा दफ्तरो मे समय से पहले ही काम-काज ठप्प हो गये। ज्ञातव्य है कि अपने 69वे जन्मदिन के ठीक 19 दिन पहले 31 अक्टूवर, 1984 को सुबह जैसे ही इदिरागांधी घर से बाहर निकली तो उनके दो पहरेदारो (सतवत सिह और बेयत सिह) ने ही उन्हे गोलियो से छलनी कर दिया[2]। देश के शीर्पस्थ चिकित्सको की जीतोड़ प्रयास के बावजूद भी उनकी सांस न लौट सकी।

प्रधानमत्री इंदिरागाधी की हत्या क्यों हुई, इस सम्वन्ध मे देश के विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से बुद्धिजीवियों की टिप्पणियॉ प्रकाशित हुई। वरिष्ठ पत्रकार राजेन्द्र माथुर लिखते हैं कि '30 जनवरी,1948 को महात्मागांधी भारत के बॅटवारे के बाद एक विकृत मानसिकता वाले व्यक्ति के हाथों मारे गये थे। इस बार इदिरागांधी भारत का एक और बॅटवारा रोकने की कोशिश मे मारी गयी[3]। पंजाव का जो जहर भारत के शरीर को पिछले दिनों नीला बना रहा था, उसने आखिर इंदिरागांधी की जान ले ली। महात्मागांधी यदि जीवन भर हिन्दू-मुस्लिम एकता की तलाश के बाद मारे गये थे तो इंदिरागांधी ने भारतीय राष्ट्र-राज्य की इमारत को पुख्ता बनाये रखने के लिए अपनी जान दे दी[4]। कमलापति त्रिपाठी भी लिखते है कि 'दुर्भाग्य की बात है कि इंदिरागाधीजी के शासनकाल में आसाम और पजाब में ऐसे हिसात्मक और उपद्रवकारी आन्दोलन आरम्भ किये गये जिनका मुकावला करना कोई भी सरकार जो होती, उसे आवश्यक हो गया होता। इंदिराजी के नेतृत्व मे कांग्रेस की सरकार राष्ट्रीय एकता को छिन्न-भिन्न करने की इच्छा से चलाए गये किसी आन्दोलन को वर्दाश्त नही कर सकती थी। जिस कांग्रेस ने देश की एकता और अखण्डता के लिए अपने सारे जीवन पर्यन्त प्रयत्न किया था और वाद मे ऐसा समय आया कि गाधी जी के विरोध करते हुए भी देश का बॅटवारा उसे स्वीकार करना पडा।

---

1 मधुलिमये सक्रमण कालीन राजनीति, लखनऊ, 1986, पृष्ठ सख्या- 170।

2 मार्शल एम० वूटन (सम्पादक) इडिया ब्रीफिग, 1987, न्यू देलही, पृष्ठ संख्या- 3।

3 राजेन्द्र माथुर का नवभारत टाइम्स, हिन्दी दैनिक, समाचार पत्र में प्रकाशित लेख, लखनऊ, 1 नवम्बर, 1984, पृ० संख्या 4।

4 राजेन्द्र माथुर का नवभारत टाइम्स मे प्रकाशित लेख, वही।

अब तक वह सत्ता में थी उसके लिए यह सम्भव नहीं था कि वह किसी ऐसे आन्दोलन को बर्दाश्त करें जो पुनः राष्ट्र की एकता और अखण्डता को खत्म करने की चेष्टा करता हो। ऐसे आन्दोलन का कड़ा मुकाबला इन्दिरागांधी को करना पड़ा[5]। पंडित त्रिपाठी आगे लिखते है कि 'एक दिन बातचीत मे इंदिरागांधी ने मुझसे कहा था कि कांग्रेस की एक सेविका होने के नाते जब मै प्रधानमंत्री हूँ तो देश की एकता को नष्ट करने वाले किसी भी आन्दोलन का कड़ाई के साथ सामना करूँगी। उन्होंने यहाँ तक कहा कि मै जानती हूँ कि मेरी जान पर खतरा आयेगा पर मैं मर जाना पसंद करूँगी परन्तु देश का बँटवारा पुनः बर्दाश्त नहीं कर सकती[6]। मन्मथ नाथ गुप्त का मानना है कि इंदिरागांधी को पंजाब मे अकालियो के षड्यंत्र के प्रस्फुटन का आभास हो चुका था। जिसके कारण उनकी सुरक्षा के लिए जिम्मेदार अधिकारियो ने उनके अंगरक्षकों में सिक्खों को हटा दिया। परन्तु उन्हें जब मालुम हुआ तो वह बोली—'फिर हमारी धर्मनिरपेक्षता कहाँ जाएगी?' नतीजतन सिक्ख अगरक्षक फिर बहाल कर दिये गये। इस प्रकार इदिरागांधी ने सेकुलरवाद के सिद्धान्त के लिए जानबूझकर जान दे दी[7]।

इसमे कोई शक नही कि पंजाब में हिंसा और द्वेष भारत की एकता के विरुद्ध गम्भीर साजिश का परिणाम था, जिसे देश के बाहर से भी बढ़ावा दिया जा रहा था। ज्ञातव्य है कि पंजाब के क्षेत्र में"स्वाधीन राज्य" खालिस्तान कायम करने की भारत विरोधी योजना भारत के बाहर विदेशों में ही बनायी गयी थी[8]। जिसके परिणामस्वरूप सिक्खो का धर्म स्थल अमृतसर का स्वर्णमन्दिर आधुनिक हथियारों का अस्त्रागार बन गया था तथा उग्रवादियों का सदरमुकाम और किला। जिस स्वर्ण मन्दिर के फाटक पर कभी पट्टी लगी थी और जिस पर लिखा होता था कि 'छड़ी व छाता जैसी नुकीली वस्तुओं सहित मंदिर में प्रवेश करना मना है'। अब वही मन्दिर शस्त्रागार और उग्रवादी शिविर के रूप में तब्दील हो गया था[9]। ऐसे में स्वाभाविक तौरपर इंदिरागांधी ही नहीं बल्कि किसी भी धर्म निरपेक्ष राजनयिक के लिए यह एक बड़ी चुनौती थी।2 जून, 1984 की शाम को इंदिरागांधी ने राष्ट्र के नाम अपना एक संदेश जारी किया जिसमें उन्होंने स्पष्ट कहा कि—'आज पंजाब में पृथकतावादी आन्दोलन की बागडोर धर्मान्ध नेताओं तथा आतंकवादियों ने अपने हाथ में ले ली है'[10]। ऐसी हालत मे केन्द्र सरकार की अनुमति से पंजाब के राज्यपाल ने भारतीय सेना के दस्तों को स्वर्ण मंदिर घेरने का आदेश दिया। 'ब्लू स्टार' कार्रवाई शुरू हुई। सशस्त्र मुठभेड़ हुई, गोलियाँ चली, खून बहा और अन्ततः ब्लू स्टार

---

5 प० कमलापति त्रिपाठी : स्वतत्रता आन्दोलन और उसके बाद, 1988, नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या- 278।

6 पं० कमलापति त्रिपाठी : वही।

7 मन्मथ नाथ गुप्त : कांग्रेस के सौ वर्ष-संघर्ष और सफलता का इतिहास, दिल्ली, 1985, पृष्ठ संख्या- 209-210।

8 सुरेन्द्र मोहन (सम्पादक) . इंदिरा गाधी : कल्पनाएँ और उपलब्धियॉ, प्रगति प्रकाशन, मास्को, 1990, पृष्ठ संख्या- 359-61।

9 सुरेन्द्र मोहन : वही, पृष्ठ संख्या- 361-62।

10 नवभारत टाइम्स, हिन्दी दैनिक समाचार पत्र, लखनऊ, 3 जून, 1984, पृष्ठ संख्या- 1।

कार्रवाई सफल रही[11]। इस हिंसा और रक्तपात के चलते सिक्ख समुदाय मे इंदिरागांधी के प्रति बेहद नाराजगी थी। ऐसा प्रतीत होता है कि यही नाराजगी की परिणति उनकी नृशंस हत्या मे परिवर्तित हो गई।

फिलहाल, इस अमानुषिक हत्या से विरोध पक्ष भी स्तब्ध रह गया था, क्योंकि जिस पर वाण वर्षा करते हुए वह अपनी राजनीति का मायामृग मारने का व्यायाम कर रहा था, वह लक्ष्य ही उसके तीर से ओझल हो गया। प्रतिपक्ष के नेता स्वयं राजनारायण ने एक स्थान पर कहा कि "इंदिरा जी के चले जाने के बाद विरोध का मजा नही रह गया है"[12]। वास्तव में इंदिरागांधी देश-विदेश की राजनीति के ऐसे परीक्षा विन्दु पर पहुँच गई थी, जहाँ इतिहास के महान् राजनेताओं की श्रेणी उनकी प्रतीक्षा कर रही थी। स्पष्ट है कि गुर्टनिरपेक्ष राष्ट्र समूह की अध्यक्षा होने के वाद वह अपनी राजनीतिक कौशल से दोनों महाशक्तियों के समक्ष तीसरी महाशक्ति के रूप मे काफी हद तक उभर आयी थी और तीसरे महायुद्ध को और दूर ठेलने मे असमर्थ होते जा रहे शेष जगत के लिए परित्राण की नई किरण बन गयी थी[13]। अन्तर्राष्ट्रीय पंचायत में सरपंच के रूप में मान्य होने की उनके पिता की सदाकांक्षा को उनके मित्रो की प्रतिद्वन्दिता के कारण जहाँ यश नही मिल पाया था, वहाँ उनकी पुत्री इस सोपान के काफी निकट पहुँच गयी थी[14]।

इंदिरागांधी की मृत्यु के कुछ ही घण्टों बाद कांग्रेस के केन्द्रीय नेतृत्व ने राजीव गांधी को उनका उत्तराधिकारी चुन लिया। अतः राजीवगांधी 40 वर्ष की आयु में ही विश्व के इस सबसे बड़े लोकतांत्रिक गणराज्य के प्रधानमंत्री बने। तदुपरान्त, 12 नवम्बर, 84 को वह निर्विरोध कांग्रेस के अध्यक्ष चुन लिए गये[15]। वस्तुतः राजनीति में राजीव गांधी का अवतरण केवल चार बरस ही पुराना था। इसके पूर्व उनके मनोविज्ञान एवं रूचियों में राजनीति के प्रति अनुकूलता नहीं के बराबर थी। राजनीति के प्रति उनकी यह तटस्थता कैसी अद्भुत थी कि माँ और छोटे भाई सहित सारा घर राजनीति के सागर-मंथन में रात-दिन निमग्न रहता था और उसी घर की ममता के एक अभिन्न अंग होकर भी वे उसके सम्मोहन मे दूर रहे। लेकिन इसका अभिप्राय यह नही लगाया जा सकता है कि वह राजनीति को हेय दृष्टि से देखते रहे। राजनेताओं के बेटे-बहुओं द्वारा पिता की राजनीति मे शिरकत के जो रोचक कारनामे आये दिन प्रकाश में आते रहे और उनके संगदोष से राजनीति की व्यापक भ्रष्टता के साथ लोक जीवन के मूल्य जिस कदर दूषित होते रहे हैं, राजीव गांधी की दूर दृष्टि से 'रावण की

---

11. सुरेन्द्र मोहन (सम्पादक) : इन्दिरागाधी : कल्पनाएँ और उपलब्धियां, वही, पृष्ठ संख्या- 362।
12 प्रेक्षा, हिन्दी साप्ताहिक समाचारपत्र (प्रत्येक रविवार) नई दिल्ली, 25 नवम्बर, 1984, पृष्ठ संख्या- 16।
13 प्रेक्षा, वही, 11 नवम्बर , 1984, पृष्ठ सख्या- 8।
14 सुरेन्द्र मोहन इंदिरागाधी : कल्पनाएँ और उपलब्धियाँ, वही, पृष्ठ संख्या- 356-57।
15 मार्शल एम० बूटन (सम्पादक) इंडिया ब्रीफिंग 1987, न्यू देलही, पृष्ठ संख्या- 4।

यह लका' ओझल नही थी[16]। वस्तुत यह उनके सयम की खूवी थी कि एक ही छत और एक ही मॉ की स्नेह छाया मे निवास करते हुए भी अपने छोटे भाई की नियति की छूत से वे मुक्त रहे[17]। प्रत्यक्ष और परोक्ष दोनो ही रूपो मे उन्होने अपनी सत्ता मामग्री मे मॉ के चतुर्दिक प्रभुत्व से कोई लाभ नही उठाया, वे अपने स्वधर्म मे विचलित नही हुए और न ही अपने चरित्र तथा कथनी-करनी द्वारा अपनी मॉ के राजनीतिक पारिवारिक व्यक्तित्व पर कोई ऑच आने दी थी[18]। अतः यह आरोप कि उत्तराधिकारी के रूप मे राजीव गांधी राजनीति से अनभिज्ञ थे, लोकजीवन के मुद्दो से अछूते थे, निराधार लगता है।

आठवी लोकसभा के चुनावो की घोषणा के साथ ही कांग्रेस को लेकर सात राष्ट्रीय स्तर के राजनैतिक दल और अनेक क्षेत्रीय पार्टिया भी पुन· सक्रिय हो गयीं। गत एक-डेढ़ वर्ष से विपक्ष द्वारा किये जाने वाले एकता प्रयासो में एकबार फिर उत्साह आ गया। अनेक विपक्षी नेता जोड़-तोड़, तालमेल एवं विलय की चर्चायें करने लगे ताकि कांग्रेस का विकल्प प्रस्तुत किया जा सके[19]। साधारणतया चुनाव परिणामों के बारे में भविष्यवाणी करना जोखिम भरा काम था लेकिन इंदिरागांधी के भारतीय राजनीतिक क्षितिज से एकाएक ओझल हो जाने के बाद जिस सहज, सुलभ और तीव्र गति से घटना चक्र घूमा उसके परिप्रेक्ष्य में यह कहना कि हत्या से उत्पन्न 'रिक्ति' को भरने के लिए कांग्रेस ही सहानुभूतिक लाभ की प्रमुख दावेदार थी[20], समीचीन लगता है। सत्तारूढ़ कांग्रेस का जो नुकसान विगत दिनों केन्द्रीय सरकार के कुछ कदमों की वजह से मतदाता पर होने वाला था, वह इंदिरागांधी के दुःखद निधन से पूरा हो गया तथा स्थिति यह बनी की कांग्रेस दल के प्रति मतदाता के मन में दया और प्रेम का भाव उमड़ पड़ा। लोग दल की कमजोरियों तथा गलत कामों को जैसे भूल से गये।

सयुक्त विपक्ष के सामने जहॉ आज एकता का प्रश्न था वहीं यह समस्या भी उनके सामने मुँह बाये खड़ी थी कि उनकी चुनावी रणनीति क्या हो। व्यक्तित्वों के टकराव मे नीतियों और सिद्धान्त गौण हो गये थे, सिर्फ निजी महत्वाकांक्षाएं उभर कर सामने आ रही थीं[21]। चुनावों की घोषणा के बाद यद्यपि विपक्षी एकता की बातें पुनः तेज हो गयीं थी लेकिन उसमें कोई सफलता न मिल सकी। 14 नवम्बर 84 को आन्ध्र के मुख्यमंत्री एन० टी० रामाराव ने इसी सिलसिले में प्रतिपक्ष के नेताओं की एक विशेष बैठक आहूत की थी। जिसमें दलित मजदूर

16 प्रेक्षा, हिन्दी साप्ताहिक समाचार पत्र, वही, पृष्ठ संख्या- 8।
17. प्रेक्षा, वही।
18 प्रेक्षा, वहीं।
19 प्रेक्षा, वही, 25 नवम्बर, 1984, पृष्ठ संख्या- 1।
20 चन्द्रकान्ता शर्मा का प्रकाशित लेख, प्रेक्षा, वहीं, पृष्ठ संख्या- 5।
21 प्रेक्षा, वही, पृष्ठ संख्या- 6।

किसान पार्टी, भाजपा, जनता पार्टी, कांग्रेस (स) और कई अन्य विरोधी दलों के नेताओं ने भी उपस्थित होने की सहमति दी थी[22]। पता चलता है कि रामाराव की मध्यस्थता के कारण ही चरण सिह और चन्द्रशेखर कांग्रेस के विरुद्ध विपक्ष का एक उम्मीदवार खड़ा करने और सीटों के बँटवारे पर विचार हेतु तैयार हो गये थे। इतना ही नही बल्कि अब तक जगजीवन राम से परहेज रखने वाले चरण सिह ने कांग्रेस (जे) के साथ भी तालमेल करने की सहमति दे दी थी[23]। किन्तु यह प्रयास भी दोनों कम्युनिस्ट पार्टियो द्वारा बैठक के बहिष्कार के निर्णय के कारण असफल हो गया। कम्युनिस्ट पार्टियों का कहना था कि 'साम्प्रदायिक दलों के साथ गठबन्धन' उन्हे स्वीकार नही है[24]।

राजीव गांधी ने इस चुनाव मे अपना प्रमुख मुद्दा 'राष्ट्रीय एकता और अखण्डता' का रखा जिसे अनेक राष्ट्रवादी हिन्दुओं ने 'देश बचाओ'[25] का नारा दिया। राजीव गांधी ने अपने चुनावी घोषणापत्र में यह चेतावनी दी कि आज देश पर चारों ओर से खतरे की साया मडरा रही है। राष्ट्रीय एकता को न केवल सिक्ख उग्रवाद और अकाली दल से खतरा है बल्कि विपक्षी पार्टियों से भी[26]। एक प्रकार से उन्होंने विपक्षी दलों को राष्ट्र विरोधी करार दे दिया। नतीजतन चुनाव में कांग्रेस को अप्रत्याशित सफलता मिली। 515 संसदीय सीटों में कांग्रेस को 401 सीटो पर विजय प्राप्त हुई, जो भारत के संसदीय इतिहास मे महान थी[27]। चुनाव मे इका की अभूतपूर्व विजय और विपक्ष का लगभग सफाया इस बात की ओर संकेत देता है कि देश की एकता व अखण्डता के प्रति मतदाताओं की चिन्ता और युवा नेतृत्व को सत्ता सौपने की इच्छा रही है। दूसरी ओर चन्द्रशेखर के एक साक्षात्कार से पता चलता है कि 'इदिरागांधी को लगी गोलियो से फैली सहानुभूति तथा हिन्दू सिक्ख सवाल को मद्दनेजर रखते हुए साम्प्रदायिकता को आधार लेकर चुनाव लड़ा गया'[28]। भानु प्रताप शुक्ल भी लिखते है कि 'इंदिरागाधी के वारिस राजीव गाधी यह चुनाव देश की समस्याओं के सन्दर्भ मे नहीं सहानुभूति के मोह में लड़े। इस समय सहानुभूति ही उनकी सबसे बड़ी ताकत थी[29]। किन्तु कांग्रेस की अभूतपूर्व विजय के पीछे उपरोक्त

---

22 नवभारत टाइम्स, हिन्दी दैनिक समाचार पत्र, लखनऊ, 11 नवम्बर, 1984।

23 नवभारत टाइम्स, वही।

24 अमर उजाला, हिन्दी दैनिक समाचार पत्र, आगरा, 13 नवम्बर, 1984, पृष्ठ संख्या- 1

25 मार्शल एम० बूटन (सम्पादक) - इंडिया ब्रीफिंग-1987, न्यू देलही, पृष्ठ संख्या- 1।

26. मार्शल एम० बूटन : वही।

27 मार्शल एम० बूटन : वही।

28 चन्द्रशेखर (पूर्व प्रधानमंत्री, भारत सरकार) का प्रकाशित साक्षात्कार, रविवार, हिन्दी साप्ताहिक पत्रिका (संयुक्तांक), 6-13-19 जनवरी, 1985, पृष्ठ संख्या- 39।

29 भानुप्रताप शुक्ल - हर रविवार (भाग-तीन), वही, पृष्ठ संख्या- 113-114।

तर्क के साथ-साथ युवा शक्ति और नारी जागरूकगता का उनके प्रति विशेप झुकाव भी हाशिये पर नही रखा जा सकता। इसमेंकोई शक नही कि युवा मतदाताओं को राजीव गाधी का युवा होना अपने अनुकूल लगा था। यही नही वल्कि स्त्रियो मे भी इका के प्रति सहानुभूति बहुत अधिक थी। एक मोटा अंदाज है कि इंका को वोट देने वाली महिलाओं मे 15% ऐसी थीं जिनके पतियों ने विपक्ष को वोट दिया था[30]।

बहरहाल इस लोकसभा के चुनाव मे इदिरा काग्रेम की आंधी के सामने सभी विपक्षी दलो के पैर उखड गये। दो महीने पहले खड़ी हुई दमकिया पार्टी भी केवल तीन सीटों पर ही जीत हासिल कर सकी। उत्तर प्रदेश, हरियाणा, राजस्थान और बिहार से उसका पूरी तरह सफाया हो गया। यद्यपि बागपत से चौ० चरण सिह जीत गये थे लेकिन 1980 के मुकाबले काफी कम वोटों से[31]। दल के शीर्षस्थ नेता हेमवती नन्दन वहुगुणा भी इस चुनाव मे हार गये। ज्ञातव्य है कि इस चुनाव मे बहुगुणा ने अपना निर्वाचन क्षेत्र इलाहाबाद को बनाया था जहाँ उनका मुकाबला भारतीय सिनेमा जगत के प्रमुख नायक अमिताभ बच्चन से हुआ। स्रोतों से पता चलता है कि गढ़वाल चुनाव मे पराजित होने के बाद कांग्रेसी वहुगुणा को किसी तरह पराजित देखने को व्याकुल थे। चूँकि इलाहाबाद के मतदाताओं में वहुगुणा की ऐसी पकड़ थी जिसे देश का कोई भी कांग्रेसी चुनौती नहीं दे सकता था। फलत. राजनीतिज्ञ के मुकावले मे एक फिल्मी हस्ती का प्रयोग श्रेयस्कर समझा गया[32]।

वस्तुत. अमिताभ वच्चन तत्कालीन समय मे भारतीय फिल्माकाश के ऐसे सशक्त हस्ताक्षर थे जिसकी प्रसिद्धि अपने आप मे बेमिशाल थी। अभिनय की उन ऊँचाइयों को उन्होंने छुआ है जहाँ अन्य का पहुँचना मुश्किल है। अमिताभ का जन्म भी इलाहाबाद मे हुआ था। उनके पिता डा० हरिवंश राय बच्चन यहीं इलाहावाद विश्वविद्यालय के अंग्रेजी विभाग में प्रोफेसर थे[33]। इलाहाबाद जन्म भूमि होने का लाभ अमिताभ को बहुत मिला। अपनी जनसभाओं मे अक्सर वे कहा करते थे—'यद्यपि मैं दिल्ली, कलकत्ता और बम्बई रहा पर लोग मुझे 'छोरा गंगा किनारे वाला' ही कहते हैं[34]।' इस पर भीड़ भावातुर होकर भयंकर तालियाँ बजाती थी। प्रत्यक्षदर्शियो का ऐसा मानना है कि 'अमिताभ एक श्रेष्ठ फिल्मी ग्लैमर से जुड़े होने के कारण अपनी घनघोर लोकप्रियता के स्वयं शिकार हो गये थे। नतीजतन उनकी सभाओं मे हमेशा रेकार्ड भीड़ रही'[35]। इसी प्रकार सर्वसुख सिंह (पूर्व शिक्षा

---

30. रविवार, हिन्दी साप्ताहिक पत्रिका (संयुक्तांक), 6-13-19 जनवरी, 1985, पृष्ठ संख्या- 14-15।
31. रविवार, वही, पृष्ठ संख्या- 22-23।
32. डा० रीता बहुगुणा जोशी एव डा० राम नरेश त्रिपाठी : हेमवती नन्दन वहुगुणा, नई दिल्ली, 1999, वही, पृष्ठ संख्या-193-94
33 प्रेक्षा, हिन्दी साप्ताहिक समाचार पत्र, नई दिल्ली, 25 नवम्बर, 1984, पृष्ठ संख्या- 7।
34 रविवार, हिन्दी साप्ताहिक पत्रिका, कलकत्ता (संयुक्तांक) 6-13-19 जनवरी, 1985, पृष्ठ संख्या- 56-57।
35 प्रो० एस० पी० सिंह, (निदेशक, एकेडेमिक स्टाफ कालेज, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद) से लिया गया साक्षात्कार।

मत्री उ० प्र० सरकार) अपने एक साक्षात्कार मे बताते हैं कि—'हम सब जानते थे कि अमिताभ काफी पैसे वाला आदमी है, काफी साधन सुलभ है और सरकार में इनकी काफी अच्छी पकड होगी, जो इलाहाबाद के विकास के लिए जरूरी है'[36]। किन्तु आगे उन्होने यह भी कहा कि 'विकास के परिप्रेक्ष्य में बहुगुणा के विरुद्ध कुछ भी कह पाना मुश्किल था। क्योकि बहुगुणा उस दशक मे सामाजिक कल्याण और विकास में अतुलनीय योगदान देते हुए भारतीय राजनीति के शीर्ष पर थे'[37]। प्रायः यही माना जाता है कि बहुगुणा की पराजय के पीछे अमिताभ जैसे फिल्मी नायक का कांग्रेसी उम्मीदवार होना था, जिसे देखने, समझने की ललक थी इलाहाबाद को। किन्तु प्रधानमंत्री इंदिरागाधी की हत्या से उपजी सहानुभूतिक मजबूती को भी नजरअन्दाज नहीं किया जा सकता है जिसके सामने पूरा विपक्ष ही धराशायी हो गया था। स्वयं बहुगुणा ने इस तथ्य को स्वीकार करते हुए माया (हिन्दी पाक्षिक पत्रिका) के एक साक्षात्कार में कहा है कि—"मुझे हराया श्रीमती गांधी की हत्या से पूरे देश में फैली एक भावनात्मक लहर ने . अमिताभ बच्चन के लिए क्या कहूँ वह तो एक लड़का है। वैसे भी अब मेरा उसके लिए कुछ कहना शोभा नहीं देता"[38]।

इसी प्रकार चुनाव के तीन महीने पहले अपने-आपको इंदिरा कांग्रेस का एक मात्र विकल्प बताने वाली भारतीय जनता पार्टी के 224 उम्मीदवारों मे भी सिर्फ दो ही चुने जा सके। अटल बिहारी बाजपेयी सहित उसके सभी चोटी के नेता चुनाव हार गये[39]। भाजपा के इस हार के विषय में पार्टी के तत्कालीन महासचिव लाल कृष्ण अडवाणी का मानना है कि—'इस बार इंका को ऐसी अभूतपूर्व सफलता मिली है, जो पंडित नेहरू और इदिरागांधी को भी प्राप्त नहीं हुई थी। इसका कारण यह है कि मतदाताओं ने इंदिरा कांग्रेस के कार्यकलाप पर निर्णय नही दिया, सीधे इस बात पर फैसला किया कि वे श्रीमती गांधी के दु.खद निधन के बाद राजीव गांधी को एक अवसर देना चाहते है या नहीं। इंदिरा कांग्रेस ने भी बड़ी कुशलता से चुनाव अभियान में पिछले पॉच वर्षो की अपनी विफलताओं की चर्चा नही होने दी। टेलीविजन व प्रचार के अन्य माध्यमों के जरिये सारी बहस इसी बात पर सीमित कर दी कि श्रीमती गांधी की हत्या क्यों की गई[40]।

---

36. सर्वमुख सिह (पूर्व शिक्षा मंत्री, उत्तर प्रदेश सरकार) से लिया गया साक्षात्कार।
37. सर्वसुख सिंह से लिया गया साक्षात्कार।
38 हेमवती नन्दन बहुगुणा का प्रकाशित साक्षात्कार, माया, हिन्दी मासिक पत्रिका इलाहाबाद, 5 दिसम्बर, 1986, उद्धृत, डा० रीता बहुगुणा जोशी एव डा० राम नरेश त्रिपाठी : हेमवती नन्दन बहुगुणा, वही, पृष्ठ सख्या- 195
39 रविवार (सयुक्तक), वही, पृष्ठ संख्या- 24-25।
40 लाल कृष्ण अडवाणी (पूर्व महासचिव एवं अध्यक्ष, भारतीय जनता पार्टी) का प्रकाशित साक्षात्कार, रविवार (संयुक्तक), वही, पृष्ठ संख्या- 33।

स्पष्ट है कि दिसम्बर 1984 मे पूरा वह विपक्ष दफन हो गया जिसने 20 वर्ष तक डा० राम मनोहर लोहिया द्वारा शुरू की गई अंध कांग्रेस विरोधी नीति का अनवरत अनुसरण करता रहा था। वस्तुतः यह स्वतंत्रत भारत के राजनैतिक इतिहास मे विपक्षी दलों की सबसे करारी पराजय थी[41]। तदुपरान्त होना तो यह चाहिए था कि विपक्ष अपने गिरेबान मे झांक कर देखता और भविष्य म उन खामियां को सुधारने की कोई जुगत निकालता, जिनके कारण चुनावों मे उसका यह हस्र हुआ था। किन्तु अभी भी वह अपने पूर्वाग्रह से मुक्त नहीं रहा, यानि गुटबन्दी, दलीय नेतृत्व एवं गृह कलह का आलम ही सम्पूर्ण विपक्ष में छाया रहा[42]। बहुगुणा इसके लिए सबसे जिम्मेदार कारक 'प्रधानमंत्री का पद प्राप्त करने की चरम आकांक्षा'[43] मानते थे। वास्तविकता भी कुछ ऐसी ही लगती है। विपक्ष के कुछ शीर्षस्थ नेताओं में एकीकृत दल का अध्यक्ष पद प्राप्त करने की लालषा दिनों-दिन बलवती होती रही, और एक दूसरे के बीच द्वन्द की जड़े गहराती रहीं। चन्द्रशेखर ने भी इसी तथ्य को स्वीकार करते हुए विपक्षी नेताओं पर आरोप लगाया था। उनका कहना था कि 'आज विपक्षी नेता अपनी अन्तराला वेंच रहे है और प्रधानमंत्री की जोड़-तोड़ की राजनीति के शिकार हो रहे है। सत्तारूढ़ दल के विकल्प के लिए विपक्षी दलो की एकता की बात करना तब तक बेबुनियाद है जब तक कोई ठोस नीति और कार्यक्रम न बनाया जाय'[44]।

41 संतोष भारतीय का प्रकाशित लेख रविवार, वही, 17-23 मार्च, 1985, पृष्ठ संख्या- 11।

42 माया, हिन्दी मासिक पत्रिका, इलाहाबाद, 30 अप्रैल,1985, पृष्ठ सख्या- 45।

43 रविवार, वही, 17-23 मार्च, 1985, पृष्ठ संख्या- 11।

44 अमर उजाला, हिन्दी दैनिक समाचार पत्र, बरेली, 23 सितम्बर, 1985, पृष्ठ संख्या- 1।

लोक दल विभाजित, विपक्षी एकता का पुर्नप्रयास और मोर्चा सरकार

दलित मजदूर किसान पार्टी जो अप्रैल, 1986 में पुनः लोकदल का रूप ले चुकी थी, चरण सिह की अस्वस्थता के चलते उपजे परिवारवाद और स्वार्थ लिप्सा के कारण गृहयुद्ध की शिकार बन गई[45]। यद्यपि अपनी अस्वस्थता के पहले ही चरण सिह ने बहुगुणा को अपने बाद सबसे महत्वपूर्ण स्थान यानि दल के इकलौते उपाध्यक्ष का पद प्रदान कर एक तरह से सुनिश्चित कर दिया था कि उनके बाद लोकदल का नेतृत्व बहुगुणा करेंगे। प्रायः वे अपने समर्थको से कहते भी थे कि यदि मेरे बाद इस दल को कोई चला सकता है तो वह बहुगुणा है[46]। किन्तु परिवार वाद के समक्ष यह कैसे सम्भव था? चरण सिंह की बीमारी के दौरान ही उनकेपुत्र अजीत सिह ने राजनीति मे प्रवेश करने का निर्णय ले लिया और एक योग्य पिता के योग्य पुत्र प्रमाणित करने की आशा के विपरीत जाकर पिता के अध्यक्ष पद पर लोलुप दृष्टि गडा दी। दल के शीर्षस्थ नेताओं ने पार्टी एकता के हित को ध्यान मे रखते हुए उचित मान्यताओं के विपरीत जा कर उनकी स्वार्थ लिप्सा की पूर्ति एवं तुष्टि के लिए उन्हे लोकदल का राष्ट्रीय महासचिव बना दिया[47]। इसके साथ केन्द्रीय संसदीय बोर्ड का सदस्य, राज्य सभा का सदस्य, राष्ट्रीय युवा लोकदल का प्रभारी तथा पार्टी की उत्तर प्रदेश शाखा का अस्थाई प्रभारी भी बनवा दिया। इससे पहले उन्हे किसान ट्रस्ट का भी उपाध्यक्ष बनवा दिया गया था[48]।

ज्ञातव्य है कि अजीत सिंह को ये सारे पद किसी सेवा, त्याग, अनुभव या योग्यता के कारण नहीं दिया गया था, बल्कि सिर्फ इसलिए कि वे पार्टी में विग्रह, विघटन का काम न करके उसे मजबूती प्रदान करेंगे। किन्तु दूसरी ओर स्रोतों से यह भी पता चलता है कि चरण सिंह की गम्भीर बीमारी के बाद उनके जनमत को सजोए रखने के लिए दल में एक वारिस की आवश्यकता महसूस हुई थी। तदुपरान्त अजीत सिंह को राजनीति मे लाने की कोशिश की गई और उन्हे विभिन्न स्थानों से जोड़ा गया[49]। फिलहाल उनका कार्यकलाप आशाओं के अनुरूप नहीं रहा। जनवरी, 1986 में उन्होने सरोज वर्मा तथा दलके राष्ट्रीय महासचिव रशीद मसूद और सत्य प्रकाश

---

45 माया, वही, पृष्ठ संख्या- 45।

46 डा० रीता बहुगुणा जोशी एवं डा० राम नरेश त्रिपाठी : हेमवती नन्दन बहुगुणा, वही, पृष्ठ संख्या- 197।

47 चौ० देवी लाल (अध्यक्ष, अनुशासन समित लोकदल) का अजीत सिह को लिखा गया पत्र, 5 फरवरी, 1987, पृष्ठ संख्या- 1-2 (बहुगुणा के आवासीय दस्तावेजों से प्राप्त)।

48 चौ० देवी लाल, वही, पृष्ठ सख्या- 2।

49 इडिया टूडे, अंग्रेजी मासिक पत्रिका, 11 जनवरी, 1986, पृष्ठ संख्या- 28।

मालवीय के महयोग से उत्तर प्रदेश विधान सभा में विरोधी दल के नेता मुलायम सिह यादव के विरुद्ध हस्ताक्षर अभियान चला दिया और 9 फरवरी को विधान सभा अध्यक्ष के समक्ष दल के विधायको की परेड करा दी[50]। अगस्त 1986 मे उन्होने अपने मनपसन्द और जी हुजूर आदमी को उत्तर प्रदेश के लोकदल अध्यक्ष बनाने के उद्देश्य से गम नरेश कुशवाहा को हटाने का अभियान शुरू कर दिया और पार्टी के अन्दरूनी मामले को अखबारों के जरिये मार्वजनिक प्रश्न बना दिया[51]।

अर्जीत सिह के इस कार्यकलाप का दलीय नेताओं ने कडे शब्दो म निन्दा की थी। उनका कहना था कि अजीत सिह कायह काम अलोकतांत्रिक, मर्यादाविहीन एवं अनुशासन उल्लघन हे। साथ ही साथ नेताओं ने यह भी आरोप लगाया कि 'उन्होने इस सम्बन्ध मे हेमवती नन्दन बहुगुणा जो कार्यवाहक अध्यक्ष की भूमिका निभा रहे थे, के आदेश का भी उलंघन किया है[52]। लोकदल के वरिष्ठ नेता देवीलाल का आरोप था कि हरियाणा मे अजीत सिह पार्टी के विधान सभा सदस्यों को उनके विरुद्ध भड़काकर एक नये ग्रुप के निर्माण मे लगे थे। अजीत सिंह को भेजे गये एक पत्र में उन्होने यह भी स्पष्ट लिखा है कि 'उनकी योजना हरियाणा में आने वाले चुनावो में विफल कर देने की थी ताकि वहॉ कांग्रेस पार्टी जीत जाये[53]।

इस प्रकार स्पष्ट है कि अजीत सिह की कार्यप्रणाली आशा के अनुकूल नहीं थी। फिर भी किसी तरह मामला खिचता रहा। किन्तु आगे चलकर 29 मई, 1987 को चौधरी चरण सिह की मृत्युके बाद विवाद उठ ही गया। यह विवाद तत्कालीन लोकदल के नेतृत्व को लेकर था। 1 जून 1987 को अजीत समर्थकों ने दिल्ली मे एक सम्मेलन बुलाया और उसमें उन्हे पार्टी का अध्यक्ष घोषित कर दिया[54]। उधर लोकदल कार्यकारिणी ने कार्यवाहक अध्यक्ष बहुगुणा को लोकदल का अध्यक्ष घोषित किया। बहुगुणा को दल के सभी वरिष्ठ नेताओं का समर्थन प्राप्त था। हरियाणा के देवीलाल, राजस्थान के नाथूराम मिर्धा, उत्तर प्रदेश से मुलायम सिंह यादव, बिहार के कर्पूरी ठाकुर ने बहुगुणा के नेतृत्व पर पूरा विश्वास व्यक्त किया। प्रान्तीय स्तर पर अधिकांश नेता अजीत सिंह के साथ न जाकर बहुगुणा के साथ गये। इस राजनैतिक परिदृश्यके बाद लोक दल दो धड़ों में बँट गया— लोकदल (अजीत) तथा लोकदल (बहुगुणा) किन्तु दोनों घटकों में बहुगुणा का नेतृत्व सर्वोपरि रहा[55]।

---

50. दैनिक जागरण, हिन्दी दैनिक समाचार पत्र, 10 फरवरी, 1986, पृष्ठ संख्या- 1।
51. चौ० देवीलाल का अजीत सिंह को लिखा गया पत्र, वही।
52. दैनिक जागरण, वही, 11 फरवरी, 1986, पृष्ठ संख्या- 1।
53 चौ० देवी लाल, वही।
54 डा० रीता बहुगुणा जोशी एव डा० राम नरेश त्रिपाठी : हेमवती नन्दन वहुगुणा, वही, पृष्ठ संख्या- 199 ।
55 वही।

भारतीय राजनीति में अचानक परिवर्तन तब आया जब फेयर फैक्स और पनडुब्बीखरीद में तथाकथित दलाली प्रकरण से उपजे विवाद के चलते विश्वनाथ प्रताप सिंह को सत्तादल से इस्तीफा देना पड़ा। उनके इस्तीफे के बाद प्रधामंत्री राजीव गांधी, दिनेश सिंह, ब्रहमदत्त तथा अरुण सिंह आदि कांग्रेसियो ने जहाँ उन्हे कठघरे मे खडा करके आक्रमणो की झडी लगा दी थी वही उनकी (वी पी० सिंह की) अचानक चुप्पी ने पूरे मालमे को रहस्यमय बना दिया था[56]। वित्तमंत्री के रूप मे आर्थिक अपराधियो के यहाँ छापो की शुरूआत और विदेशी बैंको मे देशी लोगो के पैसो की जानकारी के लिए फेयर फैक्स को अनुबन्धित करके विश्वनाथ प्रताप सिंह ने सरकार की निगाह मे चाहे जितना बडा अपराध किया हो, जनसाधारण की निगाह मे वह सराहनीय काम था[57]। रक्षा मत्री के रूप मे जर्मनी से हुए रक्षा सौदे में 30 करोड़ की दलाली की जॉच की घोषणा करके उन्होने अपनी ख्याति और सार्वजनिक नैतिकता को बढ़ाया। रक्षा सौदे के बारे में सरकारी बयानों की अस्थिरता ने जहाँ राजीव गांधी की विश्वसनीयता पर सवालिया चिन्ह लगाया, वहीं विश्वनाथ प्रताप सिंह के बयान की दृढ़ता कि उन्होंने जो कुछ किया उनके अधिकार मे था—उनकी ईमानदारी और विश्वसनीयता को बल प्रदान किया। फिलहाल वी० पी० सिंह के इस्तीफे से राजनीतिक माहौल राजीव गांधी के खिलाफ बन गया था[58]।

गौरतलब है कि दिसम्बर, 1984 के चुनाव में अभूतपूर्व सफलता पाने के बाद प्रधानमत्री के रूप में राजीव गांधी ने जनता से 'साफ-सुथरी और काम करने वाली सरकार' देने का वायदा किया था। साफ-सुथरी सरकार के मायने राजीव गाधी के लिए चाहे जो रहे हों, जनता के लिए उसके मायने थे—'एक ऐसी सरकार जो भ्रष्टाचार, कालाबाजारी और अनैतिक कामों पर अंकुश लगाए। साथ ही उसके (सरकार) लोग किसी भी तरह से इन कामों में कहीं से भी लिप्त न दिखाई दें।' वर्षों तक ऐसा लगता रहा कि साफ-सुथरी सरकार का जो अर्थ जनता ने ग्रहण किया था, राजीव गांधी का भी आशय उसी से था। लेकिन फेयर फैक्स प्रकरण के प्रकाश मे आने के बाद पहली बार ऐसा लगा कि शायद राजीव गांधी का आशय यह नही था, जो जनता समझ रही थी। सम्भवत: इसी कारण वी० पी० सिंह के वित्त से रक्षा मंत्रालय में परिवर्तन को लोगों ने सहज भाव से नही लिया[59]। फिर रक्षा मंत्रालय द्वारा जर्मनी से पनडुब्बियों की खरीद के एक मामले की जांच को लेकर वी० पी० सिंह के इस्तीफे ने मुहर लगा दी कि प्रधानमंत्री की बात का ठीक-ठीक अर्थ समझने में शायद जनता असफल रही है[60]। किन्तु इसका मतलब यह नहीं लगाया जा सकता कि उपरोक्त सन्दर्भ राजीव गाधी की पूरी तरह

---

56. अवकाश, हिन्दी पाक्षिक समाचार पत्रिका, वाराणसी, मई (सयुक्तांक) 1987, पृष्ठ संख्या- 10-11।
57. अवकाश, वही।
58 अवकाश, वही।
59 अवकाश, वही।
60 अवकाश वही।

असफलता के सूचक थे। बल्कि वक्त की दौड मे दुनिया के अगली पात के देशो के साथ कदम मिलाकर चलने जैसी बात भी उनमे स्पष्ट झलक रही थी। इसके साथ-साथ इक्कीसवी सदी की ओर उन्मुख भारत मे कम्प्यूटर और आधुनिक तकनीकी के प्रति अन्ध लगाव भी उनमें स्पष्ट रूप मे देखा गया था[61]। राजनीतिक विश्लेषको के एक पक्ष द्वारा इसे उनकी सफलता का मानक स्वीकार किया जाता है।

फिलहाल कांग्रेस से निकलने के बाद विश्वनाथ प्रताप सिह की सभाओं मे जबरदस्त भीड़ उमडती रही। उनकी कइ रैलियाँ देश के विभिन्न भागों मे इतनी सफल रहीं कि कांग्रेस को छोड़ सबके मुँह उधर उठ गये[62]। सरकारी घोटालों की चर्चा करके उन्होंने बडी संख्या में हर वर्ग के लोगों को आकर्षित किया था। उनके साथ कांग्रेस के कई भूतपूर्व नेताओं के आ जाने तथा भाजपा और वामपन्थी दलों के अलग-अलग उनके स्वर मे बोलने से भी उन्हें बल मिला था। किसानों से लेकर छात्रो, वकीलों और कामगारों तक की सफल रैलियॉ और जनसभाएँ उनके समर्थन मे आयोजित हुई[63]। कुछ समय तक वी० पी० सिंह इस राजनीतिक दुविधा में फँसे रहे कि नई पार्टी का गठन किया जाय या गैर कांग्रेसी पार्टियो को एकजुट किया जाय। खैर, प्रारम्भ में उन्होने कांग्रेस से निष्कासित लोगों को एक जुट करके जन मोर्चा बनाया[64]। इसी बीच पहले के अनुसार ही पुन. प्रतिपक्ष की एकता की नई तलाश शुरू हो गयी। अन्ततः 1 अगस्त, 1988 को जनता पार्टी लोकदल (अ) , कांग्रेस (स) और जनमोर्चा आदि दलों को मिलाकर समाजवादी जनता दल का गठन हुआ[65]।20 अगस्त को नई दिल्ली में देवी लाल ने लोकदल (ब) की बैठक बुलाई और अपने को समाजवादी दल में विलय की घोषणा की। इस बैठक में मुलायम सिह ने तो भाग लिया था लेकिन बहुगुणा अनुपस्थित रहे[66]। यानि लोकदल (ब) के समाजवादी जनता दल मे विलय की घोषणा दल के अध्यक्ष की सहमति के बगैर ली गई। तत्पश्चात्, 11 अक्टूबर 1988 को बैगलूर मे चन्द्रशेखर, अजीत सिह, मधु दंडवते, हेगड़े, देवीलाल, वी० पी० सिंह, राम विलास पासवान, बोम्मई, मुलायम सिह, अरुण नेहरू आदि नेताओं की महत्वपूर्ण बैठक हुई। इसी बैठक में जनता दल की नींव रखी गई। वी० पी० सिंह को इसका अध्यक्ष बनाया गया और उन्हें दल के अन्य पदाधिकारियों को मनोनीत करने का अधिकार दिया गया। ज्ञातव्य है कि इस बैठक मे भी लोकदल का 'बहुगुणा गुट' शामिल नही हुआ[67]।

---

61. अवकाश, वही।
62 साप्ताहिक हिन्दुस्तान, हिन्दी साप्ताहिक समाचार पत्र, 24-30 जनवरी, 1988, पृष्ठ संखया 8 ।
63. साप्ताहिक हिन्दुस्तान, वही।
64. राष्ट्रीय सहारा, हिन्दी दैनिक समाचार पत्र, लखनऊ (हस्तक्षेप अक रविवार), 10 जुलाई, 1994, पृष्ठ संख्या- 2।
65 दि पायोनियर, अंग्रेजी दैनिक समाचार पत्र, 2 अगस्त, 1988, पृष्ठ संख्या- 1।
66 दि पायोनियर, वही, 21 अगस्त, 1988, पृष्ठ संख्या- 1।
67 राष्ट्रीय सहारा, वही, 10 जुलाई, 1994, पृष्ठ संख्या- 1।

वस्तुत बहुगुणा जनता दल के निर्माण के बेहद खिलाफ थे। उनका स्पष्ट मत था कि जनता पार्टी के प्रयोग मे गैर कांग्रेसी पार्टियो को बहुत नुकसान हुआ था और देश की राजनीतिक प्रतिष्ठा पर आँच आयी थी। पर जनता पार्टी मे देश का नुकसान नही हुआ था क्योकि सभी कमियां के बावजूद जनता पार्टी मे राष्ट्रीय आन्दोलन के मूल्यो मे यकीन रखने वालो की एक लम्बी झुण्ड थी[68]। बहुगुणा के अनुसार प्रस्तावित जनता दल पर ऐसे चेहरो का वर्चस्व होने वाला था जिनका गांधी जी के राष्ट्रीय आन्दोलन के मूल्यों मे कोई लेना-देना नही था और जिन्होने कांग्रेस को भ्रष्ट करने मे सबसे बड़ी भूमिका निभाई थी। उन्होंने इसे 'अवसरवादी प्रयोग' की संज्ञा दी और राष्ट्र की एकता-अखण्डता के लिए घातक बताया[69]। बहुगुणा का कहना था कि 'जनता दल पर कब्जा वी० पी० सिंह, अरुण नेहरू और जार्ज फर्नाडीज सरीखों का होगा जो राजनीतिक स्वार्थ और सत्ता के लिए कोई भी गैर जिम्मेदाराना निर्णय ले सकते हैं। परिणामस्वरूप जनता पार्टी यदि 27-30 महीने चली थी तो यह पार्टी एक साल मे खत्म हो जाएगी। पर जाते-जाते यह लोग देश का इतना नुकसान कर जाएंगे कि उनकी कल्पना नहीं की जा सकती'[70]।

शायद इसी स्थिति में बहुगुणा के प्रति अफवाहें फैलायी गयीं कि वे विपक्ष के प्रति निष्ठावान नही हैं, क्योकि कांग्रेस के प्रति उनकी निष्ठा अभी भी खत्म नहीं हुई है[71]। आरोप यह भी लगाया गया कि 'अकेलेपन की स्थिति' से जूझने का साहस न होने के कारण बहुगुणा ने कांग्रेस को पुनः अपनी मंजिल चुन लिया है। वे राजीव गांधी से दो बार खुलेआम बातचीत कर चुके है। सम्भवतः राजीव गांधी ने उप प्रधानमंत्री तथा कांग्रेस के कार्यवाहक अध्यक्ष पद पर बहुगुणा को प्रतिष्ठित करने के लिए राजी कर लिया है[72]। किन्तु बहुगुणा ने उपरोक्त तथ्यों की कड़े शब्दो में भर्त्सना करते हुए इसे सर्वथा असत्य बताया था। इस सन्दर्भ में उनका स्पष्ट कहना था कि 'बिचौलियों द्वारा स्वार्थपूर्ति हेतु मेरे खिलाफ यह झूठा प्रचार किया जा रहा है'[73]।

वास्तविकता कुछ ऐसी प्रतीत होती है कि तत्कालीन समय में बहुगुणा विपक्षी एकता के खिलाफ नही थे बल्कि निर्मित नये दल (जनता दल) के स्वरूप, कार्य पद्धति और नेतृत्व से चिन्तित थे। वे इनमें आमूल-चूल परिवर्तन चाहते थे। उनका कहना था कि—'इस नये दल को जन आकांक्षाओं को पूरा करने के लिए काफी

---

68 राष्ट्रीय सहारा, वही, 10 जुलाई, 1994, पृष्ठ संख्या-1।

69. राष्ट्रीय सहारा, वही।

70. राष्ट्रीय सहारा, वही।

71 रविवार, हिन्दी साप्ताहिक समाचार पत्रिका, 28 फरवरी - 5 मार्च, 1988, पृष्ठ संख्या- 14।

72 दैनिक दून दर्पण, हिन्दी दैनिक समाचारपत्र, देहरादून, 31 मई, 1988, पृष्ठ संख्या- 1।

73 हेमवती नन्दन बहुगुणा का प्रकाशित साक्षात्कार रविवार, साप्ताहिक समाचार पत्र में, 28 फरवरी - 5 मार्च, 1988, पृष्ठ संख्या- 14।

बदलना होगा' 'मास एप्रोच' (जनता से जुड़ाव) मे पार्टी को लगाना होगा तथा 'ब्यूरोक्रेटिक लेथर्जी' (नौकरशाही की सुस्ती) को दूर करने के लिए ससद से वाहर जनता की भागीदारी को बढ़ाना होगा। इसे 'क्रिटिकल' (आत्म परीक्षण मूलक) नीति के कार्यक्रम के रूप मे लगातार हिस्सा लेना होगा। घटकवाजी बन्द होनी चाहिए। नीतियों का पूर्ण निर्धारण करना अत्यावश्यक है[74]। हमारी राजनीति अजीव हो चुकी है। उत्तर प्रदेश की अध्यापक हडताल का विरोध और महाराष्ट्र के हड़ताली सरकारी कर्मचारियो का समर्थन या इसकी विपरीत स्थिति, दोनो ही पक्ष अर्न्तविरोधी है। फिर इस पार्टी को अब यह निर्णय करना होगा कि हडताल कैसे तोडेंग, क्या उचित है क्या अनुचित, एक लोकतान्त्रिक देश मे हड़तालें कैसे रोकेंगे? साम्यवादी या तानाशाही मुल्क तो है नहीं। ऐसे कानून कैसे बनेंगे यह सब स्पष्ट करना होगा[75]। बहुगुणा ने आगे कहा कि 'जनता दल को अपनी आर्थिक नीतियॉ भी साफ करनी होगी। पार्टी की नीतियों के खिलाफ उसके संसद सदस्यों, विधायकों, मंत्रियो के बोलने की एक सीमा होनी चाहिए। छात्र वर्ग संगठित होगा कि नहीं? ये मुद्दे दिमाग में साफ करने होंगे, नई संस्कृति विकसित करनी होगी। इसके लिए हमें यानि मत्रियो को खुद मिशाल पेश करनी होगी। इस बदलाव को आप रिएलाइनमेंट (पुर्नसम्बन्धीकरण) आदि नही कह सकते'[76]।

किन्तु सयोग को कुछ और ही मजूर था। कोई नही जानता था कि उन्हें इस दौर में ही मृत्यु से भी संघर्ष करना पडेगा। वहुगुणा 'व्यवस्था बदल' और कार्य पद्धति मे परिवर्तन की आवाज दे ही रहे थे कि उनके स्वास्थ्य ने अचानक जवाब दे दिया। अस्तु उपचार हेतु उन्हें पुनः 19 फरवरी, 1989 को अमेरिका जाना पड़ा[77], जहा से दुबारा भारत की धरती देखने का मौका उन्हें न मिल सका। ज्ञातव्य है कि बहुगुणा के हृदय की मांसपेशियॉ काफी कमजोर हो चुकी थी। अमेरिकी चिकित्सकों को सन्देह था कि आपरेशन के बाद भी शायद आशाजनक सुधार न हो, बल्कि मौत की भी आशंका बनी हुई थी। अतः चिकित्सकों ने आपरेशन न कराने की उन्हे सलाह दी। परन्तु बहुगुणा इससे कब सन्तुष्ट होने वाले थे। वे तो हमेशा जोखिम से खेले थे। उन्होंने अपनी वाकपटुता से डाक्टरो के इरादे को ही वदल दिया। फलस्वरूप 16 मार्च को आपरेशन हुआ किन्तु सफलता हाथ न लगी[78]। अन्ततः पहाड़ों की धरती में अन्तिम स्वांस लेने वाले भारत के इस सपूत ने सात समुद्र पार देश से 14 हजार किलोमीटर दूर अमेरिका की धरती मे ही अपने जीवन की अन्तिम स्वास ली। यानि 17 मार्च, 1989

---

74 हेमवती नन्दन बहुगुणा का प्रकाशित साक्षात्कार, वही।

75 हेमवती नन्दन बहुगुणा का प्रकाशित साक्षात्कार, वही।

76 हेमवती नन्दन बहुगुणा का प्रकाशित साक्षात्कार, वही।

77 दि पायोनियर, अंग्रेजी दैनिक समाचार पत्र, 1 मार्च, 1989, पृष्ठ सख्या- 3।

78 डा० रीता बहुगुणा जोशी एवं डा० राम नरेश त्रिपाठी : हेमवती नन्दन वहुगुणा, वही, पृष्ठ संख्या- 220-21 ।

को अमेरिका मे ही हेमवती नन्दन बहुगुणा के प्राण पखेरू उड़ गये[79]। बहुगुणा की मृत्यु के बाद उन राजनीतिज्ञों की लिस्ट और छोटी हो गई जो एक गरीब के घर में पैदा होकर राजनीति में इतना ऊँचा जा सके। इलाहाबाद मे अन्तिम सस्कार के समय भी उनके चेहरे पर एक मुस्कान थी, मानो वे अपने आलोचकों से कह रहे थे, "खुश रहो अहले वतन, हम तो सफर करते हैं"[80] वस्तुतः बहुगुणा के साथ भारतीय राजनीति का एक अद्‌भुत चरित्र खत्म हो गया। एक ऐसा व्यक्तित्व जिसकी क्षमताएं ही उसके लिए अभिशाप बन गयीं।

जनता दल, जिसके निर्माण काल में ही बहुगुणा ने तीखी टिप्पणी की थी, आगामी चुनाव मे उसकी स्थिति और भविष्य निर्धारण पर भी एक संक्षिप्त विश्लेषण आवश्यक लगता है। ज्ञातव्य है कि नवम्बर 1989 के लोकसभा चुनावों में किसी को स्पष्ट बहुमत नहीं मिला। भारतीय जनता पार्टी और वामपन्थी दलों के समर्थन से जनता दल नेता विश्वनाथ प्रताप सिंह के नेतृत्व में 2 दिसम्बर,1989 को राष्ट्रीय मोर्चा की सरकार बनी[81]। भारतीय राजनीति में यह अनोखा प्रयोग था। जनता दल जैसी मध्यमार्गी पार्टी दक्षिणपंथी भाजपा और वामपंथियों दोनों के समर्थन से सरकार चला रही थी। राजनीतिक पर्यवेक्षकों को शुरू से ही यह आशंका थी कि यह प्रयोग सफल नही हो सकेगा। अन्ततः मात्र 11 महीने के भीतर ही राष्ट्रीय मोर्चा की सरकार का पतन हो गया। इन 11 मीहनो के शासनकाल में जनता दल के नेताओं ने कभी भी एकता का परिचय नहीं दिया। देवी लाल, चन्द्रशेखर, विश्वनाथ प्रताप सिह जैसे वरिष्ठ नेता एक दूसरे का कद कम करने में ही लिप्त रहे[82]।

देवी लाल को राजनीतिक पटकनी देने के लिए जब वी० पी० सिंह ने मण्डल आयोग की सिफारिशों को लागू करने की घोषणा की तो भारतीय जनता पार्टी को अपना जनाधार खिसकता नजर आया। मण्डल की राजनीति का प्रभाव कम करने के लिए भाजपा ने अयोध्या जैसे भावनात्मक मुद्‌दे को उछालने की रणनीति बनायी[83]। भाजपा अध्यक्ष लालकृष्ण अडवाणी ने 'सोमनाथ से अयोध्या' तक रथयात्रा की घोषणा की। जनता दल के नेता अडवाणी की रथयात्रा को स्थगित करवाने के प्रयास में असफल रहे। अन्ततः 22 अक्टूबर, 1990 को बिहार के मुख्यमंत्री लालू प्रसाद यादव ने भाजपा अध्यक्ष लाल कृष्ण अडवाणी को गिरफ्तार कर लिया[84]। अडवाणी की गिरफ्तारी के बाद 23 अक्टूबर को ही भाजपा ने जनता दल सरकार से अनपा समर्थन वापस ले

---

79. डा० रीता बहुगुणा जोशी एवं डा० राम नरेश त्रिपाठी : वही।
80. डा० रीता बहुगुणा जोशी एवं डा० राम नरेश त्रिपाठी : वही।
81. दि पायोनियर, अग्रेजी दैनिक समाचार पत्र, 3 दिसम्बर, 1989, पृष्ठ संख्या- 1।
82 विनय मिश्र का राष्ट्रीय सहारा हिन्दी दैनिक समाचार पत्र (हस्तक्षेप अंक) में प्रकाशित लेख,10 जुलाई, 1994, पृष्ठ संख्या- 2।
83 विनय मिश्र का राष्ट्रीय सहारा में प्रकाशित लेख, वही।
84 हिन्दुस्तान, हिन्दी दैनिक समाचार पत्र, 23 अक्टूबर, 1990, पृष्ठ संख्या- 1।

लिया[85]। भाजपा के इस कदम से जनता दल में उथल-पुथल तेज हो गयी। चन्द्रशेखर और देवीलाल ने भी 5 नवम्बर को जनता दल से अलग होकर समाजवादी जनता दल का गठन कर लिया[86]। नतीजतन 7 नवम्बर 1990 को विश्वनाथ प्रताप सिंह की सरकार का पतन हो गया[87]। तदुपरान्त 11 नवम्बर को कांग्रेस के समर्थन से चन्द्रशेखर के नेतृत्व में समाजवादी जनतादल की सरकार बनी, लेकिन 14 अप्रैल 1991 को यह सरकार भी गिर गयी[88]।

इस प्रकार स्पष्ट है कि जिस उत्साह और नैतिकता के बल पर जनता दल के प्रयोग के तहत भारत में अचानक राजनैतिक परिवर्तन किया गया, वह मात्र ग्यारह महीने में ही दुःखद प्रहसन[89] साबित हुआ। बहुगुणा द्वारा की गई भविष्यवाणी सही साबित हुई यानि एक साल भी वी० पी० सिंह की सरकार नहीं चल सकी और धराशायी हो गयी। तत्कालीन राजनीतिक समीक्षको ने इसके लिए अनेक कारण जिम्मेदार बतायें हैं किन्तु वरिष्ठ पत्रकार उदयन शर्मा की बेवाक टिप्पणी उपरोक्त सन्दर्भ में विशेष उल्लेखनीय है। उनका मानना है कि 'जनता दल का निर्माण धोखे की राजनीति से हुआ था और आगे भी यह पार्टी धोखे से ही संचालित की जाती रही[90]। वस्तुतः राजनीति में चतुराई विरोधी पार्टी को शिकस्त देने के लिए दॉवपेच या पार्टी के अन्दर सत्ता संघर्ष एक आम बात है लेकिन यदि किसी पार्टी का निर्माण और फिर उसकी सरकार का संचालन ही धोखे की राजनीति से हो और जहॉ हर कोई एक दूसरे को धोखा देने की फिराक में हो, तो ऐसे दल की उम्र स्वतः ऑकी जा सकती है।

उदयन शर्मा लिखते है कि '1988 में जनतादल बनाते समय इसके निर्माताओं ने पहले हेमंवती नन्दन बहुगुणा को धोखे की राजनीति के सहारे राजनीतिक हत्या की, जिसका सदमा वे झेल नहीं सके। तदुपरान्त पार्टी ने प्रधानमंत्री बनाने के लिए जब 1989 मे अपना नेता चुना तो वह भी धोखे से। चन्द्रशेखर ने घोषणा की थी कि यदि विश्वानाथ प्रताप सिंह जनता संसदीय दल का चुनाव लड़ेंगे तो मै भी उम्मीदवार हूँ। उड़ीसा भवन में चन्द्रशेखर को धोखे में डालने की योजना बनी। चन्द्रशेखर से कहा गया कि वी० पी० सिंह नेता पद के

85. हिन्दुस्तान, वही, 24 अक्टूबर, 1990, पृष्ठ संख्या- 1।
86. हिन्दुस्तान, वही, 6 नवम्बर, 1990, पृष्ठ संख्या- 1।
87. हिन्दुस्तान, वही, 8 नवम्बर, 1990, पृष्ठ संख्या- 1।
88 राष्ट्रीय सहारा, हिन्दी दैनिक समाचार पत्र (हस्तक्षेप अंक) 10 जुलाई, 1994 पृष्ठ संख्या- 1।
89 राष्ट्रीय सहारा, वही।
90 उदयन शर्मा (वरिष्ठ पत्रकार) का प्रकाशित लेख, राष्ट्रीय सहारा, हिन्दी दैनिक समाचार पत्र (हस्तक्षेप अंक) 10 जुलाई, 1994।

उम्मीदवार नही है। चौधरी देवीलाल पार्टी के वरिष्ठ नेता है। वे ही नेता पद के लिए उचित नाम है। संसदीय दल की बैठक मे देवीलाल नेता चुने गये। उन्होंने धोखे की पूर्व नियोजित रणनीति के तहत उसी समय घोषणा की, 'आप सबने मुझे प्रधानमंत्री बनाने का निर्णय किया, इसके लिए धन्यवाद, मैं यह पद विश्वनाथ प्रताप सिह को सौपता हूँ।' यह घटना जनता दल के खात्मे की शुरूआत थी[91]।

इसके अलावा जनता दल की असफलता का एक महत्वपूर्ण कारण इसकी विचारहीनता और किसी भी कार्यक्रम पर अमल न करने का चरित्र भी था। इसके साथ-सात दल के पास कोई भी वैकल्पिक कार्यक्रम न होना भी इसकी अकाल मृत्यु का कारण बना[92]। जबकि इसकी चेतावनी बहुगुणा ने दल के स्थापना काल मे ही दे दिया था। उनका कहना था कि 'जनकांक्षाओं की पूर्ति हेतु इस नये दल को नवीन नीतियाँ निर्धारित करनी चाहिए[93]। वास्तव में जिन घटको के विलय से यह पार्टी बनी थी, उनका विलय जिला स्तर पर कभी भी नही हो सका[94]। यानि आम जनता के बीच में सदैव घटकवादी द्वन्द की स्थिति बनी रहनी स्वाभाविक थी। देश भर के समाचारपत्रो मे प्रचार था कि एक ऐसी अनोखी पार्टी बनी है जो नये सत्तादल मे आन्तरिक लोकतंत्र की स्थापना करेगी और इसका चरित्र कांग्रेस, भाजपा और कम्युनिस्टों से अलग होगा, जबकि सत्य इसके विपरीत साबित हुआ। नतीजतन जनता दल दिनो-दिन जर्जर होता चला गया और 1994 मे घटित तीसरे विभाजन के साथ लगभग प्रभावहीन हो गया।

91. उदयन शर्मा का प्रकाशित लेख, वही।
92 विभांशु दिव्याल (वरिष्ठ पत्रकार) का प्रकाशित लेख, राष्ट्रीय सहारा, वही।
93 हेमवती नन्दन बहुगुणा का प्रकाशित साक्षात्कार, रविवार हिन्दी साप्ताहिक समाचार पत्र, 28 फरवरी - 5 मार्च, 1988, पृष्ठ सख्या- 14।
94 उदयन शर्मा का प्रकाशित लेख, वही।

मूल्यांकन

भारत का स्थान उन देशो मे है, जो राजनीति की दृष्टि से स्थाई देशो की पंक्ति मे गिना जाता है। यहाँ पर स्वतत्रोपरान्त से लेकर 1990 यानि 40 वर्षो के अन्तराल मे लगभग साढ़े चार वर्षो को छोड़कर बाकी केवल काग्रेस ने ही निरन्तर शासन किया है। इन साढ़े चार वर्षो मे भी जो शासक रहे व उसी दल के किसी समय हिस्से रहे थे। यानि एक तरह से इस दौरान गैर कांग्रेसी सरकार बनी ही नही। क्योकि 1977 की जनता सरकार के मोरार जी देसाई जन्मजात काग्रेसी थे और उनके मंत्रिमंडल में दो तिहाई लोग कांग्रेस से अभी हाल ही मे निकले थे। बाद में चौ० चरण सिह की सरकार तो बनी ही कांग्रेस के दम पर थी। उसके बाद विश्वनाथ प्रताप सिह भी आजन्म काग्रेसी ही रहे थे और चन्द्रशेखर की सरकार को कांग्रेस का समर्थन और उसकी वापसी भी चरण सिह की तर्ज पर थी।

इदिराकाल तक कांग्रेस के बारे में जो सबसे बड़ी आपत्ति की जाती रही है वह यह कि यह संस्था केवल एक व्यक्ति की संस्था रही। इस समय इंदिरागांधी ही प्रधानमंत्री थी, वे ही कांग्रेस की अध्यक्ष थी, वे ही मुख्यमत्रियों का निर्णय करती थी, वे ही यह तय करती थीं कि प्रदेश के कांग्रेस अध्यक्ष और अधिकारी कौन हों और राज्य सभा या लोकसभा के लिए अगर कोई उम्मीदवार चुनना हो तो उसका फैसला भी अन्ततोगत्वा उन्ही को करना पड़ता था। प्रशासकीय पद जब तक मंत्रियों के हाथ में रहे, ढुलमुल चलते रहे और नीति मम्बन्धी निर्णय भी तभी अन्तिम होते थे जब उन्हें इंदिरागांधी द्वारा स्वीकृति मिलती थी। यह सवाल स्वभावतः उठता है कि क्या भारत जैसे बड़े देश की राजनीति का इतना भारी उत्तरदायित्व केवल एक व्यक्ति, चाहे वह कितना ही योग्य और कुशल क्यों न हो, सम्हाल सकता है? और यदि यह मान भी लिया जाय कि वह सम्हाल सकता है तो क्या दल की दृष्टि से या देश की दृष्टि से यह उचित है। मानव की अपनी सीमाएं होती हैं—शक्ति की, सकल्प की ओर समय की। क्या कोई देश या कोई राजनीतिक दल जिसे इतने बड़े देश के ऊपर शासन करने का दायित्व या अवसर हो, केवल एक व्यक्ति के सहारे रह सकता है? मूल्यांकन करने पर इसके साथ एक प्रश्न और उठता है कि क्या यह राजनीतिक प्रविधि लोकतांत्रिक है, या नहीं। वस्तुतः लोकतात्रिक उसे ही माना जाना चाहिए जो जनता का प्रकट बहुमत हासिल कर सके और इसमें कोई सन्देह नहीं कि इंदिरागांधी ने इसका भरपूर फायदा उठाया। तात्पर्य यह है कि मौके दर-मौके इंदिरागांधी को भारी जनसमर्थन मिलता रहा। यानि लोकतांत्रिक दृष्टि से तत्कालीन समय में उनकी ताकत और क्षमता मे मजबूती का आभास जरूर मिलता है।

वस्तुत काग्रेस दल के संगठन की स्थिति सर्वत्र एक जैसी नही रही है। यह एतिहासिक सत्य है कि वह सदैव गुटबाजी और द्वन्द की स्थिति मे फँसी रही। उसमें से शाखाएँ-प्रशाखाएँ फूटती रही है और जुड़ती रही

हैं। नतीजतन भारत के राजनैतिक इतिहास में कांग्रेस को कुछ मौकों पर वडे नुकसान उठाने पड़े और साथ-साथ कभी सत्ता से भी बेदखल होना पड़ा। सूरत अधिवेशन के समय तिलक, लाला हरदयाल और विपिन चन्द्र पाल की तिकडी अलग हुई थी और जव 1916 में काग्रेस एक हुई तव 1920 तक आते-आते कांग्रेस गरम और नरम दल मे बँट गइ। तदुपरान्त देशबन्धु चितरन्जन दास और मोतीलाल नेहरू के नेतृत्व में कांग्रेस से ही पृथक स्वराज पार्टी बनी. उसने चुनाव लड़े और जीते। बाद मे महात्मागाधी के प्रयास स स्वराज पार्टी काग्रेस में फिर आ मिली थी।

स्वतत्रता के बाद भी यही स्थिति कायम रही बल्कि और विभत्स रूप मे। स्वतंत्रता संघर्ष के नेताओं का गढ़ समझा जाने वाला उत्तर प्रदेश भी इससे मुक्त नही रहा। 1952 मे बनी पहली विधान सभा मे ही उत्तर प्रदेश के कांग्रेसी नेता गुटबाजी में शरीक हो गये थे। इतना ही नहीं बल्कि आगे चलकर इसका स्वरूप और वदलता चला गया। इस सन्दर्भ मे चौ० चरण सिह की बुद्धिमता, महत्वाकांक्षा और पहल का कोई मुकाबला नही। 1967 म उन्होंने उत्तर प्रदेश मे अपनी ही काग्रेस पार्टी की सरकार के विरुद्ध विपक्ष से मिलकर राज्यपाल के अभिभाषण पर धन्यवाद भी नहीं होने दिया और 18 दिन मे ही चन्द्रभानु गुप्त की सरकार गिरा दी थी और संयुक्त विधायक दल बनाकर मुख्यमंत्री की कुर्सी हथिया ली थी। परिणाम क्या रहा? साल के अन्दर ही संयुक्त विधायक दल छिन्न-भिन्न हो गया। सब जहाँ के तहाँ चले गये और प्रदेश में राष्ट्रपति शासन लागू हो गया।

1969 का वर्ष तो कांग्रेस के लिए कठोर परीक्षा का काल साबित हुआ। इस वर्ष में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के इतिहास मे एक नवीन मोड़ तब आया जब ऐतिहासिक विभाजन के साथ वह दो धड़ों में विभक्त हो गई। ज्ञातव्य है कि राष्ट्रपति के निर्वाचन को लेकर कांग्रेस दल में गुटबाजी शुरू हुई थी। यह गुटबाजी इंदिरा शासन के समक्ष आसन्न खतरे की साया स्वरूप थी। यद्यपि उत्तर प्रदेश के कांग्रेसी सदस्यों और बहुगुणा की राजनीतिक तीक्ष्णता के बल पर इंदिरागांधी वी० वी० गिरि को राष्ट्रपति बनाने में सफल तो हो गयीं लेकिन कांग्रेस का विभाजन वह न रोक सकीं। सत्तर के दशक में कांग्रेस के राष्ट्रीय चरित्र पर एक प्रमुख सवाल उभरता है जब इंदिरागांधी के सुपुत्र संजय गांधी ने बिना किसी संवैधानिक अधिकार के ऐसा राजदण्ड चलाया कि पूरा-पूरा लोकतंत्र ही उनके आगे नत हो गया था। देश के ख्यातिलब्ध विद्वान एवं राजनीतिज्ञ भी उनके समक्ष बौनं बनकर रह गये थे। संजय गांधी ने शासकीय परम्पराओं का अतिलंक्षन कर व्यवस्था में जैसी उच्छृंखल दखल देना प्रारम्भ किया था, उससे राज़नीति में राजकुमारवाद की नींव स्पष्ट पड़ती नजर आती है, जिसे प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से इंदिरागांधी का भी समर्थन मिलता रहा। किन्तु तत्कालीन राजनीति में युवा वर्ग की भूमिका को जन्म देने जैसे उनके श्रेय को भी नजरअन्दाज नहीं किया जा सकता है। कठोर धक्का तब लगा कांग्रेस को जब आपातकाल के अवसान पर जगजीवनराम तथा बहुगुणा जैसे शीर्षस्थ कांग्रेसियो ने फरवरी, 1977 में दल से

निकलकर 'काग्रेस फार डेमोक्रेसी' की स्थापना की। पार्टी के इस विघटन तथा नये दल की स्थापना ने प्रधानमत्री इदिरागाधी के समक्ष एक कड़ी चुनौती पेश की। परिणामस्वरूप उन्हें सत्ता से भी बेदखल होना पड़ा। तदुपरान्त 1988-89 में बोफोर्स मुद्दे को लेकर वी० पी० सिह तथा अन्य काग्रेसियों का अचानक दल से निकलना भी बहुत मॅहगा सावित हुआ। इस बार काग्रेस केवल सत्ता से ही हाथ नही धो वैठी बल्कि इसकी जडे भी खोखली हो गयी।

जहॉ तक गैर काग्रेसी दलो की बात है इस कटु सत्य को स्वीकार करना पड़ेगा कि विपक्ष मे अभी तक कोई भी दल ऐसा नही रहा जो अकेले दम पर काग्रेस का विकल्प वन सके। फिर तो उनमें एकजुटता अपरिहार्य थी सत्ता और व्यवस्था परिवर्तन के लिए। लेकिन कैसे और किस आधार पर हो, यह सवाल सदैव विवादित रहा। किसी तरह एकजुटता की बात वनती भी तो कुछ महत्वाकाक्षी नेताओं की स्वार्थलिप्सा के आगे टिक न पाती। नेता अपनी-अपनी शक्ति, क्षमता और योग्यता के दावे वेहद बढ़ा-चढ़ाकर पेश करने और एकता की बातचीत को गड़बडा देने मे जरा भी संकोच नहीं किये। वे एक दूसरे को नीचा दिखाने और परोक्ष रूप मे प्रधामंत्री वनने का दावा पेश करने में ही जुटे रहे।

1967 मे राज्यों में सयुक्त विधायक दल (संविद सरकारो) का प्रयोग विफल होने के बाद अपनी साख पुनः जमाने मे विपक्षी दलों को पूरे दस साल लगे थे। 1977 में प्रमुख विपक्षी दलों के आपसी विलय का प्रयोग किया गया। इससे विपक्ष को केन्द्र में पहली बार सरकार बनाने का मौका तो मिला, लेकिन चन्द मीहनों के लिए। अस्वाभाविक विलय असाधारण विखराव में बदल गया। जबकि इस संयुक्त विपक्षी एकता यानि 'जनता पार्टी' की स्थापना गांधीवादी आदर्शो और लोकनायक जय प्रकाश नारायण के 'समग्र क्रांति' के विचारों पर आधारित थी। आपातकाल की त्रासदी से निराश जनता के लिए आशा की किरण थी और साथ-साथ स्वतंत्र भारत के राजनैतिक इतिहास में एक नये युग की उद्घोषक भी थी। लेकिन सरकार बनाने के बाद सिहासनारुढ़ दल के कुछ नेता दलगत राजनीति एवं व्यक्तिगत स्वार्थ और महत्वाकांक्षाओं के कारण उपरोक्त आदर्शों को शायद भूल बैठे। उनका पूरा समय ऊपरी जोड़-तोड़, उठापठक और वदला लेने में ही बीतता रहा। परिणामतः बिखराव की स्थिति आ गई और जनता सरकार गिर गई। यानि जिस इंदिरागांधी को राजनैतिक रूप से अन्तिम शिकस्त देने तथा सदैव-सदैव के लिए समाप्त करने की परिकल्पना प्रतिपक्षी नेताओं द्वारा की गई थी वह कोरी साबित हुई, बल्कि इंदिरागांधी ही देश की प्रमुख जननेता के रूप में पुनः उभरकर सामने आ गयीं।

तदुपरान्त कई बार ऐसे मौके आये जब विपक्षी एकता के प्रयास किये गये और कांग्रेस के एक सशक्त विकल्प प्रस्तुत करने की पेशकश हुई। किन्तु विपक्षी नेताओं का दृष्टिकोण सदैव भिन्न रहा, कभी साम्प्रदायिकता के नाम पर, कभी दक्षिण पन्थी एव वामपन्थियों के बीच आपसी द्वन्द को लेकर, कभी दलीय नेतृत्व से उपजे

विवादों के तहत विपक्षी एकता सम्भव न हो सकी। वी० पी० सिह के कांग्रेस से निकलने पर अचानक विपक्षी एकता में फिर तीव्रता आयी परन्तु वह भी पुरानी परम्परा के आधार पर ही थी। यद्यपि तत्कालीन ममय मे कांग्रेस के प्रति जनमानस की प्रतिक्रिया विपरीत थी, विपक्ष चाहता तो एक सही प्रविधि और रचनात्मक ढॉचे के तहत एकमेव दल की स्थापना करता और जनता के आशानुरूप स्थायी सरकार प्रदान करता। किन्तु ऐसा मम्भव न हो सका वही पुराने द्वन्द पुन ताजे हो गये, एक-दूसरे के स्वार्थ टकराने लग। नतीजतन वी० पी० सिह के नेतृत्व में बनी जनता दल सरकार एक वर्ष के भीतर ही गिर गई। कांग्रेस के समर्थन से चन्द्रशेखर की समाजवादी जनता दल की सरकार बनी, किन्तु वह भी 4-5 महीने से ज्यादा न चल सकी। इस प्रकार भारतीय राजनीति पर अस्थिरता की साया मंडराने लगी और भारतीय जनता एक स्थिर और कार्यकुशल सरकार पाने का सपना देखती रह गई।

हेमवती नन्दन बहुगुणा का भारतीय राजनीति में एक विशिष्ट स्थान है। वह लगभग पांच दशक तक हिन्दुस्तान की राजनीति में एक जाजवल्यमान नक्षत्र बनकर छाये रहे। बहुगुणा जितने बड़े महत्वाकांक्षी थे उतने ही बड़े देशभक्त भी थे। वह इस देश को बहुत ही मजबूत और इस देश की जनता को समानता के आधार पर सुखी और सम्पन्न देखना चाहते थे। शायद एक तड़प थी बहुगुणा के मन में कि जल्द से जल्द इस देश को, हर गॉव को उन्नत बना दें। इसके लिए उनका एक निश्चित कार्यक्रम था, एक निश्चित रास्ता था और एक निश्चित मंजिल थी। लोहिया की ही तरह उनमें उतावलापन था। लोहिया कहते थे, "जिन्दा कौमे पॉच साल तक इन्तजार नही करती।" बहुगुणा पांच साल बाद भी, एक और चुनाव हो जाने के बाद भी बुनियादी परिवर्तन न होने पर खीझते थे और दॉत पीसते थे। उनका कहना था कि 'कितने चुनाव हो चुके हैं अब तक, लेकिन देश और समाज स्वराज के संकल्प से दिन-बे-दिन दूर होता जा रहा है। सामाजिक खाइयाँ बढ़ती जा रही हैं। आर्थिक विषमताएँ गहरी होती जा रही हैं। लोकतंत्र माफिया तंत्र बनता जा रहा है। न्याय, मंहगा और दुर्लभ हो गया है। शिक्षा और इलाज आम आदमी की सामर्थ्य की बात नहीं रह गया है। स्वराज का फायदा केवल गिने चुने सेठों और शासकों की मुट्ठी में कैद होकर रह गया है।'

बहुगुणा एक ऐसे क्रातिकारी देशभक्त थे, जिसने सामाजिक अन्याय के खिलाफ और राष्ट्रीय गौरव के लिए अपने संघर्ष को कभी धीमा नहीं पड़ने दिया। जिम्मेदारी और जद्दोजहद का जबरदस्त मेल था बहुगुणा के व्यक्तित्व में। जो बहुगुणा 1942 के विद्रोही नेता थे और जिसके सिर पर 5000 रुपये का इनाम था, जो बहुगुणा आजादी के बाद रिक्शा मजदूरों और बिजली मजदूरों के नेता थे, जो बहुगुणा 1969 की नई कांग्रेस के महामंत्री थे, जो बहुगुणा 1975-76 में आपातकाल के विरुद्ध आवाज उठाते थे, जो बहुगुणा 1980 मे संसद की जीती हुई सीट को छोड़कर विपक्ष में जाने का साहस करते थे, वही बहुगुणा शासन के जिस किसी भी पद पर

रहे उसे उन्होंने उसी शिददत के साथ सफलता के शिखर पर पहुँचाया। उन्होंने साबित किया कि पद मे आदमी गौरान्वित नहीं होता बल्कि आदमी से पद गौरान्वित होता है। बहुगुणा के मुख्यमन्त्रित्व काल मे पहली बार उत्तर प्रदेश ऐसा राज्य बनकर उभरा, जिसमे न कोई हडताल थी न कोई तालाबन्दी, न कही साम्प्रदायिक तथा जातिवादी दंगे। पहली बार उत्तर प्रदेश को घाटे की वित्त व्यवस्था से निकलकर बचत की वित्त व्यवस्था मे प्रवेश करने का श्रेय प्राप्त हुआ था। भारत को माइक्रोवेव युग मे लाने का काम बहुगुणा ने किया था जब वह संचारमन्त्री थे। इसी तरह जब वह रसायन व पेट्रोलियम मन्त्री थे तब एक महीने के अन्दर बम्बई हाई से उरण तक समुद्र और दलदल के नीचे से पाइप लाइन बिछा देने का दुरूह कार्य बहुगुणा के संकल्प से ही साध्य हो सका। उनके कार्यकाल मे न पेट्रोल की कीमत बढ़ी और न मिट्टी के तेल की और न इनकी आपूर्ति में कही कोई रूकावट ही आयी, हालांकि उस जमाने मे पेट्रोल के विश्वबाजार पर बड़ा भारी दबाव था।

बहुगुणा पर महात्मागांधी और सुभाष चन्द्र बोस जैसे राष्ट्रीय आन्दोलन के महानायकों का बड़ा गहरा प्रभाव दीखता है। गांधी की तरह वह समस्या की गहराई तक जाते थे और उसके निराकरण के लिए सुभाष बाबू जैसी बेचैनी उनमें थी। नेहरू, शास्त्री, आचार्य नरेन्द्र देव, मौलाना आजाद और रफी अहमद किदवई जैसे नेताओ के वह सम्पर्क मे आये थे। अपने पूर्ववर्ती नेताओं की तरह जनांदोलन से उनका जन्म हुआ था। उन्होने पूरे हिन्दुस्तान को उसकी विविधता और इसकी अन्तर्निहित एकता को समझा था। गांधी की तरह वह असली भारत को गॉव में देखते थे। गरीबी और अमीरी की खांई, विकास में पिछड़ेपन और अशिक्षा के टापू जैसे मौजूदा भारत के विरोधाभास, जेहादी बहुगुणा को असह्य था और यही उनकी बेचैनी का कारण था। इसी ने उनकी कार्यशैली में एक अजीब उतावलापन पैदा कर दिया था।

उच्च राजनीतिक पदों पर आसीन रहते हुए भी बहुगुणा का अध्ययन मोह कभी कम नहीं हुआ। हिन्दी, अंग्रेजी, उर्दू एवं पंजाबी भाषा पर उनका अधिकार था और इतिहास, अर्थशास्त्र राजनीतिशास्त्र एवं अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धो पर प्रकाशित होने वाली प्रत्येक पुस्तक उनके पास आती थी जिसका वे आद्योपान्त अध्ययन करते थे। बहुगुणा केवल अध्ययन शील ही नही बल्कि एक जागरूक विद्यार्थी भी थ जो विभिन्न विषयो के विद्वानों की शिष्यता स्वीकारने मे हिचकिचाते नहीं थे। यही कारण है कि चाहे अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध या अर्थव्यवस्था का सवाल हो, चाहे घरेलू मामलों मे क्षेत्रीय असन्तुलन की बात हो, साम्प्रदायिक सौहार्द, जाति एव वर्ग संघर्ष आदि अनेकानेक विषयों पर उनकी सूक्ष्म परख का लोग लोहा मानते थे। वे एक ऐसे वैद्य थे जिसके पास हर रोग की औषधि थी। रोग चाहे असाध्य हों या सामयिक। बहुगुणा नाडी पकड़ते ही अचूक नुस्खा लिख दिया करते थे। वे जानते थे कि समस्या की जड़ कहाँ है और उसका उन्मूलन कैसे होगा।

बहुगुणा एक संघर्षशील राजनीतिज्ञ थे। सार्वजनिक जीवन मे वे हर एक इंच लड़कर ही आगे बढ़े थे।

इसी कारण उन्हे कभी-कभी एकान्त पथिक का रूप धारण करना पडा। किन्तु उनका स्वर कभी धीमा न पड़ा, उनकी आस्था की अग्नि वुझी नही, वे अपनी तात्कालिक विजय के लिए किसी से सन्धि पत्र लिखने के लिए तैयार न हुए। वे विना थकान-नुकसान की चिन्ता के कर्मलीन रहे। वहुगुणा की विश्वास संहिता मिथ्या धारणाओं की उपज नही थी। उनका एक ठोस आधार था, उनकी अपनी कार्यशैली थी। अतः अपने सम्पूर्ण राजनीतिक व सार्वजनिक जीवन मे अकेले साहसी यात्री होने का गौरव उन्हें प्राप्त है। य किसी भी परिस्थिति में शासको को खुलकर चुनौती देने मे हिचकिचाते नही थे। ऐसा करने से राजनीति की मुख्य धारा से दूर जा गिरेंगे, यह भय उनको कभी नही था। वे हमेशा निर्भय रहे। असाधारण इच्छा शक्ति ही उनकी कुजी और पूंजी थी।

अपने मुख्यमत्रित्व काल मे उन्होंने तय कर लिया था कि के० के० विरला को संसद में नही जाने दूँगा और उन्होंने यह करके भी दिखा दिया, यद्यपि इदिरागाधी के आदेश थे कि विरला को समर्थन दिया जाय। जिन दिनों जय प्रकाश नारायण इदिरा सरकार को उखाडने मे लगे हुए थे, उस समय मुख्यमत्री वहुगुणा ने जय प्रकाश के उत्तर प्रदेश के दौरे के समय उन्हे राज्य अतिथि बनाया था। जिन दिनो सजय गांधी की सारे देश मे तूती बोल रही थी उस समय भी वहुगुणा ने उन्हे अपने पास न फटकने दिया और उनकी डटकर मुखालफत की। नतीजे के तौर पर उन्हे मुख्यमंत्री पद से हाथ धोना पड़ा। मगर डटे रहे वहुगुणा इंदिरा का राज खत्म करने मे। जगजीवन राम आदि को मिलाकर 1977 मे इंदिरा सरकार को उन्होंने गिराकर ही छोड़ा। मोरारजी की भी सरकार में मंत्री रहे, पर दबे नही। चरण सिह सरकार मे भी रहे और उनसे भी टक्कर लेते रहे। वाद में दोनो मिल गये और वहुगुणा लोकदल में चौधरी के उत्तराधिकारी हुए। तदुपरान्त उन्होंने अजीत सिह से भी मोर्चा लिया। लोकदल के दो टुकड़े हो गये। विश्व प्रताप सिंह कांग्रेस छोडकर आये और उनका भी उन्होंने सिद्धान्तो के आधार पर मुकावला किया। इस प्रकार यह स्पष्ट होता है कि स्वाभिमान वहुगुणा के लिए नेताओं के प्रति वफादारी से कही ज्यादा मूल्यवान था। उनका अह उन्हें मजवूर करता था कि सर न झुकाएँ, चाहे मिट जाये। गलत बात मे कभी हॉ मे हॉ न मिलायें, चाहे तबाह क्यों न हो जायें। चोटी के नेताओं के बीच चापलूसी न करें, चाहे राजनीतिक क्षेत्र मे दुर्दिन ही देखने पडे।

कुछ लोगो ने वहुगुणा को साम्यवाद की ओर तो कुछ ने समाजवाद की ओर झुका पाया है। वस्तुतः बहुगुणा चाहे जिस ओर रहे हों, कम से कम पूँजीवादी अर्थव्यवस्था के पोषक कभी नहीं रहे। उन्होंने समतावादी समाज की परिकल्पना को साकार रूप देने का प्रयास किया, जिसमे वहुराष्ट्रीय कम्पनियों का विरोध और विदेशी पूँजी का भारत मे अनावश्यक हस्तक्षेप न होने देने का संकल्प वार-वार दुहराया गया है। वामपन्थी चिन्तन के नाते उन्होने खेतिहर मजदूरों से लेकर सभी कमजोर वर्गों को खुशहाल करने का निरंतर प्रयास किया। अपने मुख्यमन्त्रित्वकाल मे उन्होंने पिछड़े वर्ग को काफी हद तक संगठित होकर आगे वढ़ने का मौका दिया। समाजवाद

के विषय मे उनका दृष्टिकोण नेहरू के विचारो के ढॉचे के अन्तर्गत आवद्ध था। वहुगुणा की प्रतिक्रिया थी कि भारत मे समाजवाद ग्रेजुलिज्म की देन होगा। उनका कहना था कि पब्लिक सेक्टर की स्थापना इस दिशा मे एक प्रभावपूर्ण कदम था जिसने इस देश की पूँजीवादी व्यवस्था का एक प्रभावपूर्ण धक्का पहुँचाया है।

धर्म निरपेक्षता के सम्वन्ध मे भी बहुगुणा के विचार पंडित नेहरू के विचारों से बहुत साम्य रखते है। नेहरू के ही अनुसार उनका विचार था कि भारत मे धर्म निरपेक्षता यूरोपीय अवधारणा से भिन्न होगी। गांधी का विचार 'सर्वधर्म सम्भाव' ही वास्तविक धर्म निरपेक्षता है, उनकी ऐसी मान्यता थी। अल्पसंख्यकों के सम्वन्ध मे उनका कहना था कि देश के विभाजन के बाद जो मुसलमान यहॉ रहे गये उनकी सुरक्षा तथा उन्नति का दायित्व पूर्णरूपेण यहॉ की सरकार तथा उससे भी अधिक वहुसंख्यक वर्ग पर है। अल्पसंख्यको को आधुनिकता के परिवेश मे आधुनिक वैज्ञानिक शिक्षा के माध्यम से ही लाया जा सकता है।

बहुगुणा ने अपने बल पर जहां सत्ता की राजनीति की वही विपक्ष की राजनीति को भी वहुत ज्यादा प्रभावित किया। यदि इंदिरागांधी के साथ उन्होंने कांग्रेस की राजनीति को परवान चढ़ाया तो विपक्षी एकता की नीव डालने वालो मे भी वही रहे। यह अलग बात है कि एक बड़ी पार्टी होने के नाते कांग्रेस की राजनीति काफी हावी रही। जबकि विभिन्न मतो और सिद्धान्तों के कारण विपक्षी एकता केवल कहने भर के लिए उभरती रही, लेकिन ठोस आकार नही ले पायी। बहुगुणा ने कांग्रेस में जाने और बाद में फिर से अलग होने से लम्वा सफर तय किया जिसके लिए उन्हे आलोचनाओं का भी शिकार होना पड़ा, किन्तु उन्होंने अपने सिद्धान्तों से कभी समझौता न किया। बहुगुणा जहाँ एक ओर राजनीतिक दांव-पेंच में अपना सानी नहीं रखते थे वही भारत की पूरी राजनीतिक तस्वीर उनके सामने स्पष्ट थी। बहुधर्मी, बहुभाषी, विभिन्न परम्पराओं एवं संस्कृतियों से अप्लावित भारत में कैसी राजनीति सफल होगी? बहुगुणा इससे पूरी तरह भिग्य थे। वे कहते थे कि भारत के बहुसंख्यक समाज को अधिक सहिष्णु होना चाहिए और साथ ही समाज के विकसित एवं उच्च वर्ग का यह दायित्व है कि वह पद दलितों, हरिजनों एवं गरीबों के उत्थान के लिए प्रयलशील रहे जिससे कि समाज में विद्वेष एवं संघर्ष पर अंकुश लगाया जा सके।

उन्होने सदा नीतियों, सिद्धान्तों, मूल्यों, कार्यक्रमों और देश के ज्वलंत सवालों का गहराई से समझने, जानने और उन्हें यथाउचित हल करने का भरसक प्रयास किया है। वहुगुणा देश तथा समाज में आने वाली बाधाओं से बखूबी परिचित थे और उसे जोश तथा हिम्मत के साथ कहने में चूकते नहीं थे। उनके विचारों में एक मौलिकता थी जिस पर किसी का वे प्रत्यारोपण नहीं होने देते थे। तत्कालीन समाज में प्रचलित जातिगत व्यवस्था और आर्थिक असमानता के प्रति बहुगुणा सदैव चिन्तनशील रहे। वे जातिवादी राजनीति को देश का दुर्भाग्य मानते थे। देश की विभिन्न जातियों में चाहे जिस कोम या समुदाय की वात हो बहुगुणा सवके साथ समान

बर्ताव करते थे तथा कहीं-कही पिछड़ी जाति तथा दलित जातियों की पक्षधरता भी करते थे। वे कहते थे कि 'जो पिछड़े है और भी पिछड़े होते जा रहे है। हमारी सामाजिक नीति है कि जाति प्रथा को तोड़े बगैर देश आगे नही बढ़ेगा। . . आरक्षण पिछड़े वर्ग का और हरिजन का रहेगा, यह लोकदल का वादा है।' शिक्षा और शिक्षक के प्रति भी बहुगुणा की सोंच सदैव धनात्मक ही रही। उनका मानना था कि समाज और गॉव के विकास के लिए शत प्रतिशत प्राथमिक शिक्षा जरूरी है। साक्षर ग्रामीण चाहे वह किसान हो, दस्तकार हो, बढ़ई हो, सुनार, मोची या मजदूर हो, उसके कार्य करने की तकनीकी एक निरक्षर व्यक्ति से भिन्न होगी।' वह अक्सर कहा करते थे कि 'इस देश मे मनुष्य को इंसान बनाने का कार्य अध्यापक ही करता है, इंसान बनाने वाले की कदर अगर कम हो जाएगी तो इंसानियत की कब्र उठाने वाला रह कान जाएगा।'

इस प्रकार स्पष्ट है कि बहुगुणा एक सच्चे देश भक्त एवं उत्कट राष्ट्रवादी थे। उन्होने अपना सम्पूर्ण जीवन देश में समाजवादी एव धर्मनिरपेक्ष व्यवस्था लाने में लगा दिया। एक निर्भीक राजनेता, प्रभावी वक्ता तथा कुशल प्रशासक के रूप में बहुगुणा का राष्ट्र निर्माण एवं जनकल्याण कार्यो के लिए योगदान अतुलनीय है। हलांकि 1980 के बाद उन्हे सत्ता की बागडोर सम्हालने का अवसर नही मिला, फिर भी वे निरन्तर जनसमस्याओं एवं जनाकांक्षाओं से जुड़े रहे। उनका मानना था कि 'राजनीति का अर्थ सत्ता नहीं सेवा है।' उपरोक्त विवेचन के आधार पर यह कहना तर्कसंगत भी होगा कि उक्त कथन का बहुगुणा ने सर्वथा अनुपालन किया और साबित भी किया है। वह भारतीय राजनीति के ऐसे महानायक सिद्ध हुए जो भावी पीढ़ियों के लिए अनुकरणीय होगे। वस्तुतः बहुगुणा के बाद जनता के बीच जाकर उसका दुःख-दर्द सुनने वाले नेताओं की पीढ़ी या तो समाप्त हो गयी या जो बचे इतने विवश हो गये कि राजनीति में उनकी अनदेखी की जाने लगी। नेता और जनता के बीच का फासला आज तेजी से बढ़ने लगा है। आजादी के लिए संघर्ष करने वालों को शायद यह पता नहीं था कि जब राजनीति में ऐसे तत्वों का प्रवेश होगा जिन्होंने स्वतंत्रता संग्राम को नहीं देखा, तब आजादी का मतलव ही बदल जाएगा।

सम्बन्धित स्रोतों की सूची :

1	अइयर, एस०पी० एण्ड श्रीवास्तव	:	स्टडीज इन इण्डियन डेमोक्रेसी, 1965।
2	अब्बास, ख्वाजा अहमद	:	इन्दिरा गाधी- सफलता के वर्ष, दिल्ली, 1980।
3	बिपिन चन्द्र	:	भारत का स्वतंत्रता संघर्ष, नई दिल्ली, (प्रथम संस्करण) 1990, (पुर्नमुद्रण) 1996।
4	ब्राइट, जे० एस०	.	वीफोर एण्ड आफ्टर इन्डिपेन्डेन्स, (स्पीचेज आफ जवाहर लाल नेहरू -1922-1950), नई दिल्ली।
5	ब्रह्मानन्द	:	नेशनल बुल्डिंग इन इंडिया, वाराणसी, 1974।
6.	ब्रेकर एम०	:	इण्डिया एण्ड वर्ल्ड पालिटिक्स, क्रिश्नमेनन्स विव आफ दि वर्ल्ड, आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी, 1968 ।
7	बिपिन चन्द्र, अमलेश त्रिपाठी एवं बरूण दे	:	स्वतंत्रता संग्राम, नई दिल्ली, 1972 (पुर्नमुद्रण -1996)।
8	बिमल प्रसाद	:	गांधी, नेहरू एण्ड जे० पी०, देलही, 1985 ।
9	बाजपेयी, जे० एन०	:	दि इक्सटर्मिस्ट मूवमेंट इन इण्डिया, इलाहाबाद,1974।
10	बिरला, कृष्ण कुमार	:	इंदिरा गांधी, अंतरंग संस्मरण, नई दिल्ली, 1988।
11.	ब्रास, पी० आर०	:	(1) दि इण्डियन नेशनल कांग्रेस एण्ड इण्डियन सोसाइटी (1885-1985) देलही, 1987। (2) दि पोलिटिक्स आफ इण्डिया सिन्स इण्डिपेन्डेन्स, हैदराबाद, 1990। (3) दि न्यू कैम्ब्रिज हिस्ट्री आफ इण्डिया, (चतुर्थ खण्ड) हैदराबाद, 1990।
12	बूटन, मार्शल एम०	:	इंण्डिया ब्रीफिंग (1987) देलही, 1987।
13.	बोस, सुभाष चन्द्र	:	दि इण्डियन स्ट्रगल, कलकत्ता, 1948।
14.	चतुर्वेदी, डी० सी०	:	इण्डियन नेशनल मूवमेंट एण्ड कांस्टीट्यूशनल डेवलपमेंट, मेरठ एवं नई दिल्ली,1977।
15	चैटर्जी, नन्द लाल	:	ग्लोरिअस आफ उत्तर-प्रदेश, केम्ब्रिज, 1957।
16	चतुर्वेदी, जगदीश प्रसाद	:	राष्ट्रपति संसद और प्रधान मंत्री, इलाहाबाद, 1980।

17 चोपड़ा. पी० एन०, राम गोपाल एण्ड भार्गवा, एम० एल० सेन्टनरी आफ इण्डियन नेशनल काग्रेस (1885-1985), देलही, 1986।

18 दत्त, आर० सी० : इकोनामिक हिस्ट्री आफ इंडिया अण्डर अर्ली ब्रिटिश रूल, लन्दन, 1956 ।

19 दत्त, आर० पामे : इण्डिया टूडे, बम्बई, 1949।

20 दत्त, रजनीपाम : आज का भारत, मद्रास, 1977, (पुर्नमुद्रण -1991)

21 देसाई, ए० आर० : सोसल बैकग्राउन्ड एण्ड इण्डियन नेशनलिज्म।

22 ईश्वरी प्रसाद अर्वाचीन भारत का इतिहास, इलाहाबाद, 1986।

23 फ्रंकलेन, फ्रांसिन : इण्डियाज पोलिटिकल इकोनामी (1947-77)

24 फाड़िया, बाबू लाल : स्टेट पोलिटिक्स इन इण्डिया (भाग-एक, भाग-दो)

25 गुप्त, मन्मथ नाथ : कांग्रेस के सौ वर्ष (संघर्ष और सफलता का इतिहास) दिल्ली, 1985।

26 ग्रोवर, बी० एल एवं यशपाल : आधुनिक भारत का इतिहास, नई दिल्ली, 1981।

27 गौतम, डी० पी० : दि इण्डियन नेशनल कांग्रेस, देलही, 1985।

28 गैलेन्टर, मार्क : लॉ एण्ड सोसाइटी इन इण्डिया।

29 गुप्ता, दीपांकर : सोसल स्ट्रेटिफिकेशन इन इण्डिया।

30 गौगल, एस० सी० : प्राइम मिनिस्टर एण्ड दि कैबिनेट इन इण्डिया, देलही।

31 घोष, एच० पी० : दि न्यूज पेपर्स इन इण्डिया, देलही, 1952।

32. घोष, पी० सी० : इण्डियन नेशनल कांग्रेस, कलकत्ता, 1960।

33 घोष, शंकर : कांग्रेस प्रेसीडेन्सियल स्पीचेज, आल इण्डिया कांग्रेस कमेटी, न्यू देलही, 1975।

34. घोष, अजय कुमार : आर्टिकल्स एण्ड स्पीचेज, मास्को, 1962।

35 हार्टमन् : पोलिटिकल पार्टीज इन इण्डिया -1971।

36. जैन, पुखराज : नेशनल मूवमेंट एण्ड इण्डियन कांस्टीट्यूशन, आगरा, 1983।

37. जोशी, रीता बहुगुणा एवं त्रिपाठी, रामनरेश : हेमवती नन्दन बहुगुणा, नई दिल्ली, 1999 ।

38 कश्यप, सुभाष चन्द्र : (1) जवाहर लाल नेहरू एण्ड दि कांस्टीट्यूशन, दिल्ली, 1982।
(2) हमारी ससद, नई दिल्ली, 1991।

39 कुमार, कृष्णा : टूवर्डस अ पोलिटिकल एजेन्डा आफ एजूकेशन इन इण्डिया।

40 करूणाकरन : कान्टीन्यूटी एण्ड चेन्ज इन इण्डियन पोलिटिक्स, दिल्ली, 1964।

41 कीथ, ए० बी० : ए कांस्टीट्यूशनल हिस्ट्री आफ इंडिया, इलाहाबाद, 1961।

42 मजूमदार, आर० सी० : हिस्ट्री आफ दि फ्रीडम मूवमेट इन इण्डिया, कलकत्ता, 1962 (खण्ड-एक)

43 मजूमदार, रायचौधरी, दत्त : भारत का बृहत इतिहास (आधुनिक भारत) न्यू देलही, 1954 (पुर्नमुद्रण - 1996)

44 माथुर, वाई० बी० : क्विक इण्डिया मूवमेट, देलही, 1979।

45 मेहरोत्रा, आर० एस० : दी इमरजेन्स आफ दी इण्डियन नेशनल कांग्रेस।

46 मिश्रा, बी० बी० : (1) गवर्नमेन्ट एण्ड व्यूरोक्रेसी इन इण्डिया (1947-76) देलही, 1986।
(2) इंडियन पोलिटकल पार्टीज- ऐन हिस्टोरिकल एनालिसिस आफ पोलिटिकल बीहैवियर, देलही, 1978।

47 मेहता, वेद : महात्मागांधी एण्ड हिज एपास्टलेस, न्यू देलही, 1976।

48 मानकेकर, डी० आर० एव मानकेकर कमला : डिकलाइन एण्ड फाल आफ इन्दिरागांधी, न्यू देलही, 1977।

49 मधु लिमये : संक्रमण कालीन राजनीति, लखनऊ, 1986।

50 नेहरू, जवाहर लाल : (1) दि डिस्कवरी आफ इण्डिया, कलकत्ता, 1946, (पुर्नमुद्रण, न्यू देलही, 1996)
(2) ग्लिम्पस आफ वर्ल्ड हिस्ट्री, बाम्बे, 1965
(3) ऐन आटो बायोग्राफी, लन्दन, 1936 (पुर्नमुद्रण-न्यू देलही, 1996)

51 ओंकार शरद (सम्पादक) : बहुगुणा-एक मूल्यांकन, इलाहाबाद, 1975।

52 पाण्डेय, जवाहर लाल : स्टेट पोलिटिक्स इन इण्डिया, न्यू देलही, 1982।

53 पंडित, चन्द्रशेखर : एक युग का अंत, इलाहाबाद, 1977।

54 पाठक, विशुद्धा नन्द : उत्तर भारत का राजनीतिक इतिहास, लखनऊ, 1990।

55	रवि शकर	·	राजीव गांधी अमेठी में, लखनऊ, 1986।
56	राम गोपाल		(1) इण्डिया अण्डर इन्दिरा, न्यू देलही, 1986।
			(2) इण्डियन पोलिटिक्स।
57	राना, एस०	:	दि चेन्जिंग इण्डियन डिप्लोमेसी ऐट दी यूनाइटेड नेशन्स, इन्टरनेशनल आर्गेनाइजेशन्स, बोस्टन, 1970।
58	सरकार, सुमित	:	आधुनिक भारत (1885-1947) नई दिल्ली, 1992 (पुर्नमुद्रण-1995)
59	सरकार, एम० सी० एवं दत्त, के० के०	:	आधुनिक भारत वर्ष का इतिहास, पटना, 1951।
60	सदासिवन, एस० एच०	:	पार्टी एण्ड डेमोक्रेसी इन इण्डिया, 1977।
61	सिंह, गुरूमुख निहाल	:	भारत का वैधानिक एवं राष्ट्रीय विकास, दिल्ली, 1952।
62	सिह, खुशवंत	:	(1) अ हिस्ट्री आफ दि सिख्स (भाग-दो) देलही, 1991।
			(2) इन्दिरा गांधी- बढ़ते कदम, दिल्ली, 1979।
63	सिह, वी० बी० एवं बोस	:	स्टेट इलेक्शन इन इंडिया (1952-85) खण्ड -चतुर्थ, न्यू देलही, 1988।
64.	सिंह, कृष्णा हठी	:	इंदू से प्रधानमंत्री, नई दिल्ली, 1972।
65	सीतारमैया, पट्टाभि	:	(1) संक्षिप्त कांग्रेस का इतिहास, नई दिल्ली, 1958 ।
			(2) दि हिस्ट्री आफ दि इण्डियन नेशनल कांग्रेस।
66	सुरेन्द्र कुमार (सम्पादक)	:	इन्दिरागांधी-कल्पनाएं और उपलब्धियाँ, नई दिल्ली, 1990।
67	शकधर, श्याम लाल	:	भारतीय ससद, नई दिल्ली, 1978।
68	शर्मा, चन्द्रिका प्रसाद	:	कवि राजनेता-अटल बिहारी बाजपेयी, नई दिल्ली, 1997।
69.	शर्मा, शारदा प्रसाद	:	इन्दिरा दर्शन, दिल्ली, 1991।
70.	श्री निवास चारी, सी० एस० एवं रामास्वामी	:	अ हिस्ट्री आफ दि इण्डिया (भाग-तीन, ब्रिटिश इण्डिया) मद्रास, 1947।
71.	शुक्ल, भानु प्रताप	:	हर रविवार (खण्ड-एक, दो व तीन) दिल्ली, 1992।
72	शुक्ल, राम लखन (सम्पादक)	:	आधुनिक भात का इतिहास, नई दिल्ली, 1987।
73	शौरी, अरूण	:	इन्दिरागांधी - सेकेन्ड रीजन, न्यू देलही, 1983।
74	श्रीवास्तव, शकर दयाल	:	भारतीय लोकतंत्र, समस्याये और समाधान, इलाहाबाद, 1975।

75 तागचन्द — भारतीय म्वतत्रता आन्दोलन का इतिहास (खण्ड-दो) नई दिल्ली, 1982।

76 त्रिपाठी, कमलापति — म्वतत्रता आन्दोलन और उसके वाद, दिल्ली, 1988।

77 तिवारी, धर्मेन्द्र कुमार . इन्दिरागाधी का भारतीय गजनीति मे योगदान, नई दिल्ली, 1983।

78. ठाकुर जनार्दन — आल दि प्राइम मिनिस्टर मेन, न्यू देलही , 1977।

79 दि इयर्स आफ इन्डेवर, मलेक्टेड म्पीचेज आफ इदिगगाधी (अगम्त 1969- अगस्त1972) मिनिम्ट्री आफ इनफारमेसन एण्ड व्राडक्राम्टिग गवर्नमेन्ट आफ इण्डिया, न्यू देलही।

80 थारूर, एम० — गेजन्स आफ स्टेट पोलिटिक्स डेवलपमेन्ट एण्ड इण्डियाज फारेन पालिसी अण्डर इन्दिरा गाधी, नई दिल्ली, 1982।

81 उत्तर-प्रदेश वार्षिकी , मूचना एव जनमम्पर्क विभाग, उत्तर-प्रदेश-1994-95।

82 वासुदव शमा — इदिरगाधी के दो चेहरे, नई दिल्ली, 1977।

83 रमा शान्ति प्रमाद — म्वाधीनता की चुनाती, इन्दौर, 1948।

84 वमा, ताराचन्द · इन्दिरा गाधी - व्यक्तित्व ओर विचार, जयपुर, 1980।

85 वर्ल्ड इनसाइक्लोपीडिया आफ पोलिटिकल सिस्टम्स (खण्ड-एक), यूनाइटेड किगडम, 1983।

86 व्यास, सुनीत एवं श्रीप्रकाश . विकास समर्पित नारायण दत्त तिवारी, इलाहाबाद, 1986।

87 जैदी, ए० एम० : इण्डियन नेशनल काग्रेस, नई दिल्ली, 1985।

समकालीन साप्ताहिक एवं पाक्षिक समाचार पत्रिकाएं

1 हेमवती नन्दन बहुगुणा पर प्रकाशित स्मारिका, इलाहावाद, 1990।

2 माया, हिन्दी पाक्षिक पत्रिका, इलाहावाद।

3. रविवार, हिन्दी साप्ताहिक पत्रिका, कलकत्ता।

4. दिनमान, हिन्दी साप्ताहिक पत्रिका, नई दिल्ली।

5 अवकाश , हिन्दी मासिक पत्रिका, वाराणसी।

6. प्रेक्षा, हिन्दी साप्ताहिक पत्रिका, नई दिल्ली।

7 साप्ताहिक हिन्दुस्तान, हिन्दी साप्ताहिक पत्रिका, नई दिल्ली।

8 नूतन सवेरा, हिन्दी साप्ताहिक पत्रिका, वम्बई।

9 धर्मयुग, हिन्दी साप्ताहिक पत्रिका, नई दिल्ली।

10. विलट्ज अग्रजी , साप्ताहिक पत्रिका, बम्बई।

11 इडिया टूडे, अग्रेजी पाक्षिक पत्रिका, नई दिल्ली।

दैनिक समाचार पत्र

1 दि स्टेट्समैन, अग्रेजी दैनिक, नई दिल्ली।

2 दि टाइम्स आफ इडिया, अंग्रेजी दैनिक, नई दिल्ली।

3. नार्दन इडिया पत्रिका, अग्रेजी दैनिक, इलाहावाद।

4. दि फाइनेन्शियल एक्सप्रेस, अंग्रेजी दैनिक, वाम्बे।

5 दि हिन्दुस्तान टाइम्स, अंग्रेजी दैनिक, नई दिल्ली।

6. दि पायोनियर, अंग्रेजी दैनिक, लखनऊ।

7. नव भारत टाइम्स, हिन्दी दैनिक, लखनऊ।

8. हिन्दुस्तान, हिन्दी दैनिक, नई दिल्ली।

9. जनसत्ता, हिन्दी दैनिक , नई दिल्ली।

10 राष्ट्रीय सहारा, हिन्दी दैनिक, लखनऊ।

11 अमर उजाला, हिन्दी दैनिक, बरेली।

12. दैनिक जागरण, हिन्दी दैनिक, कानपुर।

13 आज, हिन्दी दैनिक, वाराणसी।

14. स्वतत्र भारत, हिन्दी दैनिक, लखनऊ।

15. भारत, हिन्दी दैनिक इलाहावाद।

16. अमृत प्रभात, हिन्दी दैनिक, इलाहावाद।

अन्य महत्वपूर्ण सामग्री

1. विधान सभा कार्यवाही (1952 से 1968 तक) तथा (1973 से1975 तक)।

2. लोक सभा कार्यवाही (1971 से 1973 तक) तथा (1977 से 1984 तक)।

3 संचार मंत्रालय की फाइल्स (1971-1973)।

4. मुख्यमंत्री, उत्तर-प्रदेश की फाइल्स 1973-1975)।

5. पेट्रौलियम एवं रसायन मंत्रालय की फाइल्स (1997-78)।

6. वित्तमत्रालय की फाइल्स (1977-79)।

7 सूचना एव जनसम्पर्क विभाग से प्राप्त प्रकाशित दस्तावेज।

8 जवाहर लाल नेहरू म्यूजियम, नई दिल्ली मे संचित वहुगुणा क व्यक्तिगत पेपर्स।

9 हेमवती नन्दन बहुगुणा आवास से प्राप्त विषय सम्बन्धी विभिन्न प्रकाशित एवं अप्रकाशित दस्तावेज।

———— इदिरागांधी, मोरारजी देसाई, जगजीवनराम, चौ० चरण सिह, राजीवगाधी, विश्वनाथ प्रताप सिह, चन्द्रशेखर, अटल बिहारी बाजपेयी , देवी लाल, विद्याचरण शुक्ल, नारायण दत्त तिवारी आदि विभिन्न राष्ट्रीय नेताओं, प्रान्तीय व क्षेत्रीय नेताओं एवं कार्यकर्ताओं द्वारा वहुगुणा को लिखे गये सैकड़ो पत्र। तत्सम्वन्धी जवाबस्वरूप बहुगुणा द्वारा भेजे गये पत्रों की द्वितीय प्रतियॉ।

————बहुगुणा के भाषण- बुलेटिन व पम्फलेट्स में प्रकाशित तथा आडियो, वीडियो कैसेट्स मे सचित।

10. 25 अप्रैल, 1998 को दिल्ली दूरदर्शन द्वारा प्रसारित बहुगुणा पर वृत्त चित्र,———— आलेख तथा विभिन्न समकालीन राजनेताओं, कर्मचारियो एवं सम्वन्धियों के साक्षात्कार।

11 विभिन्न लोगों से लिये गये साक्षात्कार के माध्यम से संग्रहीत मौखिक सामग्री।